अनुक्रमणिका/Index

(Economics / अर्थशास्त्र)

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

(Sanskrit / संस्कृत)

(Drawing / चित्रकला)

(Law/ विधि)

(Education / शिक्षा)

(Others / अन्य)

****

नवीन शोध संसार एवं दिव्य शोध समीक्षा की ओर से हार्दिक बधाई

मध्यप्रदेश शासन, उच्च शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षक संवर्ग में उत्कृष्ट प्रदर्शन एवं योगदान के लिए डॉ.आभा तिवारी, प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय मो.ह.गृह विज्ञान एवं विज्ञान महाविद्यालय,जबलपुर को स्व.श्री लक्ष्मण सिंह गौड़ स्मृति पुरस्कार 2012-13 से विभूषित किया गया।

(बाएं से दाएं) श्रीमती मालिनी गौड़, श्री उमाशंकर गुप्ता (उच्च शिक्षा मंत्री), श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्यमंत्री) द्वारा पुरस्कार प्राप्त करते हुए डॉ.आभा तिवारी

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .... जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी .... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे...............................शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल............................शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल..............................शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा.................................शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल..................................शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल................................शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ....शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित................................छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल............................शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ....शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ....वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ....एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा..............................पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया..............................हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ....शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Evaluation of the Water Quality of Bansagar Reservoir of Madhya Pradesh in Reference to Ichthyofaunal Diversity

Suman Singh *

Abstract - The water characteristics of any water body depend mainly on geographical location, climate, seasons, topography and demographic pressure. Rich biodiversity of any ecosystem is absolutely essential in order to maintain their stability for proper functioning of their food chains. The present study is on the water quality of Bansagar reservoir (24°1 1' 30" N 81°17' 15" E / 24.19167°N 81.28750°E) of V indhya region wherein the lotic water has been converted in to lentic owing to which the water quality of the reservoirs has changed causing great impact on the aquatic biodiversity specially the ichthyofaunal. Fishes of 61 taxa 34 genera of 14 families have been recorded with abundance and with status of threatening in Bansagar reservoir. Plankton population varied between 3,105-36,980 u /l. Bacillariophyceae was (57.4-76.4%) in all the seasons. Chlorophyceae showed its maximum value during pre monsoon (37.1%) whereas Bacillariophyceae during monsoon (76.4). Upper stretches were more suitable for fish habitat in comparison to lower.
Key Words - Bansagar reservoir, Water quality, Physico- chemical parameters, Ichthyofaunal diversity.

Introduction - Reservoirs interrupt stream flow and generate hydrological changes along the integrated continuum of river ecosystems (Vannote *et al.*, 1980) that ultimately can be reflected in their associated fisheries. Natural streams supported fish communities of high species diversity which were seasonally more stable than the lower-diversity communities of modified streams. (Joshi et.al, 2014). The disturbances such as channelization, seasonal peaks in species diversity attain levels typical of undisturbed streams. In this study quality of water including physico-chemical parameters and trophic status of these reservoirs as provided by various authors have been analysed and assessed and it was found that the reservoirs have range values and categories of trophic status and can be placed under the category of oligo-mesotrophic water bodies and that the water quality largely affects the aquatic biodiversity particularly ichthyofaunal diversity.

Objective - This paper aims at the study of nutrients characteristics and trophic status of Bansagar reservoir through physico-chemical and biological parameters along with its suitability as habitat for aquatic organisms specially ichthyofaunal diversity.

Study Area - Hydrobiological parameters and ichthyofaunal studies were done during 2012-2014 for Bansagar reservoir, a multipurpose river Valley Project on Sone River situated at Deolond in Shahdol district on Rewa – Shahdol road, at a distance of 51.4 km from Rewa (24°1 1' 30" N 81°17' 15" E / 24° 19' 67" N 81° 28’ 50" E) in the Ganges Basin in Madhya Pradesh, India envisaging both irrigation and hydroelectric power generation

Fig.1 Study area Bansagar Dam showing Main Reservoir, Barrage &Canals

Fig. (a) Bansagar Dam Upstream (b) Bansagar Dam Downstream

* **Professor (Zoology) Govt. Science College, Rewa (M.P.) INDIA**

Materials And Methods - Water samples were collected for hydrobiological parameters during May 2012 - April 2014. The methodology adopted for the analysis of physicochemical parameters was according to (APHA, 2005), Adoni et al. (1985) and Trivedi and Goel (1986) Welch (1952). For Plankton, Samples were collected from selected sites for diversity richness and abundance of species according to Adoni (1985), Datta Munshi and Datta Munshi(2006). For the abundance of fish species, samples were collected with the help of fishermen by traditional gears and crafts and collected fishes were identified following Jhingran (1969), Jayaram (1999) and www.fishbase.org, Day Francis (1994). Various aspects of fish diversity was measured by the number of species (species richness) and by using the Shannon-Weaver (H') and Simpson's (D) indices. To assess the influence of flow on the WQIB and the concentrations of these parameters, Pearson's correlation analysis was conducted. Water quality and impact of dams on fish fauna has been studied according to Jhingaran (1969) Sugunan (1995), Kar (2003), Dandekar (2012) and Joshi (2014)

Results And Discussion :

Table-1: Physico-chemical Parameters 2012-2014

Parameters	Mean 2012	Mean 2013	Mean 2014	Mean of 3 years
Water temperature °C	24.70	25.98	27.45	26.71
Transparency (cm)	94.07	98.27	89.85	93.33
Dissolved oxygen (mg/l)	8.57	9.40	8.32	8.71
Free Co_2 (mg l^{-1})	4.07	3.98	5.04	4.36
pH	8.32	8.50	8.18	8.32
S.conductivity(u Mhos)	153.21	164.21	184.76	166.72
TDS (mg $l^{-1)}$	234.32	312.21	342.21	292.21
Total Hardness(mg l^{-1})	48.91	51.87	56.23	52.33
Total Alkalinity(mg l^{-1})	91.01	87.51	98.38	92.31
Phosphate (mg l^{-1})	0.92	0.98	1.15	1.01
Nitrate (mg l^{-1})	0.41	0.51	0.59	0.53
Chloride (mg l^{-1})	48.75	46.55	57.86	50.38
Silicate (mg l^{-1})	10.02	12.08	10.31	11.77
Plankton u l^{-1}	2356	5241	7014	2712

Pearson's correlation coefficient was calculated to determine a relationship among the physico-chemical characteristics of water of Bansagar dam. Transparency was found to have a negative significant correlation with water temperature, free CO2, total alkalinity, conductivity, total hardness, TDS, chloride, and phosphate, pH, dissolved oxygen, total alkalinity, conductivity and nitrite. It showed positive relationship with pH (r = 0.8157). Transparency had highest negative correlation with Phosphate (r = -0.8059) (r= -8021). pH showed negative correlation with free CO2, TDS, chloride and phosphate. When various physico-chemical characteristics of Bansagar reservoir have been compared with the range values and categories of trophic status as provided by various authors, it can be safely placed under the oligo-mesotrophic water bodies.

Table-2 : Diversity of Planktons: Bansagar reservoir 2012-2014

Phytoplankton	**Melosira**	**Zooplankton**
Chlorophyceae	**Pinnularia**	**Protozoa**
Pandorina	**Synedra**	**Euglena**
Spirogera	**Cymbella**	**Ceratium**
Eudorina	**Frustulia**	**Difflugia**
Chlorogonium	**Tebellaria**	**Vorticella**
Cladophora	**Navicula**	**Rotifera**
Pediastrum	**Nitzschia**	**Brachionus**
Ulothrix	**Closterium**	**Filinia**
Closterium	**Cosmerium**	**Keratella**
Zygnema	**Cynophyceae**	**Filinia**
Spirogyra	**Anabaena**	**Cladocera**
Cosmerium	**Oscillatoria**	**Daphnia**
Chara	**Phormidium**	**Ceriodaphnia**
Nitella	**Micricystis**	**Moina**
Volvox	**Nostoc**	**Copepoda**
Scenedesmus	**Spirulina**	**Cyclops**
Bacillariophyceae	**Dinophyceae**	**Diaptomus**
Cyclotella	**Ceratium**	**Mesocyclops**
	Phacus	

Table-3: Bansagar reservoir Plankton- Range-Mean-Percentage2012-2014

Groups	Count per litre		Percentage
	Range	Mean	
Chlorophyceae	815.6-1314.3	1148.49	33.21
Bacillariophyceae	914.1-31208.7	7232.67	41.12
Cyanophyceae	105.2- 5421	4677.87	6.35
Dinophyceae	541- 912	6 53.88	03.56
Phytoplankton	20192- 39341	35726.43	82.12
Protozoa	35- 218	96.13	03.11
Rotifera	142- 680	411.77	06.21
Copepoda	98- 436	375.14	05.43
Cladocera	48- 254	128.97	03.54
Zooplankton	293 - 11868	992.01	18.00
Total Plankton		34718.00	100.00

Fig.2 : Plankton units/L (See in last page)

Plankton- (Table 2, 3) and figure-(2). In this study, species richness, diversity and evenness of zooplankton and phytoplankton has been assessed to predict the state of reservoir, barrage of downstream according to physico-chemical parameters and biodiversity indices (Table 6). A total of 45 species of plankton were recorded with percentage composition of 82.12% of phytoplankton comprising Bacillariophyceae spp. of 16 genera followed by Chlorophyceae (12), Cynophyceae (7) and Dinophyceae (3).18% of zooplankton with 25 taxa were recorded with 8 rotifers, 4 copepods, 4 cladocerans, 3 ostracoda and 6 protozoans. Variation of species in different seasons. Dominance of Cynophyceae during August-September is marked by transparency 48-55 cm. Phosphate and nitrate concentration during July-August seems to have favoured the abundance of phytoplankton in September. It is supported by the study of Sathe et.al (2001)

Table-4 : Ichthyofaunal diversity in Bansagar reservoir (2012-2014)

S.	Order	Family	Species
1	Clupeiformes	Clupeidae	*Gadusia chapra*
2			*Notopterus notopterus*
2			*Notopterus chitala*
3	Cypriniformes	Cobitidae	*Lepidocephalichthyes guntea*
4			*Nemachielus nemachielus*
5		Cyprinadae	*Labeo bata*
6			*Labeo boga*
7			*Labeo calbasu*
8			*Labeo pangusia*
9			*Labeo rohita*
10			*Labeo boggut*
11			*Labeo dero*
12			Labeo gonius
13			Labeo fimbriatus
14			Labeo angra
15			Oxygaster bacaila(Ham.)
16			*Oxygaster gora(Ham.)*
17			Oxygaster clupeides
18			*Puntius ticto (Ham)*
19			*Rasbora deniconius*
20			*Puntius sarana Ham)*
21			*Puntius chola*
23			*Puntius sophori*
24			*Puntius ticto*
25			*Puntius sarana*
26			*Cirrhinus mrigila*
27			*Cirrhinus reba*
28			*Catla catla*
29			*Danio devario*
30			*Esomus dandricus*
31			*Osteobrama cotio*
32			*Garra cotyla*
33			*Tor tor*
34	Siluriformess	Siluridae	*Ompok bimaculatus*
35			*Wallago attu*
36		Schilbeidae	*Pangasius pangasius*
37			*Eutropichthys vacha*
38			*Clupisoma garua*
39			*Ailia colia*
40		Bagridae	*Mystus bleekeri*
41			*Mystus vittatus*
42			*Mystus tengra*
43			*Mystus aor*
44			*Mystus seenghala*
45		Claridae	*Rita rita*
46		Sisoridae	*Bagarius bagarius*
47		Heteropn eustidae	*Heteropneustus fossilis*
48			*Clarias batrachus*
49	Perciformes	Percidae	*Chanda ranga*
50			*Chanda nema*
51			*Badis badis*
52			*Nandus nandus*
53			*Colisa fasciatus*
54			*Anabas testudineus*
55		Gobidae	*Glossogobius giuris*
56	Mastacem beliformes	Mastacem belidae	*Mastacembelus armatus*
57			*Mastacembelus pancalus*
58	Ophiocephs aliforme	Ophiocep halidae	*Ophiocephalus maurilus*
59			*Ophiocephalus gachua*
60			*Ophiocephalus Striatus*
61	Beloniformes	Belonidae	*Xenentodon cancilla*

Ichthyofaunal diversity in Bansagar reservoir - A total of 316 individuals representing 61 taxa categorised 33genera under 14 families and 7 orders were collected from all the sampling sites in the present study. Among these Cyprinidae was most dominant family (Table5,Fig.3) . Out of all these, Puntius *spp and* Chella spp has the maximum number of individuals and found from all sites. The dominant species, *Chellspp*. (Fig. Photo of Fishes) has total 108 individuals (34.95%) *Labeo bata* 25 individuals (8.09%) and Mystus spp.(Fig .Photo of Fishes)21 individuals (6.79%) respectively. The least abundant fish was Lepidocephalchthyes guntea *Nemacheilus botia, Puntius chola, Puntius, Amblypharyngodon mola , Mystus Cavasius, Mastacembelus armatus* ,three species of *Channa punctatus* with one individual each (0.96%). Bose *et al.,* (2013) have reported 57 species, belonging to 35 genera, 13 families and six orders from Middle Stretch of River Tawa.

Table-5 : Family –wise Percentage of Ichthyofauna of Bansagar Dam

S.	Family	Individuals	Percent%
1	Cobitidae	2	0.32
2	Cyprinidae	243	70..05
3	Heteropneustidae	4	1.94
4	Siluridae	6	2.73
5	Bagridae	8	3.14
6	Mastacembelidae	4	1.32
7	Gobidae	5	2.17
8	Ambassidae	6	2.64
9	Ophiocephalidae	15	7.85
10	Belonidae	6	2.01
11	Clupidae	7	2.97
12	Sisoridae	2	0.62
13	Percidae	6	2.57
14	claridae	2	0.62
	Total=14	316	100%

Fig.3: Ichthyofauna of Bansagar Dam(Individuals in Families) (See in last page)

It is observed that, in present study species richness was,61 species abundance 316, Shannon - Weiner Index (H) recorded 1.6859. The Simpson's Dominance Index (D) was recorded 0.094 and the Simpson's Index of Diversity (1-D) was recorded 0.926. The Pielou's evenness (J) value was recorded 0.629.(Table- 6)

Table-6: Index Value of Bansagar Reservoir

1	Species Richness	61
2	Species abundance	(N) 316
3	Shannon - Weiner Index (H)	1.6859
4	Simpson's Dominance Index (D)	0.094
5	Simpson's Index of Diversity (1-D)	0.926
6	Pielou's evenness (J)	0.629

In Bansagar reservoir fish biodiversity were 61 species 34 genera of14 family and 7 orders and at down sites total of 49 fish species were recorded belonging to eight orders, 14families The members of family Cyprinidae were dominated by 28 species (72.96%), followed by Bagridae seven species(15.11%), Scheilbidae three(5.6%)Siluridae,four,(6%) Ophiocephalidae four,7.85%, Mastacembelidae 5%, Ambassidae 4% PercidaeFive, (6,%), Gobiodae 2%, Sisoridae 2.%, Claridae,2%, Belonidae 2%, (one species each family). Findings are supported by studies by Dandekar (2012) on impact on riverine fisheries due to dams in India, Kar (2003), Bose et.al (2006) on Tawa reservoir, Joshi (2014) on impact of dams.

Conclusion and recommendation: - Dams are constructed on upstream tributaries of a river ecosystem, thereby negatively affecting fisheries production in downstream. The study has clearly shown a link between water quality and biodiversity; There is need for comprehensive biological monitoring of aquatic ecosystems at regional national and international levels. There is need of methods for estimating complex hydraulic key characteristics, like turbulence in the free flow, turbulence close to the stream bottom, and the force of flow prevailing at the bottom.

Acknowledgment - The author is very grateful to Dr. Vinod Kumar Srivastava, Principal GDC Rewa who continuously encouraged and inspired to do academic task. I gratefully acknowledge the assistance of Executive Engineer Anand Tripathi in charge of Bansagar Dam, Deolond for providing necessary document and technical assistance for the study. I am also thankful to Deptt. Of Fisheries, Deolond (M.P.) and Fish Farmers of fish societies of the Bansagar Project for their co-operation in the study, survey of the site and sampling of fish water.

References :-

1. Adoni, A.D., G. Joshi, S.K. Chourasia, A.K. Vyas, M. Yadav and Varma. (1985) "Workbook on Limnology". PratibhaPubl. Sagar (MP). 216.
2. APHA: Standard methods for the examination of water and waste waters,21st Edn., Washington,D.C.USA (**2005)**
3. Bose, A.K., Jha,. V. R. B.C Suresh, Das A.K., Parasher, A. And Ridhi. Fishes of Middle Stretch of River Tawa, Madhya Pradesh, India. J. Che. Bio. and Phy. Sci. India, **3**(1):**7**06-716.**2013**
4. Ahamed Masood and R. Krishnamurthy. (1990) : Hydrobiological Studies of Wohar reservoir Aurangabad,(Maharashtra State) India. J. Envoiron. Biol. 11 (3) : 335 – 345.
5. Bose, A.K., Jha,. V. R. B.C Suresh, Das A.K., Parasher, A. And Ridhi. Fishes of Middle Stretch of River Tawa, Madhya Pradesh, India. J. Che. Bio. and Phy. Sci. India, **3**(1):**7**06-716.**2013**
6. Datta Munshi. J. and J. S. Datta Munshi.Lakes and reservoir.In: Fundamentals of Freshwater Biology. Narendra Pub.House.Delhi.222.(**2006**)
7. Dandekar P. Damaged Rivers, Collapsing Fisheries: Impacts of Dams on Riverine Fisheries in India, South Asia Network on dams, Rivers and People, Sept **2012**
8. Jayaram, K.C. The freshwater fishes of the Indian region. Narendra Publishing House, Delhi,pp: 614. **2010**
9. Day, F. The Fishes of India, Being a Natural History of the Fishes Known to Inhabit the Seas and Freshwaters of India, Burma and Ceylon, vols I & II, pp xx+ 778,pls . cxiv
10. Needham, J.G. and P.R. Needham. A guide of the study fresh water biology. Holdeomday Inc. San. Francisco., pp 108.(**1966)**
11. Jhingran, V.G. ,Natrajan A.V.,Banergee,S.N. and David ,A. Methodology on reservoir fisheries investigation in India.Bull.No.12,Central Inland Fisheries Research Institute,Barrackpore,109.,pp (**1969**).
12. Joshi, K.D., D.N. Jha, M. A. Alam, S.K. Srivastava, Vijay Kumar and A.P. Sharma, Environmental Flow requirements of River Sone: Impacts of low discharge on fisheries. Current Science **2014**
13. Kar, D.A., C. Kumar, Bohra and L.K. Sigh, (Eds), .Fishes of Barak drainage, Mizoram and Tripura; In: Environment, pollution and management, APH publishing corporation, New Delhi, pp: 604: 203-211. **2003**
14. Sathe, S.S., Suresh Khabade, Milind Hujare. (2001) : Hydrobiological studies on two man made reservoir from Tasgaon tahashil (Maharashtra). Ecol. Env. and Cons. 7 (2) : 211 – 217.
15. Srivastava Gopal, Ji. Fishes of U. P. And Bihar, Vishwavidyalaya Prakashan, Varanasi, 1-207, **(1980).**
16. Sugunan V.V.(1995)Reservoir Fisheries of India pp.395
17. Trivedy, R.K., P.K. Goyal and C.L. Trishal. (1998) : "Practical methods in Ecology and Environmental Science". Enviro.Medio Publications, Karad,216
18. Welch, P S(1952) Limnology, II ed. Mc Graw- Hill Book Co. Newyork p. 538

Fig 4: Fishes capturing

Fig.2 : Plankton units/L (See in last page)

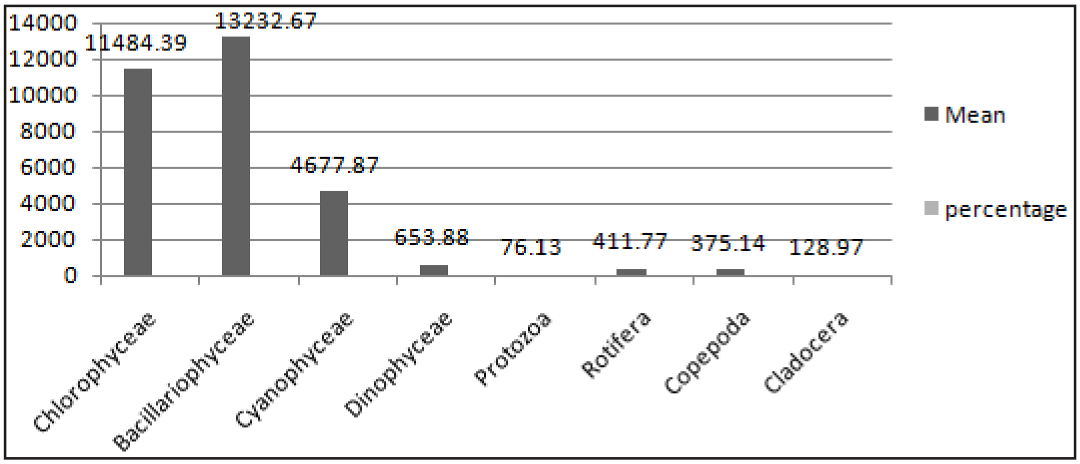

Fig.3: Ichthyofauna of Bansagar Dam(Individuals in Families)

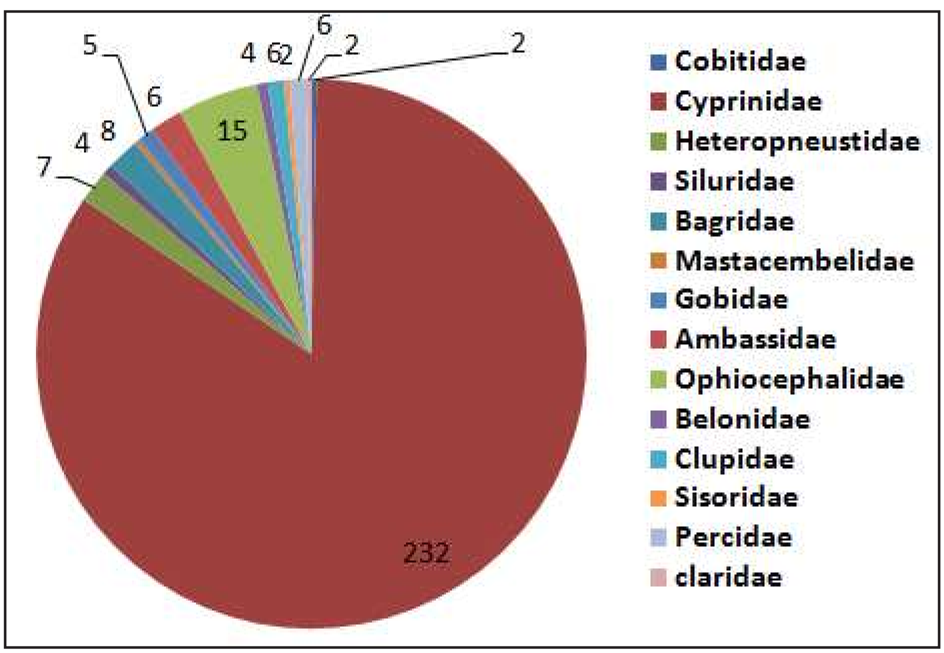

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Medicinal Plant, *Mucuna prurita Hook..*, and its use as 'Antidote', in Amarkantak Biosphere Region, (M.P.) India

Dr. Radhe Shyam Napit *

Abstract - The present study has offered immense scope and opportunities for the development of new medicine (drug). Some well has known modern drugs have been developed through ethnic (folklore) and traditional system of medicine. However, out of 1000 medicinal plant, only 15-20 % have so for been used for development of ethnobotanical sources for drugs by the ethnic (tribal) people in the Amarkantak area., A report only one specie Ethnomedicinal plant of **"Kewanch / Kemach" (*Mucuna. prurita* Hook. *syn P. pruriens* Bak. Fl. Br. Ind. DC.)***,* family (Fabaceae) is present here.
Key words - Ethno medicinal plants, Anti dote, Amarkantak Biosphere region.

Introduction - The use of traditional medicine is widely accepted by rural people in Amarkantak biosphere. Amarkantak is rich in medicinal and aromatic plant's having a biodiversity of about 300-500 species about 80 percent of these are collected from wild. Maheshwari (1992) reported that the country has many areas where the traditional medicine culture is rich and diverse, making it an ideal site for ethnobotanical study.

Amarkantak, a beautiful hill station in Anuppur district of Madhya Pradesh, is situated in 22^0 41' N and 81^0 46' E on the eastern most extremity of Maikal range. It is a holy place of pilgrimage and origin of river Narmada, Son, Johila and Mahanadi. It lies on a plateau at an altitude of approximately 1100 meters.

The forest vegetation of the Plateau is of sub tropical type dominated by Sal trees then, soil in usually latrite. The climate is monsoonic tide with well defined summer, rainy and winter. May and June are the hottest month December and January are the coldest Month (T.1-4^0C). The average annual rain fall is 1000-1450 mm.

Anuppur, Amarkantak is the home of many ethnic groups. Within this small district, more than 12 ethnic groups and different castes live (Pranaya Verma 1994) viz., Agaria, Baiga, Kol, Gond, Pao Bheel, Bhaina, Kanvar, Bhumia, and Panika, etc. The density of Baiga & Gond Population is higher than others. They live in remote areas of the forest. They mainly depend on natural products of the forest for their livelihood and have retained their traditional cultures and folklores, due to close and constant association with the forests. They have fairly good knowledge of the medicinal and other value of their surrounding plants and mostly depend on them for the remedies of their ailments and diseases.

Study Sites - Four study sites were selected in different parts of Amarkantak as Bhundakona, Jaleshwar, Sonemuda and Narmada Kund (Mai ki bagiya) Bhundakona, Jaleshwar, Son muda, Podki, Bhejri, Bhamaria, Farrisemar, Bijauri, Lapti, Amgawa, Khati Bilaspur, Pamra, Kerha, Bhelma, Khursa, Harri, Sonhra, Vaihar, Barbaspur, Doniya, Sarhakona, Jamuna Dadar, Nonghati, Barsot, Johilatola (Podki), Masnatola Kapilasangam, Tikritola, and also surrounding of Amarkantak, **Bilaspur district- Kevchi, Padmania, Devergavan, Vedrapani, Jaleshwar, GramUmania** and **Dindauri district- Kabeer Chbutra**, **Pakri, Sonda, Karanjia, and Narigwara** for the collection of plant's being used by tribes traditionally (ethnobotanically). These areas were selected on the basis of varied altitude and richness of species, which also comprise rich cultural diversity.

Notable Worker - The local healers and knowledgeable villagers were consulted during the field trips covering three different seasons during Ph.D. work Sep. 2004 – Jul 2005. Ethnomedicinal information were collected following the methods described by Jain (1965) and Jain & Rao (1976), Maheshwari & Singh (1965), Jain (1968), Sikarwar, Maheshwari (1992) & Jain & Tarafder 1970, Chopra et.al; 1958, 1969, Nadkarni, 1954., Knowledgeable people and medicine men were interviewed for recording medicinal use; parts used method of drug preparation, dosage and local name. Under enumeration plant names have been arranged alphabetically. The correct botanical name is followed by family within parentheses, local names, medicinal uses name of tribe locality. All the specimens have been deposited in the Botany department Govt. P. G. College Shahdol (M.P.) Some local worker studied here like P.verma- (1994), M. P. Singh (2001) & S.L.Bondya, K. K. Khanna et al. (2005).

Methodology - The method adopted for the ethnomedicinal study was adopted by Jain 1981. During the study knowledgeable person rural areas of Amarkantak regions &

* **Assistant Professor (Botany) Centre for Excellence, IGNTU, Amarkantak (M.P.) INDIA**

Pushprajgrah block with Shahdol division survey during Sep. 2004 – Jul 2005. Information was collected from tribals medicine men and vaidyas and some formers, about the interviewed therapeutic used of plants in the treatment of various diseases. Information about used and local name of plants was secured from the information. The collected plant specimens were identified by consulting Flora of British India by Benthum and Hooker (1872-1879). Voucher specimens of the species collected are deposited in the Department of Botany Govt. P.G. College Shahdol, Madhya Pradesh (M.P.).

Enumeration of plants - Correct botanical names are arranged alphabetically following Hara et.al. (1978, 1982) and Hara and Williams (1979) followed by family in brackets, vernacular name in apostrophe and collection number in brackets. Other details given are plant parts used, quantity of plant parts, details of preparation method, and mode of use.

(1) *Mucuna prurita,* (Hook.) syn. *; M. Pruriens* Bak. (DC.) (FABACEAE)

Common & Regional Name: *LN. - Kemach; H. & P. - Kawanch; Eng. - Cow hage; B. - Alkusa S. - Atmagupta; Bo. - Kuhili; Mal. - Corivalli; Shoriyanam;Mara.-Karacha Tam.- Punippidukkan, Punaikkali; Tel. - Pilliadugu, Dulagondi;*

Vegetative Character - An annual herbaceous climber, papilionate are distinguished by anomalous secondary thickening, 'Mucuna' stem has secondary growth resembling Cycas or beet root. Root- tap branched. Stem - herbaceous, climber, branched, hairy. Leaf - compound tripinnate leaf (dorsal) upper surface smooth and ventral surface hairy, Inflorescence- racemose, solitary flower bisexual irregular complete, zygomorphic perigynous Calyx – 5 sepals, Corolla – 5 petals., Androecium 10 stamens ovary superior., Fruit - brown colour, hairy, legume., 2-4 inches long S shape. Hair is poisonous seed- spots etc. Found all over M.P. Flowering - Sept. Oct. Medicinal part use as root, leaf & seeds.

FF- Br. %, ⚥, $K_{(5)}$, $C_{1+2+(2)}$, $A_{(9)+1}$, $\underline{G}_{1}$.

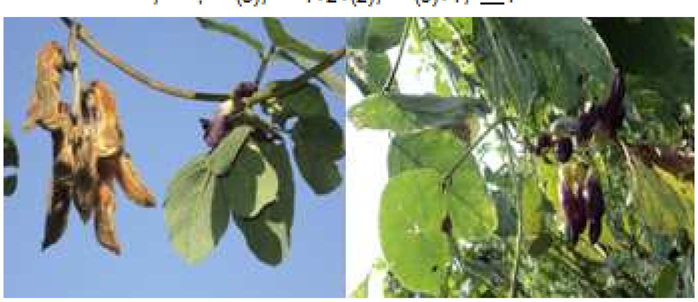

Fig. 1 ***Mucuna prurita Hook. Fruits and flowers.***

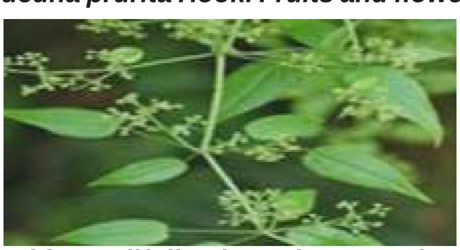

Fig.2 *Rubia cordifolia Linn*. Qian., Cao (Rubiaceae) Flowring and Fruiting stage.

Mode of Use :

Use - Paste of roots and seeds two spoons and "Majitha" (*Rubia cordifolia Linn*. Qian. Cao (Family Rubiaceae) stem paste2-3 spoons, "Tulsi" *(Ocimum sanctum* L.*)* leaves 2- 5 spoons together given orally 3-4 times a day to cure snake bite and other insects bite.

Chemical Substance: Root/, Seed contain :

Biological Properties - Root- Aphrodisiac, Anthelmintic, Bitter, Diuretic Febrifuge, Emollient, Purgative, Sweet, Stimulant, Thermogenic, Astringent, Laxative, Nervine Tonic.

Chemical Substance:- Root and Seeds yields – Plant (***Mucuna prurita,* Hook.)** seeds against snake venom poisoning ***M. prurita,*** is one of the plants that have been shown to be active against snake venom and, indeed, its seeds are used in traditional medicine to prevent the toxic effects of snake bites, which are mainly triggered by potent toxins such as neurotoxins, cardio toxins, cytotoxins, phospholipase, A2 (PLA2), and proteases (Guerranti et al., 2002). In Plateau State, Nigeria, the seed is prescribed as a prophylactic oral anti-snakebite remedy by traditional practitioners, and it is claimed that when the seeds are swallowed intact, the individual is protected for one full year against the effects of any snake bite (Guerranti et al., 2001). The mechanisms of the protective effects exerted by M. pruriens seed aqueous extract (MPE), were investigated in detail, in a study involving the effects of *Echis carinatus* venom (EV) (Guerranti et al., 2002). In vivo experiments on mice showed that protection against the poison is evident at 24 hours (short-term), and 1 month (long term) after injection of MPE (Guerranti et al., 2008). MPE protects mice against the toxic effects of EV via an immune mechanism (Guerranti et al., 2002)., MPE contains an immunogenic component, a multiform glycoprotein, which stimulates the production of antibodies that cross-react with (bind to) certain venom proteins (Guerranti et al., 2004). This glycoprotein, called gpMuc (see Table 1), is composed of seven different isoforms with molecular weights between 20.3 and 28.7 k Da, and pI between 4.8 and 6.5 (Di Patrizi et al., 2006)

*Carbohydrate, Phenols, Steroids, Glycosides, Tannin, Fe, Ca, Mg, K, Al & Zn, Reddish, Viscous Oil, Alkaloids Mucunine & Mucunadine.

Ref. Sinha and Sinha, (2001).

2. Stem extracts: *Rubia cordifolia Linn*. Qian Cao - All the solvent extracts of stem revealed that they were positive for anthraquinones, flavonoids, glycosides, phenols and saponins. The stem extracts have shown negative result for alkaloids, tannins, steroids and quinones of all the solvent extracts of stem, and the various solvent extracts of root samples have shown more intense colour than stem and leaf extracts. The solvent extracts such as methanol, chloroform, acetone, petroleum ether and aqueous extracts of root possessed anthraqunione s, glycosides, saponins, steroids, phenols, flavonoids and were negative for alkaloids, tannins and quinones in all solvent extracts of root.

Result and discussion - The most frequently used traditional phytotherapies are those against gastro-intestinal problems as in other areas in Amarkantak (Pranaya Verma 1994) in old Shahdol district. The survey provides anti psoriasis plants sufficient ground to believe that traditional medicinal practice using native medicinal plants is alive and well functioning in the study area. In many communities, wild plant's species are used as important parts of the primary healthcare system due to belief in the effectiveness, lack of modern medicines and medication and poor economic status of people. The treatment of diseases with plants and plants products also causes no side effects. It is cost effective too.

A large number of commercially important medicinal plants species are over exploited by person's involved in the trade of medicinal plants.

2. Stem extracts: *Rubia cordifolia* Linn. Qian Cao - The plant significance of standardized procedures for crude drug extraction (medicinal plant parts) is to attain the therapeutically desired portions and to quit unwanted material by treatment with a selective solvent. These extracts after standardization are used as medicinal agent such as in the form of tinctures of further processed to be incorporated in any dosage form such as capsules and tablets. These products contain complex mixture of many secondary metabolites, such as alkaloids, glycosides, flavoniods, terpeniods and lignins.

Lack sustainable harvesting methods, inadequate knowledge about forest management and lack of financial resources are the main causes of over-exploitation have been reported. These plants are collected illegally in large numbers from different areas of Amarkantak and supplied to contractors at low rates. According to local people, these activities have led to decline in the population of the medicinal plant species in the forests. If the practices were managed properly, the forest resources and medicinal plant species will provide good service in medication and subsistence needs.

The concepts of community forestry programme are developing among the user groups which can be taken as a good sine towards conservation and sustainable use of forest resource and medicinal plants.

Acknowledgements - The research scholar is also thankful to the people of Amarkantak new district Anuppur who shared with him their indigenous knowledge. R. S. Napit would like to express thankful to Dr. Smt. D. Thakur, Principal Govt. P.G. College Narsinghpur and Prof Dr. Naveen Sharma, and Prof Dr. A. K. Shukla, Head and Dean of the Botany Deptt. IGNTU Amarkantak M.P., for their kind cooperation and good support and guidance in the form of research work.

References :-

1. Anonymous, 1968 Medicinal plants of India, Vol. 1.11. CSIR New Delhi.
2. Chandra, G. 1970., Chemical composition of the flower oil of Nyctanthes arbor-tristis Linn. Indian perfume 14 (pt. I), 19.
3. Dhingra, V. K., Seshadri T. R. and Mukherjee S. K. 1976., Carotenoid glycosides of Nyctanthes arbor-tristis Linn. Indian J. Chem. 14B, 231.
4. Chopra, R.N. Chopra I.C. and Verma, B.S. 1968., Supplement to Glossary Indian medicinal plants, CSIR New Delhi.
5. Bhattacharjee, S.K. 1998, S.K. 1998., Handbook of Medicinal plants. Pointer publishers, New Delhi.
6. Brown, J.E., Rice-Evans, C.A. 1998., Luteolin rich artichoke extract protects low density lipoprotein from oxidation in vitro. Free Radical Res., 29: 247-255.
7. Devi Priya M. and E. A. Siril. Pharmacognostic Studies on Indian Madder (Rubia cordifolia L.). J. of Pharm and Phytochemistry, 2013; (1): 5.
8. Han, X., Shen, T., Lou, H. 2007., Dietry poly phenols and their biological significance. Int. J. Mol. Sci., 950-988.
9. Jain, S.K. and Tarafder, C.R. 1970., Medicinal plant lore of the Santhals (A revivals of P.O. Bodding's work). Econ., Bot. 24, 241.
10. Shah, G.L. 1984., Some economically important plants of salsette ISI and near Bombay. J. Econ. Taxon. Bot. 5 : 753-765.
11. Singh, K. K. and Maheshwari, J. K. 1992., Folk medicinal uses of some plants among the Tharush of Gorakhpur Distt. U.P. India Ethnobotany 4:L 39-43.
12. Ramesh S. Deoda, Dinesh Kumar, Prasad V. Kadam, Kavita N. Yadav, Santosh S. Bhujbal3, Manohar J. Patil., Pharmacognostic and Biological Studies of the Roots of Rubia cordifolia Linn. (Rubiaceae)., Int. Jou. of Drug Develop & Res, 2011; (3): 3.
13. Literature Source- file:///C:/Users/Dr.%20RS%20Napit/Downloads/article_wjpps_1412081569.pdf

****

Acidity Can Be Cured By Yoga And Traditional Exercise

Dr. Rajesh Masatkar *

Abstract - Problem of acidity can be cured by breathing exercise which provides lots of oxygen to the each and every cell of our body. Due to the presence of sufficient amount of oxygen in a cell, it functions well. And by doing traditional exercise our body become strengthening and due to that problem of initials stage of acidity become cured permanently. For avoiding acidity from our life, it is very necessary to maintained daily routine of life style and takes nutritive food for our healthy life.

Keywords - Acidity, Asana, Yoga, Pranayam.

Introduction - Acidity is said to have occurred when a person suffers from heartburn and also when formation of gas takes places in his /her stomach. It is common problem which many suffer from and occurs mainly due to excess secretion of hydrochloric acid in the stomach. The hydrochloric acid helps in the digestion of food. But when released in excess, it starts affecting the lining of the stomach. This causes an acidic stomach. If not treated on time the person might suffer from fever indigestion, gout, arthritis and formation of ulcers either in the mouth or inner walls of the stomach, when acidity take place the gastric juices more from the stomach to the lower oesophagus or the food pipe in form making dysfunctional. When we eat food passes down the gullet (oesophagus) into the stomach cells in the lining of the stomach make acid and other chemicals which help to digest food. Stomach cells also make mucus which protects them from damage from the acid. The cells lining the oesophagus are different and have little protection from acid. There is a circular band muscle (a Sphincter) at the junction between the oesophagus and stomach. This relaxes to allow food down, but then normally tightens up and stops food and acid leaking up (refluxing) into the oesophagus in effect, the sphincter acts like a valve.

Acid Reflux means that some acid leaks up (refluxes) into the gullet (oesophagus)

Oesophagitis means inflammation of the lining of the oesophagus most case of oesophagitis are due to reflux of stomach acid which irritate the inside lining of the oesophagus.

Objective –

1. To identify and cures acidity in their initials stage.
2. To saves the time of people from unnecessary treatments.
3. To increases the economical status of the people.
4. To reduces the cost of treatment.
5. To make the people of the country healthy and strong.
6. To make the people of the country useful in the development of our nation.
7. To minimizes the intake of medicines.

Methodology – To solve the above problem, I focused on four things, that are breathing exercise, traditional exercise, daily routine of life style and food habit of the people.

Cause of Acidity – Some of the common cause of acidity listed in brief.

1. Consumption of food containing excess fat.
2. Excessive consumption of caffeine.
3. Staying an empty stomach for a very long time.
4. Pregnancy, obesity and old age.
5. Too much of junk food and following an unhealthy diet
6. Hot drinks, coffee, tea, chocolate, spicy foods
7. Due to side effect of allopathic medicine.
8. No physical exercise.
9. Smoking and alcohol.
10. Any time eating.
11. Loss of appetite.
12. Tobacco
13. Sometime tension leads to acidity

Common Symptoms of Hyperacidity -

1. Feeling of nausea and followed by vomiting
2. Sour belching (mouth taste bitter)
3. Lack of appetite.
4. Indigestion.

Common Symptoms of Acid Reflux –

1. Heart burn (burning sensation behind chest bone).
2. Regurgitation of gastric acid contents into mouth.
3. Difficulty in swallowing.
4. Chest pain.
5. Sometime coughing, wheezing, and vocal cord inflammation causing hoarseness.
6. Flatulence is considered one of the main indicators.
7. Respiratory problems are accompanied by frequent coughing.
8. Gas in stomach
9. Stomach pain

* Asst. Professor (Botany) Govt. Degree College, Nainpur, Dist. Mandla (M.P.) INDIA

Role of Stomach Acid – Stomach acid plays an important role in our digestion what ever we eat acid helps to breaks down the food to digest. This is a natural process. In acidity the amount of acid increase in our stomach above the limit is called acidity. Acid kills harmful bacteria and parasites which enter into our stomach with food. Acid activates the pepsin enzymes to digest the protein. Gives signals to the pancreas to produces digestives juice and enzymes which digest food. Acid helps intestines to absorb nutrients from digested food. Acid plays and important role in absorbing Vitamin B12, which is very important for proper brain function, nervous system and in the blood forming.

Result – From the above listing causes it is clear that due to the indiscipline life style acidity problem may occur. For solving the above problem I have divided this study into four parts.

A. Breathing Exercise
B. Traditional Exercise
C. Daily Routine of Life
D. Nutritive Food

A. Breathing Exercise - Breathing exercise is very helpful in maintaining our health. There are three main popular breathing exercises present in yoga, their names are given below.

1. Bhastrika Pranayam
2. Kapal Bhati Pranayam
3. Anulom Vilom Pranayam

By practicing these three breathing exercise daily for 15 min. to 30 min. each in morning time or evening time. During performing these breathings exercise your stomach must be empty.. Due to these breathings exercise oxygen level in our body may get increased and metabolic activities get balanced. Degenerate cells may get start to regenerate. Digestion and absorption of nutritive food also increase in our body.

B Traditional Exercise - By doing traditional exercise metabolic activities of body becomes normal, excessive fat get burn, strengthening our muscles. If muscles become strong than the sphincher between the oesophagus and stomach become strong and close properly. Due to the proper functioning of sphincter prevent leakage of acid into oesophagus. Traditional exercise may be of following type.

1. Surya Namaskar.
2. Dand Baithak
3. Running
4. Yoga Asanas

1. Surya Namaskar - By doing surya namaskar daily body gets flexible. If you practice daily surya namaskar minimum 30 and maximum 100 times than your body get fit within 2 or 3 months.

2. Dand Baithak - It is actual traditional exercise. There are several Dand and Baithak. These exercises are hard to do but it is helpful in making body strong and muscular. By doing these exercise our BMI Body Mass Index comes in normal parameter and also increases the absorbing power of different types of vitamins, minerals and salts in our body.

3. Running - Running is a good exercise. Its make our respiratory system strong. If you runs 2 to 3 km daily means your body get fit. While running do not take breathe through mouth. It is very harmful for our health because several micro-organisms directly enter into our stomach. If you do not take care of this means your hard work goes to wastage. It shows negative result to you.

4. Yoga Asana - Yoga asana is our traditional exercise. It makes our body more flexible and strong. There are several asanas. You may practice according to your needs such as Sirsasana, Sarvangasana, Halasana, Chakarasana, Mandukasana, Vajarasana, Gaumukhasana, Markatasana and etc. For getting maximum benefit you can do these each asanas for 5-5 min daily. According to your strength.

C. Daily Routine of Life - Daily routine means work of our daily life such as get up time, sleeping time, eating time, drinking water time and etc. it should be in proper time. According to my knowledge, A person may follow following daily routine time for his healthy life.

1. Get up early in the morning around 5:00 AM.
2. Drink 2-3 tumbler of warm water.
3. After that go for fresh.
4. Than do breathing exercise for one hour.
5. After that do some traditional physical exercise and asanas.
6. After exercise take rest for 5 to 10 min.
7. After rest take bath and breakfast.
8. After that according to your work you follow your routine
9. Take lunch between 11 to 11.45 am or fixed the time of your lunch whatever it may be.
10. After 1 hour 30 min. of lunch drink water.
11. After that drink water in a regular interval of 2 hours.
12. After that around 4 to 5 pm. take some juices or fruits. According to the season.
13. In last fixed time for dinner also.
14. After 1 hour of dinner take one tumbler of milk and go for bed.
15. In this way we have completed simple daily routine of life after taking 7-8 hour night sleeping.

By following above routine you become healthy.

D. Nutrition Food- For maintaining our health food is an important factor in our life. Following direction are helpful in maintaining healthy life.

1. Eat nutritive foods and avoid junk, fast food.
2. Eat fresh cooked food and fruits as possible as you can.
3. Eat salads during lunch and dinner time daily.
4. Take germinate grams and moong in breakfast, if you have no problem of acidity.
5. Eat curd during lunch.
6. After one hour of lunch drink whey.
7. Around 4 to 5 pm take some fresh fruits.
8. Avoid warehouse repine fruits and pesticides used fruits
9. Buy fresh fruits from market such as Guava, Papaya, and Water melon from villager and eat according to the season.

10. Avoid excessive intake of sugar, salt, maida and fried items in your diets.
11. Eat cow ghee and milk. If you have no problem of acidity.
12. Eat jaggery (Gud) instead of sugar.

Nutritive food provides balance diet to our body. It is enough to keep us healthy

Discussion - Depending on timing of breathing exercise its shows effect on health of a person. If a person can do 15 min, 30 min or 1 hour daily yoga than their effect will be different on their body. According to their bodies' nature, normal person can perform 15 min breathing exercise daily. Person having some problem can do 30 min. breathing exercise. If a person suffering from some specific disease than he can perform 1hour breathing exercises daily.

Traditional exercise strengthening our body. After practicing traditional exercise absorbing of vitamins, minerals and salts are increasing in our body. Normal person can do easily whole exercise. If a person having some problem can do less exercise for 1 or 2 years. After that he will be performing more exercise because his bone and muscle get stronger than before. Due to traditional exercise calcium deposition level increase in our body. According to daily routine of time table keeps you healthy for forever. Body's health depends on type of food we take. Junk and acidic food may cause acidity and other several diseases in human beings and also degenerate our body cells fastly.

Findings –

1. By doing daily yoga and traditional exercise body remain healthy and initial stage acidity cures.
2. Yoga provides sufficient oxygen to the body and mental relaxations or peace to the mind.
3. Traditional exercise gives sufficient strength to the body and provides strength to sphincter so it may close properly.
4. Due to regular exercise absorption of calcium, vitamins and other minerals increase in our body.
5. Due to absorption of calcium body become very strong.
6. Strong and energetic body are the symbols of good health.

Suggestions –

1. If we are doing regular yoga, traditional exercise and asanas from childhood than your body remain healthy forever.
2. Avoid excessive intake of sugar, salts, maida, fried item, junk foods, and cold drinks in our diets.
3. Eat fresh cooked food and fresh fruits.
4. Give time to your body for doing yoga and traditional exercise, than you will see you have lots of time for doing your works and achieving your goals.
5. By doing yoga and traditional exercise every family, society and young generation remain healthy.
6. Young generation is the future of our nation. If they have strong body and sharp mind than our nation become develops very fastly.

Conclusion – Initials stage acidity can be cured permanently by following above methodology Due to acidity person are not able to do work properly in their daily life. In this way person loss his valuable time and also suffer his development side of life. This loss bears not only his family, but indirect this effect comes on our society, state and our nation, because progress of any nation is totally dependent on citizens of their country.

References :–

1. Pt. Shri Ram Sharma (2012) Chiryouvan Avam Shashavat Soundary Akhand Jyoti Sansthan, Mathura.
2. Swami Ramdev (2005) Yoga Sadhana V Yoga Chikitasa Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
3. Swami Ramdev (2005) Pranayam Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
4. https://www.liveveda.com/ailment-disease/pages/acidity-know-more.aspx#
5. http://www.buzzle.com/articles/acidity-symptoms-and-treatment.html
6. http://patient.info/health/acid-reflux-and-oesophagitis
7. http://eyogaguru.com/how-to-reduce-excess-stomach-acid-and-cure-acidity-by-yoga/
8. http://www.healthcentral.com/acid-reflux/c/31052/16628/acid-reflux/
9. http://www.livestrong.com/article/345432-yoga-acid-reflux/

✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲

Monthly variation of some Physico-Chemical properties of River Bewas Water in Chitora Dam of the Sagar (M.P.) India

Dr. Shailendra Singh Rajput *

Abstract - The influence of monthly changes on the properties of water from Bewas River at Sagar was investigated. Water samples from the specific points were collected and analysed for its various physico-chemical properties. Most of the physico-chemical variables showed monthly variations. High values of total alkalinity, chloride, biochemical oxygen demand and chemical oxygen demand of river indicate high pollution status of water. The physico-chemical characters of water are normally changed due to organic and inorganic compounds and influx of microorganisms in water.
Key word - physico-chemical parameter, River water, DO, BOD, COD.

Introduction - Physico-chemical properties characterize any water body. The physical and chemical properties of a fresh water body are characterized by the climatic, geochemical, geomorphological and pollution conditions. The biota in the surface water is governed entirely by various environmental conditions. The primary production of organic matter is in the form of phytoplankton and macrophytes which are more intense in lakes and reservoirs than in rivers. In contrast to the chemical quality of water bodies which can be measured by suitable analytical methods, the biological quality is measured by both qualitative and quantitative procedures.

Water is often called the universal solvent. The quality of water is vital concern for mankind, since it is directly linked with human welfare. Generally, the functions directly relate to their physical, chemical and biological integrity. Physical properties of water in any aquatic system are largely regulated by the existing meteorological conditions and chemical properties. The assessment of the chemical criteria of the water body helps in, (i) evaluating the chemicals that cause of toxicity to aquatic life, (ii) studying the long-term effects on the ecosystem and (iii) conducting the status and monitoring of wetlands resources by studying their physico-chemical.

Materials and Methods:

Sampling Site - Sagar is located at $23^0 10'$-$24^0 27'$ north latitude and $78^0 4'$-$79^0 21'$ east longitude and is about 540 meters above the mean sea level. The Tropic of Cancer passes through the southern part of the district. Chitora dam is situated as south east and distance is 16 km from the Sagar city. The dam is made on Bewas river. It is supplying water approximately 42 wards of the Sagar city for the domestic uses.

Collection of samples - The water samples were collected in clean and sterilized plastic bottles from Chitora Dam of Sagar at monthly intervals from January 2003 to December 2004. The container was thoroughly cleaned before use and rinsed 3 to 4 times with the water from which the sample was drawn and brought to the laboratory for physico-chemical analysis. The experiment usually started at 8 AM in the morning. In the present study the important parameters selected to study are: Hydrogen ion concentration (pH), Temperature, Free carbon-dioxide (Free CO_2), Chloride, Alkalinity, Total hardness, Calcium hardness, Magnesium hardness, Dissolved Oxygen (DO), Biochemical Oxygen Demand (BOD), Chemical Oxygen Demand (COD), Phosphate and Nitrate, following standard methods (1,2,6,13).

Results and Disscussion - In the present investigation, the temperature (^{0}C) ranged from 19.1 to 29.9. Highest temperature was recorded in the month of May and June and thereby declined steadily becoming minimum in the winter season (December and January). The pH value ranged from 7.83 to 9.23. (Table 1) Highest pH values were observed in the month of December. Garg (4) noticed the pH value of surface and ground water of Roorkee city in the range of 6.5 to 7.5. Data showed that the free carbon-dioxide (mg. L^{-1}) ranged from 0 to 18.8. The maximum free CO_2 (21.8 mg. L^{-1}) value was recorded from March to August, while minimum (0 mg. L^{-1}) in the month of November to February in throughout the investigation period.

Present results revealed that chloride (mg. L^{-1}) ranged from 69.5 to 139.2. Maximum chloride (Table-1) content was recorded in the month of November, while minimum in the month of August. As per WHO the permissible limit of chloride

* Guest Lecturer (Botany) Dr. Rajeev Gandhi Govt. College, Banda, Sagar (M.P.) INDIA

is (200 mg. L^{-1}) and excessive (600 mg. L^{-1}). In the present study, the chloride content of the water samples was within the acceptable limit. Kataria (8) reported acceptable limits of chloride while working with Kolar drinking water reservoir of Bhopal. Similar findings were also reported by many workers (13, 3)

The alkalinity (mg. L^{-1}) ranged from 144 to 342. It was noticed that the amount of alkalinity was less in July to August while maximum in winter season (December). Alkalinity values near 150 mg. L^{-1} are considered ideal if the corrosively index is satisfactory. In the present study the bicarbonate alkalinity was expressed as a total alkalinity, which ranges between 40 to 342 mg. L^{-1}. The ISI limit for total alkalinity is 50-200 mg. L^{-1}. It means the water sample showed higher alkalinity which can be attributed to the concentration of calcium and magnesium salts.

The Total hardness (mg. L^{-1}) ranged from 122 to 338. The calcium hardness (mg. L^{-1}) ranged from 79.8 to 106.5. The magnesium hardness (mg. L^{-1}) ranged from 9.7 to 56.6. (Table-1) Maximum values of total hardness, calcium hardness and magnesium hardness were recorded during June-July. Total hardness (mg. L^{-1}) of the samples ranged from to 122 to 338, while ISI standard permits any value less than 500. In the present study the total hardness values are within the limit of ISI. The magnesium hardness value recorded in the present investigation falls within the standards limit (30 to 150 mg. L^{-1}) as prescribed by WHO (1974), BIS (1992) and ISI (1991). Kataria *et al*., (9) reported total hardness value from 119 to 136 ppm while working with Kolar reservoir in Bhopal. Water having such hardness values may cause scale deposition and result in excess soap consumption (Kataria *et al*., 9). Kumaresan and Bagavathiraj (10) analyzed the physico-chemical properties of many waterfalls and well water of Courtallam of South India. They reported the magnesium content ranged from 18.7-140.4 mg. L^{-1} which was under the permissible limit (30 to 150 mg. L^{-1} as per WHO and BIS). Similar finding were also reported by other workers (Jain and Hasija (7); Mehta (13); Bhadram *et al*. (3).

In the present study the dissolved oxygen (mg. L^{-1}) ranged from 1.6 to 4.6. Maximum dissolved oxygen values were recorded in the month of August-September, while lowest in May-June throughout the investigation period. The dissolved oxygen value increased from May to September and then declined from October to December (Table -1). The aquatic life is held responsible for lowering the value of dissolved oxygen. The ISI suggest that dissolved oxygen should be between 4-6 mg. L^{-1}. The value of dissolved oxygen shows variation due to mixing of fresh water during rainy season. The rainy water is rich in dissolved oxygen content or in the rainy season the dissolved oxygen value in an unpolluted river is high. The presence of DO in water may be mainly attributed to two distinct phenomena (i) direct diffusion from the air and (ii) photo-synthetic evolution by aquatic autotrophs. Kataria *et al*., (9) recorded the DO, 0.18 to 9.6 ppm in borewell water of Bhopal city. Jain and Hasija (7) noticed the dissolved oxygen content which ranged from 3.0-3.2 mg. L^{-1} in Hanumantal lake of Jabalpur.

The BOD ranged (mg. L^{-1}) from 1.2 to 3.2. The highest value (3.2 mg. L^{-1}) of BOD was recorded during September, while lowest (1.2 mg. L^{-1}) during May (Table-1). The average value of BOD was 2 mg. L^{-1}, which was lower than the permissible limit of 3 mg. L^{-1}. Kataria *et al*., (8) recorded the BOD from 2.0 to 3.6 ppm in borewell water of Bhopal city. Similar findings were also reported by (Mishra and Trpathi (12); Rajurkar *et al*. 14).

The chemical oxygen demand (mg. L^{-1}) ranged from 22.0 to 96.4. The COD values were found below the desirable limit (50-100 mg.L^{-1}) as prescribed by the ISI. Rajurkar *et al*., (14) observed the COD value from 1.1 to 78.2 mg. L^{-1} during pre-monsoon and from 5.0 to 310.0 mg. L^{-1} during post-monsoon of river Umshyrpi at Shillong. Mishra and Trpathi (12) analysed the Ganga river water and recorded the COD value 4.4 to 208.5 mg. L^{-1} which was beyond the permissible limit prescribed by WHO and ISI.

The phosphate (mg. L^{-1}) values ranged from 0.22 to 2.49. The higher phosphate contents (2.49 mg. L^{-1}) were recorded in the month of October, while lowest (0.22 mg. L^{-1}) in March. (Table-1) The ISI standard for inorganic phosphorus is 0.1 mg. L^{-1}. In the present study the phosphate contents were recorded high and beyond the permissible limit. It indicates that the soil has higher amount of phosphate deposits and by chemical reaction it enters the water. Mehta (13) reported high value of phosphate content in drinking water of Thane district of Maharashtra. Kataria *et al*., (9) reported the phosphate contents 0.006 to 1.20 ppm in water of Kolar reservoir in Bhopal. The present results are in close conformity with the findings of Garg *et al*., (4), and Bhadram *et al*. 3).

The nitrate (mg. L^{-1}) values 0.02 to 0.17.The highest value of nitrate was recorded in the month of July-August and thereby declined steadily becoming minimum in December-January in throughout the study period (Jan-2003 to Dec-2004). The nitrate value of the water samples has not crossed the acceptable limit (Table-1) in present investigation. Sengupta *et al*., (1988) also recorded nitrate content 0.12 to 1.4 mg. L^{-1} in Ganga river. Kataria *et al*., (9) reported nitrate 0.026-0.840 ppm in Kolar reservoir of Bhopal. Lakshmanan *et al*., (11) analysed nitrate concentration in well waters of twin cities of Hyderabad and Secunderabad, and reported 76% of dug wells and 40% tube wells found to have nitrate above 45 mg. L^{-1}, which crossed the standard limit.

References :-

1. Adoni AD (1985): Work book on limnology. Partibha Publishers, Sagar, India. pp. 216.
2. APHA (1992): Standard methods for the examination of water and wastewater, 18th edition, APHA-AWWA-WPCI, Washington DC. pp.1268.
3. Bhadram KV, Ravichandra M and Prashanthi M (2004): Evaluation of water quality index at Visakhapatnam city,

Andhra Pradesh. Nature Environment and Pollution Technology. 3(1):65-68.

4. Garg VK, Gupta R, Goel S, Taneja M and Khurana B (2000): Assessment of underground drinking water quality in eastern part of Hissar. Indian J Environ Prot. 20(6): 407-412.
5. Goel A (2002): Some physico-chemical characteristics of ground water used in some rural areas of Hardwar. Asian J Chemistry. 14(1): 537-539.
6. Gupta PK (2002): Methods for environmental analysis of water, soil and air. Argobios publication. pp.408.
7. Jain Y and Hasija SK (2000): Studies on a polluted water body of Jabalpur with reference to its physico-chemical and biological parameters. J Env Poll. 7(2):83-87.
8. Kataria HC (1990): A bio-chemical analysis of drinking water of Raisen distrit (M.P.) Asian J Chem Reviews. pp.66-68.
9. Kataria HC, Quereshi HA, Iqbal SA and Shandilya AK (1996): Assessment of water quality of Kolar reservoir in Bhopal (M.P.). Poll Res. 15(2): 191-193.
10. Kumaresan A and Bagavathiraj BK (1996): Physico chemical and microbiological aspects of Courtallam water. Poll Res. 15(2): 159-161.
11. Lakshmanan AR, Krishna Rao T and Vishwanatha S (1986): Nitrate and Fluoride levels in drinking water in twin cities of Hyderabad and Secunderabad. J Env Health. (28) 1: 39-47.
12. Mishra BP and Tripathi BS (2003): Seasonal variation in physico-chemical characteristics of Ganga water as influenced by sewage discharge. Ind J Ecol. 30(1): 27-32.
13. Mehta MB (2003): Drinking water quality of ground water from selected sample points around Thane district of Maharashtra. J Indus Poll Control. 19(2): 153-157.
14. Nagarathna and Hosmani SP (2002): Correlation between physico-chemical parameters and phytoplanktons in a polluted lake. Indian Science Congress, Advance Abstract, Part-III. pp.10.
15. Rajurkar NS, Nongbri B and Patwardhan AM (2003): Physico-chemical and biological investigation of river Umshyrpi at Shillong, Meghalaya. Ind J Env Health. 45(1): 83-92.
16. Trivedy RK and Goal PK (1984): Chemical and biological methods for water pollution studies. Environmental Publications, Karad. pp.210.

Table-1: Monthly variation in physico-chemical parameter of River Bewas water in Chitora Dam of Sagar (Jan-2003 to Dec-2004)

	Tem	pH	Fc	Alk	Ch	Th	Cah	Mgh	DO	BOD	COD	Phos	Nitr
JAN-2003	19.2	9.04	0.0	298	79.5	170	81.9	21.4	3.4	1.8	48.0	0.42	0.04
FEB	20.0	8.70	4.5	242	83.4	170	82.3	21.3	2.8	1.4	91.0	0.38	0.06
MAR	22.8	8.41	11.6	284	72.8	220	89.7	31.7	2.8	1.6	83.2	0.24	0.02
APR	24.5	8.52	12.7	273	98.5	226	90.1	33.0	3.0	2.1	68.0	0.53	0.05
MAY	28.6	7.89	14.3	184	127.5	272	91.8	43.8	1.6	1.2	62.4	0.82	0.07
JUN	29.4	7.92	16.1	177	132.6	312	106.5	49.3	2.8	1.5	34.0	1.85	0.09
JUL	28.9	7.91	18.8	190	121.3	290	92.4	48.0	3.0	1.8	39.7	2.10	0.12
AUG	27.8	8.00	2.9	204	69.5	180	79.8	24.3	3.4	2.0	22.0	2.45	0.15
SEP	26.9	7.95	2.9	276	90.9	122	81.9	9.7	3.8	2.6	34.1	2.30	0.17
OCT	26.2	8.84	4.5	286	76.7	130	83.4	11.3	3.6	2.8	48.0	1.45	0.10
NOV	23.1	9.20	0.0	330	139.2	169	86.1	20.1	3.0	2.4	44.6	1.05	0.09
DEC	19.1	9.23	0.0	342	85.2	148	84.0	15.5	2.8	2.0	62.0	0.84	0.05
JAN-2004	20.7	8.80	0.5	325	82.3	180	84.5	23.2	3.6	2.4	96.4	0.55	0.04
FEB	21.1	8.64	3.9	230	89.8	160	81.9	19.0	3.0	2.2	86.4	0.41	0.07
MAR	22.2	8.31	9.7	274	84.4	240	91.1	36.2	2.8	1.8	32.4	0.22	0.09
APR	23.8	8.57	11.6	224	91.8	234	93.4	34.2	2.8	1.6	34.1	0.59	0.06
MAY	28.4	8.03	13.7	184	121.8	294	96.3	48.0	2.2	1.2	37.0	0.79	0.08
JUN	29.2	7.98	15.8	178	129.9	338	105.2	56.6	2.4	1.2	28.7	0.99	0.11
JUL	27.8	7.83	17.9	144	131.4	288	95.9	46.7	3.6	2.4	28.4	1.23	0.15
AUG	26.5	7.85	3.9	153	84.9	205	92.3	27.4	3.8	2.6	32.2	1.86	0.17
SEP	25.3	7.93	2.7	174	89.4	172	88.8	20.2	4.6	3.2	40.2	2.34	0.10
OCT	24.0	8.64	3.9	228	71.3	144	87.6	13.7	4.0	3.0	56.6	2.49	0.14
NOV	23.5	9.14	2.9	318	124.4	172	88.1	20.4	3.6	2.4	82.3	1.68	0.05
DEC	20.1	9.18	0.0	334	111.1	158	86.7	17.3	3.4	2.2	84.0	0.76	0.02

*: Average values of three replicates; **Tem**-Temparature (^{0}C); **Fc**-Free CO_2 (mg/L); **Alk**- Alkinity (mg/L); **Ch**-Chloride (mg/L); **Th**- Total hardness (mg/L) **Cah**-Calcium hardness (mg/L) **Mgh**- Magnesium hardness (mg/L) **DO**- Disolved oxigen (mg/L) **BOD**- Biochemical oxygen demond (mg/L) **COD**- Chemical oxygen demand (mg/L); **Phos**- Phosphate (mg/L) **Nitr**- Nitrate (mg/L)

****

Biomedical Waste Management - A case study of Dhar town M.P.

Dr. Darasingh Waskel *

Abstract - The present study aims to provide information about the management, segregation, storage and disposal of medical waste in public as well as private and government hospitals in Dhar town. The waste produced in the course of healthcare activities carries a higher potential of infection and injury than any other type of waste. The results revealed that all the hospitals involved disposed their generated waste into municipal waste dumpsites without any form of treatment, leading to unhealthy and hazardous environment around the health institutions, affecting patients and staffs and the well-being of the general public. The study also showed that about 200 kg total waste was generated per month by all 12 hospitals of which 60% and 40% were generated by public and private hospitals respectively.
Key words - Biomedical waste, Hospitals, Management, Infectious waste.

Introduction - Good medical care is vital for life, health and general well-being and hospitals are health institutions that provide these services- Wastes generated from the hospitals, health care centers, Medical research institutions blood banks, Medical laboratories, etc. Medical and health care wastes heave sharply increased in recent decades due to the increased populations, number and size of health care facilities, as well as the use of disposable medical products (Mohee, 2005). Where it is now commonly recognized that curtain types of medical waste are among the most hazardous ant potentially dangerous of emerging wastes across many communities (Bdour et al. 2006).

According to World Health Organization (WH), 2009) 80% of medical waste are benign and comparable to domestic waste while the remaining approximate of 20% is considered hazardous, as it may be infections, toxic or radioactive. It is important to realize that if both these types are mixed together then the whole waste becomes harmful.

Objectives of the Bio-medical waste (BMW) management – Objectives of the Bio-medical waste (Management and Handling Rules 1998) are:

1. To prevent transmission of diseases from patient to patient from patient to health worker and vice versa.
2. To prevent injury to the healthcare workers and workers in support services, while handling bio-medical waste.
3. To prevent general exposure to the harmful effects of cytotoxic genotoxic and chemical biomedical waste.

Steps in Biomedical waste management – Medical waste should by managed according to its type and characteristics. For waste management to be effective, the waste should be managed at every step from acquisition to disposal. The elements of comprehensive waste management system are waste survey, Segregation, accumulation & storage, transportation, treatment, disposal and the waste minimization etc.

Cost of Biomedical waste management – The cast of construction, operation and maintenance of system for managing waste represents a significant part of overall budget of a hospital if the BMW handling rules have to be implemented in their true spirit. self-contained one- site treatment methods may be desirable and feasible for large healthcare facilities. They will not be practical or economical for smaller institutes. An acceptable common system should be in place which will provide regular supply of color coded bags, dally collection of infectious west, safe transportation of waste to off site treatment facility and final disposal with suitable technology (Rao et al. 2004, Chitins et al., 2003).

Table 1 : categorization and colour coding of the container

S.	Substance / waste material	Category	Colour coded bags
1	Human tissues organs, animal waste blood & body fluids	1	Red
2	Animal and slaughter house waste	2	Orange
3	Microbiological & biotech -nological waste	3	Yellow
4	Waste sharps	4	Blue
5	Discarded medicines	5	Blue
6	Solid wastes	6	Yellow/ Black
7	Disposables	7	Yellow/ Black
8	Liqvid waste	8	Black
9	Chemicals	9	Yellow/Black

Materal's and Methods :

Study Area – Located in the Malwa region of western Madhya Pradesh state in central India. It is the administrative

* Department of Zoology, Maharaja Bhoj Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA

headquarters' of Dhar district. The town is located 33 miles (53 km) West of Mhow, 908 Ft (277m.) above sea level.

The Dhar town has a population of about 20 lacs people Disposal of the municipal solid waste mixed with the medical waste with no treatment at all is carried out, in open municipal dumpsifesalong Dhar town and this has led to serious environmental and social problems in the town.

Sampling and Date Collection – A general Survey of the operation procedures practiced in the handling, treatment and disposal of medical waste was carried out nongovernment and private hospitals and Nursing home. Detailed information was collected from each hospitals by means structured questionnaires. Polythene bags ware provided for each hospitals on the expected waste generation rate. The waste were sorted out in to different components and measured after every 24 hours. Waste generation rates were obtained on weight basis described by Sangodoyin Coker, Silva et al. (2005).

Results and Discussion - The finding of the present case study are as follow :

Number of hospitals - Out of total approximately 12 hospitals and 10 Nursing homes in Dhar town.

Number of beds – Maharaja Bhoj government hospital there are 1000 beds and in private hospitals the number is 1100 beds (fig-2).

Waste generated – Biomedical generated in kg/ month in various categories in govt. hospital 160 and in private 100 kg/month (fig-2)

Assessment of operation procedures – During this study. it was observed that majarity of the hospitals investigated had no waste management department or plan. There is also no training programmed for the sanitary workers.

Segregation – The best way to reduction and effective management of biomedical waste is segregation and identification of waste, This can be achieved by Scrting the waste is to colour coded polythenebages of containers. Investigation revealed that all twelve hospitals gave priority to segregation of sharps, bio hazardous and infections wasts. It was also observed that the collection of these wantons from the external storage facilities within the hospital premises & subsequent disposal at the municipal dumpsites by the contracting firms is not regular.

Waste generation – Investigation revealed that none of the hospitals had records of volume and kind of weste the generate making this the most difficult aspect of evaluation doing this surrey. Thes low waste generation rate may be sa a result of poor patronage of these hospitals due to the poverty, perference to alternative traditional medicine and religious beliefs and practices by the people living in the study area.

Final Disposal – This study showed that the present waste management practice employed by the sampled hospitals in the Dhar town is poor. These are no incinerators in any of the health facilities for burning infectious wastes, and no form of treatment is carried out on the waste before disposal. A visit to the municipal dumpsite along Sitapat road revealed hooting more than open dumping and burring of these wastes, with human scavengers having a filled day looking for what they can pick, reuse and possible resell to the public whiout considering the health implications of their actions.

Conclusion – Management of biomedical waste is a serious environmental problem in developing countries like India. Safe and effective Management of waste is not only a legal necessity but also a social responsibility. Lack of concern, motivation, awareness and cast factors are some of the problems faced in the proper hospital waste management.

Proper surveys of waste management procedures are needed. Clearly, there is a need for education as to the hazards associated with improper waste disposal proper collection and segregation o bio-medical waste are important. Hence, healthcare provides should always try to reduce the waste generation in day to day works in the hospitals.

From the investigations carried out , the following suggestions are made –

1. Every health care facility should have a waste management unit to seriously handle the waste management practice.
2. Cleaners, Nurses and sanitary workers handless should be properly trained.
3. Shorting of wastes as sources using the colour-coded system being practiced in countries like UK, India etc.
4. Government should formulate and enforce laws on good waste disposal practices.
5. Government should ensure that health care facilities have good and functioning incinerators or provide a central incinerating facility where these waste could be taking to and treated before final disposal.

References :–

1. Mohee R. (2005) : Medical wastes characterization in health care institution in Mauritius waste manage, 25:575-81.
2. Bdour A, Altrabsheh B, Hadadin N, Al-shareif M (2006), Assessment of medical wastes management practice : a case study of the northern part of Joudan Waste Manage , 27(6): 746-59.
3. Sangodoyin A.Y. and Coler A.O. (2005) "case study Evaluation of Health care solid waste and pollution aspeets in Ibadan, Nigeria" Journal of Applied science, Engineering and Technology, vol. 5, No. 1 & 2:27-32
4. Yelebe Z.R. and Pugate Y.T. , (2012) "Effect of Vioaugumentation of aerobic digestion of biodegradable organic niaste", J. Appl. Technal, Environ Sanit . 2(3) 165-174.
5. Patil G.V. , and Pokhrel K., (2004) "Biomedical salid waste menagement in an India hospital : a case study. Waste management 2 (5), 592-599.
6. Shomar R. Abed Y. (2013). Laboratory emplogees perpception about their workload and working envivonment in governmental promary health care medical loboratories- gaza strip (Palestine) into J med sci public Health, 2:862-869.

7. Shifecraw y, Abebe t. Mihret A (2012). Sharps injuries and exposure to blood and bloodstained body fluids involving medical waste handlors. Waste Manage., 30, 1299-1305.
8. Bio-medical waste (Manaement and Handling) Rules, 1998 MOEF, New Delhi.
9. Ananth A, Prashanthin V, Visvanathan C (2010) Health care waste management in Assa. Wate Manage., 30:154-161
10. World health Orgnixation (WHO) (2009) Wastes from health care activities. Fact sheet No. 253, Geneva.
11. Khala A (2009) Assessment of Medical Wste Management in Jenin District Hospitals M.Sc. Thesis , An – Najah National University, Palostine

****

Green And Novel Protocol For Some Dihydropyrimidinones

Tanuja Kadre* Anjna Jaiswal Shrinivasarao Jetty*** Shubha Jain******

Abstract - A simple, efficient and practical procedure for the synthesis of dihydropyrimidinones using Amberlyst® 15 dry and TBAB in trace amount, used combination as a novel acid catalyst is described under microwave assisted solvent-free conditions/conventional. The catalyst exhibited remarkable reactivity. The method offers several advantages including high yields, environmentally friendly procedure, very short reaction times and simple work up procedure. Microwave assistedcondition reduced reaction time with several folds.
Key-words-Amberlyst15Dry , TBAB, Dihydropymidinones,

Introduction - Replacement of conventional, toxic and polluting Bronsted and Lewis acid catalyst with eco - friendly reusable solid acid heterogeneous catalysts like acidic zeolites, clays, sulfated zirconia and ion exchange resins is an area of current interest[1-2]. In the recent past ion exchange resins in general and styrene-DVB matrixed resin sulfonic acid(Amberlyst®15DRY) in particular, which are strongly acidic and chemically as well as thermally stable have been found to be excellent catalysts for a variety of the major organic reactions like esterification, alkylation, acetylation, acylation and condensation [3-6]. Dihydropyrimidinone are known to exhibit a wide range of biological activities such as antiviral, antitumor, antibacterial, and anti-inflammatory properties[7].In addition, these compounds have emerged[8-9]. Recent improved methods for the synthesis of dihydropyrimidinones were developed due to many important biological activities associated with this skeleton prominent among these are antiviral, antitumor antibacterial [10-12] anti-inflamatory activities [13-15].Among simple dihydropyrimidinones

Experimental Section - All solvents and reagents were purchased from Aldrich and Merck with high-grade quality, and used without any purification. The Indion-130and Idion-190 were purchased from Ion Exchange India Ltd. Nafion-H and Amberlyst® 15 DRY, TBAB(tertiary butyl ammonium bromide), were purchased from Aldrich. Melting points were determined on electro thermal apparatus by using open capillaries and are uncorrected. Thin-layer chromatography was accomplished on 0.2-mm precoated plates of silica gel G60 F254 (Merck). Visualization was made with UV light (254 and 365nm) or with iodine vapors. IR spectra were recorded on a FTIR-8400 spectrophotometer using DRS prob. ^{1}H-NMR and ^{13}C-NMR spectra were recorded in DMSO-d6 solutions on a Bruker AVANCE 400NMR spectrometer operating at 400 (^{1}H) and 100 (^{13}C) MHz LCMS analysis (EI, 70V) were performed on a Hewlett-Packard HP 5971 instrument. Nonconventional method performed in Samsung domestic Microwave oven.

General procedure for the synthesis 4-aryl substituted 3, 4 dihydropyrimidinones

METHOD A - A mixture of â-diketone (0.2 mmol), aldehyde (0.2 mmol), urea/thiourea (2.5 mmol), and Amberlyst® 15 DRY (50 mg) in (0.25 mgs) TBAB in EtOH solution were refluxed for an appropriate time as indicated by TLC. The solid acid catalyst was filtered and washed with ethyl acetate until free from organic material. The solvent was evaporated at reduced pressure, obtained solid washed with water (10x3ml) until product is free from ionic liquid and obtained solid was recrystallised from ethanol to afford pure 3, 4-dihydropyrimidin-2-one/thione 2 in excellent yields.

METHOD B - A mixture of â-diketone (0.2mmol), aldehyde (0.2mmol), urea/thiourea (2.5 mmol), and Amberlyst® 15 DRY (15 mg) .TBAB (.25mgs) were Microwave irradiated for appropriate time as indicated by TLC. The catalyst was filtered and product was washed with distilled water (10x3ml) until free from ionic liquid .Obtained solid was crystallized from ethanol to afford pure 3, 4-dihydropyrimidin-2-one/thione 2 in excellent yields.

General procedure for the synthesis 3, 4-dihydro-4, 6-diphenylpyrimidin-2(1H)-ones

Method A - A mixture of acetophenone (2.0mmol) in Ethanol (15ml) was added benzaldehyde (2.0mmol), urea (2.5mmol) and Amberlyst® 15 DRY (15 mg) were refluxed for an appropriate time as indicated by TLC. The catalyst was filtered and washed with ethyl acetate until free from

*Laboratory of Heterocycles, School of Studies in Chemistry & Biochemistry,Vikram University, Ujjain, (M.P.) INDIA
**Laboratory of Heterocycles, School of Studies in Chemistry & Biochemistry,Vikram University, Ujjain, (M.P.) INDIA
***Laboratory of Heterocycles, School of Studies in Chemistry & Biochemistry,Vikram University, Ujjain, (M.P.) INDIA
****Laboratory of Heterocycles, School of Studies in Chemistry & Biochemistry,Vikram University, Ujjain, (M.P.) INDIA

organic material. The solvent was evaporated at reduced pressure and obtained solid was crystallized from ethanol to afford pure 3, 4-dihydro-4, 6-diphenylpyrimidine-2(1H)-one 3 in excellent yields.

Method B A mixture of â-diketone (2.0 mmol), aldehyde (2.0 mmol), urea/thiourea (2.5 mmol), and Amberlyst® 15 DRY (15 mg) TBAB (0.25mgs) were Microwave irradiated for appropriate time as indicated by TLC. The catalyst was filtered and product washed with distilled water (10x3ml) until free from ionic liquid (TBAB). Obtained solid was recrystallised from ethanol to afford pure 3, 4-dihydropyrimidin-2-one/thione 2 in excellent yields

Results and Discussion - (Diagram see in the last page) To evaluate the catalytic effect of various ion exchange resins we started with the sample reaction of ethylacetoacetate (2mmol) with benzaldehyde (2mmol) and urea (2.5mmol) in refluxing ethanol without and with use of various acidic ion exchange resins as catalysts to afforded dihydropyrimidinone (2) in various yields (Table 1). It can be seen from Table1 that Amberlyst® 15 DRY was the most efficient among the five solid acidic ion exchange resins studied. It was found that 5 mg of Amberlyst® 15 DRY with TBAB (0.25mgs), is sufficient to carry out the Biginelli reaction successfully with higher yield.. An increase in the amount of Amberlyst® 15 DRY to more than 5 mg showed no substantial improvement in the yield, whereas the yield is reduced by decreasing the amount of Amberlyst® 15 DRY and very small amount of TBAB is to up reaction very fast.

The effect of solvent on the reaction was also studied and ethanol was found to be the best solvent when considering the reaction yields and reaction time.

All aforementioned reactions proceeded expeditiously and delivered good yields with range of aromatic aldehydes containing electron donating and electron withdrawing groups. This three-component reaction also proceeds efficiently with a broad range of structurally diverse 1, 3-dicarbonyl compounds, aldehydes and urea was subjected under this protocol to produce the corresponding DHPMs (Table 1). A variety of dicarbonyl compounds could be used successfully. Thiourea was also used with similar success. The results are presented in Table - 1. All the substrates were smoothly converted to their corresponding products in excellent yields.

Table-1 - (See in the last page)

Conclusions - In conclusion, we have developed a simple, efficient, environmentally benign and improved protocol for the synthesis of 3, 4-dihydropyrimidin-2-ones/thiones over Amberlyst® 15 DRY with traces of TBAB as the catalyst with excellent yields. The simplicity of the system, ease of separation/reuse of the catalyst due to its heterogeneous nature, excellent yields of the products and ease of work-up fulfill various aspects of Green chemistry and make the present methodology environmentally benign.

References :-

1. Kamal; U, Sadek, Ramadan; A. Mekheimer, *Arabian .J Chem*. . 2008, 1, 79-82
2. Rovnyak; G, C, Atwal; K. S., Kimball; S, D, et al., *J. Med.Chem*. 1992, *35*, 3254
3. Xia; Yu, Wei; LI, BAO; Liang, *Chinese Chemical Letters,* 2003, *14*, 993-995
4. Swanson;B,Atwal, Unger; S. E et al., *J Med. Chem*. 1991, 34, 806
5. Sidler; D, R,.Larsen;R, Chartrain;M, et al., *Pct Int. Appl*. wo 99 07695
6. Nagarathnam; D, Wong; W, C S; Miao; W, et al. Pct Int. Appl. WO 97 17969
7. Snider; B, B, Shi; Z, *J Org. Chem*., 1993, *58*, 3828
8. Patil;A,D, Kumar;N,V , Kokke;W,C et al*., J Org. Chem*., 1995, *60*, 1182
9. Snider, B, Chen;J, Patil;A,D et al., *Tetrahedron Lett.,* 1996, *37,* 6977
10. Rama;V, Gujar;K, Vasudevan;J, *J. Chem. Soc. Chem. Commun*., 1995, 1369.
11. Biginelli; P, *Gazz. Chim.Ital*. 1993, 23, 360.
12. Ma;Y, C. Qian;C, Wang;LM.Yang;M, *J. Org. Chem*., 2000, *65*, 3864
13. Dwivedi; Namrata, Mishra; Ram, C, Tripathi; Rama P, *Letters in Organic Chemistry*, 2005*, 2*, 136-138
14. Paraskar; A.S.; Dewkr; G.K.; Sudailal; A. *Tetrahedron Lett*., 2003, *44*, 3305.
15. Eng; J.; Deng; Y. *Tetrahedron Lett*., 2001, *42*, 5917.
16. Ajbakhsh,;M., Mohajerani; B. Gangadasu; B, Palaniappan; S, Rao;V,.J. *Synlett*,2004,1285.
17. Rafiee; E., Jafari; H, *Bioorg. Med. Chem. Lett*., 2006, *16*, 2463
18. Mobinikhaledi1;Akbar, Bodaghi;Ali, Mohammad Fard, *ActaChim. Slov.*2010, *57,* 931-935

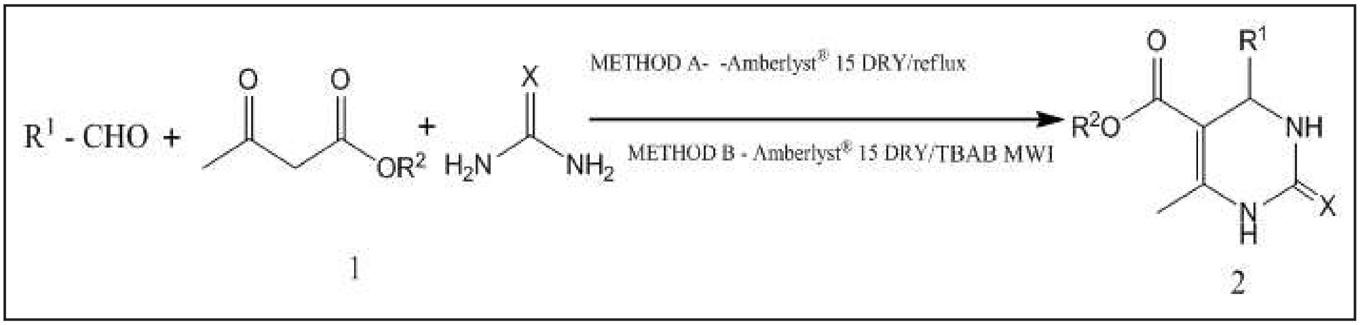

Table-1: Amberlyst® 15 DRY/TBAB catalyzed Synthesis of Dihydropyrimidine-2-(1H)-ones/Thiones

Entry	R^1	R^2	X	Products	Yield (%)	M.P (^oC)
1	C_6H_5	Et	O	2a	88	206-208
2	4-(CH_3O)-C_6H_4	Et	O	2b	90	201-202
3	4-(NMe_2)-C_6H_4	Et	O	2c	80	255-257
4	4-NO_2-C_6H_4	Et	O	2d	94	211-213
5	4-(Cl)-C_6H_4	Et	O	2e	90	215-216
6	3-(Cl)-C_6H_4	Et	O	2f	88	192-193
7	3-(Br)-C_6H_4	Et	O	2g	81	185-186
8	2,4-(Cl)-C_6H_3	Et	O	2h	92	249-250
9	4-Cl-C_6H_4	Me	O	2i	89	204-205
10	4-(NO_2)C_6H_4	Me	O	2j	95	236-238
11	4-(CH_3O)-C_6H_4	Me	O	2k	85	192-194
12	C_6H_5	Me	O	2l	86	209-211
13	4-F-C_6H_4	Et	O	2m	92	182-184
14	3-NO_2-C_6H_4	Et	O	2n	91	227-229
15	2-NO_2-C_6H_4	Et	O	2o	96	208-210
16	C_6H_5-CH=CH	Et	O	2p	90	230-232
17	2-4-$(Cl)_2$-C_6H_5	Me	O	2q	93	252-253
18	C_6H_5	Et	S	2r	89	208-210
19	2-NO_2-C_6H_4	Et	S	2s	92	205-207
20	4-(CH_3O)-C_6H_4	Et	S	2t	89	153-155

All compounds thus obtained were characterized by comparison of physical and spectral data with authentic samples.

****

Thermal Energy

Dr. Neeraj Dubey*

Introduction - Thermal Energy, also known as random or internal Kinetic Energy, due to the random motion of molecules in a system. Kinetic Energy is seen in three forms: vibrational, rotational, and translational. Vibrational is the energy caused by an object or molecule moving in a vibrating motion, rotational is the energy caused by rotating motion, and translational is the energy caused by the movement of one molecule to to another location.

Thermal radiation in visible light can be seen on this hot metalwork. Thermal energy would ideally be the amount of heat required to warm the metal to its temperature, but this quantity is not well-defined, as there are many ways to obtain a given body at a given temperature, and each of them may require a different amount of total heat input. Thermal energy, unlike internal energy, is therefore not a state function.

In thermodynamics, **thermal energy** refers to the internal energy present in a system due to its temperature. The average translational kinetic energy possessed by free particles in a system of free particles in thermodynamic equilibrium may also be referred to as the thermal energy per particle. In thermodynamics it is often most convenient and precise to think of heat as the transfer of energy, just as work is also a transfer of energy. Heat and work therefore depend on the path of transfer and are not state functions, whereas internal energy is a state function.

Microscopically, the thermal energy may include both the kinetic energy and potential energy of a system's constituent particles, which may be atoms, molecules, electrons, or particles. It originates from the individually random, or disordered, motion of particles in a large ensemble. In ideal monatomic gases, thermal energy is entirely kinetic energy. In other substances, in cases where some of the thermal energy is stored in atomic vibration or by increased separation of particles having mutual forces of attraction, the thermal energy is equally partitioned between potential energy and kinetic energy. Thermal energy is thus equally partitioned between all available degrees of freedom of the particles. As noted, these degrees of freedom may include pure translational motion in gases, rotational motion, vibrational motion and associated potential energies. In general, due to quantum mechanical reasons, the availability of any such degrees of freedom is a function of the energy in the system, and therefore depends on the temperature.

Heat is the thermal energy transferred across a boundary of one region of matter to another. As a process variable, heat is a characteristic of a process, not a property of the system; it is not *contained* within the boundary of the system. On the other hand, thermal energy is a property of a system, and exists on both sides of a boundary. Classically ,thermal energy is the statistical mean of the microscopic fluctuations of the kinetic energy of the systems' particles, and it is the source and the effect of the transfer of heat across a system boundary.

According to the zeroth law of thermodynamics, heat is exchanged between thermodynamic systems in thermal contact only if their temperatures are different. If heat traverses the boundary in direction *into* the system, the internal energy change is considered to be a positive quantity, while *exiting* the system, it is negative. Heat flows from the hotter to the colder system, decreasing the thermal energy of the hotter system, and increasing the thermal energy of the colder system. Then, when the two systems have reached thermodynamic equilibrium, they have the same temperature, and the net exchange of thermal energy vanishes and heat flow ceases. Even after they reach thermal equilibrium, thermal energy continues to be exchanged between systems, but the *net* exchange of thermal energy is zero, and therefore there is no heat.

Thermal energy may be increased in a system by other means than heat, for example when mechanical or electrical work is performed on the system. Heat flow may cause work to be performed on a system by compressing a system's volume, for example. A heat engine uses the movement of thermal energy to do mechanical work. No qualitative difference exists between the thermal energy added by other means. There is also no need in classical thermodynamics to characterize the thermal energy in terms of atomic or molecular behavior. A change in thermal energy induced in a system is the product of the change in entropy and the temperature of the system.

Thermal energy is the portion of the thermodynamic or internal energy of a system that is responsible for the temperature of the system. The thermal energy of a system scales with its size and is therefore an extensive property. It is not a state function of the system unless the system has been constructed so that all changes in internal energy are due to changes in thermal energy, as a result of heat transfer.

*Professor & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.) INDIA

Otherwise thermal energy is dependent on the way or method by which the system attained its temperature. Thermal energy can be transformed into and out of other types of energy, and is not generally a conserved quantity.

Earth's proximity to the Sun is the reason that almost everything near Earth's surface is warm with a temperature substantially above absolute zero. Solar radiation constantly replenishes heat energy that Earth loses into space and a relatively stable state of near equilibrium is achieved. Because of the wide variety of heat diffusion mechanisms,objects on Earth rarely vary too far from the global mean surface and air temperature of 287 to 288 K (14 to 15 °C). The more an object's or system's temperature varies from this average, the more rapidly it tends to come back into equilibrium with the ambient environment.

Thermal energy is energy possessed by an object or system due to the movement of particles within the object or the system. Thermal energy is one of various types of energy, wher**e 'energy'** can be defined as 'the ability to do work.' Work is the movement of an object due to an applied force. A system is simply a collection of objects within some boundary. Therefore, thermal energy can be described as the ability of something to do work due to the movement of its particles.

Because thermal energy is due to the movement of particles, it is a type of kinetic energy, which is the energy due to motion. Thermal energy results in something having an internal temperature, and that temperature can be measured - for example, in degrees Celsius or Fahrenheit on a thermometer. The faster the particles move within an object or system, the higher the temperature that is recorded.

Thermal energy is directly proportional to the temperature within a given system . As a result of this relationship between thermal energy and the temperature of the system, the following applies:The more molecules present, the greater the movement of molecules within a given system, the greater the temperature and the greater the thermal energy

+ molecules = +movement = + temperature = + thermal energy

As previously demonstrated, the thermal energy of a system is dependent on the temperature of a system which is dependent on the motion of the molecules of the system. As a result, the more molecules that are present, the greater the amount of movement within a given system which raises the temperature and thermal energy. Because of this, at a temperature of 0^{o}C, the thermal energy within a given system is also zero. This means that a relatively small sample at a somewhat high temperature such as a cup of tea at its boiling temperature could have less thermal energy than a larger sample such as a pool that's at a lower temperature. If the cup of boiling tea is placed next to the freezing pool, the cup of tea will freeze first because it has less thermal energy than the pool.

Matter exists in three states: solid, liquid, or gas. When a given piece of matter undergoes a state change, thermal energy is either added or removed but the temperature remains constant. When a solid is melted, for example, thermal energy is what causes the bonds within the solid to break apart.

Thermal energy is a concept applicable in everyday life. For example, engines, such as those in cars or trains, do work by converting thermal energy into mechanical energy. Also, refrigerators remove thermal energy from a cool region into a warm region.

Coal and diesel are used for the generation of thermal power in India. In fact, coal is the major source of energy used for the production of electricity in those areas that either have no nearby water power sites or are located near coal mines. In states like Uttar Pradesh, West Bengal, Bihar, Orissa and Madhya Pradesh, coal is the major source of power. Further, some industrial cities like Kanpur and Ahmedabad are served totally with the electricity generated by coal. Moreover, diesel engines for generating electrical power have been installed basically at small towns of the country. Installed capacity of such power plants is only a few hundred kilowatts.

The modern world is well aware of hydro-electricity. It is derived from a source, which is plentiful and above all renewable. Thermal power plants, on the other hand, use coal, petroleum and natural gas to produce thermal electricity. These sources are of mineral origin. They are also called fossil fuels. Their greatest demerit is that they are exhaustible resources and cannot be replenished by human. Moreover, they are not pollution free as hydro-electricity is. However, electricity, whether thermal, nuclear or hydro, is most convenient and versatile form of energy. It is in great demand by industry agriculture, transport and domestic sectors its use is closely related to productivity and standard of living of the people.

References :-

1. Robert F. Speyer (2012). Thermal Analysis of Materials. Materials Engineering. Marcel Dekker, Inc. p. 2. ISBN 0-8247-8963-6.
2. Hans U. Fuchs (2010). The Dynamics of Heat: A Unified Approach to Thermodynamics and Heat Transfer (2 ed.). Springer. p. 211. ISBN 978-1-4419-7603-1.
3. S. Blundell, K. Blundell (2006). Concepts in Thermal Physics. Oxford University Press. p. 366. ISBN 0-19-856769-3.
4. Thomas Waldmann, Jens Klein, Harry E. Hoster, R. Jürgen Behm (2012), "Stabilization of Large Adsorbates by Rotational Entropy: A Time-Resolved Variable-Temperature STM Study" (in German), ChemPhysChem: pp. n/a–n/a, doi:10.1002/cphc.201200531
5. Kerslake, Thomas W. & Ibrahim, Mounir B. "Analysis of Thermal Energy Storage Material with Change-of Phase Volumetric Effects." NASA Technical Memorandum 102457 (February 1990). 30 May 2008.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Fungicidal Activity Of Polyurethane Polymer On Wood Under Rainy Season

Kunjan Singh Songara* Anamika Jain**

Abstract - The anti fungal effect of the polyurethane polymer was investigated on wood strip. Antimicrobial activity was evaluated against *Aspergilus spp* by the "pour –plate techniques''. It was shown that the polyurethane polymer is inhibiting growth of colonies of *Aspergils spp.* These experiments carried out in rainy seasons.
Keyword - Fungicidal Activity, *Aspergilus spp*, Acetone, Wood Strips and Growth.

Introduction - As we know, polyurethane (PU) possesses good mechanical properties such as medium tensile strength and high elongation. It is used widely in the synthetic lather, fiber and adhesive. If it is treated with a biocidal agent, the application could be extended to sanitary, hospital and hosiery aeeas. For the biocidal (PU). It has been used in the antibiotic test of pig by injecting the (PU) containing drug[1].

The most important reaction in the formation and curing of urethane coating are shown below. The principal reaction is the formation of urethane from alcohols and isocyanides. Reaction of the isocyneate with water likes takes place in the moisture curing of one component isocyneate terminated coatings[2]. **(See in the last page)**

The overall reaction can be summarized as follows **(See in the last page)**

This reaction also points out the importance of handing perfectly dry components in the formulation of urethane coatings containing free isocyanate groups in order to avoid undesirable bubble formation due to formation of carbon dioxide.

Coatings are used for protecting surfaces ageist corrosion. Environmental degradation as well as biodegradation. The resistance to biodegradation is important in food industries, buried pipes in soil, marine structure and west water treatment system in these environments coating were in contact with different kind of bacteria[3]. During the t past few decades, several investigations have been carried out concerning the use of polymer films synthetics and natural zealots and particles with different ions (Ag, Cu ,Zn, Hg, Ti, Ni, and Co) as materials with bactericidal properties[4].

Fungicides are considered core chemicals that kill the fungus spores and mycelium. Presently fungicides play an important role to boost up the production of agricultural crops, industrial production, prolonging the utility of manufactured products and controlling the various human and fungal diseases. In view of the aforesaid acts of fungi, one may very well understand the importance of fungi toxic chemicals in agriculture as well as in industry[5].

The antifungal drugs that are commonly used to treat invasive aspergillosis belong to three classes with distinct mechanisms of action: the polyene amphotericin B, which acts on the cell membrane; the azole voriconazole, which acts on ergosterol biosynthesis; and the echinocandins, which act on the cell wall[6].

The genus *Aspergillus* includes seven subgenera, each containing several species. *Aspergillus spp*. Contain approximately 184 species, 40 of which have been reported to cause human or animal infective. *Aspergillus app*. reproduces by producing conidia on uniseriate or biseriate phial ides. *Aspergillus* colonies grow rapidly, producing white, green, yellow, or black colonies[7].

Method - Pour Plate Method for Fungicidal Activity of Polyurethane - Pour plate method was also used to check fungicidal activity of polyurethane. The experiment was performed by preparing Potato Dextrose Agar medium, pH 5.6 and autoclave it. Prepared medium was in molten form and inoculated with 0.1 ml test organism followed by pouring in the sterile Petri- plates. The medium was allowed to solidify for 30 minutes. These prepared plates were used for well diffusion method.

In this study, 0.1 ml test fungal isolate was inoculated in the molten potato dextrose agar medium and mix it well aseptically. Fungal isolate *Aspergillus sp.* and *Penicillium sp.* were used as test organisms and fresh plates were used for each test organism. Sterile well borer having size 8 mm were used for well preparation and 4 wells were prepared in each plate. All experiments were performed in triplicate.

Sample Preparation - Following samples were prepared for this study

1. Pure Acetone as control
2. 50 % Polyurethane prepared in acetone
3. 75% Polyurethane prepared in acetone
4. 100% Polyurethane

* Deptt. of Chemistry, Maharaja Bhoj Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA
** Deptt. of Chemistry, Govt. Holker Science College, Indore (M.P.) INDIA

Each of test samples was inoculated different well. Every nutrient agar plate was containing all test samples. Plates were initially incubated at low temperature for 10 minutes in refrigerator and then transferred to bacteriological incubator at 30° for 48 to 72 hours.

Preparation of Potato Dextrose Agar Medium

↓

Inoculation of test organism in autoclaved molten agar, mix it well and poured in sterile petri plates.

↓

Preparation of 4 well using sterile well borer

↓

Dispensing of test sample in each well

↓

Incubation of plates at 30°C for 48-72 hours

Figure.1: Plan of work used to check effect of polyurethane on fungi by Well Diffusion method

Result and Discussion

Fungicidal Activity under Rainy Season

Aspergillus sp.

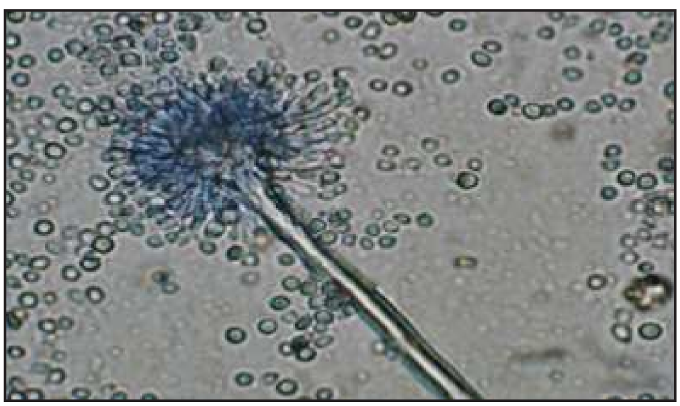

Figure-2 Microscopic structure of *Aspergillus sp.*

Fungicidal activity of polyurethane on *Aspergillus sp.* was performed under rainy conditions. It has been observed that wood strips coated with primer, paint and polyurethane controlled *Aspergillus sp.* growth at 96 hours at 25ºC and no *Aspergillus sp.* growth was observed. It has been found that set-1 and set-2 unable to control the *Aspergillus sp.* growth on the medium. It is also observed that wood strip coated with polyurethane gave similar results to the set-3 (Table.1)

Table .1: Result showing effect of polyurethane on *Aspergillus sp.* Under Rainy season

Time (Hours)	Set-1	Set-2	Set-3	Set-4
0	Growth	Growth	Growth	Growth
24	Growth	Growth	Growth	Growth
48	Growth	Growth	Growth	Growth
72	Growth	Growth	Growth	No Growth
96	Growth	Growth	No Growth	No Growth
120	Growth	Growth	No Growth	No Growth
144	Growth	Growth	No Growth	No Growth

Set-1 - Control

Set-2 - Wood strips coated with primer and paint

Set-3 - Wood strips coated with primer, paint and polyurethane

Set-4 - Wood strips coated with polyurethane only

Conclusion - It has been found that set-1 and set-2 unable to control the *Aspergillus sp.* growth on the medium. It is also observed that wood strip coated with polyurethane gave similar results to the set-3 and set-4.But it has been observed that set-3 and set-4 exhibited maximum anti fungal activity due to coating of poly urethane on the wooden strip and no fungal groth was observed after 72 hours in case of *Aspergilus sp*. and till 144 was not found growth of *Aspergillus sp*. We conclude that polyurethane polymer very effective under rainy season and active as a antifungal agent.

References :-

1. Huel. Hslung Wong and Meel. Show Lin. *Journal of polymer research* Vol. 5. No. 3 177- 186, July (**1998**)
2. Potter, T.A. and Venham, L.D. polyurethane Chemistry for High solids Coatings. Polymer. Mater.Sci. Eng., **63**, 912-20 (Eng.). (**1990**)
3. Akbarian. M, Olya. M.E., Atacefard. M,. Mahadavian. M. Proceedings of the 4th. International Conference on Nanostructures (ICN4) 12- 14 March, Kish Island, I. R. Iran (**2012**).
4. Dusan Zvekic, Vladimir V.Sdic. Antimicrobial properties of ZnO nanoparticles incorporated in polyurethane varnish. *Processing and Application of Ceramics*. 5(1)41-45(**2011**)
5. Dwivedi Smriti, Siddiqui. I. “Study of Fungicidal Activity” International Journal of Engineering Science and Innovative Technology (IJESIT) Volume 2, Issue 4, July (**2013**)
6. John W. Mouton, Down loaded from *http:*asc.asm.org/ on May1, by guest (**2016**)
7. Geiser, D. “Sexual structures in *Aspergillus*: morphology, importance and genomics”. *Medical mycology : official publication of the International Society for Human and Animal Mycology*.47. Suppl,1(s1): S21–S26. doi: 10.1080/ 1369378080 2139859. PMID 18608901. (**2009**)

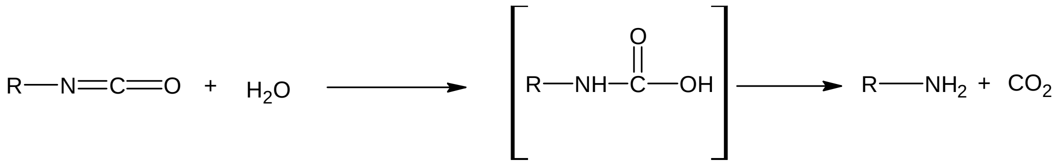

Carbonic Acid

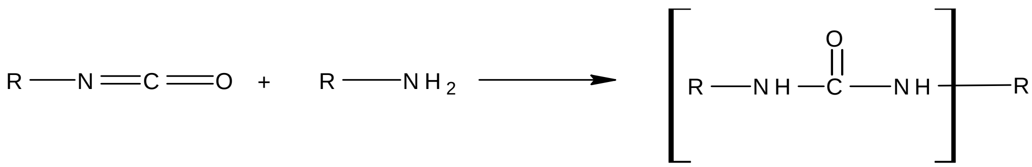

Substituted Urea

The overall reaction can be summarized as follows

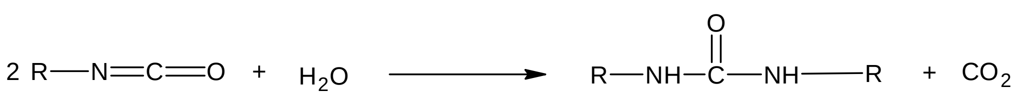

****

To Study Big Data Analytics Using Microsoft Azure Tool

Priyanka Khabiya *

Abstract - Big Data specify the unstructured data which is not managed by traditional algorithms. Big Data involves the development of technology to solve the problem of storage of unstructured data . Data are increasing day by day as Google process 5 billion searches per day and 1.2 trillions searches per year worldwide. Facebook send 10 billion Message per day, click like button 4.5 billion times and upload 350 millions new pics every day. Walmart handles 1 millions user and many more. The Hadoop is the platform which is used for management of data ,Now we have Microsoft Azure machine learning studio for managing data sets . Microsoft Azure Platform is a cloud based platform and use for predictive analysis . These paper proposes the Big Data Architecture which can be implemented using cloud based infrastructure services and introduce the general background of big data analytics and releted technologies,such as Internet Of Things,Hadoop,Microsoft Azure platform.The contribution of these paper is to summarize about Microsoft Azure tool for predictive analysis .
KeyWord - Big Data, IoT, Machine Learning, Hadoop, Microsoft Azure Tool .

Introduction - Definition of Big Data - Big data specify the noisy and collection of data which is not managed by traditional data management tools and algorithm. Today due to the growing world of IoT ,collection of data increases from MB(mega Byte) to ZB(zetta Byte).This explosion of data increases the problem of storage . Big data means the data which is difficult by its volume, variability, velocity and data value.The term Big Data appeared for first time in1998 in a Silicon Graphics (SGI) slide deck by Jhon Masjey with the title of “Big Data and the next Wave of InfraStress”.

5v’s of Big Data - (Table see in the last page)

Figure 1 (See in the last page)

Volume - The volume of data in enterprise repositories is increases per second form mega bytes to zetta bytes(10^{18}) .Google process 40000 search queries every second on average which translate to 3.5 billion searches per day and 1.2 trillions searches per year world wide.

Figure 2 (See in the last page)

Variety - There are different type of data available variety of data expanded as audio, vedio, image,xml, mobile data, web data, enterprise data, social media data, bio-medical data,statistics data,scientific data,sensor data log files etc. The variety of data contain structure ,semistructure and unstructured data.

Velocity - The velocity of data refers as timing and speed of data processing. It means the frequency of data to be processed .For an organization it is necessary to determine how much data is enough in setting its processing system architecture and algorithm.Velocity means the speed of data moves around and new data generated. for example the speed of social media message of going viral in minutes, now big data technology analyze the data while it is generated.The example of velocity of data is streaming application like Amazon Web services Kinesis .

Variability - It means messy ,noisy and trustworthiness of data .the quality and accuracy of twitter posts with hash tags, abbreviations,typos and colloquial speech uncontrollable. The big data analytics technology now allows us to work with these types of data.

Value - It refers data converted to value for some useful purpose because the data on its
own is worthless.,the value means analysis of accurate data

Proposed Big Data Architecture - Big Data Architecture contains three important aspects -

1. Data Source(IoT).
2. Platform.
3. Data visualization.

Figure 3 (See in the last page)

Data Source (IoT) - The Term explain that the Data is comes from different sources IoT becomes common source for Data .As the billions of devices are connected to the internet .Each devices are generating the data and day by day data is exploded increasingly.

Figure 4 (See in the last page)

About Hadoop Platform - Hadoop platform is use for large data sets.Hadoop is the framework in a distributive computing environment for processing and giving solution for big data processing.Hadoop was developed by Google’s MapReduce that is a software framework where an application break down into various parts. There are some components of hadoop. The most common file system used by Hadoop is the Hadoop Distributed File System (HDFS).

HDFS - Hadoop Distributed file system store large data sets and process information

* Asst. Professor (Computer Science & Engineering) SYSITS, Ratlam (M.P.) INDIA

Incremently. HDFS has the following features -

- Hadoop work on clusters of machines
- HDFS manages large data sets.
- HDFS provides a write-once-read-many access model.
- HDFS is built using the Java language making it portable across various platforms.

Map reduce - The large files are processed by mapreduce program. Mapreduce break the task in to sub tasks and handles the sub task into parallel.MapReduce programming model is used for huge data sets processing in parallel ,without concerning implementation details of parallel processing. MapReduce Programme contained a component called driver. The driver is responsible for initializing the job with its configuration details, specifying the mapper and the reducer classes for the job, informing the Hadoop platform to execute the code on the specified input file(s) and controlling the location where the output files are placed.

- **Map -** The function takes key/values pairs as input and generates an intermediary set of key/value pairs.
- **Reduce** - The function which merged all the intermediate values associated with the same intermediate key.

About Microsoft Azure learning Studio - Microsoft Azure is an interactive tool for predictive analysis for research work .It provide User Interface and provide drag and drop option. These visually interactive tool help us to analyze data sets .Microsoft provide cloud resources for researchers. We can do experiments using built in modules.The Data sets can be uploaded from different sources to Microsoft Azure Machine Learning studio.It will provide different learning algorithm for prediction and decision. We can perform experiments and find results through these azure Learning tool.Microsoft Azure Machine Learning studio is simple to use and there are some steps for using studio.Their are five steps for creating experiment by Microsoft azure tool.

Step 1- Initially start the experiment. (See in the last page)
Step 2- Now upload a new dataset from local file. (See in the last page)
Step 3 - Create experiments using machine learning algorithm. (See in the last page)
Step 4 - Finally run the experiments. (See in the last page)
Step 5 - Result Dataset of network intrusion detection data sets using R Script. (See in the last page)

Contributed Articals -

1. **Paulo Trigueiros,Fernando Ribeiro & Luís Paulo Reis** Presents the comparative study of four learning algorithm applied on hand datasets for static gesture recognition and classification,for human computer interaction.. The four algorithm used are: k-nearestneighbour (k-NN), Naïve Bayes (NB), Artificial neuralnetwork (ANN) and Support Vector Machines (SVM).It consist of identitifying hand pixels in each frame and extract features. And use those features to recognize a specific hand pose.They use two data sets . The first dataset has the hand angle, the mean and variance of the segmented hand grey image, the area and perimeter of the binary hand blob and the number of convexity defects. The second dataset has the hand angle, the mean and variance of the segmented hand grey image, the 36 bin values of the orientation histogram, and the 100 bin values of the hand radial.for experiment they use rapidminer 5.2.The limitation of this is that it can only work for guesture recognization. [14]
2. **Rich Caruana & Alexandru Niculescu-Mizil** Presents An Empirical Comparison of Supervised Learning Algorithms and presents.This is done by emphirical comparison of result of ten supervised learning algorithms.using performance criteria . The algorithm are svms,neural nets, logistic regression, naive bayes,memory-based learning, random forests, de-cision trees, bagged trees, boosted trees, and boosted stumps. They use variety of performance criteria to evaluate the learning methods.They analzed several empjicarical results .They compare algorithm on 11 binary classification problems. Calibration with either Platt's method or Isotonic Re-gression is remarkably effective at obtaining excellent performance on the probability metrics from learning algorithms that performed well on the ordering Met-rics.The best learning clgorithm were cali- brated boosted trees..IT gives excellent performance on all eight matrices. [1]
3. **Nicolas Gilardi & Samy Bengio** proposed use of machine learning algorithm for spatial data analysis.they use machine learning algorithm are multilayer perceptrons (MLP), mixture of experts (ME), support vector regression (SVR) and a local version of the latter (local SVR).they explain about machine learning algorithm are applicable for non stationary data sets. [15]
4. **Nigel Williams, Sebastian Zander, Grenville Armitag** presents differentiation of machine learning algorithm on the basis on computational performance for IP Traffic Flow Classification.The ML algorithms that have been used for IP traffic classification generally fall into the categories of being supervised or unsupervised. They demonstrate the performance on using features of set reduction , using Consistency based On Naïve Bayes, C4.5, Bayesian Network and Naïve Bayes Tree algorithms. they present machine learning algorithm for Traffic classification . they recognise that real-time traffic classifiers will operate under constraints, which limit the number and type of features that can be calculated. We find that the feature reduction techniques are able togreatly reduce the feature space, while only minimally impacting classification accuracy and at the same time significantly increasing computation performance. [4]
5. **Janez Dem¡sar** They Recommend statistical comparison of classifier over multiple data set from UCI Repositery.They use machine learning algorithm for comparison of classifier .they Presents critical difference Diagram as result.They compared multiple data sets by parametric tests (the paired t-test and ANOVA), non-parametric tests (the Wilcoxon and the Friedman test). They compaered by several machine learning algorithm by C45-cf vs. naive Bayes, , C45-cf vs. kNN, Naive Bayes vs. kNN . [12]

6. Alexandre Lacoste ,Fran¸cois Laviolette & Mario Marchand They Proposed new method for comparison of learning algorithm on multiple data sets. The new method is based on a novel non-parametric test (Poisson binomial test). They used Support Vector Machine with the RBF kernel.,Parzen Window with the RBF kernel. AdaBoost using stumps as weak classifiers. Artificial Neural Networks with two hidden layers, sigmoid activation function.These learning algorithms are compared on classification datasets coming from UCI and 4 other datasets coming from MNIST. [3]

7. Venkata Suneetha Takkellapati, G.V.S.N.R.V Prasad."Network Intrusion Detection system based on Feature Selection and Triangle area Support Vector Machine" proposed system explains Information Gain(IG) and Triangle Area based KNN are used for selecting more discriminative features by combining Greedy k-means clustering algorithm and SVM classifier to detect Network attacks.They used KDD CUP 1999 training data set.They performed their work on Intel(R) Core(TM)2 CPU 2.13GHz, 2 GB RAM, and the operation system platform is Microsoft Windows XP Professional (SP2.).The Limitation of this system is that it does not use attribute selection techniques in order to get effective attributes. [9]

Conclusion - The Azure machine learning is a cloud based tool .The Microsoft Azure Platform makes easier way to comparative study and also for the use of different Data sets .The result will be analysis based on azure machine learning algorithm . We will do experiment for detection of network intrusion and compare two machine learning algorithm and their attribute classification and pattern of intrusion and the types of intrusion on the basis of datasets The network attacks are the problem because at the age of IoT .The attacks are increases to the network .The previous algorithm generates types and pattern of the intrusion,but the traditional methods and tools are not gave the attribute information and exact information of intrusion types.The Microsoft Azure tool provide an easy way for analysis and experiments for researchers.

Acknowledgemnt - This research paper is made possible through the help and support from everyone, including : my parents, and in essence, please allow me to dedicate my acknowledgment of gratitude to Principal Dr. Sangeeta Jain & Dean Academic Prof. Chandan Baser of SYSITS for their most support and encouragement.

References :-

1. Rich Caruana & Alexandru Niculescu-Mizil "empirical Comparison of Supervised Learning Algorithms ."Department of Computer Science, Cornell University, Ithaca, NY 14853 USA .
2. William M. Campbell, Charlie K. Dagli, and Clifford J. Weinstein "Social Network Analysis with Content and Graphs ." Volume 20, number 1, 2013 lincoln laboratory journal.
3. Alexandre Lacoste ,Francols Laviolette & Mario Marchand Bayesian Comparison of Machine Learning Algorithms on Single andMultiple Datasets . departement d'informatique et de g´enie logiciel, Universit´e Laval, Qu´ebec, Canada.
4. Nigel Williams, Sebastian Zander, Grenville Armitage "A Preliminary Performance Comparison of Five MachineLearning Algorithms for Practical IP Traffic Flow Classification" Centre for Advanced Internet Architectures (CAIA) Swinburne University of Technology Melbourne, Australia
5. Chanchal yadav, shuliang wang , manoj kumar " algorithm and approaches to handle large data-a survey."IJCSN international journal of computer science and network, vol 2, issue 3, 2013
6. jin-tae park1, hee-soo kang1, jun-soo yun1, il-young moon1."Analysis of students' movement patterns through big data."
7. Vaishnavi ganesh1 &dr. L. G. Malik2 "extraction of text from images of big data."
8. Stephen Kaisler ,Frank Armour ,J.Alberto Espinosa&William Money, "Big Data : Isues and challenges Moving Forward.2013 46th Hawaii International Conference on system Sciences.
9. Venkata Suneetha Takkellapati, G.V.S.N.R.V Prasad. "Network Intrusion Detection system based on Feature Selection and Triangle area Support Vector Machine".
10. Mahdi Zamani and Mahnush Movahedi "Machine LearningTechniques for Intrusion Detection"
11. Monica Scannapieco, Antonino Virgillito, Diego Zardetto" Placing Big Data in Official a. Statistics: A Big Challenge?"
12. Janez Dem¡sar "Statistical Compari-9sons of Classifiers over Multiple Data Sets".
13. Jin-Tae Park1, Hee-Soo Kang1, Jun-Soo Yun1, Il-Young Moon1"Analysis of Students a. Movement Patterns through Big Data ".
14. Paulo Trigueiros, Fernando Ribeiro & Luís Paulo Reis "A comparison of machine learning a. algorithms applied to hand gesture recognition".
15. Nicolas Gilardi Samy Bengio "Comparison of four machine learning algorithms spatial data a.analysis.

Table 1 - 5v's of Big Data

VOLUME	VELOCITY	VARIETY	VARIABILITY	VALUE
MB	STREAM	TABLE	NOISY	TRANSPARENCY
GB	BATCH	DATA BASE	MESSY	EXPERIMENTAL ANALYSIS
TB	PERIODIC	PHOTO,WEB AUDIO	TRUSTWORTHY	REAL TIME ANALYSIS
PB	NEW REAL TIME	SOCIAL VEDIO	UNWANTED	ACCURATE
ZB	REAL TIME	ALL OF THE ABOVE	ALL OF THE ABOVE	ALL OF THE ABOVE

Figure 1

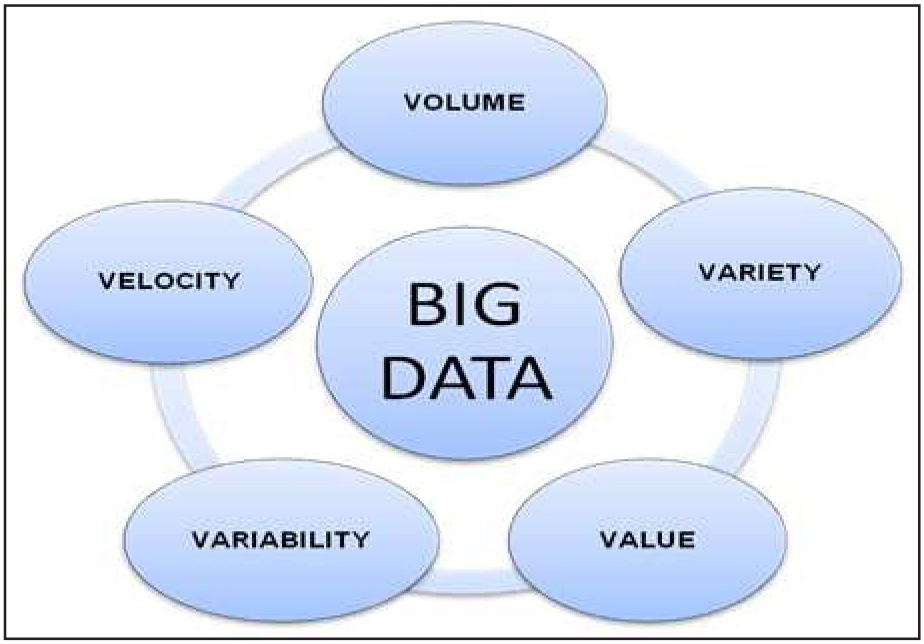

Figure 2

Google process 5 billion searches per day and 1.2 trillions searches per year worldwide.	Facebook send 10 billion Message per day, click like button 4.5 billion times and upload 350 millions new pic every day	Walmart handles 1 millions user.

Figure 3 (Proposed Big Data Architecture)

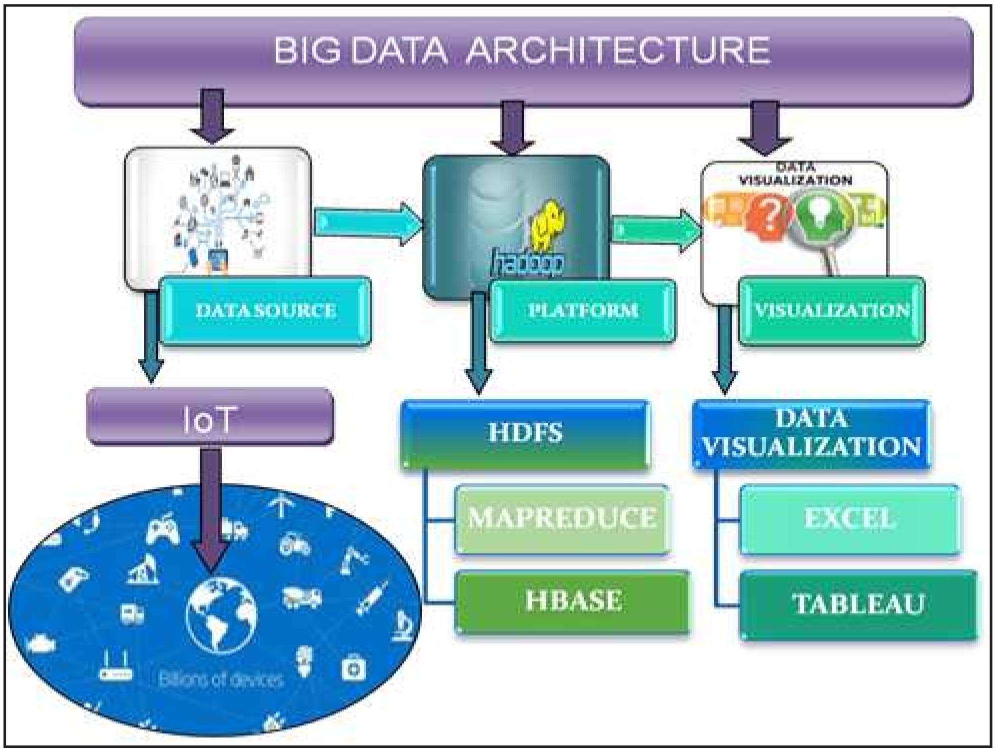

Figure 4 (Proposed IoT Architecture)

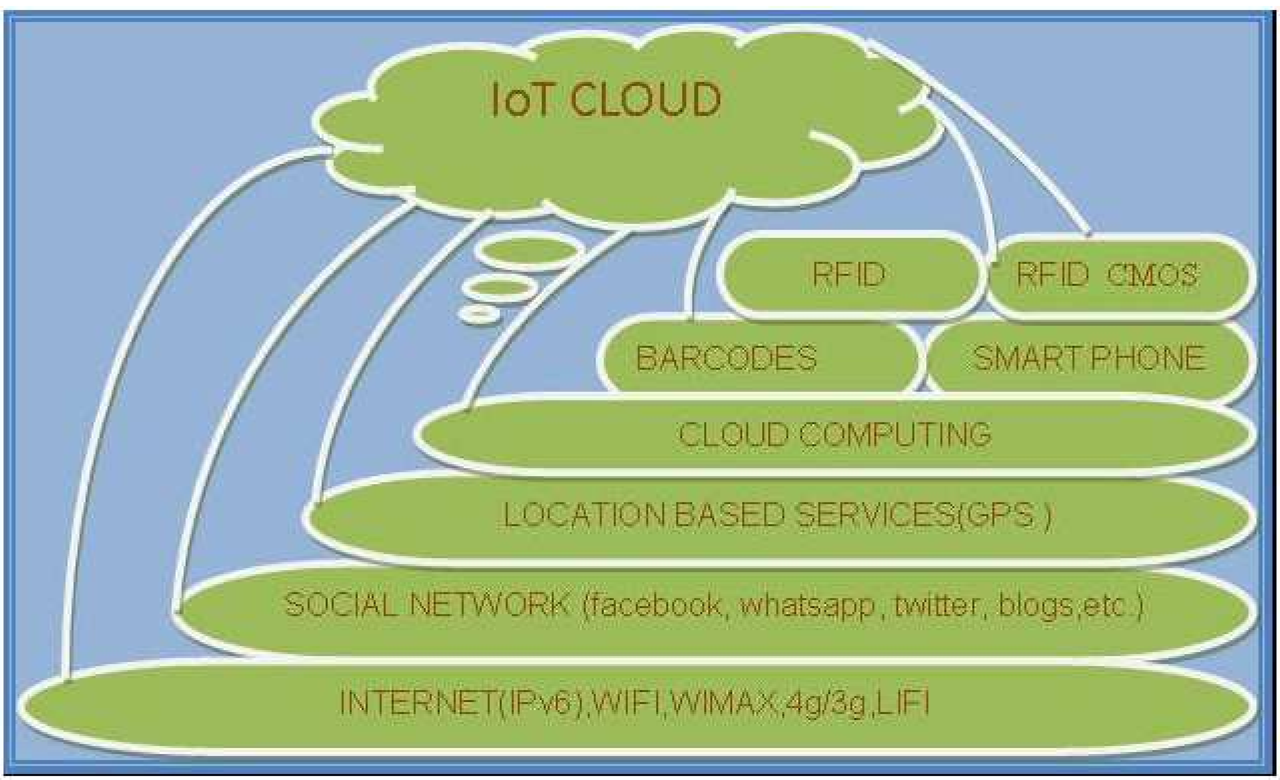

Step 1- Initially start the experiment.

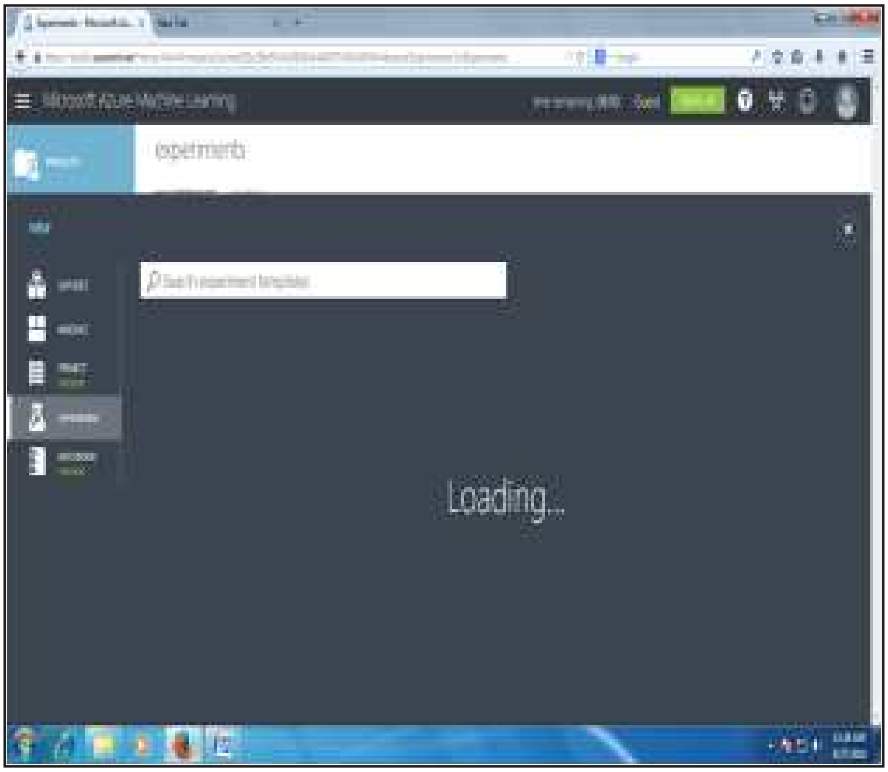

Step 2- Now upload a new dataset from local file.

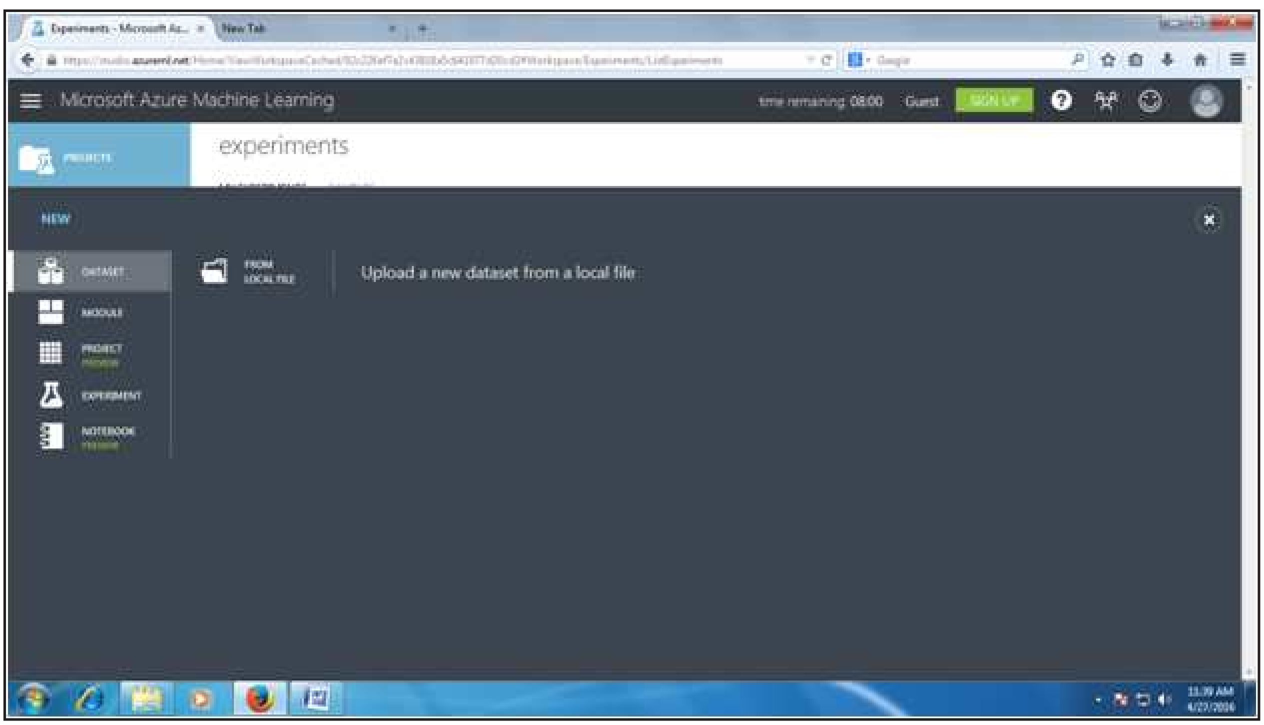

Step 3 - Create experiments using machine learning algorithm.

Step 4 - Finally run the experiments.

Step 5 - Result Dataset of network intrusion detection data sets using R Script.

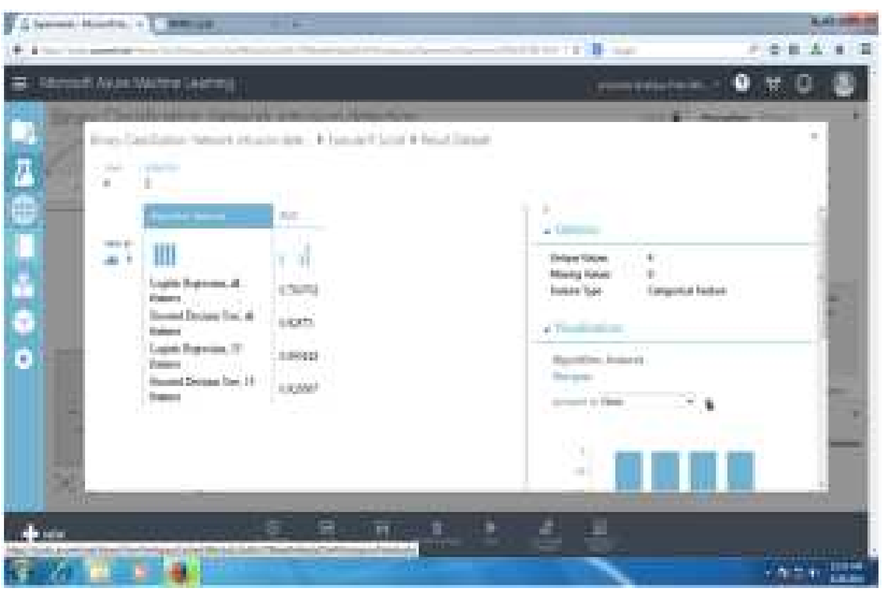

****

Assessment Of Nutritional Status, Vitamin D, Vitamin B12 And Lipid Profile Among Obese Individuals

Daksha Chandorkar * Dr. Nandita Sarkar**

Abstract - The aim of the study is to assess the nutritional status, vitamin D levels, vitamin B12 levels and lipid profile in morbidly obese individuals.**Materials and Methods:**60 morbidly obese patients referred to the Dept. of Dietetics were assessed and data was collected using 24 hour dietary recall method. Blood Chemical parameters were collected. **Results:** Data revealed that the obese individuals had mean calorie consumption of 2083.54kcal/day, with high mean consumption of fat 50.54g/day. Biochemical assessment revealed mean low vitamin B12 levels ∑159. 68 pg/ml and mean low vitamin D levels 12.77ng/ml. Whereas the mean blood Cholesterol was 165.7 mg/dL. **Conclusion:** Obesity in the studied individuals was mainly related to high calorie intake and high visible fat intake as compared to the RDA 2010. Low vitamin D and vitamin B12 levels cause low energy levels inhibiting exercise which further aggravates obesity.

Introduction - Obesity has reached epidemic proportions in India in the 21st century, with morbid obesity affecting 5% of the country's population. India is following a trend of other developing countries that are steadily becoming more obese. Unhealthy, processed food has become much more accessible following India's continued integration in global food markets. This, combined with rising middle class incomes, is increasing the average caloric intake per individual among the middle class.A recent study mapping global malnutrition trends has revealed that

India has the third-highest number of obese and overweight people after US and China

Obesity is defined as abnormal or excessive fat accumulation that presents a risk to health.A crude population measure of obesity is the body mass index (BMI) Body mass index (BMI) is a measure of body fat based on height and weight of an individual. It helps to categorize patients into severities of obesity. According to World Health Organization (WHO) individuals with BMI above 30kg/m^{2}are obese and those above 40kg/m^2 are considered morbidly obese.

Vitamin D deficiency is also an important public health problem. Vitamin D is a fat soluble vitamin which helps in calcium and phosphorus homeostasis and bone metabolism. In obese people, low levels of vitamin D can be attributed mainly to the lower bioavailability of the vitamin, due to its sequestration by adipose tissue[1],dilution of ingested vitamin D in enlarged fat mass[2] and low sun exposure of large areas of the body

Vitamin B12, also known as cobalamin, is a required nutrient for the formation of red blood cells and in the maintenance of the central nervous system,its main source is from foods of animal origin. Vitamin B12 deficiency is usually due to an inadequate intake of nutrition enriched with vitamin B12 and pernicious anemia, especially among vegetarian people.

Although it is hard to conceive of a nutritional deficiency occurring in subjects with excessive dietary and caloric intake, obese children tend to consume foods rich in carbohydrates and fat and thus may be at increased risk of ∑micronutrient and vitamin deficiency.

Material& Methods - Total 60 morbidly obese individuals were assessed; among them 26 were females and 34 were males .The study was conducted at a weight loss center.

In all individuals the BMI was calculated by the formula

BMI= Weight in kg/ Height in (meter) ^{2}

Height was measured with the help of anthropometric rod in centimeters (cm) with subject's shoes off. Weight of the individuals was measured in Kilogram (kg) with individuals wearing minimum clothes and no shoes) using TANITA Body Composition Analyzer..

In all individuals the nutritional assessment was done using a 24 Hour Dietary Recall Questionnaire Method for three days and mean intake was calculated. In this questionnaire the information regarding their daily food intake and food frequency of various food groups (pulses, cereals, vegetables, fruits, fats and sugars) were collected.

Biochemical parameters Serum Vitamin D, Serum Vitamin B12 and Lipid profile were determined and tests were performed at the certified laboratory.

Statistical Analysis - The arithmetic mean was calculated separately for males(n=34) and females(n=26) for biochemical parameters (Serum total cholesterol, vitamin B12, vitamin D) & dietary intake. The result hence obtained were presented in percentage values below and above the reference value. Calorie intake, Fat intake and

*Research Scholar (Food and Nutrition) Govt. M.H. College of Home Science, Jabalpur (M.P.) INDIA
**HOD (Food and Nutrition) Govt. M.H. College of Home Science, Jabalpur (M.P.) INDIA

Protein intake were presented in percentage below and above the Recommended Dietary Allowance (RDA, 2010).

Result - Out of 60 subjects, 26 were females and 34 were males having a mean BMI of 41.9kg/m².

Mean values of blood parameters for 60 morbidly obese individuals are mentioned below -

Table - Mean value representation of Total Cholesterol, Vitamin B12 and Vitamin D

	Mean Value
Total Cholesterol	165.7mg/dl
Vitamin B12	159.6pg/ml

Table - Mean representation of(dietary intake) Energy, Fat, Protein and Carbohydrate of 3 days

	Mean Value
Energy	2083.45kcal
Protein	52.87gm
Carbohydrate	248.6gm
Fat	50.54gm

The results showed that 65% of females were consuming more than 1900 kcal/day whereas only 35% of males were consuming more than 2320 kcal/day (RDA 2010, female sedentary – 1900 kcal/day, male sedentary-2320 kcal/day). In the present study fat intake was found to be more than 25 gm/day for almost 97% of males and more than 20 gm/day for 100% of females (RDA2010 Fat intake for male sedentary -25gm/day; for female sedentary -20 gm/day).

Out of 34 males and 26 females, 56% of males and 73% of females were found consuming protein below the recommended values (RDA 2010 protein intake for Male sedentary-60gm/day, for female sedentary -55 gm/day).

Table with graphical representation : Nutrient intake in morbidly obese individuals

	Female		**Male**	
Nutrient Intake	Below RDA	Above RDA	Below RDA	Above RDA
Energy	35%	**65%**	65%	35%
Fat	0	**100%**	3%	**97%**
Protein	**73%**	27%	**56%**	44%

(Graph see in next page)

In the study we observed 69% of females and 74% of males were deficient in Vitamin B12(Reference value-211 to 911 pg/ml), similarly 85% and 97% females and males respectively were found to be deficient in Vitamin D(Reference value – deficient <20 ng/ml) whereas insufficient Vitamin D levels were found in 12% females and 3% males(Reference value – insufficient :20-30 ng/ml).Only 3% females were found to have sufficient Vitamin D levels in the blood(Reference Value- sufficient >30 ng/ml)

Table with graphical representation :Serum Vitamin B12 and Serum Vitamin D in morbidly obese individuals **(Table see in the last page)**

Study revealed 27% females and 32% males were found to have triglyceride levels above the reference value (Reference Value: 60-170 mg/dl). Serum LDL levels were above normal in 7% females and 12%males Reference Value: 90-140 mg/dl).

Table withGraphical Representation: Serum Total cholesterol, Serum Triglycerides, Serum HDL cholesterol and Serum LDL cholesterol in morbidly obese individuals **(Table & Graph see in the last page)**

Discussion - The purpose of the study was to assess the nutritional intake and blood parameters

(S. vitamin B12, S. vitamin D and Lipid profile) for morbidly obese individuals. The studied groups had 34 males and 26 females with average BMI of 41.9kg/m2 and were leading a sedentary lifestyle. Gyming, walking and exercising were never a part of their lifestyle.

On assessment of their nutritional status the results showed higher intake of calorie and fats and low protein in their diet which contributes towards obesity. Similar finding were reported by M. Alfierie et al[3], and Laxmaiah A[4]. In their previous studies they also found consuming excess calorie than the required allowances was obesity causing factor. Similarly A. Golay and E. Bobbioni[5] reported in their study that high fat diet promotes the development of obesity and there is a direct relationship between the amount of dietary fat and the degree of obesity. They concluded that dietary fat induces overconsumption and weight gain through its low satiety properties and high caloric density. B. A George and Popkin B[6] studied that dietary fat does affect obesity. In the study fat intake was found to be more than 20gm/day in females and 25gmlday in males which may be due the excess consumption of fried food, butter, animal origin food (meat, fish and chicken) full fat dairy products and excess use of cooking oil and ghee in daily preparations. We observed that all individuals preferred cereal based diet like roti, rice and starchy vegetables more. Such diet patterns and sedentary lifestyle plays a major role in the development of obesity. Dietary fat were seen to be directly associated with high Serum triglyceride levels. Excess calorie, fat and cereal based diet causes an increase in Serum triglyceride and Serum LDL cholesterol levels.

All individuals were observed consuming a less amount of protein or poor quality of protein in their diet resulting 54% males and 73% females deficient in protein. It was observed that individuals were consuming limited amount of protein rich sources like pulses (dal), egg whites, soybean, soya milk, and animal origin food and low fat dairy products. Individuals consuming low protein than RDA, 2010 were found to have poor muscle strength and low energy levels. They tend to perform low physical activity which was again a contributing factor for obesity. Some studieshave shown that the dietary protein content also affects body weight and lipid profile.

Vitamin B12 levels were also found low than the reference values in the study for both the groups resultingin low energy levels leading to lethargy. It was observed that intake of Vitamin B12 rich foods like curd, fermented food and animal origin food were very low. Individuals were consuming more cereal and vegetables which were poor source of vitamin B12. Saravanan P et al[7] showed in the study that vegetarianism was thought to be a cause of high prevalence of vitamin B 12 deficiency in the population. Vitamin B12 was negatively correlated only with body mass index.Pinhas-Hamielet al[8] conducted a study on vitamin B12 levels and obesity in children and adolescents and found that obesity was associated with vitamin b12 deficiency. Deficiency of vitamin B12 was found to cause reduced energy level, hematological changes and neurologic changes

Our study showed low levels of vitamin D in both males and females which is likely due to less exposure to sun. Similar results were also found in the study done by Guashet al[9]. As studied by Cheng etal[10] both subcutaneous adiposity and visceral adiposity are associated with low vitamin D concentration. Obesity associated vitamin D insufficiency was likely due to the decreased bioavailability of vitamin D3 from cutaneous and dietary sources because of its deposition in the body fat compartments

The most common vitamin deficiency associated with obesity seems to be low concentration of vitamin D which is associated with an increased risk of diabetes and other cardiovascular disease risk factors and depression.

Thus on assessment of nutritional status of morbidly obese individuals we conclude that the cereal based meal pattern is more popular. There is a high consumption of calorie dense food with inadequate intake of protein which seems to be a cause of obesity. Poor dietary habits and sedentary lifestyle increases the rate of weight gain. Dietary pattern and lifestyle greatly contributes to the obesity, low vitamin B12 and vitamin D levels. In the present study the low levels of vitamin D may be a result of restricted exposure to direct sunlight, insufficient vitamin D intake, or both. Diet, lifestyle and high BMI affect the lipid profiles which canworsen their condition.

References :-

1. Wortsman J, Matsuoka LY, Chen TC, Lu Z, Holick MF: Decreased bioavailability of vitamin D in obesity. Am J ClinNutr 2000, 72(3):690–693.
2. Drincic AT, Armas LA, Van Diest EE, Heaney RP: Volumetric Dilution, Rather Than Sequestration Best Explains the Low Vitamin D Status of Obesity. Obesity (Silver Spring) 2012, 20(7):1444–1448.
3. M. Alfieri, J Pomerleau and DM Grace. A comparison of fat intake of normal weight, moderately obese and severely obese subjects. Obes Surg. 1997 Feb; 7(1):9-15
4. Laxmaiah, A., Nagalla, B., Vijayaraghavan, K. and Nair, M. (2007), Factors Affecting Prevalence of Overweight Among 12- to 17-year-old Urban Adolescents in Hyderabad, India. Obesity, 15: 1384–1390.
5. Golay A, Bobbioni E. The role of dietary fat in obesity.IntObesRelatMetabDisord. 1997Jun;21Suppl 3:S2-11
6. George A Bray and Barry M Popkin .Dietary fat intake does affect obesity! *Am J ClinNutr*1998;68:1157–73.
7. Saravanan P, Yajnik CS: Role of maternal vitamin B12 on the metabolic health of the offspring: a contributor to the diabetes epidemic? Br J Diab Vascular Dis 2010, 10:109–114.
8. Pinhas-Hamiel O, Doron-Panush N, Reichman B, Nitzan-Kaluski D, Shalitin S, Geva-Lerner L. Obese children and adolescents: a risk group for low vitamin B12 concentration. ArchPediatrAdolesc Med 2006; 160: 933-6.
9. Guash et al. Plasma vitamin D and parathormone are associated with obesity and atherogenicdyslipidemia: a cross-sectional study, CardiovaslucarDiabetology 2012, 11:149.
10. S Cheng,J.M. Massaro, C.S. Fox et al, Adiposity, cardiometabolic risk and vitamin D status: the Framingham heart study, Diabetes, vol 59, no.1, pp, 242-248,2010.

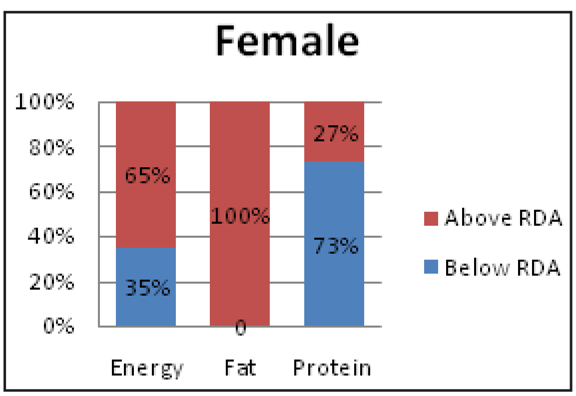

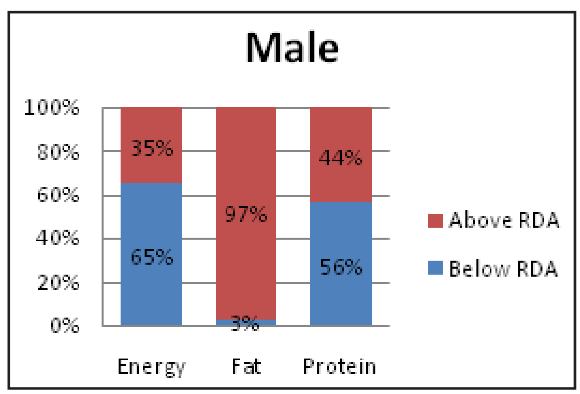

	Female			Male		
Blood parameters	Deficient	Sufficient	Insufficient	Deficient	Sufficient	Insufficient
S. Vitamin B12	**69%**	31%	0	**74%**	26%	0%
S. Vitamin D	**85%**	3%	12%	**97%**	0%	3%

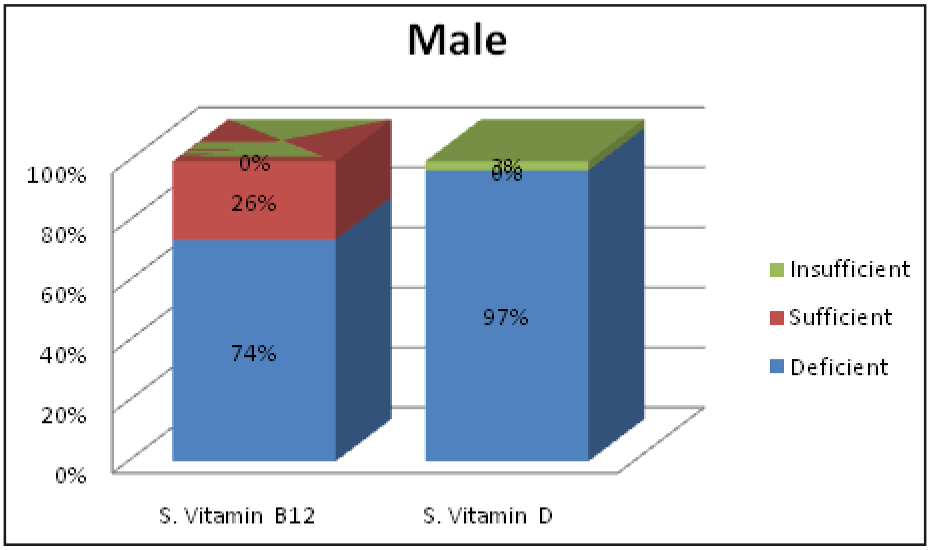

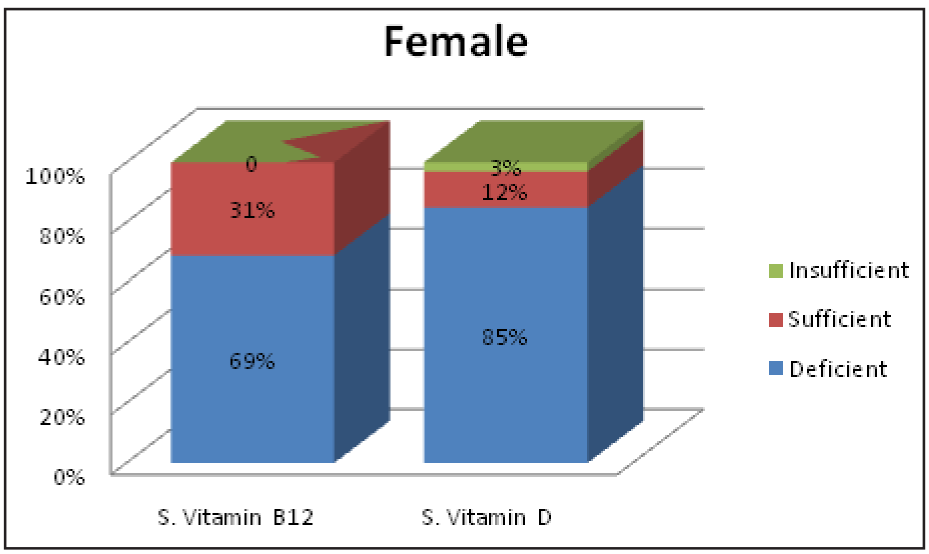

Blood parameters	Female			Male		
	Below Reference value	Reference value	Above Reference value	Below Reference value	Reference value	Above Reference value
S. Total cholesterol	38%	62%	0	29%	68%	3%
S. Triglyceride	3%	70%	**27%**	3%	65%	**32%**
S. HDL cholesterol	12%	85%	3%	44%	53%	3%
S. LDL cholesterol	58%	35%	7%	29%	59%	12%

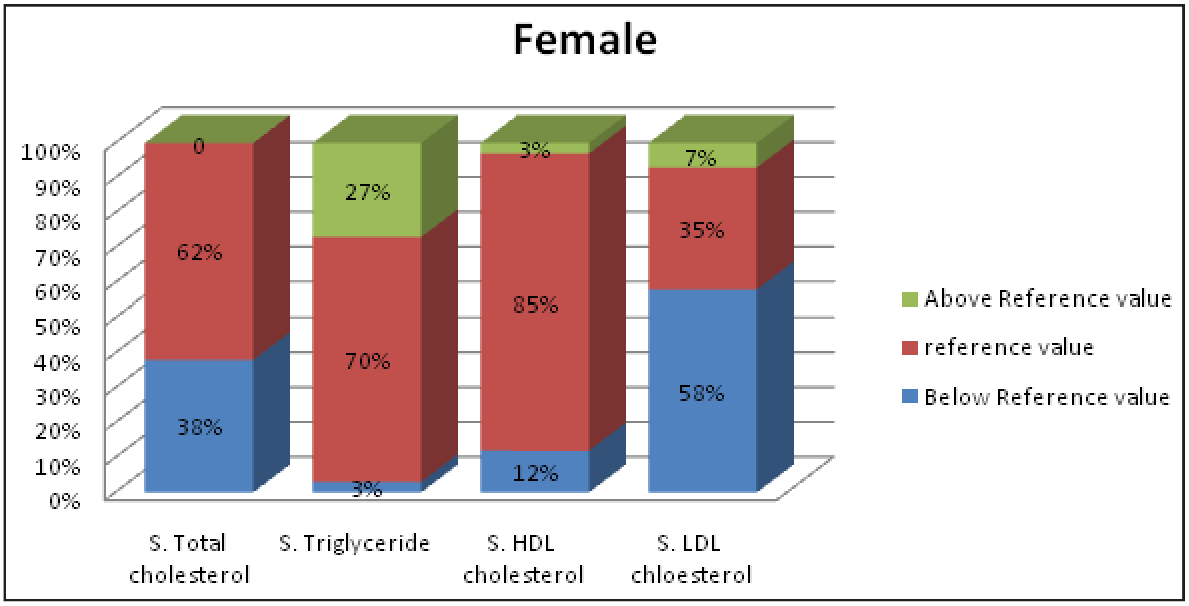

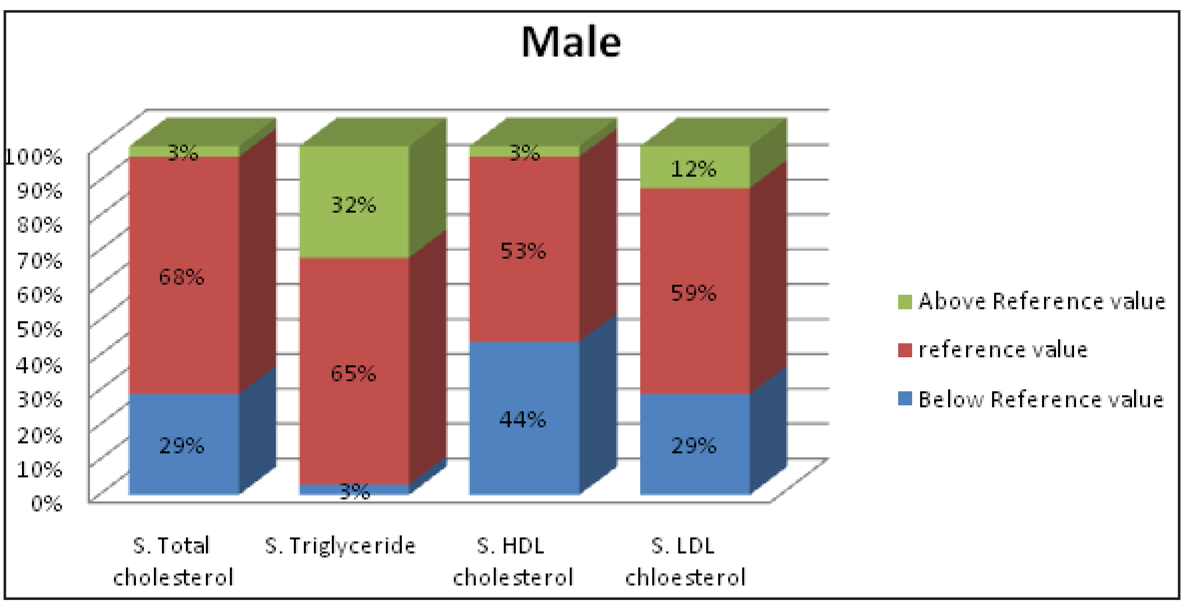

****

Empowerment Of Women Through Self Help Groups

Dr. Shobhana Jogi * Lipi Thakur **

Abstract - The present study was done with the objective to analyse the impact of SHG on different aspects of women empowerment i.e Capacity Building, Social, Political and Legal Awareness and Exposure to Information Media. For the present research work sample of 350 respondents were selected by using simple random sampling from Jabalpur District 175 SHG and 175 Non-SHG. For the collection of data questionnaire was used. After statistical analysis of collected data, it was concluded that for the empowerment of women, SHG is the best institution. SHG made a positive impact on the lives of women for their empowerment.

Introduction - "There is no chance for the welfare of the world unless the condition of women is improved. It is not possible for a bird to fly on only one wing", said by Swami Vivekananda. But through the ancient time, communities in the world over have been trying to fly on only one wings, neglecting women their requiste position. Because of the ignorance from the male dominant socity.Indian women suffer badly. Although the Constitution of the Country declare that, women have equal status to men, but still women are powerless and are mistreated inside and outside the four walls of home.

The reason behind such situation of women is that, they are not empowered. The word "Empowerment" means giving power. According to the International Encyclopaedia (1999), power means having the capacity and the means to direct one's life towards desired social, political and economic goals. So, the empowerment of women means granting the potential and mean's to move life of women's towards their desired aims.

Empowerment is a process which takes greater control over so many things like- income, knowledge, technology, information, etc. An empowered woman is able to challenge the philosophy of patriachy and participate in leadership, family decision making process. Empowerment of women means a lot, but the main aim of the equalization of men and women would be realized only when they are equally treated and their role is approved by the society. Empowerment of women is critical not only for their own wlfare but is also for the development of the country, because the development of any country is linked with the status and development of women.

One of the dynamic way for the empowerment of women is the formation of Self Help Groups especially among women. Self help groups are voluntary gathering of persons, preferably from the same socio-economic background. Each Self Help Group consists of 10-20 members. The members of SHG meet once or twice a month. There is a President, a Secretary in each SHG. The broad objectives of self help groups are to bring social, economical change for it's members and society. Self Help Groups are made for providing poor people with the credit that they need to overcome themselves from poverty. In the intial stage of group they credit their own savings at an intrest fixed by the group members itself to lend within the group and later get linked to the formal credit system. SHG enhanced the postion of women by creating self confidence , capacity building and awareness in them.

Sahu, Ananta Basudev and Das Rani Sandhya (2007), Chitagubbi Geeta, et al (2011), Pandey, Jatin and Raberts Rini (2012) reported that after joining SHG habits of saving, self-confidance, social cohesion developed in them. It is observed that after gaining knowledge of legal system their position got improved in the male dominating family and society. It was seen that after working in SHG women got the opportunities to socialize with people. Women of SHG were educated on various issue- political issues, to handle finance and were aware of present condition of society.
The present research will help the social workers to know the utility of SHG on women empowerment so that they will help other Non-SHG women to participate in SHG activities.

Objectives :
1. To study the role of SHG in women empowerment in relation to Capacity Building.
2. To Study the role of SHG in women impowerment in relation to Social, Political and Legal Awareness.
3. To Study the role of SHG in women empowerment in relation to Exposure to Information Media.

Hypotheses :
1. There is no impact of SHG in women empowerment in relation to Capacity Building.
2. There is no impact of SHG in women empowerment in relation to Social, Political and Legal Awareness.
3. There is no impact of SHG in women empowerment in relation to Exposure to Information Media.

* Retd. Professor, Govt. M.H. College of Home Science & Science for women Autonomous, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Govt. M.H. College of Home Science & Science for women Autonomous, Jabalpur (M.P.) INDIA

Sample : Sample of Study

Groups	N
SHG	175
Non SHG	175
Total	**350**

Tools - Women Empowerment scale prepared by the researcher .

Method - Data was collected by administring the Scale on the sample and by statistical analysis of data conclusions were drawn.

Analysis & Discussion of Results - The analysis of data according to different aspects of women empowerment are presented in the following table-

Table No. 01 (see below)

The obtained values Critical Ratio(CR) for the three sub-factors of women empowerment i.e, Capacity Building, Social, Political and Legal Awareness and Exposure to Information Media are 77.43, 52.30 and 25.02 respectively which are greater than 2.59 the minimum value for significance at 0.01 level. Thus, it may be concluded that after participating in the activites of SHG Capacity Building, Social, Political & Legal awareness and exposure to Informantion Media is developed in them.

The results of the impact of "Capacity Building", "Social, Political and Legal Awareness" and "Exposure to Information Media" Sub-factors of women empowerment show the positive results. It means that after working in SHG women are able to do work in a well organised manner. Government and NGO's launched many different vocational training programmes for improving thestatus and skills of women. Due to this they do work very effectively and get better results. After joining SHG awareness regarding social, political and legal matter developed in women. Now the women of SHG have become self-confident, they can talk to any outsider without any hesitation and with full confidence. They come to know about the bad practice which are going on in the society and they are able to raise their voice against them. Political awareness has also developed. They are able to interact with the leaders and followers of different political parties. Legal awareness also came in them, now they know about the laws made for the welfare of women and they also know their importance. Now women of SHG get all the latest information by using information media. By using different ways of information media they are getting all the news of the whole world and by using these information they can share their views with other persons. Sahu, Lopamudrs and Singh K. Suresh (2012), Kalaiseluen, D and Jayaraj, T (2012), Acharya, Sumita and Samantray, Dr Pushpanjali (2013), Kumari, Tripti and Mishra, Anand (2015) observed that SHG's played an important role in the betterment of women and gender equality, it provides a platform to poor women for their capacity building, their political knowledge got improved, they gat inner strength , social, economical and political empowerment. Thus it can be said that participation in SHG has improved the living of women.

Conclusions :

1. There is a positive impact of SHG on "Capacity Building" sub- factor of women empowerment.
2. There is positive impact of SHG on "Social, Political & Legal Awareness" sub-factor of women empowerment.
3. There is a positive impact of SHG on "Exposure to Infromation Media" sub-factor of women empowerment .

References :-

1. श्रीवास्तव, डी.एन., , आगरा, अनुसंधान विधियां, आगरा, नवीन संस्करण, पृ.40–50.
2. कपिल, एच.के.(2010), अनुसंधान विधियां (व्यावहारिक विज्ञानों में), आगरा, एच.पी.भार्गव बुक हाउस, चौदहवां संस्करण, पृ.53–54.
3. Chitagubbi,Geeta, et al, (2011), A study on the usefulness of self help groups membership to women for Empowerment, Journal of Farm Science, Vol. 1(1), pp. 112-119.
4. Kalaiselvan, D. and Jeylaj, T., (2012), A study on women empowerment by self help group with reference in peramabalur district, IOSR Journal of business and management, Vol. 6(2), pp. 22-26.
5. Kumari, Tripti, and Mishra, Anand Prasad, (2015), Self help groups and women's Development: A case study of Varansi District, Space and Culture India, Vol. 2(4), pp. 35-48.
6. Pandey, Jatin and Roberts Rini, (2012), A study on empowerment of level women through self help group, Journal of research in commerce and management, Vol. 1(8), pp. 1-10.
7. Sahu, Ananta Basudev and Das, Sanghya Rani. (2007), Women Empowerment throught SHGS A case study www. google.com ,
8. Sahu Lapamudra and singh, K. Suresh (2012), A Qualititative study on role of self help group in women empowerment in rurual pondichally, India, National Journal of Community Medicine, Vol 3 (8), PP 474-479.
9. Achhaya, Sunita and samantray, Dr. Pushpanjali (2013), A qualitative study on role of self help group in tribal women empowerment in rayagada Block of gajpaati district of odisha, India, IOSR Journal of Humanities and social science, vol 9 (3), PP 15-18.

Table No. 01 : Comparative results of impact of SHG on different sub-factors of Women Empowerment

Sub-factors	Groups	N	M	S.D.	CR
Capacity Building	SHG	175	44.90	3.00	77.43**
	Non-SHG	175	21.67	3.13	
Social, Political & Legal Awareness	SHG	175	40.80	3.92	52.30**
	Non-SHG	175	21.97	3.40	
Expoure to Information Media	SHG	175	45.04	3.22	25.02**
	Non-SHG	175	32.28	5.37	

Degree of Freedom-348 **-significnat at 0.01 level

विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का क्रेता व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन

डॉ. राधा रानी शर्मा * अनामिका सिंह **

शोध सारांश – शोध का प्रमुख उद्देश्य यह पता लगाना था कि कार्यरत् महिलाओं एवं गृहणियों पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का क्रेता व्यवहार पर प्रभाव पड़ता है या नहीं। शोध में जबलपुर नगर की विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत् महिलाओं एवं गृहणियों का चुनाव किया गया। जानकारी प्राप्त करने के लिए स्वनिर्मित कथनावली का प्रयोग किया है। प्राप्त जानकारी को सांख्यिकीय विधि द्वारा सत्यापन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि कार्यालयीन एवं गृहणियों, अन्य कार्यकारी महिलायें एवं गृहणियों पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है जबकि शिक्षिकाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन संबंधी सामान्य जानकारी का प्रभाव पड़ा है, जबकि अन्य कारकों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

प्रस्तावना – मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए वह अपने कार्यो में नितान्त सुधार एवं बढ़ोत्तरी करता रहता है। परिवार समाज का एक अभिन्न अंग है, परिवार को अच्छी प्रतिष्ठा दिलाने के लिए परिवार के प्रत्येक सदस्य का यह कर्त्तव्य होता है कि घर परिवार में रहने वाले सभी सदस्यों की आवश्यकतायें पूरी हो। यह आवश्यकतायें प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही हो सकती हैं। परिवार के सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने में परिवार के समस्त सदस्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। समाज में हो रहे नितान्त नये परिवर्तनों से कोई भी व्यक्ति अछूता नहीं रहा है।

भारत में सन् 1991 में आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया शुरू की गई। देश में इस अधिनियम के लागू होने के पश्चात् क्रेताओं को क्रय एवं विक्रय तथा आयात एवं निर्यात करने में आसानी हो गई व घरेलू बाजारों के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों की तरफ आगे बढ़ने लगे। क्रेता आर्थिक रूप से स्वतंत्र भी हो गये। क्रेताओं को अपने बजट में अच्छी व सुविधाजनक वस्तुऐं प्राप्त होने लगी है। इस सभी प्रक्रियाओं को पूरा करने में विज्ञापनों ने बहुत बढ़ावा दिया। प्रतिदिन विज्ञापित होने वाले विज्ञापन क्रेताओं के दिल और दिमाग में अपना विशेष स्थान बना लेते हैं। विज्ञापन में विज्ञापित वस्तुओं को यथा स्थान देखा जाता है एवं उससे संबंधित समस्त जानकारियां जैसे-उपयोग के तरीके रख-रखाव, मूल्य, इत्यादि के विषय में घर बैठे ही क्रेताओं को जानकारी प्राप्त हो जाती है। अत: क्रेता अपने परिवार के सभी सदस्यों की राय लेकर वस्तुओं का सही चुनाव कर लेते हैं। आयात एवं निर्यात में भी आसानी हो गई है। बहुत सी इन्टरनेट पर व्यापारिक साइट्स उपलब्ध हैं जिनके माध्यम से वस्तुओं को क्रय करने पर वह फ्री डिलेवरी भी देती हैं। इससे भी बाजार में लगने वाले समय की बचत हो जाती है तथा विज्ञापन के माध्यम से क्रेताओं को उपयोगी, आवश्यक व सभी उचित मूल्यों में वस्तुयें प्राप्त हो जाती हैं।

भूमण्डलीकरण ने सम्पूर्ण विश्व को एक नई दिशा प्रदान की है। आजकल पुरूषों के साथ-साथ महिलायें भी घर से बाहर कार्य करने जाती हैं। दोनों के ही पास समय का अभाव है अत: विज्ञापन के माध्यम से उपयुक्त एवं सही वस्तुओं का चुनाव उनके लिए हितकर होता है। महिलाओं का घर से बाहर कार्य करने से परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार तो आया है। समाज में रहने वाले हर परिवार की आर्थिक स्थिति समान नहीं होती है परन्तु हर व्यक्ति चाहता है कि वह अपने परिवार को अच्छी सुख-सुविधायें प्रदान कर सके। ऐसे में वह कम कीमत में अच्छी, मजबूत, सुविधाजनक वस्तुओं को क्रय करना चाहता है। विज्ञापन कर्त्ताओं एवं कम्पनी धारकों को चाहिए कि वे बाजार में ऐसी वस्तुओं को लेकर आये जिनका लाभ प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति उठा सके।

मुमताज अली (2010), अविद अली एवं अन्य (2012), मुहम्मद साजिद रसोल एवं अन्य (2012) एवं पीटर रीट एवं अन्य (2012) के शोधों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पारिवारिक आय व वस्तुओं के निर्धारित मूल्य उपभोक्ताओं के क्रय व्यवहार को सबसे अधिक प्रभावित करते हैं। इससे उनकी क्रय करने की परिस्थिति एवं क्रय अभिवृत्ति प्रभावित होती है। आर्थिक एवं सामाजिक कारक भी उपभोक्ता क्रय व्यवहार को प्रभावित करते हैं। उपभोक्ता अपने क्रय निर्णय को बदल भी देता है।

प्रस्तुत शोध में यह देखने का प्रयास किया गया है कि क्या विज्ञापन एवं क्रेता की आर्थिक स्थिति विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत् महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार को प्रभावित करते हैं जिससे कि उपभोक्ताओं को उपर्युक्त सुझाव दिये जा सके।

उद्देश्य –

1. कार्यालयीन महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन।
2. शिक्षिकाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन।
3. अन्य कार्यकारी महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना–

1. कार्यालयीन महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. शिक्षिकाओं एवं गृहणियों के क्रेताव्यवहार पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक नहीं पड़ता है।

* सेवानिवृत्त प्रवक्ता (गृह प्रबंध) शासकीय मो.ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला (स्वशासी) महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी (गृह प्रबंध) शासकीय मो.ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला (स्वशासी) महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

3. अन्य कार्यकारी महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

न्यादर्श–

न्यादर्श में कार्यरत् महिलाओं एवं गृहणियों को उनके व्यवसाय के आधार पर चुना गया है–

समूह	कार्य की प्रकृति			योग
	कार्यालयीन	शिक्षिकीय	अन्य कार्यकारी	
कार्यरत् महिलायें	50	50	50	150
गृहणियां	50	50	50	150
योग	**100**	**100**	**100**	**300**

नोट – गृहणियों को पतियों के व्यवसाय के आधार पर चुना गया है।

उपकरण – स्वनिर्मित कथनावली

विधि – न्यादर्श में चयनित कार्यकारी महिलाओं एवं गृहणियों पर स्वनिर्मित कथनावली का प्रशासन कर आंकड़े एकत्रित किये गये एवं सांख्यिकीय विश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

विश्लेषण एवं व्याख्या– प्रदत्तों का विश्लेषण कर जो परिणाम प्राप्त हुए है उनको निम्नलिखित सारणियां में प्रस्तुत किया गया है।

न्यादर्श में गृहणियों एवं कार्यालयीन महिलाओं, लिपिकीय व्यवसाय में कार्यरत् महिलायें एवं अन्य कार्यकारी महिलाओं के तुलनात्मक परिणाम विज्ञापन के विभिन्न कारको– सामान्य जानकारी, ज्ञान में वृद्धि, आकर्षक प्रस्तुति, गुणवत्ता की परख एवं विविध गुणों से संबंधित आगे सारणियों में दिए गए है–

सारणी क्रमांक –01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

कार्यालयीन महिलाओं एवं गृहणियों पर विज्ञापन के विभिन्न कारक सामान्य जानकारी, ज्ञान में वृद्धि, उत्पादन की आकर्षक प्रस्तुति, गुणवत्ता की परख एवं विविध गुण पर क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं हुआ है।

सारणी क्रमांक –02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

शिक्षिकाओं एव गृहणियों पर विज्ञापन संबंधी सामान्य जानकारी पर सार्थक रूप से प्रभाव देखने को मिला है इसके साथ ही विज्ञापन के अन्य कारकों–ज्ञान में वृद्धि, आकर्षक प्रस्तुति, गुणवत्ता की परख एवं विविध गुण पर न ही विज्ञापन का और न ही आर्थिक स्थिति का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं हुआ है।

सारणी क्रमांक –03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अन्य कार्यकारी महिलाओं एवं गृहणियों पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों सामान्य जानकारी, ज्ञान में वृद्धि, आकर्षक प्रस्तुति, गुणवत्ता की परख एवं विविध गुण पर क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं हुआ है।

कार्यालयीन महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों सारणी क्रमांक 01 में सामान्य जानकारी, ज्ञान में वृद्धि, उत्पाद की आकर्षक प्रस्तुति, गुणवत्ता की परख, विविधि गुण आदि विभिन्न परिणामों से स्पष्ट होता है कि गृहणियों एवं कार्यालयीन महिलाओं के क्रेता व्यवहार पर उनके कार्यकारी होने एवं उनकी आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गृहणियों एवं कार्यालयीन महिलाओं के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के कारकों एवं आर्थिक स्थिति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। प्रस्तुत शोध कार्य में कोई सार्थक अंतर नहीं आया है, जबकि रसोल मुहम्मद साजिद एवं अन्य (2012) के परिणाम यह प्रदर्शित करते है कि कि परिवार की आय उपभोक्ता क्रेता व्यवहार को सबसे अधिक प्रभावित करती है।

गृहणियों एवं अन्य कार्यकारी महिलाओं के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन एवं विज्ञापन के कारकों तथा परिवार की आर्थिक स्थिति के परिणाम (सारणी क्रमांक 03) भी यह प्रदर्शित कर रहे है कि विज्ञापन के कारकों व आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है, जबकि गृहणियों एवं शिक्षिकाओं के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन उसके कारकों एवं परिवार की आर्थिक स्थिति के परिणामों में भिन्नता है। (सारणी क्रमांक 2) विज्ञापन संबंधी सामान्य जानकारी संबंधी परिणामों मे गृहणियों एवं निम्न आर्थिक स्थिति का प्रभाव पड़ा है। अली मुमताज एवं अन्य (2010) के परिणाम यह बताते हैं कि वस्तुओं के निर्धारित मूल्य उपभोक्ताओं के क्रय को सबसे अधिक प्रभावित करते है। शोध के परिणामों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कार्यालयीन एवं अन्य व्यवसाय में कार्यरत् महिलाऐं एवं गृहणियों के परिणाम नकारात्मक आये है, जबकि शिक्षिकाओं एवं गृहणियों के परिणाम सकारात्मक निकल कर आये है अत: कहा जा सकता है कि शिक्षिकायें जब वस्तुओं का क्रय सकती है, उस समय वस्तुओं की कीमत पर अधिक ध्यान देती है। अत: उपरोक्त परिणाम यह प्रदर्शित कर रहे है कि गृहणियों एवं शिक्षिकाओं के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के संबंध में सामान्य जानकारी में अंतर है शेष अन्य में कोई प्रभाव नहीं प्राप्त हुआ है।

निष्कर्ष –

1. कार्यालयीन महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।
2. शिक्षिकाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन संबंधी सामान्य जानकारी पर प्रभाव दृष्टिगोचर हुआ है। जबकि अन्य समस्त कारकों एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।
3. अन्य कार्यालयीन महिलाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बख्शी, बी.के. (2006) उपभोक्ता अर्थशास्त्र, आगरा, पुस्तक मंदिर, पृ. 241–255
2. पाटनी, मंजु और शर्मा ललिता (2008) गृह प्रबंध, आगरा, स्टार पब्लिकेशन, पृ. 593–620
3. यादव, नरेन्द्र सिंह (2004) विज्ञापन तकनीक एवं सिद्धांत, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ आकादमी जयपुर, पृ. 1–6
4. श्रीवास्तव, डी. एन. आगरा, अनुसंधान विधियां, नवीन संस्करण, पृ. 40–50
5. कपिल, डॉ. एच.के. (2010) अनुसंधान विधियां (व्यवहारिक विज्ञानों में) आगरा, एच.पी. भार्गव बुक हाउस, चौदहवां संस्करण, पृ. 53–54
6. चौहान, डॉ. आई.एस. (1989) ''समाज शास्त्र की रूपरेखा'' भोपाल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण, पृ. 31–103, 125–182
7. Ali Mumtaz (2010), An Exploratory Study on Consumer

Buying behavior in Pakistan Perspective. *Asian Journal of Management Research.*

8. Rasool, Muhammd Sajid (2012) et.al, Impact of advertisement on consumer behavior of fancy in Lahor City, *Academic Research International,* Vol 2 (5), PP. 571-574

9. Ali, Abid et.al (2012) Gender Role portrayal in Television Advertisement : Evidence from Pakistan. *Information Management and Business Review,* Vol 4(6), PP. 340-351

सारणी क्रमांक -01

कार्यालयीन महिलाऐें एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

मासिक आय	समूह	संख्या	विज्ञापन के कारक का मध्यमान				
			सामान्य जानकारी	ज्ञान में वृद्धि	उत्पाद की आकर्षक प्रस्तुति	गुणवत्ता की परख	विविध गुण
<10000	गृहणी	8	12.87	19.37	8.75	14.50	22.25
	कार्यालयीन	5	12.80	19.40	9.40	13.80	21.40
1000-2000	गृहणी	32	13.10	18.90	8.87	14.20	22.10
	कार्यालयीन	12	14.83	18.83	8.58	14.16	22.66
<20000	गृहणी	10	14.00	18.60	8.30	14.10	21.90
	कार्यालयीन	**33**	14.00	17.87	8.60	14.09	21.39
	'एफ' अनुपात		1.15	0.40	0.21	0.01	0.22
	'पी' मान		>0.05	>0.05	>0.05	>0.05	>0.05

स्वतंत्रता के अंश - 5.94

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -2.30

0-01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान- 3.20

सारणी क्रमांक -02

शिक्षिकाओं एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

मासिक आय	समूह	संख्या	विज्ञापन के कारक का मध्यमान				
			सामान्य जानकारी	ज्ञान में वृद्धि	उत्पाद की आकर्षक प्रस्तुति	गुणवत्ता की परख	विविध गुण
<10000	गृहणी	8	16.00	21.50	7.75	15.87	21.00
	शिक्षिकायें	5	12.80	16.80	9.40	13.20	20.20
1000-2000	गृहणी	33	13.20	18.54	8.39	13.70	18.80
	शिक्षिकायें	16	11.00	17.25	9.56	12.00	21.06
<20000	गृहणी	9	12.88	19.53	9.88	13.00	18.11
	शिक्षिकायें	**29**	12.17	18.62	7.72	13.03	20.68
	'एफ' अनुपात		4.19	0.11	1.76	1.19	1.17
	'पी' मान		<0.01	0.05	0.05	0.05	0.05

स्वतंत्रता के अंश - 5.94

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -2.30

0-01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान - 3.20

सारणी क्रमांक -03

अन्य कार्यकारी महिलायें एवं गृहणियों के क्रेता व्यवहार पर विज्ञापन के विभिन्न कारकों एवं क्रेताओं की आर्थिक स्थिति के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

मासिक आय	समूह	संख्या	विज्ञापन के कारक का मध्यमान				
			सामान्य जानकारी	ज्ञान में वृद्धि	उत्पाद की आकर्षक प्रस्तुति	गुणवत्ता की परख	विविध गुण
<10000	गृहणी	3	14.00	19.66	9.66	13.33	19.00
	अन्य कार्यकारी महिलायें						
1000-2000	गृहणी	35	13.14	17.60	8.31	13.68	20.94
	अन्य कार्यकारी महिलायें	31	13.16	19.09	9.06	14.80	20.77
<20000	गृहणी	12	13.16	18.41	9.58	13.66	21.08
	अन्य कार्यकारी महिलायें	**19**	12.57	18.78	10.42	12.68	20.84
	'एफ' अनुपात		0.23	1.30	2.12	0.85	0.09
	'पी' मान		0.05	0.05	0.05	0.05	0.05

स्वतंत्रता के अंश - 4,95 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -2.30

0-01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान- 3.20

****

Brand Preference Towards Scooters Among Women Consumers In Ahmedabad City (Gujarat)

Rani Navita*

Abstract - The roles of women in the society have changed tremendously in this 21st century. Apart from managing the household they have spared time to work for their families which have changed their perspective towards things. Most of the marketers know that the needs of women are different and it has become necessary for them to have a deep understanding of how and why they are different. The purpose of this study is to ascertain the key factors influencing the women respondents brand preference in selection of their scooter. The result of Exploratory Factor Analysis revealed five factors namely Comfort, Efficiency, Affordability, Familiarity and Quality of Service as the determinants of preference.
Keywords - Brand preference, Exploratory Factor Analysis, ANOVA, Marketing Strategies.

Introduction - Women are leading in every field of study as the literacy rate and working rate have increased since Independence. It was very difficult for them to move from one place to another, to make their mobility easier the marketers thought of introducing less weight and gearless scooters. Now-a-days, there are numbers of models available in the markets and in order to sustain in the present market it has become essential for the marketers to know the pattern of consumer brand preferences. Brand preference is nothing a measure of brand loyalty in which consumers will choose a particular brand in presence of competing brands. A brand saves consumer's time in choosing their products. Hence, the analysis of brand preference is an important area for the marketers to develop the marketing strategies for their brands. Therefore, to shed light in this context the following study was undertaken.

Review of literature -

Jatinder Chhabra (2003) had done a research on the factors affecting the purchase behavior of motorcycle and the results revealed that the motorcycle market in India is increasing and Hero Honda had been mainly selling on the economy platform. Hero Honda introduced a number of models, with high fuel efficiency. For the person who was looking for a light blend of power, style and economy the right brand was Bajaj.

Chidambaram et.al (2004) studied factors which influence the brand preference of the customers while they take decision to buy passenger cars. Within this framework the study reveals that customers give more importance to fuel efficiency than other factors. They believe that the brand name tells them something about quality, utility, technology and the like. They prefer to purchase the passenger cars which offer high fuel efficiency, good quality, technology, durability and reasonable price

Venela (2009) has attempted to analyze various factors affecting the purchasing decision in India rural market .He concluded that most of the rural consumers are influenced by quality, features and brand image of two wheelers.

Kannusamy (2010) made an attempt to study Brand preference of two wheelers, problems and satisfaction level of consumers and identified that consumers prefer their favourable brand in two wheeler on the basis of price, quality, advertisement, style, color and resale value

Anandh (2014) in his study identified the factors affecting consumer's brand preference of small cars in Chennai. The majority of consumers prefer Maruti Suzuki brand of small car. His results shows that Value, Comfortness, Efficiency and Need are positively influencing the consumers brand preference and overall satisfaction about small cars and he suggested that marketers should satisfy consumer by selling low-priced, fuel-efficient small cars to see large volumes of sales..

Statement of the Problem In 21st century, women is economically empowered as the proportion of working women is increasing, which has shown a dramatic effect on purchasing patterns of any product. Therefore every manufacturer has to know about the psychology of the consumers especially women and their brand preference towards the vehicle as the competition is intense. To suit the varied requirements of diverse users, manufactures produce different models of vehicles and the product (i.e. scooter) has gone for a complete revamp and the geared scooters have almost been phased out. Due to these changes in the scooter segment, it has become imperative to have a fresh perspective of urban female consumers and the key factors to prefer the various brands. In order to design marketing program to suit this segment this study is undertaken.

***Asst. Professor, Sheth C.L. Commerce College, Ahmedabad (Gujarat) & Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

Objective of the Study The following are the objective of the present study

1. To profile the women respondents of Ahmedabad city
2. To identify the key factors influencing the women respondents in choosing their brand of scooter.

Hypothesis H01 - There is no significant difference between select demographic variables and preferred factors.

Research Methodology The present study was an empirical one purely based on primary data. Moreover, various published and unpublished materials were used to frame this work. The primary data was collected using questionnaire. A sample of 235 women respondents who used various brands of scooters were selected on a random basis from Ahmedabad city. The questionnaire used a Five Point Like Scale ranging from Strongly Agree (1) to Strongly Disagree (5) to identify the key factors. In the present study the data were analyzed using statistical package SPSS Version 18.0 and the tools applied were percentage analysis, analysis of variance (ANOVA) and exploratory factor analysis.

Results and Discussion It can be inferred from Table 1 that 44.7 per cent of the women respondents are of the age group 18 – 25 years of which 73.2 per cent are married and 25.1 per cent are doing business and 34.9 per cent had post graduation qualification 77.6 per cent are from nuclear family having monthly income between 20001 – 30

Table - 1 Demographic Profile of women respondent

Age(Years)		
18-25	105	44.7
26-35	94	40.7
36-45	27	11.5
Above 45	9	3.8
Marital status		
Married	172	73.2
Unmarried	63	26.8
Occupational status		
Student	51	21.7
Govt. Employee	38	16.2
Business	59	25.1
House Wife	32	13.6
Pvt. Employee	55	23.4
Educational Qualification		
No Formal Education	9	3.8
HSC	25	10.7
UG	47	20
PG	82	34.9
Professional	72	30.6
Family Type		
Nuclear	180	76.6
Joint	55	23.6
Family Monthly Income		
Less than Rs. 10,000	15	6.4
Rs. 10,000-20,000	51	21.7
Rs. 20,001-30,000	112	47.7
Rs. 30,001-40,000	37	15.7
Above 40,000	20	8.7

Source: Primary Data

Brand Preference Dimensions - To identify the influencing factors of brand preference, factor analysis was performed. Before going for factor analysis, reliability test should be done to ensure the internal consistency of the scale which means if anyone else goes further with this analysis the same result would be made. Hence Cronbach's Alpha, the most common reliability test was applied which gave a value 0.7 greater than standard value 0.6 stated by (Cronbach, 1951; Nunnally, 1996). The next step is to see the samples are adequate and appropriate enough to proceed with factor analysis, for this Kaiser- Meyer-Oklin test and Bartlett's test of Sphericity was undertaken. It is clear from Table: 2 the test result of Kaiser- Meyer-Oklin was 0.63. According to Kaiser (1974) the values greater than 0.5 are acceptable and Bartlett's test of Sphericity was significant at five per cent which ensured that the data is appropriate to perform factor analysis.

Table: 2 Factor Analysis-KMO and Bartlett's Test

Kaiser-Meyer-Olk in Measure of		.632
Sampling Adequacy.	Approx. Chi- Square	679.037
Bartlett' test	Df	190
of sphericity	Sig	0.000

Source - Computed Data

After completing the steps Factor Analysis was carried out to obtain the influencing factor, for this purpose Principal Component Analysis was used. From Table 3, it could be inferred that five independent factors were extracted from18 attributes, which accounted a total variance of 54.37 per cent. Each of the five factors contributes 17.36 per cent, 12.29 per cent, 8.96 per cent, 8.38 per cent and 7.38 per cent respectively to total variance.

Table: 3 (See in the last page)

From Table 4 it can be depicted that which attributes had higher factor loading in explaining the factors. Factor 1 accounted 17.36 per cent of total variance which included five variables Design, Internal Space, Less Weight, Seating Comfort and Riding Comfort with factor loading ranging from 0.75 to 0.50. Therefore this factor was named as **Comfort**.

Factor 2 explained 12.29 per cent of total variance with factor loading ranging from 0.73 to 0.58 for Product Durability, Good Pickup and Best Mileage. Hence this factor was termed as **Efficiency**.

Factor 3 constituted 8.96 per cent of total variance with high factor loading ranging from 0.72 to 0.68 for Affordable Price, Style and Fabulous Look and Safety. Therefore this factor was named as **Affordability**.

Factor 4 consist of Trustworthiness, Brand Image and Wide Network revealing high factor loading from 0.74 to 0.61 explaining 8.38 per cent of total variance. Therefore this factor was named as **Familiarity.**

Factor 5 included Availability of Spare Parts, Resale Value and Good after Sales Service with high factor loading from 0.69 to 0.50 accounting 7.38 per cent of total variance. Hence this factor was named as **Quality of service**.

Table - 4 (See in the last page)

Influence of Demographic Variables on Brand

Preference Dimensions - To assess the influence of Age, Occupational Status, Educational Qualification and Family Monthly Income on Brand Preference Dimensions Analysis of Variance (ANOVA) was used.

Table 5 depicts that age has a significant influence on Affordability; since the p-value is less than 0.05 the null hypothesis was rejected. Hence it can be concluded that there is a significant influence of age on Affordability Dimension which means women respondents of different age group look for affordability while their purchase.

Table - 5 (See in the last page)

Table 6 shows that occupational status has a significant influence on Comfort, Efficiency, Affordability and familiarity. Since the p-value is less than 0.05, the null hypothesis was rejected. Hence it can be concluded that there is a significant influence of Occupational status on Comfort, Efficiency, Affordability and Familiarity which means that women respondents prefer to choose scooters which would be comfort and efficient to use and is affordable to their budget and is familiar among their group.

Table: 6 (See in the last page)

Table 7 reveals that educational qualification has a significant influence on Comfort, Efficiency, Affordability and Quality of service. Since the p-value is less than 0.05, the null hypothesis is rejected. Hence it can be concluded that there is a significant influence of Educational Qualification on Comfort, Efficiency, Affordability and Quality of service. Therefore respondents with educational qualification prefer to choose scooters which provide high quality of services.

Table - 7 (See in the last page)

Table 8 reveals that family Monthly Income has a significant influence on Comfort, Efficiency, Affordability and Quality of service, since the p-value is less than 0.05 and hence the null hypothesis is rejected. Therefore it can be concluded that there is a significant influence of Family Monthly Income on Comfort, Efficiency, Affordability and Quality of services in preferring their scooter.

Table: 8 (See in the last page)

Conclusion - Initially women were given the responsibility of managing the household works. But as time passed, the responsibility of them increased from household management to supporting the bread –earner of their family. This change had drastic impact on their perception and attitude as their experience were different. This made the researcher to think of the present study of brand preference of women respondents in Ahmedabad city and it is clear from the study that women respondents prefer to choose the brand of scooters which is Affordable for their budget, comfort and efficient to drive, which provides the best quality of services and which is familiar among their groups. Hence the marketers are advised to adopt a lower or reasonable pricing strategies based on different income segments and are also advised to stimulate sales by modifying the products characteristics through Quality Improvement, Feature Improvement and Style Improvement as many of the respondents prefer to choose scooters which have comfort and efficiency while driving. It can also be seen that familiarity is one of the factors affecting their choice of brand of scooters. Hence, marketers can go for advertisement and other promotional measures to grab the attention of such groups. As there is cut throat competition in the market only by considering all these factors the marketers can sustain in the near future.

References :-

1. Anandh. K., Sundar K. (2014). Factors Affecting Consumer's Brand Preference of Small Cars. *IOSR Journal of Business and Management*, 16: 43-47.
2. Kannusamy. (2010). Brand Preference of Two Wheelers: Problems and Satisfaction Level of Consumers. *Ushers Journal of Business Management*, 9:37- 44.
3. Venela .G, V. (2009). A Study on Two Wheelers in India Rural Market. *Indian Journal of Marketing,* 39: 39-43.
4. Chidambaram.K, Soundarajan.A, Alfred Mino. (2004). Brand Preference of Passenger Car with Reference to Coimbatore City Tamilnadu. *Indian Journal of Marketing*, 12: 29-32.
5. Jatinder. (2003). Factors Affecting the Purchase Behavior of Motor Cycles. *Journal of Marketing*, 60: 15-32.
6. Vikas Saraf. (2003). Branding: Hub of the Corporate Wheel. *Indian Journal of Marketing.* 13(2): 12-14.
7. Keller K (2002). Branding and brand equity. Handbook of Marketing, Sage Publications. London: 151-178.
8. Nisar Ahamed. (2001). Two Wheeler Purchase Preference. *Indian management*, 40(10): 63.
9. Phillips (1988). Buying a brand: what you can't see can hurt you. Design Management Journal Winter: 43-46.
10. Shukla, A. V. and Bang V. V. (1994). Buying Behaviour for Two Wheelers – A study. *Indian Journal of Marketing*, 21: 46-48.

Table - 3 - Factor Analysis-Component Matrix for Extracted Value

Component	Initial			Eigenvalues Extraction sums of squared Loading			Rotation sums of squared Loading		
	Total	% of variance	Cumulative %	Total	% of variance	Cumulative %	Total	% of variance	Cumulative %
1	3.126	17.366	17.366	3.126	17.366	17.366	2.314	12.854	12.854
2	2.212	12.291	29657	2.212	12.291	29.657	1.955	10.860	23.714
3	1.613	8.960	38.616	1.613	8.960	38.616	1.951	10.840	34.554
4	1.508	8.380	46.996	1.308	8.380	46.996	1.868	10.380	44.934
5	1.329	7.381	54.377	1.329	7.381	54.377	1.700	9.443	54.377
6	1.185	6.584	60.962						
7	.968	5.378	66.340						
8	.899	4.994	17.334						
9	.808	4.486	75.820						
10	.757	4.206	80.026						
11	.660	3.666	83.692						
12	.590	3.280	86.971						
13	.574	3.188	90.159						
14	.422	2.344	92.504						
15	.387	2.148	94.652						
16	.375	2.086	96.738						
17	.326	1.814	98.551						
18	.261	1.449	100.00						

Source - Computed Data

Table - 4 - factors Analysis- Rotated Component Matrix

Factors	component					% of variation	Factor name
	1	**2**	**3**	**4**	**5**		
Design	.757						
internal space	.669					17.36	
Less weight	.621						Comfort
Riding comfort	.574						
Seating comfort	504						
Product durability		.735					
Good pickup		.653				12.29	
Best mileage		.582					Efficiency
Affordable price			.725				
Style			.700			8.96	
Safety			.685				Affordability
Trust worthiness				.747			
Brand image				.625		8.38	
Wide net work				.611			Familiarity
Availability of					.699		
spare part							
Resale value					.577	7.38	
Good after service					.509		Quality of service

Source - Computed Data

Table - 5 - Age and Brand Preference Dimensions

Brand Preference Dimension		Sums of square	Df	Means of square	f	Sig	Result
comfort	Between group	47.063	3	15.688	1.496	0.216	accept
	With in group	2422.53	232	10.487			
	Total	2469.59	235				
efficiency	Between group	0.741	3	0.247	0.095	0.963	accept
	Within group	599.021	232	2.593			
	Total	599.762	235				
affordability	Between group	43.697	3	14.56	3.099	0.028*	reject
	Within group	1080.61	232	4.698			
	Total	1124.29	235				
Familiarity	Between group	32.486	3	10.829	2.362	0.072	accept
	Within group	1059.11	232	4.585			
	Total	1091.59	235				
Quality of service	Between group	18.999	3	6.333	1.971	0.119	accept
	Within group	742.082	232	3.212			
	Total	761.081	235				

Source: Computed Data;

Note: * Significance at five per cent level

Table - 6 - Occupation Status and Brand Preference Dimensions

Brand preference dimension		**Sum of square**	**Df**	**Means of square**	**f**	**Sig**	**Result**
Comfort	Between in group	107.746	4	26.936	2.623	.036*	rejected
	With in group	2361.846	230	10.269			
	Total	2469.591	234				
Efficiency	Between in group	31.835	4	7.959	3.223	.013*	rejected
	With in group	567.927	230	2.469			
	Total	599.762	234				
Affordability	Between in group	69.323	4	17.331	3.762	.006*	rejected
	With in group	1054.968	229	4.607			
	Total	1124.291	233				
Familiarity	Between in group	50.290	4	12.573	2.777	.028*	rejected
	With in group	1041.301	230	4.527			
	Total	1091.591	234				
Quality of service	Between in group	19.939	4	4.985	1.547	.189	accepted
	With in group	741.142	230	3.222			
	Total	761.081	234				

Source: Computed Data

Note: ** Significance at one per cent level; * Significance at five per cent level

Table - 7 - Educational Qualification and Brand Preference Dimensions

Brand preference dimension		Sum of square	df	Means square	f	Sig	Result
Comfort	Between group	144.605	5	28.921	2.849	.016*	Rejected
	With in group	2324.986	229	10.153			
	Total	2469.591	234				
Efficiency	Between group	61.158	5	12.232	5.201	.000*	Rejected
	With in group	538.603	229	2.352			
	Total	599.762	235				
Affordability	Between group	67.601	5	13.520	2.917	.014*	Rejected
	With in group	1056.690	229	4.635			
	Total	1124.291	234				
Familiarity	Between group	35.786	5	7.157	1.552	.175	Accepted
	With in group	1055.805	229	4.611			
	Total	1091.591	234				
Quality of service	Between group	57.901	5	11.580	3.771	.003*	Rejected
	With in group	703.180	229	3.071			
	Total	761.081	234				

Source: Computed Data

Note: ** Significance at one per cent level;* Significance at five per cent level

Table - 8 - Family Monthly Incomes and Brand Preference Dimensions

Brand Preference Dimensions		Sums of square	df	Mean square	f	Sig	Result
Comfort	Between group	170.969	4	42.674	4.269	.002**	Rejected
	Within group	2298.895	230	9.995			
	Total	2469.591	234				
Efficiency	Between group	40.006	4	10.001	4.110	.003**	Rejected
	Within group	559.756	230	2.434			
	Total	599.762	234				
Affordability	Between group	52.201	4	13.050	2.788	.027**	rejected
	Within group	1072.090	230	4.682			
	Total	1124.291	234				
Familiarity	Between group	18.082	4	4.520	.969	.426	accepted
	Within group	1073.510	230	4.667			
	Total	1091.591	234				
Quality of service	Between group	35.807	4	8.952	2.839	.025**	rejected
	Within group	725.274	230	3.153			
	Total	761.081	234				

Source: Computed Data

Note: ** Significance at one per cent level; * Significance at five per cent level

****

Management Of Job Stress Of Women In Jabalpur City

Saumya Mishra * Dr. Abha Tiwari **

Abstract - Modern life is full of hassles , deadlines , frustrations and demands . Nowadays stress is responsible for more than fifty percent of all illness . For many people stress is so commonplace that it has become a way of life . Stress typically describes a negative condition that can have an impact on an organism's mental & physical well being .Work stress is the adverse reaction people have to excessive pressure or other types of demand placed on them at work. Stress is not an illness – it is a state, However if stress becomes too excessive & prolonged mental and physical illness may develop . There are so much factors influencing in job , like demand, working condition, change, relationships , management style and design of task which are big reasons of job stress. Some signs are helpful to recognize the job stress, which are headache, trouble sleeping, short temper and job dissatisfaction . These are the cause of big diseases like – heart disease, asthma, obesity, diabetes, gastrointestinal problem, accelerated aging & premature death also .

To inhibit these problems , use stress reduction methods like – ABC (awareness , balance, control)strategy, thought stopping, meditation, breathing exercises, time management, proper nutrition, comfortable position , music & game therapy and positive attitude also .

Stress is not always bad in small doses , it can help perform under pressure and motivate you to do you best . But when you are constantly running in emergency mode , your mind and body pay the price . You can protect yourself recognizing the signs and symptoms of stress and taking steps to reduce its harmful effects.

Key words -

1. **Stress –** " Stress typically describes a negative condition that can have an impact on a organism's mental and physical well-being ".
   S - Senseless , **T**- Thought , **R**- Repeated , **E** – Endlessly , **S**- Surrounding , **S** - Self
2. **Job Stress -** "The adverse reaction people have to excessive pressure or other types of demand placed on them at work."

a. It is also known as 'work stress' or 'occupational stress' .

Stress Management - "A predetermined strategy for coping with psychological or emotional turmoil. As part of a health benefits package, a company may offer stress management therapy to improve job performance."

Introduction -

Objectives of the study - The study was conducted on following objectives. :

1. Find out how much working women want to leave their job due to stress in Jabalpur city.
2. To know the cause of stress in work place.
3. To know about physical problems & disease of working women due to stress.
4. To find out the control methods of stress use by working women in Jabalpur city.

Hypothesis of the study :

1. There is no significant relationship between leaving the job and stress.
2. Management Style is a big cause of stress in work place.
3. headache and short temper is generally physical problem in working women due to stress in their workplace

Limitations of the study - The study has the following limitations :

1. The sample was selected from few working women of Jabalpur city .
2. The sample was limited to 50 respondents .
3. The range limited for working women respondents was from 25 to 60 years.
4 Randomly selected of respondents have been used for filling the Questionnaire .

Plan And Methodology :

Selection of the method of inquiry - The universe being too large and time and other resources being limited sampling method were selected for the present study.

* **Research Scholar (Resource Management) Govt. M .H. college of Home science and science for women (Autonomous), jabalpur (M.P.) INDIA**

** **Professor (Human Development) Govt. M .H. college of Home science and science for women (Autonomous), jabalpur (M.P.) INDIA**

Selection of sample - The sample was selected on stratified random basis.

Selection of method for collection of data - Questionnaire method was used for collection of data . A trial survey was done to get and idea of the various problems. In the trial survey, the same procedure was followed as was to be adopted in actual survey. The number of cases in it was five. On the basis of this pilot survey necessary amendments are done in the schedule.

Sources of information - Information was collected form two sources :

1. Primary sources.
2. Secondary sources.

1. Primary sources - Respondents (working women) from age group 25 to 60 years were selected as the primary source. It was collected from 50 respondents residing in different workplace of through questionnaire method.

2.. Secondary sources - It may be termed as "Documentary source". The information was gathered from different books, magazines, journals, news scripts, &websites. etc.

Analysis Of Data - After the data was collected it was tabulated and analyzed statistically. Wherever needed, statistical tests were applied to get the final results. The information gathered was from the 50 working women surveyed from Jabalpur city. The age group running 25-60year.

Table No. 01 :Number of Respondents according to their Want / Desire that leave their Job / Work due to stress

Sr. No.	Answer	No. of Res pondents	%
01	YES	21	42 %
02	NO	29	58%

The table interpretated, 42% working women leave their job due to stress.

Graph No. 01 : Percentage of Respondents according to their Want / Desire that leave their Job / Work due to stress

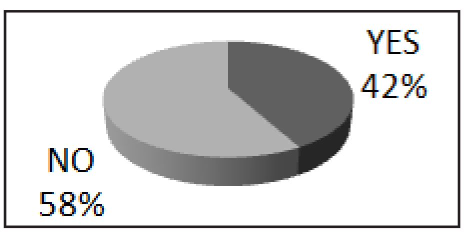

Table No. 02 : No. of Respondents according to their irritable talk (peevishness) or irritation on family members after come to the work place (job)

Sr. No.	Answer	No. of Res pondents	%
01	YES	23	46 %
02	NO	20	40%
03	NEUTRAL	07	14 %

Table shows 46% working women talk to their family members in irritable condition , after come to the work place .

Graph No. 02

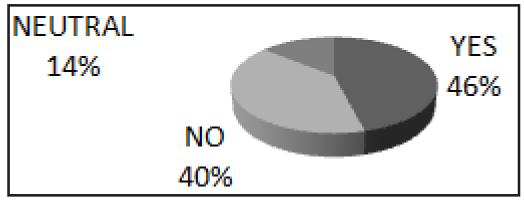

Table No. 03 : No. of respondents according to their satisfaction from their job

Sr. No.	Answer	No. of Res pondents	%
01	YES	15	30%
02	NO	35	70%

Table shows 70% working women not satisfy with their job.

Graph No. 03 : Percentage of respondents according to their satisfaction from their job

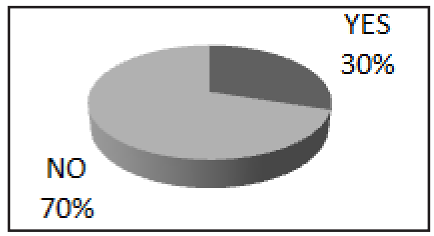

Table No. 04 : No. of respondents according to cause of stress on work place (job)

Sr. No.	Answer	No. of Res pondents	%
01	design of tasks	10	20%
02	any type of demand	10	20%
03	working condition	06	12%
04	relationship	10	20%
05	management style	14	28%

Table shows 28% management styles was a big cause of stress on workplace . whereas demands, design of task & relationship were also a cause of stress on work place (20% respectively .)

Graph No. 04 : Percentage of respondents according to cause of stress on work place (job)

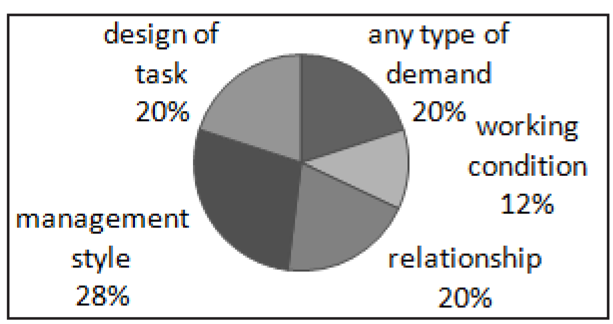

Table No. 05 : No. of respondents according to the physical problem due to stress

Sr. No.	Answer	No. of Respondents	%
01	headache	17	34%
02	sleeping trouble	20	40%
03	short temper	07	14%
04	job dissatisfaction	03	06%
05	mental trouble	03	06%

The table interepretated 40% working women have sleeping trouble & 34% have headache problem due to stress

Graph No. 05 : Percentage of respondents according to the physical problem due to stress

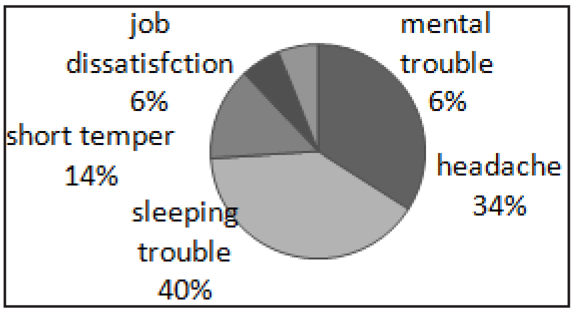

Table No. 06 : No. of respondents according to disease due to stress

Sr. No.	Answer	No. of Respondents	%
01	Blood Pressure	20	40%
02	Gastro-Intestinal problem	08	16%
03	Obesity	08	16%
04	Diabetes	07	14%
05	Accelerated aging	04	08%
06	Heart related problem	03	06%

Table shows 40% working women had blood pressure problem,16% gastro –intestinal problem and 16% obesity ,14% diasbetes and so on.

Graph No. 06 : Percentage of respondents according to disease due to stress

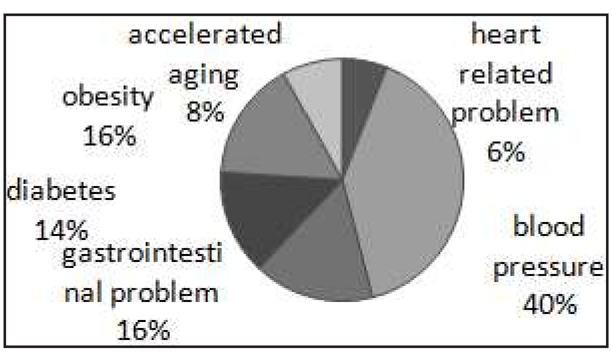

Table No. 07 : No. of respondents according to use of control methods in stressed condition

Sr. No.	Answer	No. of Respondents	%
01	Change that place	20	40%
02	Listen songs	10	20%
03	Change the attitude	10	20%
04	Meditation	06	12%
05	ABC method	04	08%

Table shows 40% working women change that place in stressed condition & 20% change the attitude about the problem for control the stress.

Graph No. 07 : Percentage of respondents according to use of control methods in stressed condition

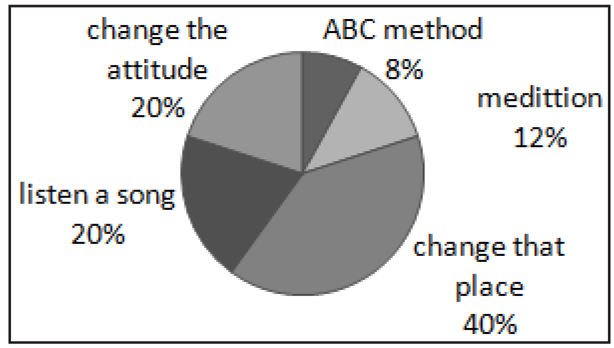

Conclusion -The result as drawn out by the survey done in Jabalpur city and exposure to workplace stressors predicts serious adverse effects on mental and physical problem. Given the widespread prevalence of job stress among working women, this translates to large preventable burdens of common chronic illness and disease. Job stress-related working women was demand working, relationships, management style & design of task. Job stress is a large and growing public health problem, especially in women. Feasible and effective intervention strategies are available for addressing job stress in the workplace .so many diseases caused by stress like blood pressure, aging, obesity ,diabetes etc. which are harmful to working women .

But today , working women aware about the stress and manage the problem very confidently and use the control methods for reducing stress like meditation, ABC (awareness, balance, control)method ,attitude changing etc. So working women changes their life style with right attitude & reduce their stress.

References : –

1. ABOUSERIE, R. 1996. Stress, coping strategies and job satisfaction in university academic staff. Educational Psychology. 16(1):49-56.
2. COOPER, C.L. & PAYNE, R. 1978. Stress at Work. Great Britain: The Bath Press, Avon.
3. FISHER, S. 1994. Stress in Academic Life the mental assembly line. Great Brittian: St Edmundsbury Press Ltd.
4. Heraclides, A, Chandola, T, Witte, DR & Brunner, EJ 2009. Psychosocial stress at work doubles the risk of type 2 diabetes in middle-aged women: evidence from the Whitehall II study. Diabetes Care, 32, 2230–2235.

Websites :–

1. www.google.com
2. www.yahoo.com.
3. www.slidestare.com
4. www.allindiamap.com
5. wwww.researchmethodology.com
6. www.wikipedia.com
7. www.researchereport.org.com.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Impact Of Occupational Stress Through HR Interventions Between Public And Private Sector Bank

Pooja Chouhan* Dr. Himanshu Mehta Dr. Tabassum Patel *****

Abstract - Occupational stress is a part and parcel of our existence. Occupational stress is a consequence of a mis-balance between a person and his environment, and the perceived inability to manage the hurdles and resultant demands. Day by day the stress level of humans is tolling to the heights where it is getting so difficult to understand how it can be managed and survived. Corporates are searching new theories and definitions to define it. Off late the buzz word which is over heard related to job stress is Occupational stress, a very upmarket terminology, which can be read in popular journals or magazine. When we start looking for the in-depth meaning of Occupational stress, it refers to a situation where occupation related factors interact with employee to change, disrupts psychological and physiological conditions such that the person is forced to deviate from normal functioning. In this juncture, this study is undertaken to address specific problems of bank employees related to occupational stress in Ratlam District, State of Madhya Pradesh.
Keywords - Bank employees, Employees at workplace, Occupational Stress, HR Intervention, Public and Private Sector Bank.

Introduction - Occupational stress is generally defined in terms of relationship between a person and his environment. There is potential for stress when an environmental situation is perceived as presenting demand where Human Resource to exceed the person's capabilities and resources for meeting it. Every occupation has some stress, which may differ in its degree. My research focusses on bankemployees of private and public sector that how the changing trend in banking sector is demanding high degree of proficiency which is letting them to occupational stress and can human resource intervention can actually help them to reduce the work pressure these employees going through.

A lot of research has been conducted into occupational stress over the last decade during this time, there seems to have been something approaching open warfare between competing theories and definitions. Occupational Stress is a Common element in any kind of job and persons have to face it in almost every walk of life. Some of the theories behind it are accepted, other are being researched and debated.

Occupational stress arises due to lack of person-environment fit. When occupational stress is mismanaged, it affects the human potential in the organization. It further leads to reduced quality, productivity, health as well as Wellbeing and morale of a person. Occupational stress is considered as harmful factor of the work environment."

"Occupational stress has become an important topic for study of organizational behavior for several reasons."

1. *Occupational stress has harmful psychological and physiological effects on employees.*
2. *Occupational stress is a major cause of employee turnover and absenteeism.*
3. *Occupational stress experienced by one employee can affect the safety of other employees.*
4. *By controlling stress, individual and organization can be managed more effectively.*

Pressure is a part and parcel of all work which helps to keep one motivated and urges the individual to strive for excellence, but excessive pressure can leads to stress which undermines performance is costly to employers and can make people ill.

The working environment or working condition can be defined as the surrounding of an employee in a certain work area, and may be divided into two Categories, physical and non-physical. Elements of physical condition include equipment; setting etc. and non-physical include privacy, noise and conversation. The occupation stress can eventually affect both physical and emotional wellbeing if not managed effectively.

Review Of Literature - According to **Gibson(2003),** in any organization there are different levels or perspectives on effectiveness. The basic level is individual effectiveness, performed by specific employees of the organization. This individual perspective of effectiveness is normally assessed by management using a performance evaluation process.

According to **WHO (2001),** mental health problems and

* **Pacific University of Management Studies, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Principal, Pacific Business School, Udaipur (Raj.) INDIA**
*** **H.O.D. (Management) SYSITS College, Ratlam (M.P.) INDIA**

stress related disorders are the biggest overall cause of premature death in the Europe. Based on such considerations, **the European Council of Ministers (15 November, 2001)** concluded that stress and depression related problems are of major importance and significant contributors to the burden of disease and the loss of quality of life. Occupational stress is an increasingly important occupational health problem and a significant cause of economic loss.

According to statistical reports from **WHO** stress related depression is the number one occupational disease of 21st century. According to the American Medical Association, stress is a factor in more than 75% of sickness today. World Health Organization says stress is America's #1 Health Problem. In 2001 alone heart disease killed an estimated **700,142** people (Centers for Disease Control and Prevention). The experts say most cardio vascular cases are related to stress.

NIOSH explains 40% of employees reported their job was very or extremely stressful, 25% view their jobs as the number one stressor in their lives. Employees believe that employees have more on-the-job stress than a generation ago, 29% of employees felt quite a bit or extremely stressed at work, 26 percent of employees said they were "often or very often burned out or stressed by their work".

According to **NIOSH. (National Institute for Occupational Safety and Health**) exposure to stressful working conditions (called job stressors) can have a direct influence on worker safety and health. According to the researchers, people who do the stressful jobs more often doing other work that is bad for health, such as **smoking** and alcohol drinking, rather than people who enjoy their work to overcome the boredom in the workplace, psychologists say that people should start thinking about the needs of others, especially loved ones and family, thus avoiding the other bad habits for health. Thus it is important to assess the stress and coping strategies for bank employees.

A job stressed individual is likely to have greater job dissatisfaction, increased absenteeism, and increased frequency of drinking and smoking, increase in negative psychological symptoms and reduced aspirations and self-esteem.

Concern over problems associated with occupational stress and their costs over employees has fostered interest in human resource intervention strategies. While specific work stressors and their resulting physical and mental health consequences have been identified, relatively few successful interventions have been documented in the literature.

However, as individuals in an organization one cannot work alone that we understand, and we have to usually work in groups, group effectivenesswhich is simply the aggregate of employee contributions. When the sum of the individual contributions is greater than their combined results, **synergy**occurs.

Stress develops when an individual feels he is not competent to undertake the role assigned to him effectively. The individual feels that he lacks knowledge, skill and training on performing the particular role (**stress, conflict management and counseling).**

Organizational effectiveness has several criteria whereby different organizational functions can be measured using different characteristics that consider both means (process) and ends (outcomes).The **organizational effectiveness is hard to measure**as there is no unified definition of the organizational effectiveness. Each Banking organization has to design its own measures and has to define the desired target values. The top management has to deliver the definition of the effectiveness. The effort of employees and managers is aimed to reach the defined target values creates stress and most often burnout.

Occupational stress may produce both overt psychological and physiologic disabilities. However it may also cause subtle manifestation of morbidity that can affect personal well-being and productivity. As employees spend roughly one third of their lives working in an organizational goal setting, employee mental health is of particular importance. Two people exposed to the same situation may react substantially in a different magnitude and stress responses there comes the role of human resource intervention playing a significant part in reducing occupational stress and building an organization which more effective.

Even though 'human resources intervention' is relatively modern management term coined recently, the importance of human resource intervention can be traced back to Vedic ages. In **the Bhagavad Gita**, Lord Krishna not only makes Arjuna spiritually enlightened, but also teaches him the art of self-management, anger management, stress management, conflict management, transformational leadership, motivation, goal setting and many other aspects which are now essential parts of any Human resource intervention.

Dr. Leonard Nadler in the United States in1969 has defined Human Resourceinterventionas a series of organized activities.Conducted with specific time and designed to produce behavioural change Human Resourceinterventionis a philosophy of management. It is a concept that provides a Meta value, a kind of subsuming norm which guides management approaches to its employees. In a basic sense, Human Resourceinterventionis an old hat. It is an archetypal idea which is of a kind with the concept about the rights and duties of man which democratic constitution the world over consider inalienable and inherent in the man's nature.

Objectives ofthe Study -

1. To study the various factors responsible for Occupational stress in bank employees
2. To suggest different human resources interventions to help and accelerate the employees.

Research Design - A research design is the arrangement of condition for collection and analysis of data in a manner that aims to combine relevant to the research purpose with economy in procedure.

The researcher has adopted Descriptive research design. Since, it describes the state of affairs as it exists at present.

Sample Size - A sample of 500 respondents was taken for the study. Sample size refers to the number of respondents selected from the geographical area to constitute sample

MONTHLY INCOME OF THE RESPONDENT

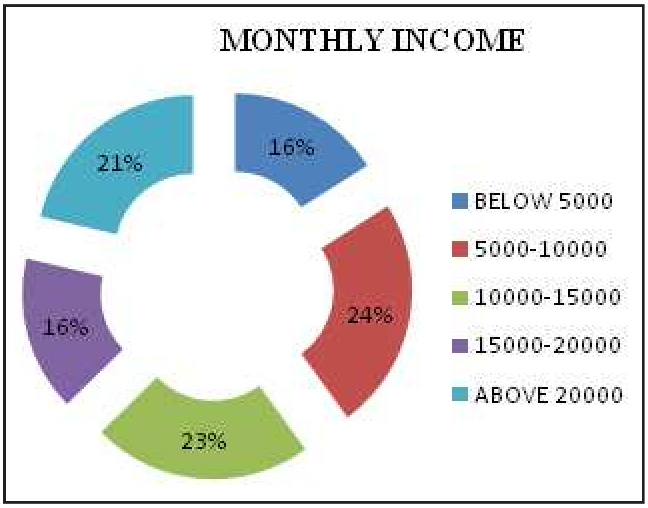

Factors responsible for Occupational Stress (See in the next page)

Human resource interventions and Employees Satisfaction (See in the next page)

Conclusion and Recommendation -

1. The one of the important tool of intervention is the training system in the banking industry. While, in the past due to lack of strategic link between training and human resource development, it is not considered as important. But, now a days the training is proved to be an effective organizational intervention within the framework of Human Resource Development. The training process involved identification of training needs, evaluation of training effectiveness, benefits of training to the end users that is the internal and external customers.
2. The main focus should be laid in proper integration of Human Resource Management strategies with the business strategies. It should foster teamwork and create a commitment to increase the efficiency of human capital. Today, there is a great need of soft skills so as to deal with the needs and requirements of the customers and not only the operational skill.
3. With the change in technology the main challenge faced by the banks in our country is to which stands with the International standards and best practices. This can be achieved by the skill building introducing new technology and strong base of human resources
4. The banks have to explore the new gates for entering into the collaborative arrangement with the Institution and Universities of India and as well as with that of abroad. With a trainingpackages they have to provide specialized training in the financial service industry for the bettermentof banks.
5. The main function of HRD in the banking industry is to work out for better performance not only in their various operations but also in the case of financial services provided them. The competitiveness of a bank can be described by the technical skill, attitude and knowledge of the person. It should be clearly understood by the banks at the most important pillars of Banking, that is capital and Technology can be replaced but not the human capital. The human resources should be dealers a valuableresource in the world of competition. So there is a agent need that what should be taken in integrating human resource management strategieswith the business strategies.
6. In organization, the moral boosting of the employees is overlooked. It is necessary for human beings to be appraised and encouraged constantly. By realizing it, the bank should take total steps to motivate the bank personnel like man of the month awards, repeat get together, conferences, sport events, dinners, company sponsored travel, reunion etc.In this way a sense of belongingness is developed in the employees.
7. The people are considered to be the primary asset, so it should be ensured that the supporting elements for them should be such that it provides maximum values.
8. It is necessary to overcome the hierarchical structure of the public sector in which the seniority is preferred over the performance. So, as to attract the best talent from the young.

Limitations of the study - This study suffers from the following limitations -

- Only 14 public sector/ private sector banks are taken into consideration.
- Sometimes to save Bank's reputation employees doesn't tell the actual facts and concerns related to a particular job.

References :-

1. Mitchell, George E. (2012). The Construct of Organizational Effectiveness: Perspectives from Leaders of International Nonprofits in the United States. Nonprofit and Voluntary Sector Quarterly.
2. Deepimano, "Stress among bank employees''; Future studies; posted on 2-11-2011.
3. Ms.Nimmy Patric2011 "A study to assess the level of stress and coping strategies of employees in selected banks Bangalore, with a view to develop an information booklet".
4. Wikipedia, "Workplace stress", occupational stress December2010.
5. Wilson, J.P., 2009. Human Resource Development: Learning and Training for individuals and organizations.2nd Ed.UnitedKingdom.Kogan Page Ltd.
6. Paauwe, J. (2009) 'human resource intervention and Performance: Achievement, Methodological Issues and Prospects' Journal of Management Studies.
7. H. R. Machiraju, H. R.(2008),Modern Commercial Banking, New Age International, New Delhi.
8. Banfield, P. and Rebecca, K., 2008.Introduction to Human Resource Management .Oxford. Oxford University Press.

9. Report on human resource issues and Managing Talent in India's Banking Industry by India Report dated 7 November 2007.

10. Prof.MDeleepkumar, "A study on job stress of nationalized and non-nationalized bank employees"; Singhad Business Shool,Maharastra.January 2006.

Factors responsible for Occupational Stress

FACTORS	Satisfaction					Total
	Always	Often	Sometimes	Seldom	Never	
Excess working hours	4	6	6	-	4	20
Targets	26	63	11	4	2	106s
Less salary/ Excess Work	37	80	15	13	2	147
Conflicts	31	91	33	33	39	227
Total	98	240	65	5	50	500

Human resource interventions and Employees Satisfaction

HUMAN RESOURCEINTERVENTIONs	Satisfaction					Total
	Always	Often	Sometimes	Seldom	Never	
Fixed working hours	4	6	-	6	4	20
Fringe benefit	26	63	4	11	2	106
Regular increments	37	80	13	15	2	147
Employees participation	31	91	33	33	39	227
Total	98	240	50	65	47	500

****

Significance of the Work Life Balance Policies to the Employees of Call Centers

Dr. N. S. Rao * Pawan Pant **

Abstract - In the past decade, the call center industry has grown rapidly in India, with the significant number of new and high-paying job opportunities; particularly for young male and female. BPO jobs have the requirement high education that typically requires graduates. The call center industry is highly task and time oriented. They have to complete the tasks in the given time. The quality of work required at call centers has high standards and can't be compromise with the performance. The level of stress and strain in the call center employees are high and because of odd timings they could able to give time to their families that will create work family conflict. The WFC affect negatively to the performance of the employees and that can be enhanced by the adopting proper Work Life Balance Policies.

Introduction - The Work-life balance practices are purposely design by the organizational by making changes in programs or organizational culture in order to reduce work-life conflict and enhance the employee's efficiency at work and in other roles. In the frame of work life balance policies such as flexi-time, flexible working hours, parental care leave, healthy working environment provides improvement in productivity, absenteeism, turnover morale and positive attitude of the employees (Rainet, Jr., & Wolf, 1981; Hobson, Delunas & Kesic, 2001), especially for the employees who have younger children as they need more time at home to take care of their children so the flexi-time policy help them a lot (Taylor, 2001; Wise, 2003). Flexibility in work is a significant issue in the work life balance literature. The work life balance policies have flexible working policies play a key role (Taylor, 2001; Wise, 2003) and the most exploited policy by the employees being flexible working hours (Summerfield & Bable, 2004).

It was found that the employees with the work life balance policies or practices have less work life conflict. It was found that the employees are more attached to the organization those are getting the benefits of work life balance practices such as flexi-time, supervisor's support, healthy working environment, child care (Groover & Crooker, 1995).

What if Work Family Conflict?

Greenhaus & Beutell define work family conflict "a form of inter-role conflict in which the role pressures the work and family/ personal life domains are mutually incompatible in some aspects. Hence, participation in the work/family role is made difficult by the virtue of participation in the family/ work role (Greenhaus & Beutell, 1985). The people have many roles in their life to play in which they involved such as leisure and community role (Frone, 2003). The time spend at work is inversely proportional work life conflict i.e. the more time a person spend on job, the more conflict there is between work and family.

What is Work Life Balance?

In the English language "balance" is a complex word with a variety of meanings. It is a noun as well as verb. As noun balancing is scale, a weighting apparatus, which is used for the balancing object similar in weight on both the side and equal distribution of weight/amount on both the side (ODE).According to the Oxford Dictionary balancing also a verb which means, "To equal or neutralize; to bring or come into equilibrium; to se-off or compare".

The definition of the WLB has given by the numerous researchers and socialists or there is such one definition for the Work Life Balance. It could be define as the balance between Work and Life. According to Ed Schein, a renowned MIT professor, there are eight "career anchors" or motivators (general managerial, technical competence, pure challenge, autonomy, security, service or dedication, entrepreneurial and lifestyle), one or two of which will dominate and drive our choice and continuation of careers.

What are Work Life Balance Policies?

Today's highly competitive labor market an organization needs to attract and retain valuable employees for the organization, so the organizations increased the awareness and action with regards to policies and practices which address the work life balance. WLB is receiving more and more attention from government, researchers, employees and management and popular media (Wanrooy, Pocock, Strazzari & Bridge, 2001; Russell & Bowman, 2000).

* Retired Professor, Mohan Lal Sukhadiya University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

WLB in its broadest sense is defined as it is the satisfactory level of 'fit' between the roles of the person's life (Hudson, 2005). WLB policies do not have any specific criterion or international standard which would be followed by the employers. It can be vary from organization to organization, and it is not compulsory for the employers specifically in India where labor force is cheap. It is the facilities provided by the employer such as flexible working hours, career break, flexible retirement and part time working, job splitting, job share, shift working etc.

Work Life Balance Policies and Call Center Employees - The call center employees have high job demand and stress (Subramanian & Vinothkumar, 2009; Suri & Rizvi, 2008), which lead to high attrition rates (Budhwar, Varma, Singh & Dhar, 2006; Mehta, Armenakis, Mehta, & Irani, 2006). In an exploratory study of call center by the Budhwar et. al., (2009), 79% employees reported that the call center job is a physically draining one and 76% reported that the call center job affected their health in some way or other. Anecdotal and exploratory research reported that the main reasons for the high attrition rate to be - assuming pseudo identities, high burnout due to the long work hours, learning a foreign accent, a miss-match between work and social life, , shift work and lack of work-family balance for employees (Singh, 2005; Sushmul, 2005 as cited in Budhwar et al, 2006).

According to our study, that has been done on the employees of call centers of Rajasthan (n = 155) in order to find the impact of work life balance policies on them. The result had come in support of the previous studies and shows the positive correlation between WLB Policies and Work Life Balance, organizational commitment and has negative correlation with Work Life Conflict and Turnover Intentions. The study shows that 51.6% respondents have problem of work life conflict whereas 23.2% were neutral and 58.1% have the turnover intentions. As the call center jobs are very stressful which will lead to high burnout and attrition (Mehta, Armenakis, Mehta, and Irani, 2006) and that will lead to high turnover estimated about 15-25 percent (Budhwar, Varma, Singh & Dhar, 2006; Mehta, Armenakis, Mehta, & Irani, 2006). Many of the scholars have discussed the situation of employees who are working in call centers in India have focused in the negative direction such as spillover and stress experienced by employees working in call centers in India (Subramanian & Vinothkumar, 2009; Suri & Rizvi, 2008), leading to high attrition rates (Budhwar, Varma, Singh & Dhar, 2006; Mehta, Armenakis, Mehta, & Irani, 2006).

The WLB Policies have negative impact on the work life conflict, more the work life balance programs perceive by the employees customized to their need and convenient, lesser will the work life conflict they experience (Greenhaus, Collins and Shaw, 2003). According to the Christine N. et al., (2015) the rationalization of the WLB Policies have the negative impact on the turnover intention which indirectly refers that the more employees that the WLB policies are fit for their collective needs and lesser they intended to leave the organization. The work life balance is the factor that can affect the employee's work-to-family conflict and family-to-work conflict as well as create the intention of commitment to the organization and turnover intention (Smith & Gardner, 2007). The study also shows that there is a negative correlation between WLB Policies and work life conflict, Turnover and have positive correlation with organizational commitment.

Table 1: Correlation between WLB Policies, Work Life Conflict, Turnover Intentions and Organizational Commitment.

Correlations

		WLB Policies
	Pearson Correlation	1
	Sig. (2-tailed)	
WLB Policies	N	155
	Pearson Correlation	-0.307
Work Family	Sig. (2-tailed)	.000
Conflict	N	155
Turnover Intention	Pearson Correlation	-0.187
	Sig. (2-tailed)	.000
	N	155
Organizational	Pearson Correlation	0.228
Commitment	Sig. (2-tailed)	.000
	N	155

The research shows that there is a significant positive correlation between WLB Policies and Organizational commitment whereas negative correlation with work life conflict and turnover intentions. The employees appreciated the policies adopted by the organizations in order provide balance in the life of employees.

The ITeS sector including call centers introduced work family policies/practices and benefits in order to help their employees for attaining balance between their work and life. Valk and Srinivasan (2011) found in their research that the work life balance policies help the respondents to attain the balance between their work and family through HR policies and programs such as paid leave for personal/sick leave, maternity benefits, flex-time, telecommuting etc. These policies provide life satisfaction and emotional well-being to the employees. According to Wilkinson M (2013), the work life balance and psychological well-being is positively correlated. The policies which are adopted by the organizations for the well-being of their employees will positively affect the psychological well being of the employees of that organization.

The study has shown significant positive correlation between WLB Policies and Work Life Balance, r = .668, at 99% confidence level. (r = .668)

Moreover, the Border theory encourages the employees and the employer to use the WLB Policies tools in order to balance their work and life better (Sue Campbell Clark, 2000; McMillan et.al., 2011). Hence these practices include flexible work hours (e.g., flextime, which permits workers to vary their start and finish times provided a certain number of hours is worked; compressed work week, in which employees work a full week's worth of hours in four days and take the fifth off), working from home , sharing a full-time job between two employees (job sharing), family leave programs (e.g., parental leave, adoption leave, compassionate leave), onsite childcare, and financial and/or informational assistance with childcare and eldercare services.

According to Febbraro (2006), the women who have certain formal family friendly policies have increased work life balance despite of those who do not have that. Today the life is too juggling for both employees and the employers so the work life balance policies are beneficial for both (Thompson & Prottas, 2009).

Work life balance provides a significant option for both i.e. employees and employers. (Thompson & Prottas, 2009; Yuile, Chang, Gudmunson and Sowang, 2012). The WLB policies play a critical role in attracting and retaining the skilled work force in an organization (Gallensky, 1998). However, surprisingly there is a little research on the adoption of Work Life Balance Policies by the firm (Thompson & Prottas, 2009). As the work life balance policies are important for any organization then also it is important for policy makers to know employees work demand and non work needs before framing policy for an organization (Portoghese, Galletta & Battistelli; 2011)

The management of the organization can use the WLB practices to attract and/ or retain the potential employees as it supports the Human Resource Management (HRM) (Mescher et al., 2010).

References :-

1. Budhwar, P., Varma, A., Singh, V., & Dhar, R. (2006b). HRM systems of Indian call centers: An exploratory study. International Journal of Human Resource Management, 17, 881–897.
2. Campbell, D.T., & Stanley, J.C., (1963). Experimental and Quasi-experimental Design for Research. Boston: Hougthon Mifflin Press.
3. Christine, C., Gillian, B., & Garavan, N.T. (2008).The Psychological Contract in Call Centres: An Employee Perspective. Journal of Industrial Relations, 50,229-142.
4. Frone, M. R. (2003). Work-Family Balance. Handbook of Occupational Health Psychology. Washington, DC: American Psychological Association.
5. Greenhaus JH, Beutell NJ (1985) Sources and conflict between work and family roles. Acad Manage Rev 10:76–88
6. Greenhaus JH, Collins KM, Shaw JD (2003) The relation between work-family balance and quality of life. J Vocat Behav 63:510–531
7. H. McMillan, M. Morris & E. Atchley (2011), "Constructs of the Work/ Life Interface: A Synthesis of the Literature and Introduction of the Concept of Work/Life Harmony", Human Resource Management Review, Vol. 10, No. 1, Pp. 6–25.
8. J. Smith & D. Gardner (2007), "Factors Affecting Employee use of Work-Life Balance Initiatives", New Zealand Journal of Psychology, Vol. 36, No. 1, Pp. 3–12.
9. Mehta, A.; Armenakis, A.; Mehta, N.; Irani, F. 2006. Challenges and opportunities of Business Process Outsourcing in India, Journal of Labor Research 27(3): 323-338.
10. Singh, H. 2005. Is the BPO iceberg melting under attrition heat? The Economic Times, February 10.
11. Subramanian, S.; Vinothkumar, M. 2009. Hardiness personality, self-esteem and occupational stress among IT professionals, Journal of the Indian Academy of Applied Psychology 35: 48-56.
12. Suri, S.; Rizvi, S. 2008. Mental health and stress among call center employees, Journal of the Indian Academy of Applied Psychology 34: 215-220.
13. Thompson, C. A., and Prottass, D. J. (2009) Elaborations on a Theme: Toward Understanding Work-Life Culture. In A. C. Crouter and A. Booth (Ed.), Work-Life Policies (pp. 51-69). Washington, DC: Urban Institute Press.
14. Valk, R.; Srinivasan, V. 2011. Work-family balance of Indian women software professionals: A qualitative study,
15. Yuile, C., Chang, A., Gudmundsson, A., and Sawang, S. (2012), 'The Role of Life Friendly Policies on Employees' Work life Balance', Journal of Management and Organization, 18, 53-63.

****

Extracting Growth Through Self Help Groups In India

Dr. Sumeet Khurana *

Abstract - Micro financing services offer the best solution to problem of inadequate capital in the rural and underdeveloped areas. Various institutions and Self Help Groups (SHGs) have been involved in providing micro finance services across the country. Because of easy and convenient services offered to low-income borrowers the results from these SHGs have been significant. Recognizing the potential of micro finance the Reserve Bank, NABARD and Small Industries Development Bank of India (SIDBI) have taken several initiatives over the years to give a further incentive to the micro finance movement in India. Among which the most popular micro finance movement was the introduction of SHG-bank linkage programme (SBLP). The paper is an attempt to analyze the current scenario of Self Help Group_Bank Linkage programme in India.

Key words - Micro financing, Self Help Group, SHG-bank linkage programme.

Introduction - Efficient use of resources in the rural areas is the only solution to overall development of the economy. But the inadequacy of capital results in inefficient use of resources in such areas. Micro financing services offer the best solution to problem of inadequate capital in the rural and underdeveloped areas and can help in alleviating poverty and promoting growth at the grass root level (Karmakar, 2000). Researchers suggest that a well-managed micro-finance can be beneficial both for its customers and its providers as there is no standard methodology in this field (Harper, 1998).

Various institutions and Self Help Groups have been involved in providing micro finance services across the world. Most of the self-help group in India area village-based financial intermediary committee usually composed of 10–20 local people contributing over a few months until there is enough capital in the group to begin lending. The results from these (SHGs) are promising and have become a focus of intense examination as it is proving to be an effective method of poverty reduction.

Looking onto the positive changes because of SHG in India, various microfinance programmes like the Self Help Bank Linkage have been increasingly promoted for their positive economic impact by Reserve Bank, NABARD and Small Industries Development Bank of India (SIDBI) (Swain, Fan- 2009).

Objective - The paper is an attempt to analyze the contribution and adaptability of Self Help Group Bank Linkage Programme in India.

SHG-Bank Linkage programme - S K Kalia Committee recommended the SHG-Bank Linkage programme in India, with various objectives (Rafee, 2015) viz. developing mutual faith and confidence between the rural poor and bankers, to improve managerial capabilities of informal credit system and reduce the related transaction cost, to expand the credit flow among the needy, to alleviate poverty and empower the women.

According to the recommendation, the members of the group were encouraged to pool their savings regularly and use the pooled savings in order to make small interest bearing loans. The bank linkage would offer the group additional resources through the bank varying from 1:1 to 1:4 (Krishnaveni, 2013) which would help banks in reducing their transaction costs as appraisal, supervision and monitoring of loans will be done by SHGs and on the other side, the group would be benefited by getting access to a larger quantum of resources (Nair, 2011).

Three models emerged under SHG-Bank Linkage programme viz.

See figure in next page

Growth of SHG_Bank Linkage - According to NABARD, model II has emerged as most popular as it is covering 72% of SHGs and model I with 20% and model III with coverage of 8% SHGs. In a report, pilot phase of the linkage programme started in 1992-95 with 4750 SHGs having few thousand dollars bank saving and outstanding bank credit of $1.1 million with geographical spread mostly in Andhra Pradesh and Karnataka, but by the end of financial year 2014, almost 7.14 SHGs with $1650 million bank deposit and $7155 million outstanding bank credit are contributing in 29 states and 6 union territories.

Contribution of SHG_Bank linkage in financial and economic growth of India - To reach out to the poor in profitable manner, banks across the world have been trying different sustainable ways of which SHG_Bank Linkage programme in India became an important component of the Government's overall thrust to mitigate poverty since year 2000. This linkage became the world's largest microfinance initiative in year 2005 itself by providing credit facility to 24

* Professor (Management Studies) Acropolis Technical Campus, Indore (M.P.) INDIA

million poor families or about 120 million poor people (Fernandez, 2007).

The success can be contributed to various factors. The biggest contributing factor is that the Dependency on money lenders have been reduced because of the linkage as people have direct access and trust over the system which is made of them, by them and for them. As a result the Savings habit also has increased among the rural households. This linkage model is also responsible for bringing Self Sufficiency for consumption requirements. Repayment of SHG loans is above 95% because supervision and monitoring of loans is done by SHGs.

The SHG consists of different members belonging to same social and financial background and they meet to sort out the problems of the members of the group which results in better understanding and evaluating the clients who are in need and have the capability to repay the loan, whatever be the requirement. This also became the basis of creating value added diversified financial products which banks would otherwise not able to create in general.

Studies have found that SHG women are engaged in more than 450 varieties of income generating activities and are producing qualitative products with high standards in packing, etc. with increased monthly income ranging from Rs.2000/- to 3000/-. The women SHGs are also involved in socio economic development by actively participating in several government welfare programs such as family welfare, literacy etc inculcating the managerial and leadership qualities among themselves (Nagamuni, 2014).

Lacking areas of SHG_Bank Linkage - Although, the contribution of SHG_Bank linkage is remarkable in India, but the major success is seen in south India with total contribution of 74% in terms of SBLP disbursements (Reddy and Malik, 2011) and Uttar Pradesh to some extent. In the other part of the nation the linkage programme have not gain much acceptability. There have been various reasons identified for this. The major cause is because of lack of awareness, gender inequality and socio economic conditions of the individual members (Garikipati, 2008). Other studies conclude that there is a lack of concentrated efforts and motivation by banks along with their failure to identify NGOs with saving and credit groups (Bansal, 2003).

To extract growth from the linkage programme in India, Write (2000) focused using latest technology and Institutional innovations. Ghate (2007) suggested charging cost-recovering interest rates along with the healthy and long term relationship of NGOs with the government and other stakeholders. Check on corruption and commission while sanctioning and upgrading the loan is also very important perspective of the growth. Increased transparency, as a result, plays a very important role in creating sustainable trust among the participants and the banks (Reddy and Malik, 2011). Defined roles and responsibilities with efficient management of SHGs can increase their acceptability across the nation (Muhammed, 2013).

Conclusion - Present study is an attempt to analyze the growth of SHG_Bank Linkage programme in India. Earlier studies have been indicating that the linkage programme have become the world's largest microfinance initiative by covering 120 million poor people of the country, but region wide data shows that the acceptability of the model is in South Indian states and some part of Uttar Pradesh. If SHGs of North and North East region understand the importance and show their dedication in implementing the programme, soon the system would be able to mobilize the fund to deprived sector of the society and empower the masses.

References :-

1. Bansal, H. (2003). SGH-bank linkage program in India: An overview. Journal of Microfinance/ESR Review, 5(1), 13.
2. Fernandez, A. (2007). History and spread of the self-help affinity group movement in India. International Fund for Agricultural Development (IFAD), accessed on May, 5, 2009.
3. Garikipati, S. (2008). The impact of lending to women on household vulnerability and women's empowerment: evidence from India. World Development, 36(12), 2620-2642.
4. Ghate, P. (2007). Indian Microfinance: The challenges of rapid growth. SAGE Publications India.
5. Harper, M. (1998). Profit for the poor: cases in micro-finance. Intermediate Technology Publications Ltd (ITP).
6. Karmakar, K. G. (2000). Rural Credit and Self-help Groups—Micro-finance Needs and Concepts in India.
7. Krishnaveni, V., Haridas, R., Nandhini, M., & Usha, M. (2013). Savings And Lending Pattern Of Help Groups An Overview. i-Manager's Journal on Management, 8(1), 49.
8. Muhammad, A. A. S. N. A., & Ndaeji, N. (2013). Rural women empowerment through self help groups in Nigeria: the role of participation and volunteerism. Life Science Journal, 10(4).
9. Nagamuni, M. (2014). Self help group bank linkage. International Journal of Physical and Social Sciences, 4(4), 238-254.
10. Nair, T. S. (2011). Two Decades of Indian Microfinance: Trajectory and Transformation. September.
11. Rafee, O. M. (2015). Performance of micro finance SHGS bank-linkage programme: a study of select commercial banks YSR KADAPA district, AP. International journal of marketing, financial services and management research, 4(4).
12. Reddy, A. A., & Malik, D. P. (2011). A Review of SHG-Bank Linkage Programme in India. Indian Journal of Industrial Economics and Development, 7(2), 1-10.
13. Swain, R. B., & Wallentin, F. Y. (2009). Does micro-finance empower women? Evidence from self help groups in India. International review of applied economics, 23(5), 541-556.

M1	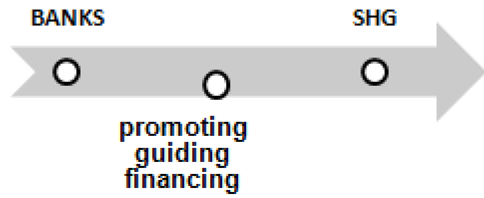 Figure 1 - Model I: SHGs promoted, guided and financed by banks
M2	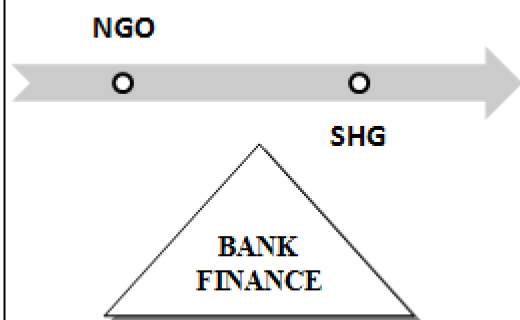 Figure 2_ MODEL 2: SHGs promoted by NGOs/ Government agencies and financed by banks
M3	 Figure 3_ Model 3: SHGs promoted by NGOs and financed by banks using NGOs/formal agencies as financial intermediaries

****

Women Entrepreneurship In India : Challenges And Opportunities

Dr. Sarita Mundra *

Abstract - Women entrepreneurship should be recognized as an important source of economic growth in India. Women entrepreneurs create new jobs for themselves as well as others and also provide society with different solutions to management, organization and business problems. However, they still represent a minority of all entrepreneurs as they often face gender-based barriers to starting and growing their businesses, like discriminatory property, matrimonial and inheritance laws and/or cultural practices; lack of access to formal finance mechanisms; limited mobility and access to information and networks, etc.
Key Words - Entrepreneurship, Women entrepreneurs, Job Creation, Skill Development, Constraints, Challenges.

Introduction - Entrepreneurship is the process of designing, launching, and running a new business, i.e. a startup company offering a product, process or service. It has been defined as the "capacity and willingness to develop, organize, and manage a business venture along with any of its risks in order to make a profit." The **entrepreneur** is "a person who organizes and manages any enterprise, especially a business, usually with considerable initiative and risk.

Women entrepreneur may be defined as a woman or group of women who initiate, organize, and run a business enterprise. In terms of Schumpeterian concept of innovative entrepreneurs, women who innovate, imitate or adopt a business activity are called "women entrepreneurs". **Female entrepreneurs**, also known as **women entrepreneurs**, encompass approximately 1/3 of all entrepreneurs worldwide. Following are some author definitions of entrepreneurship and women entrepreneur:

1. The Entrepreneurship Center at Miami University of Ohio has an interesting definition of entrepreneurship: "Entrepreneurship is the process of identifying, developing, and bringing a vision to life. The vision may be an innovative idea, an opportunity, or simply a better way to do something. The end result of this process is the creation of a new venture, formed under conditions of risk and considerable uncertainty."
2. The Government of India has defined women entrepreneurs based on women participation in equity and employment of a business enterprise. Accordingly, the Government of India (GOI2006) has defined women entrepreneur as "an enterprise owned and controlled by a women having a minimum financial interest of 51 per cent of the capital and giving at least 51 per cent of the employment generated in the enterprise to women." However, this definition is subject to criticism mainly on the condition of employing more than 50 per cent women workers in the enterprises owned and run by the women.

Literature Review :

1. Neelam (1992) found that women chose micro enterprises because they value the quality of their lives. It allows them to stay in control of both their business & their personal lives to integrate their career roles & family
2. A study by Mallika Das (2001) concluded that The initial problems faced by the women seem similar to those faced by women in western countries. However, Indian woman entrepreneurs faced lower levels of work family conflicts and seem to differ in their reasons for starting and succeeding in business
3. While another study by Pooja Nayyar, Avinash Sharma, Jatinder Kishtwaria, Aruna Rana and Neena Vyasti (2007) suggested that Poor location of unit, tough competition from larger and established units, and lack of transport facility, lack of rest and sleep and non-availability of raw material were the significant problems faced by entrepreneurs. The factors causable to these problems were; difficulty in affording own vehicle, not being popular, heavy schedule of work and long working hours.
4. Dr. Sunil Deshpande and Ms. Sunita Sethi (2009) in their study concluded that because of attitude change, diverted conservative mindset of society to modern one, daring and risk-taking abilities of women, support and cooperation by society members, changes and relaxations in government policies, granting various upliftment schemes to women entrepreneurs etc. the percentage of women participation in the field of entrepreneurship is increasing at a considerable rate.

* Assistant Professor, Shri Cloth Market Girls Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

5. S. Vargheese Antony Jesurajan & Dr. M. Edwin Gnanadhas (2011) in their study revealed that husbands/ fathers were the main motivators for taking up entrepreneurship.

Objectives :

The objectives of this research paper are as follows:

1. To identify the challenges/constraint faced by women entrepreneurs in India.
2. To recognize the opportunities of Women Entrepreneurs in India.

Research Methodology - This research paper is based on secondary data which has been collected from various articles, magazines, blogs, journals and web sites related to Women Entrepreneur in India.

Challenges For Women Enterpreneurs In India

1. Problem of Finance - Finance is regarded as "life-blood" for any enterprise, be it big or small. However, women entrepreneurs suffer from shortage of finance on two counts.

a. Firstly, women do not generally have property on their names to use them as collateral for obtaining funds from external sources. Thus, their access to the external sources of funds is limited.

b. Secondly, the banks also consider women less credit-worthy and discourage women borrowers on the belief that they can at any time leave their business. Given such situation, women entrepreneurs are bound to rely on their own savings, if any and loans from friends and relatives who are expectedly meager and negligible. Thus, women enterprises fail due to the shortage of finance.

2. Scarcity of Raw Material - Most of the women enterprises are plagued by the scarcity of raw material and necessary inputs. Added to this are the high prices of raw material, on the one hand, and getting raw material at the minimum of discount, on the other. The failure of many women co-operatives in 1971 engaged in basket-making is an example how the scarcity of raw material sounds the death-knell of enterprises run by women (Gupta and Srinivasan 2009).

3. Stiff Competition - Women entrepreneurs do not have organizational set-up to pump in a lot of money for canvassing and advertisement. Thus, they have to face a stiff competition for marketing their products with both organized sector and their male counterparts. Such a competition ultimately results in the liquidation of women enterprises.

4. Limited Mobility - Unlike men, women mobility in India is highly limited due to various reasons. A single woman asking for room is still looked upon suspicion. Cumbersome exercise involved in starting an enterprise coupled with the officials humiliating attitude towards women compels them to give up idea of starting an enterprise.

5. Family Ties - In India, it is mainly a women's duty to look after the children and other members of the family.

Man plays a secondary role only. In case of married women, she has to strike a fine balance between her business and family. Her total involvement in family leaves little or no energy and time to devote for business.

a. Support and approval of husbands seem necessary condition for women's entry into business. Accordingly, the educational level and family background of husbands positively influence women's entry into business activities**.**

6. Lack of Education - In India, around three-fifths (60%) of women are still illiterate. Illiteracy is the root cause of socio-economic problems. Due to the lack of education and that too qualitative education, women are not aware of business, technology and market knowledge. Also, lack of education causes low achievement motivation among women. Thus, lack of education creates one type or other problems for women in the setting up and running of business enterprises.

7. Male-Dominated Society - Male chauvinism is still the order of the day in India. The Constitution of India speaks of equality between sexes. But, in practice, women are looked upon as abla, i.e. weak in all respects. Women suffer from male reservations about a women's role, ability and capacity and are treated accordingly. In nutshell, in the male-dominated Indian society, women are not treated equal to men. This, in turn, serves as a barrier to women entry into business.

8. Low Risk-Bearing Ability - Women in India lead a protected life. They are less educated and economically not self-dependent. All these reduce their ability to bear risk involved in running an enterprise. Risk-bearing is an essential requisite of a successful entrepreneur.

9. In addition to above problems, inadequate infrastructural facilities, shortage of power, high cost of production, social attitude, low need for achievement and socio-economic constraints also hold the women back from entering into business

Policies And Schemes For Women Entrepreneurs In India - In India, the Micro, Small & Medium Enterprises development organisations, various State Small Industries Development Corporations, the Nationalised banks and even NGOs are conducting various programmes including Entrepreneurship Development Programmes (EDPs) to cater to the needs of potential women entrepreneurs, who may not have adequate educational background and skills. The Office of DC (MSME) has also opened a Women Cell to provide coordination and assistance to women entrepreneurs facing specific problems.

There are also several other schemes of the government at central and state level, which provide assistance for setting up training-cum-income generating activities for needy women to make them economically independent. Small Industries Development Bank of India (SIDBI) has also been implementing special schemes for women entrepreneurs.

In addition to the special schemes for women entrepreneurs, various government schemes for MSMEs also provide certain special incentives and concessions for women entrepreneurs. For instance, under **Prime Minister's Rozgar Yojana (PMRY)**, preference is given to women beneficiaries. The government has also made several relaxations for women to facilitate the participation of women beneficiaries in this scheme. Similarly, under the **MSE Cluster Development Programme** by Ministry of MSME, the contribution from the Ministry of MSME varies between 30-80% of the total project in case of hard intervention, but in the case of clusters owned and managed by women entrepreneurs, contribution of the M/o MSME could be upto 90% of the project cost. Similarly, under the **Credit Guarantee Fund Scheme for Micro and Small Enterprises**, the guarantee cover is generally available upto 75% of the loans extended; however the extent of guarantee cover is 80% for MSEs operated and/ or owned by women.

Tips For Women Entrepreneurs :

1. Take Up Something You Have a Passion For - Even the best idea cannot translate into a successful business if you are not passionate about it. You need to focus on the area of work you love as only then will you put in the required effort to build a business based on it. If you do not have an interest in designer wear, it is a bad idea to start a haute couture business.

2. Trust Your Instincts - Facts and stats may help you prepare the groundwork. But they may not work at every step. It is a good idea to rely on your instincts at times and many successful entrepreneurs, male and female, can vouch for this. This does not mean that you ignore all of the feedback you receive. Remain open-minded to positive opinions as well as the negative ones.

3. Prepare a Business Plan - A sailor is lost without a map. Similarly, an entrepreneur is lost without a business plan. If you do not have a business plan yet, it is high time to create one. It will set the steps you need to follow to succeed. It will also convince investors that you are serious about your endeavor.

4. Hoard the Cash - Life is not a bed of roses and neither is business. Keep in mind, there will be ups and downs from day one. It is important to accumulate as much cash as possible before you take the first step. You will need it to keep you and your business afloat for a while once you enter the world of the self-employed.

5. Learn as Much as Possible About Finances - It is always best to hire an accountant to work with you when you first start a business, man or woman. It is also important to learn about taxes and related matters to ensure that they do not become a problem for you later on down the line.

6. Know Your Target Customers - Who do you target to sell to? For example, if you are into haute couture, you need to focus on the modern day fashion conscious female. Create contacts and conduct surveys to know all that you need to know about your customers. This will help you learn to address their needs/wants and provide suitable products/services.

7. Build Relationships with Outsourcing Partners - For a majority of new entrepreneurs, it may be best to outsource the tasks that take up too much time and effort and yet, are not related to your core business area. Keep in mind that the providers are your partners; they work with you, not for you.

8. Set Realistic Goals - If you think that you are going to earn profits within a week of starting a business, you are not on track. Many times, new businesses take months or even years to get back the cash originally invested. Take one step at a time and set achievable goals. Nothing beats hard work.

9. Be Helpful - The best and easiest way to get help from others is to help them first. A business is as much about value creation as it is about profits. Contribute in any way you can. Introduce people to each other, create write-ups, suggest important events and do everything to extend help.

10. Most Importantly – Believe in Yourself - There is no secret to success for the self-employed. The only thing that works is a good combination of planning and hard work. Whatever you do, don't give up. A business can experience highs and lows. Just don't let them discourage you into quitting.A woman has the best chances of success as an entrepreneur if she knows how to create the right balance. It is necessary to plan well and involve people who will be honest and supportive throughout the ups and downs of your new business.

Conclusion - Inspite of facing innumerable challenges from society, family and industry, Women entrepreneurs are in ecommerce, education, travel, fashion, retail, fitness, hiring, and anything and everything under the sun. They are proceeding with gumption and unbridled enthusiasm to change the world around them, make a difference with their ideas, seek solutions that have never been sought, fight diseases and social norms, run successful ventures and generate employment for many, and give rise to new sustainable ecosystems.

References :-

1. Baron, Robert A (2003),Psychology, 5th Edition ,PHI, New Delhi
2. Ghosh P and Cheruvalath, R, progress of Female Entrepreneurship in Low income countries: A Theoretical Enquiry in India, ICFAI Journal of Entrepreneurship, Vol III, No 3 September 2006.
3. Khanka, S.S.Entrepreneurial Development, 2010 .Chand & Company Ltd, New Delhi.
4. Datt, R and Sundharam, KPM India Economy S. Chand & Sons, New Delhi 2009.
5. Khanka, S.S. Entrepreneurship in Small Scale Industries, Himalaya Publishing House, New Delhi, 1990.
6. Ganesh, S. (2003) Status of Women Entrepreneur in India, Kanishka Publications, New Delhi.
7. Sasikumar, K (2000) Women Entrepreneurship, APH Publication.
8. B.N.Neelima and T Shyam Swaroop (2000) "Training Women for Entrepreneurship" Social Welfare, Vol. 4.
9. C.Beena & B.Sushma (2003), "Women Entrepreneurs Managing Petty Business: A study from motivational perspective", Southern Economist, Vol.42, No.2.
10. http://smallb.sidbi.in/%20/fund-your-business%20/additional-benefits-msmes%20/women-entrepreneurship
11. http://www.businessnewsdaily.com/6760-biggest-challenge-female-entrepreneurs.html
12. http://www.businessnewsdaily.com/5268-women-entrepreneur-challenges.html
13. http://smallbiztrends.com/2013/06/women-entrepreneurs-tips.html
14. http://www.yourarticlelibrary.com/entrepreneurship/8-problems-faced-by-women-entrepreneurs-in-india-explained/41097/

निजी एवं सार्वजनिक बैंकों के मानव संसाधन प्रबंध का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. परितोष अवस्थी*

प्रस्तावना – कोई भी संगठन मानव संसाधन के बिना कुछ भी नही है। विभिन्न संगठन जो सेवाएँ या वस्तुएँ प्रदान करते है, यह सभी इनको संचालित करने के लिए व्यक्तियों पर निर्भर है। प्राकृतिक संसाधनों की तुलना में मानवीय संसाधन अधिक बहुमूल्य है, प्रत्येक संगठन के मानव संसाधन की गुणवत्ता ही उसके भावी विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते है।

मानव संगठन प्रबंध मनुष्य की क्रियाओं से संबंधित होने के कारण किसी भी संगठन के धरोहर माने जाते है। मानव ही विभिन्न कार्यों को समायोजित कर अपने भविष्य का निर्माण करते है। भारत जो संपूर्ण विश्व में महाशक्ति के रूप में जाना जाता है। भारत देश में विश्व के अन्य देशों की तुलना में सर्वाधिक मानव संसाधन उपलब्ध है जिसके कारण मानवीय संसाधनों की उपलब्धता के लिए भारत देश सर्वअग्रणी देश के रूप में जाना जाता है ऐसे विशाल भारत देश की अर्थव्यवस्था की प्रमुख रक्त धमनियाँ बैंकों को माना जाता है जो संपूर्ण देश में वित्त का संचालन एवं नियंत्रक रूप में कार्य करती है इनकी सहायता से देश में वित्त व्यवसाय संचालित होता है तथा समस्त साख व्यवस्था संचालित होती है।

आज संपूर्ण विकास मानव संसाधन की ही देन है जो कि, मानव संसाधन के मजबूत कंधों पर ही आधारित है मानव संसाधन ही किसी भी व्यवसाय का निर्माण संचालन तथा लक्ष्य प्राप्ति में प्रमुख सहायक होता है। फिर भी ये मानव संसाधन सदैव अपने कार्यो में लीन रहते है जितना कुछ मिलता है उसमें संतोष कर लेते हैं यहाँ पर मानव संसाधन का उल्लेख हुआ है जिसके कार्यो की महत्ता को एक प्रसिद्ध कवि की पंक्तियों द्वारा उल्लेखित किया जा सकता है, मैं मजदूर हूँ, मुझे देवों की धरती से क्या जो यह प्रदर्शित करती है कि मानव संसाधन प्रबंध नि:स्वार्थ भाव से मजदूर के रूप में अपना कर्म करना ही अपना कर्तव्य समझते है, उन्हें जो कुछ मिलता है, वह उसी में खुशी से जीवन यापन करते है, पर क्या मानव संसाधन नियोजन के स्वामी का दायित्व नहीं बनता है कि जिन कर्मचारियों के बल पर वे इतना लाभ अर्जित करते है, तो उन्हें उनका न्यायोचित हित एवं सुविधाएँ दी जाए ? उन्हें कार्य करने के लिए सुरक्षित एवं स्वस्छ वातावरण उपलब्ध कराया जावे उनके साथ मानवोचित व्यवहार करना भी उतना ही जरूरी है, जितना कि समय पर उन्हें वेतन का भुगतान करना।

मानव संसाधन प्रबंध एक विभागीय उत्तरदायित्व है यह भावना के विकास का आपसी तालमेल सहयोग एवं सहकारी भावना के विकास का प्रयत्न करता है। प्रबंधक यह पता लगाना चाहते है कि, कर्मचारी ठीक से कार्य निष्पादन कर रहे है या नहीं इसके लिए क्या करना चाहिए ? क्या आज के कर्मचारियों को कार्य के लिए इस प्रकार से तैयार किया जा रहा है, जिनकी संगठन को आवश्यकता दस, बीस या तीस वर्षो बाद होगी। इन सभी प्रश्नों के समाधान के लिए वर्तमान समय में विभिन्न संगठनों ने मानव संसाधन प्रबंध एवं इसके विकास पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

अत: संक्षेप में मानव संसाधन प्रबंध एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत मनुष्य (श्रम) की प्राप्ति, विकास (प्रशिक्षण द्वारा) अभिप्रेरणा, मूल्यांकन व उन्हें बनाये रखने का कार्य किया जाता है।

प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से निजी एवं सार्वजनिक बैंकों के मानव संसाधन प्रबंध का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य –शोधार्थी के इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य निजी बैंक तथा सार्वजनिक बैंक का मानव संसाधन प्रबंध की तुलना करना है ? तथा कर्मचारियों व अधिकारियों के संतुष्टि स्तर को ज्ञात करना है ?

परिकल्पना –

1. निजी बैंक की तुलना में सार्वजनिक बैंक का मानव संसाधन प्रबंध अधिक प्रभावशाली है।
2. निजी बैंकों की तुलना में सार्वजनिक बैंक कर्मचारियों व अधिकारियों को संतुष्टि प्रदान करने में अधिक सफल हुए है।

उपरोक्त शोध पत्र की अध्ययन की पुष्टि हेतु निजी बैंक तथा सार्वजनिक बैंक के 20-20 कर्मचारियों व अधिकारियों से प्रश्नावली के माध्यम से निम्न प्रश्न पूछे गये –

	निजी बैंक		सार्वजनिक बैंक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
संतुष्ट	10	50	14	70
पूर्णत: संतुष्ट	02	10	03	15
असंतुष्ट	05	25	02	10
पूर्णत: असंतुष्ट	03	15	01	05
	20	100	20	100

स्त्रोत – प्रश्नावली विधि से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

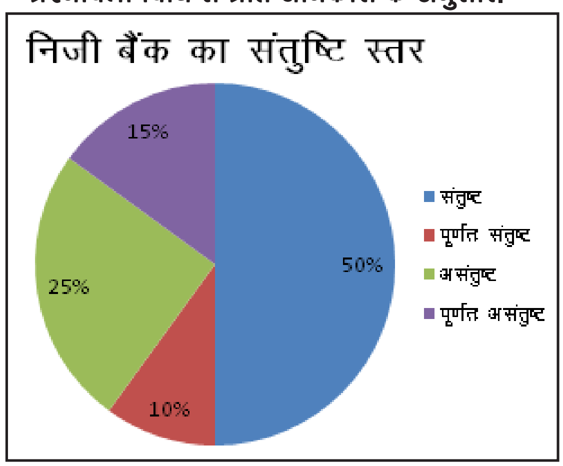

* प्राचार्य, श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

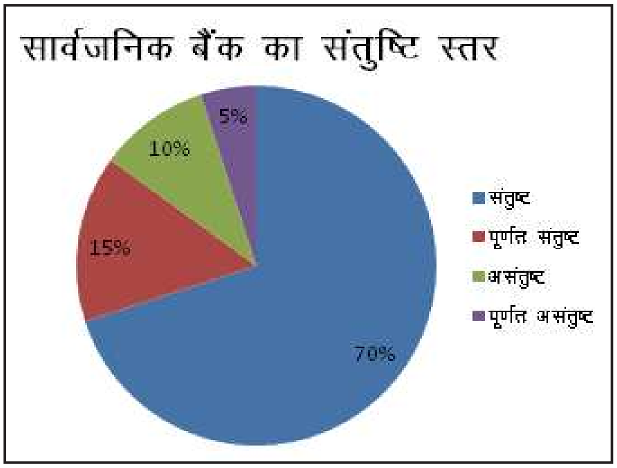

2. बैंक में प्रतिदिन कार्य अवधि से संतुष्टि स्तर –

	निजी बैंक		सार्वजनिक बैंक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
संतुष्ट	07	35	12	60
पूर्णत: संतुष्ट	03	12	04	20
असंतुष्ट	06	30	03	15
पूर्णत: असंतुष्ट	04	20	01	05
	20	100	20	100

स्रोत – प्रश्नावली विधि से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

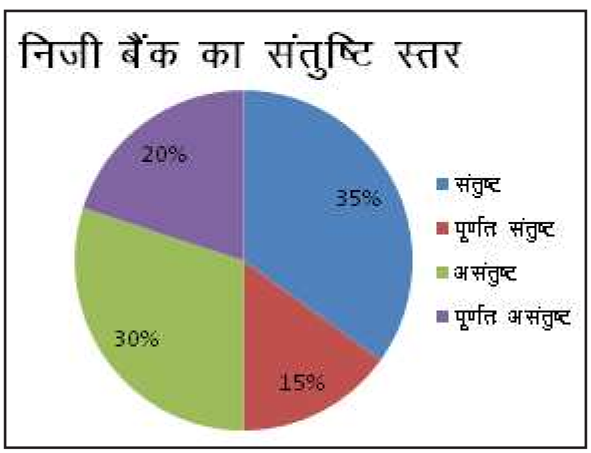

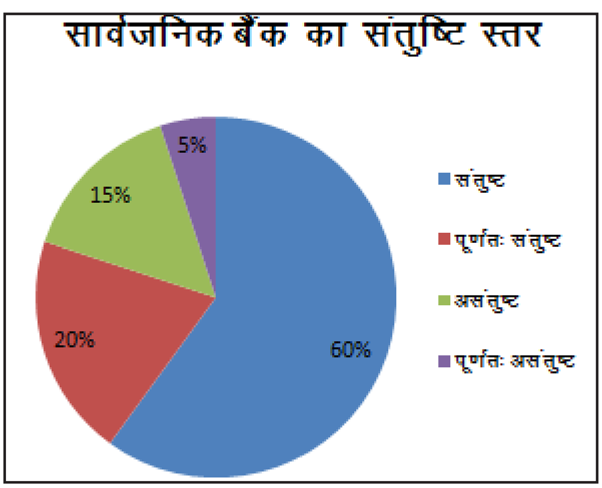

3. बैंक के आंतरिक वातावरण से संतुष्टि स्तर –

	निजी बैंक		सार्वजनिक बैंक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
संतुष्ट	09	45	13	65
पूर्णत: संतुष्ट	03	15	04	20
असंतुष्ट	04	20	02	10
पूर्णत: असंतुष्ट	04	20	01	05
	20	100	20	100

स्रोत – प्रश्नावली विधि से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

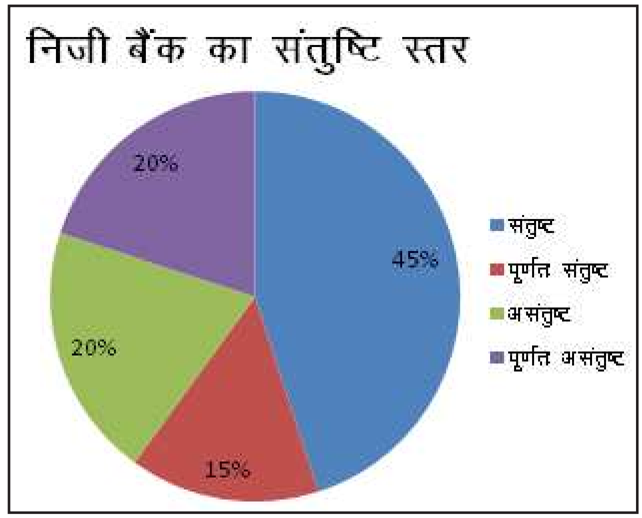

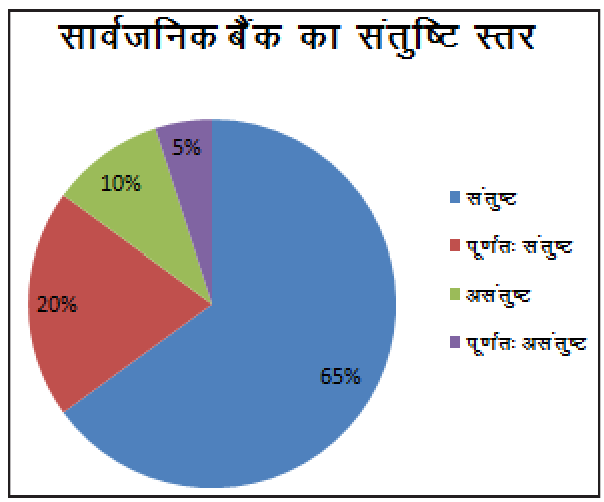

4. बैंक से प्राप्त वार्षिक अवकाश से संतुष्टि स्तर –

	निजी बैंक		सार्वजनिक बैंक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
संतुष्ट	10	50	14	70
पूर्णत: संतुष्ट	02	10	03	15
असंतुष्ट	05	25	01	05
पूर्णत: असंतुष्ट	03	15	02	10
	20	100	20	100

स्रोत – प्रश्नावली विधि से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

5. बैंक द्वारा मानव संसाधन विकास एवं नियोजन हेतु किये जाने वाले प्रयास –

	निजी बैंक		सार्वजनिक बैंक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
संतुष्ट	06	30	01	05
पूर्णतः संतुष्ट	08	40	06	30
असंतुष्ट	04	20	08	40
पूर्णतः असंतुष्ट	02	10	05	25
	20	100	20	100

स्रोत – प्रश्नावली विधि से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

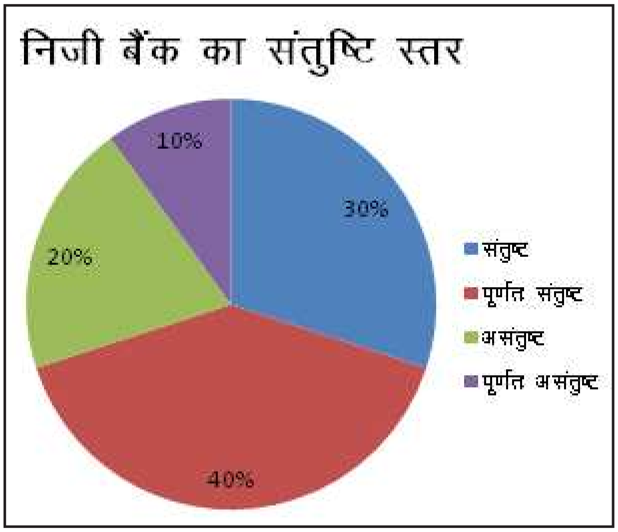

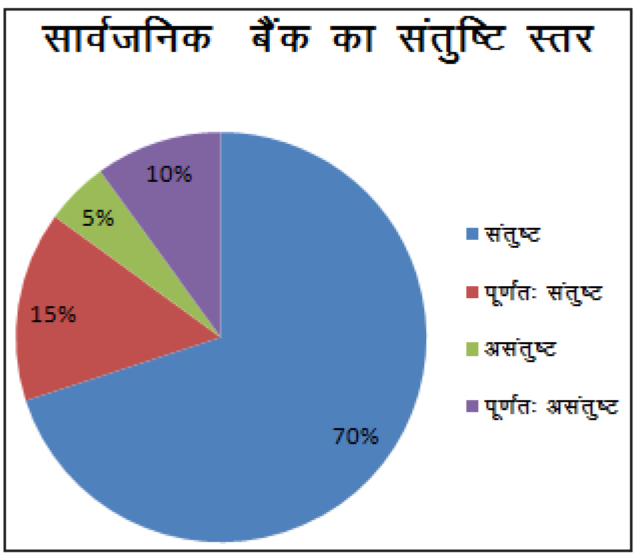

बैंक के कर्मचारियों एवं अधिकारियों से पूछे गये प्रश्नों से प्राप्त निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. निजी बैंक के 60 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी बैंक प्रबंधन से प्राप्त वित्तीय अभिप्रेरणा से संतुष्ट है जबकि सार्वजनिक बैंक के 85 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी बैंक प्रबंधन से प्राप्त वित्तीय अभिप्रेरणा से संतुष्ट है, जो कि, निजी बैंकों की तुलना में 25 प्रतिशत अधिक है
2. निजी बैंकों में प्रतिदिन कार्य अवधि को लेकर 50 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी संतुष्ट वही सार्वजनिक बैंकों में प्रतिदिन कार्य अवधि को लेकर 80 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी संतुष्ट है, जो कि, निजी बैंकों की तुलना में 30 प्रतिशत अधिक है।
3. निजी बैंक के 60 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी बैंक से आंतरिक वातावरण से असंतुष्ट है तथा 40 प्रतिशत कर्मचारी बैंक के आंतरिक वातावरण से असंतुष्ट है। वही सार्वजनिक बैंक के 85 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी बैंक के आंतरिक वातावरण से संतुष्ट है। तथा 15 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी बैंक के आंतरिक वातावरण से असंतुष्ट है।
4. निजी बैंक के 60 प्रतिशत कर्मचारी बैंक से प्राप्त वार्षिक अवकाश से संतुष्ट है। वहीं सार्वजनिक बैंकों के 85 प्रतिशत कर्मचारी व अधिकारी बैंक से प्राप्त वार्षिक अवकाश से संतुष्ट है। जो कि निजी बैंकों की तुलना में 25 प्रतिशत अधिक है।
5. निजी बैंक के 20 प्रतिशत कर्मचारियों का मत है कि, बैंक द्वारा मानव संसाधन विकास हेतु साधारण से अधिक प्रयास किये जाते है। जबकि सार्वजनिक बैंक के 40 प्रतिशत कर्मचारियों व अधिकारियों का मत है कि बैंक द्वारा मानव संसाधन विकास एवं नियोजन हेतु साधारण से अधिक प्रयास किये जाते है।

इस प्रकार उपरोक्त निष्कर्ष से यह ज्ञात होता है कि, सार्वजनिक बैंक द्वारा निजी बैंक की तुलना में मानव संसाधन को अधिक संतुष्टि प्रदान की जाती है।

उपसंहार – निजी बैंकों तथा सार्वजनिक बैकों के मानव संसाधन प्रबंध का तुलनात्मक अध्ययन विषय के संदर्भ में जब निजी बैंक तथा सार्वजनिक बैंक के कुछ कर्मचारियों व अधिकारियों से प्रश्न पूछे गये तब यह पाया गया कि, सार्वजनिक बैंक द्वारा निजी बैंकों की तुलना में कर्मचारियों व अधिकारियों को अधिक संतुष्टि प्रदान की गई है। प्रत्येक संगठन के मानव संसाधन विकास की गुणवत्ता ही उसके भावी विकास की महत्वपूर्ण कड़ी है। मानव संसाधन प्रबंध मनुष्य की क्रियाओं से संबंधित होने के कारण ही किसी भी संगठन ही मुख्य धरोहर माने जाते है। मानव संसाधन प्रबंधन द्वारा ही विभिन्न कार्यो को समायोजित कर अपने भविष्य का निर्माण किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मानव संसाधन प्रबंध – डॉ. एस.पी. गुप्ता, डॉ. एस.सी. जैन, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा 2010
2. भारतीय बैंकिंग अधिनियम – डॉ. सिन्हा, इन्दुबाला, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2004
3. मानव संसाधन प्रबंध – डॉ. प्रभाकर झा, एस.बी.पी. आगरा – 2004

अन्य –

1. www.sbi.com
2. www.icici.com
3. www.hdfc.nic.com
4. www.boi.com

****

पंचायती राज व्यवस्था और ग्रामीण विकास

डॉ. मनोज कुमार जैन *

शोध सारांश – नए युग में नए लोकतंत्र का आधार विकेन्द्रीकरण बन रहा है। भारत देश के सभी विचारक, राजनीतिक और प्रशासक इस बात पर एक मत हैं कि यदि हमें तेज रफ्तार से विकास करना है, तो यह कार्य जन साधारण के सहयोग से एवं उनमें रूचि पैदा करके ही किया जा सकता है और यह कार्य सत्ता के विकेन्द्रीकरण द्धारा ही संभव है। जन साधारण को यह महसूस हो सके कि उनका अपना राज है और अपने भाग्य का निर्माण करने का अधिकार व शक्ति उनमें स्वयं निहित है। विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के तहत पंचायतीराज व्यवस्था जो एक त्रिकोणीय व्यवस्था है। जिसकी आधार रेखा–ग्राम पंचायत, मध्य रेखा–जनपद पंचायत और शीर्ष रेखा – जिला पंचायत है, को लागू किया गया है। पंचायती राज व्यवस्था एक ऐसी क्रांति है, जिसके द्धारा विकास की गंगा लाखों गाँवों तक पहुँचाई जा रही है।

प्रस्तावना – ग्रामीण संस्कृति भारतीय आत्मा का स्पन्दन रही है। भारत के विशाल बहुमत का महत्वपूर्ण अंश ग्रामीण भारत है, जो सदियों से उपेक्षित, शोषित और असंगठित रहा है। गाँव की उन्नति या विकास पर ही भारत की उन्नति निर्भर करती है और गाँव की उन्नति या विकास विकेन्द्रीकरण के द्धारा ही संभव है अर्थात् पंचायतीराज के माध्यम से ग्रामीण विकास किया जा सकता है। गाँधी जी का कथन था कि 'यदि गाँव नष्ट होते हैं, तो सम्पूर्ण भारत नष्ट हो जाएगा।' गाँधी जी के मतानुसार विकेन्द्रीकरण का अभिप्राय छोटे स्वतंत्र, ग्रामीण समुदाओं के शासन का विकल्प पंचायतीराज व्यवस्था को माना है। भारत में पंचायतीराज संस्थाओं का इतिहास अत्यंत गौरवशाली रहा है। प्राचीनकाल से आज तक ग्रामीण क्षेत्रों में आपसी झगड़ों का पंचायत के द्धारा ही निपटारा किया जाता रहा है। आज भी भारत में कई गाँव ऐसे हैं जहाँ झगड़ों को न्यायालय में नहीं ले जाया जाता है, बल्कि पंचायत का फैसला सर्वोच्च माना जाता है और पंच को परमेश्वर का दर्जा दिया जाता है। भारत की स्वतंत्रता के पश्चात ग्रामीण विकास की ओर ध्यान दिया जाना प्रारंभ हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सशक्त माध्यम एवं स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली संस्था के रूप में पंचायतीराज संस्थाओं को विकसित करने का प्रयास किया गया। पंचायतीराज प्रणाली लोकतांत्रिक ढंग से सत्ता के विकेन्द्रीकरण के सिद्धांतों पर आधारित है। भारतीय संविधान के अनुचछेद 40 के अंतर्गत पंचायतीराज संस्थाओं के विकास का उत्तरदायित्व राज्यों को सौंपा गया।

अध्ययन का उद्देश्य – विकासशील अर्थवयवस्था में पंचायतीराज का महत्वपूर्ण योगदान है। म.प्र. के ग्रामीण विकास में पंचायतीराज संस्थाओं की भूमिका उल्लेखनीय है। पंचायतीराज संस्थाओं के माध्यम से सामाजिक असमानता की खाई को बाँटने तथा समाज के कमजोर वर्ग यथा आदिवासी, हरिजन एवं अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों को शासन की विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत लाभ पहुँचाया गया है। भारत शासन एवं म.प्र. राज्य द्धारा ग्रामीणों के विकास हेतु संचालित योजनाओं में पंचायतीराज संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है।

ग्रामीण समाज के कमजोर वर्गों जैसे – हरिजन, आदिवासी एवं अन्य पिछड़े वर्गों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में पंचायतीराज संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कृषि के सहायक उद्योग जैसे– मछली पालन, मुर्गी पालन, रेशमकीट पालन आदि में पंचायतीराज संस्थाओं की भूमिका उल्लेखनीय है। स्वरोजगार कार्यक्रम जैसे – एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत ऋण वितरण एवं सामाजिक विकास में भी पंचायतीराज संस्थाओं की भूमि का सराहनीय है। त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था में छोटे–छोटे गाँव में पिछड़ो, महिलाओं और वंचितों को निर्णय प्रक्रिया में भागीदार बनाया जाता है।

परिकल्पना – मध्यप्रदेश के ग्रामीण विकास में पंचायती राज पर निम्नलिखित परिकल्पनाओं का परीक्षण कर निम्न निष्कर्षो को व्यवहारिक बनाने का प्रयास किया गया है –

1. पंचायतीराज संस्थायें जनतांत्रिक प्रबंधन एवं नियंत्रण को उचित रीति से लागू कर पायेंगी।
2. पंचायतीराज संस्थाओं में पिछड़ों, महिलाओं और वंचितों को पूर्णरूप से भागीदार बनाया गया है।
3. केन्द्र एवं राज्य शासन की ग्रामीण विकास की योजनाओं का क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ठीक ढंग से हो पाएगा।
4. कृषि आधारित ग्रामोद्योग एवं कुटीर उद्योगों के विकास में पंचायतीराज संस्थायें पूर्णरूपेण सफल रहेंगी।
5. पंचायतीराज संस्थाओं ने जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी, गरीबी में कमी करने के प्रयास किये हैं।
6. पंचायती राज के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र में मूलभूत सुविधायें सड़क, परिवहन, बिजली, स्कूल, चिकित्सा आदि सुविधायें जुटाने में प्रयासरत है।

मध्यप्रदेश में ग्रामीण विकास – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सशक्त माध्यम एवं स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली संस्था के रूप में पंचायतीराज संस्थाओं को विकसित करने का प्रयास किया गया। मध्यप्रदेश में पंचायतराज अधिनियम 1993 के माध्यम से पंचायतीराज संस्थाओं को अधिक सशक्त बनाया गया। मध्यप्रदेश में पंचायतीराज के माध्यम से ग्रामीण विकास के लिए निरंतर प्रयास कर ग्रामीण जन–जीवन में सुधार के लिए आवश्यक कदम उठाये गये हैं। प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण के मार्ग को अपनानें तथा ग्रामीण विकास में

*अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बण्डा, जिला-सागर (म.प्र.) भारत

ग्रामीणों की भागीदारी तय करने में भारत का 'हृदय प्रदेश' कहलाने वाला राज्य 'मध्यप्रदेश' अग्रणी रहा है।

मध्यप्रदेश में पंचायतीराज संस्थाओं की योजना तीन स्तरों में प्रस्तुत की गई है–

1. ग्राम स्तर पर – ग्राम पंचायत
2. खण्ड या ब्लॉक स्तर पर – जनपद पंचायत
3. जिला स्तर पर – जिला पंचायत

क्र.	पंचायत	कुल संख्या
1.	जिला पंचायत	51
2.	जनपद पंचायत	313
3.	ग्राम पंचायत	23006

ग्राम पंचायत – लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण योजना का प्रारंभिक और आधारभूत अंग 'ग्राम पंचायत' है। परन्तु विकेन्द्रीकरण की संपूर्ण संगठन संरचना में ग्राम पंचायत को निम्न इकाई माना जाता है। वास्तव में ग्राम पंचायत के ऊपर ही वास्तविक उत्तरदायित्व होता है क्योंकि गाँव की आवश्यकताएँ, गाँव के उत्थान की योजनाओं को क्रियान्वित करने के तरीके आदि की जानकारी ग्राम पंचायत की क्रियाशीलता एवं ज्ञान पर निर्भर होती है। जिस क्षेत्र के लिए ग्रामसभा सामान्य संगठन के रूप में कार्य करती है उसी क्षेत्र के लिए ग्राम पंचायत एक कार्यपालिका संस्था है, ग्राम पंचायतें लोगों की निकटतम प्रतिनिधि संस्थाएँ हैं, पंचायतीराज के प्रति लोगों की प्रतिक्रिया गाँव के संबंध में ग्राम पंचायतों की कार्यकुशलता पर निर्भर करती है। ग्राम पंचायतें ही प्रत्यक्ष प्रणाली से बनी हुई एक मात्र प्रतिनिधि संस्थाएँ है। प्रत्येक राज ग्राम पंचायतों का संगठन करने का उपक्रम करेगा और ग्राम पंचायत को सभी आवश्यक अधिकार देगा। ग्राम पंचायतों की स्थापना 1000 से अधिक जनसंख्या वाले गाँव में ही की जाती है। यदि किसी गाँव की जनसंख्या 1000 से कम है तो ऐसी स्थिति में दो या दो से अधिक गाँवों को मिलाकर एक ग्राम पंचायत की स्थापना की जाती है। ग्राम पंचायत का मुखिया 'सरपंच' कहलाता है। ग्राम पंचायत के सदस्यगण पंच कहलाते हैं। इनका चयन गाँव की जनता के द्वारा मतदान के माध्यम से किया जाता है। एक ग्राम पंचायत में कम से कम पाँच सदस्य और अधिक से अधिक बीस सदस्य होते हैं।

जनपद पंचायत – लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण योजना का द्वितीय अंग जनपद पंचायत है। जनपद पंचायत ब्लॉक स्तर पर बनायी जाती है। प्रत्येक ब्लॉक से एक सदस्य निर्वाचित होता है जो जनपद सदस्य कहलाता है। प्रत्येक 5000 की आबादी के लिए एक निर्वाचन क्षेत्र होगा परन्तु जहाँ विकासखंड की जनसख्या 50,000 से कम है, वहाँ से कम से कम 10 निर्वाचन क्षेत्र होंगे, किन्तु कुल निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या 50 से अधिक नहीं होगी। सभी निर्वाचन क्षेत्रों में जनसंख्या एक समान होगी। जनपद पंचायत राज्य सरकार, केन्द्र सरकार और जिला पंचायत द्वारा सौंपी गई आर्थिक विकास और सामाजिक की विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों को ग्राम पंचायत के माध्यम से लागू करती हैं। जनपद सदस्य आपस में मिलकर एक सदस्य का निर्वाचन करते हैं, जिसे जनपद अध्यक्ष कहा जाता है। जनपद अध्यक्ष की अनुपस्थिति में एक दूसरा सदस्य जिसे जनपद उपाध्यक्ष कहा जाता है, जो जनपद अध्यक्ष का कार्य करता है।

जिला पंचायत – राज्य के प्रत्येक जिले में एक जिला पंचायत गठित की जाती है, जिले की जनसंख्या को राज्य सरकार अधिसूचना जारी कर निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित करती है। ये निर्वाचन क्षेत्र जनसंख्या के आधार पर विभाजित किये जाते हैं। एक जिला पंचायत के लिए 50,000 जनसंख्या पर एक निर्वाचन क्षेत्र निश्चित किया जायेगा, जिस जिले की जनसंख्या 5 लाख से कम है वहाँ कम से कम 10 निर्वाचन क्षेत्र होंगे। यदि जनसंख्या 5 लाख से अधिक है तो उसी अनुपात में निर्वाचन क्षेत्र बढ़ा दिया जाएगा, किन्तु कुल निर्वाचन 35 से अधिक नहीं होंगे। सभी क्षेत्रों की जनसंख्या एक समान होगी।

ग्राम पंचायत/जनपद पंचायत के कार्य – ग्राम पंचायत का यह कर्तव्य है कि वह राज्य शासन, जिला पंचायत और जनपद पंचायत के नियंत्रण में रहते हुए ग्रामसभा क्षेत्र के अंतर्गत विभिन्न विषयों से कार्यों का सम्पादन करें जो इस प्रकार से हैं –

1. ग्राम पंचायत स्वच्छता, मल वहन और प्रदूषण की रोकथाम करें।
2. ग्राम पंचायत सार्वजनिक कुंओं व तालाबों का निर्माण एवं मरम्मत करे तथा घरेलू उपयोग के लिए ग्रामवासियों को जल प्रदान करें।
3. ग्राम पंचायत नहाने, कपड़े धोने और पशुओं के पीने के लिए जल साधनों का निर्माण करें व शुद्धता को बनाए रखें।
4. ग्राम पंचायत सार्वजनिक सड़कों, संडासों, जल निकासों, मार्गों, पुलियों आदि का निर्माण करें व उनकी देखरेख करें।
5. ग्राम पंचायत जन्म, मृत्यु और विवाहों का पंजीयन करें।
6. ग्राम पंचायत आग लगने पर आग बुझाने व संपत्ति की सुरक्षा करने का कार्य करें।
7. ग्राम पंचायत जनगणना कार्य में सहायता करें।
8. ग्राम पंचायत बहुप्रयोजन सहकारी संस्थाओं तथा सामूहिक कृषि उद्धार संस्थाओं को संगठित करें।
9. ग्राम पंचायत, शवों, पशुशवों व अन्य घृणास्पद पदार्थों के निर्वहन के लिए स्थानों की उचित व्यवस्था करें।
10. ग्राम पंचायत कृषि का विकास करें।

जिला पंचायत के कार्य –

1. जिले के आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए वार्षिक योजनाएं तैयार करना और पंचायतों को ऐसी योजना के समन्वित कार्यान्वयन को सुनिश्चित करना।
2. जनपद पंचायतों तथा ग्राम पंचायतों के क्रियाकलापों का समन्वय, मूल्यांकन करना और उनका मार्गदर्शन करना।
3. किसी विधि द्वारा उसे सौंपी गई या केन्द्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा सौंपी गई योजनाओं, कार्यों और परियोजनाओं का निष्पादन करना।
4. उन अनुदानों के प्रस्तावों को जो जनपद पंचायत से किन्हीं विशेष प्रयोजनों के लिए प्राप्त हुए हैं, समन्वित करना और उन्हें राज्य सरकार को अग्रेषित करना।
5. पंचायतों में नियुक्त व पदस्थ कर्मचारियों का प्रशासन तथा उनका नियंत्रण करना।
6. विकास संबंधी क्रियाकलापों, पर्यावरण के संरक्षण, सामाजिक वानिकी, परिवार कल्याण, निशक्तों, निराश्रितों, महिलाओं, युवाओं, बालकों तथा समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण के संबंध में राज्य सरकार को सलाह देना।

ग्रामीण विकास कार्यक्रम/योजनाएँ – मध्यप्रदेश सरकार एवं केन्द्र सरकार द्वारा पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से सामाजिक उत्थान, जनकल्याणकारी एवं अधोसंरचनात्मक विकास जैसी अनेक योजनाएँ चलायी जा रही हैं। ऐसी योजनाओं में से कुछ योजनाओं की सूची निम्न प्रकार से है –

1. जवाहर ग्राम समृद्धि योजना।
2. इन्दिरा आवास योजना।
3. जीवन धारा योजना।
4. राष्ट्रीय मातृत्व सहायता योजना।
5. सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना।
6. कृषि बीमा योजना।
7. मध्यान भोजन कार्यक्रम।
8. विकलांग छात्रवृत्ति योजना।
9. बायोगैस विकास योजना।
10. मत्स्य विकास योजना।
11. वृद्धावस्था पेंशन योजना।
12. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना।
13. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना।

पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से इन योजनाओं के द्वारा अनेक क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य किये हैं। यदि पंचायती राज संस्थाओं को केन्द्र व राज्य सरकारों से पर्याप्त मात्रा में वित्त उपलब्ध हो ताकि ये संस्थाऐं अपनी योजनाओं को प्रभावी रूप से क्रियान्वित कर सकें, तो निश्चित रूप से पंचायत राज व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उज्जवल भविष्य की ओर ले जाएंगी। तभी महात्मा गांधी का आदर्श ग्रामीण विकास का सपना साकार हो सकेगा।

ग्रामीण विकास में आ रही प्रमुख समस्यायें – पंचायती राज व्यवस्था के क्रियान्वयन में प्रमुख बाधाऐं निम्नलिखित हैं –

1. वित्त की कमी।
2. अल्प आय।
3. राशि आवंटन में पक्षपात।
4. शिक्षा की कमी।
5. अधिकारियों और कर्मचारियों की उदासीनता।
6. राजनैतिक प्रतिद्वंदिता।
7. वित्तीय अंकेक्षण की समस्या।
8. किस्तों का विलंब से मिलना।
9. योजनाओं की जानकारी का अभाव।
10. योजनाओं का लाभ संबंधित व्यक्ति को नहीं मिल पाना।

ग्रामीण विकास के क्रियान्वयन में आ रही बाधाओं के निराकरण हेतु सुझाव – पंचायतों को सुदृढ़, अर्थपूर्ण, उद्देश्य पूर्ण, शक्ति सम्पन्न, मजबूत तथा उपयोगी बनाने के लिए निम्नलिखित कुछ सुझाव सहायक और सार्थक सिद्ध होंगे:–

1. पंचायतों की वित्तीय समस्याओं का समाधान समय से होना चाहिए।
2. पंचायतों की प्रशासनिक व्यवस्था पर्याप्त होना चाहिए।
3. पंचायत प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण दिये जाने की समस्या दूर होना चाहिए।
4. पंचायतों के द्वारा सामाजिक व्यवस्था में सुधार संबंधी समस्यायें दूर होना चाहिए।
5. पंचायतों में महिला प्रतिनिधियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

निष्कर्ष – पंचायती राज व्यवस्था ने मध्यप्रदेश में ग्रामीण विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, इसके उचित क्रियान्वयन से निश्चित रूप से ग्रामों में आर्थिक समृद्धि आयी है। पंचायती राज व्यवस्था से ग्रामीणों की आय एवं रोजगार में वृद्धि हुई है और ग्रामीणों के जीवन स्तर में सुधार हुआ है। ग्रामीणों को पेयजल, शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, यातायात, साफ–सफाई, आवास, प्रकाश व्यवस्था जैसी आवश्यक सुख–सुविधाएँ उपलब्ध हो सकी हैं। पंचायती राज व्यवस्था मध्यप्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उज्जवल भविष्य की ओर संकेत करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जैन, प्रो. पी.के. एवं डॉ. निकुंज: पंचायती राज व्यवस्था : एक दृष्टिकोण, निकुंज प्रकाशन, बडवानी (म.प्र.)।
2. जैन, आर.बी. – मध्यप्रदेश में पंचायतीराज अधिनियम – 1994
3. सबलोक, डॉ. संदीप – पंचायतीराज में ग्रामीण विकास, अमन प्रकाशन सागर (म.प्र.)।
4. श्रीवास्तव, अरूण कुमार – भारत में पंचायती राज, आर.बी.एस.पब्लिशर्स, जयपुर (राजस्थान)।
5. शर्मा, श्रीनाथ एवं सिंह, मनोज कुमार – पंचायत राज एवं ग्रामीण विकास, आदित्य पब्लिशर्स, बीमा (म.प्र.)।
6. पवार, डॉ. मीनाक्षी – पंचायती राज और ग्रामीण विकास, क्लासिक पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली।
7. प्रसाद, अवध : ग्रामीण विकास – एक आयाम, अग्रवाल प्रिंटर्स जयपुर (राजस्थान)।
8. गौतम राकेश एवं भदौरिया, जितेन्द्र सिंह – मध्यप्रदेश एक परिचय, मेग्रा हिल एजूकेशन (इंडिया) प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

****

औद्योगिक विकास और जिला उद्योग केन्द्र

डॉ. मनीष कुमार जैन *

शोध सारांश – औधोगिक विकास के बिना आज कोई भी राष्ट्र न तो अपने देशवासियों को जीवन के प्रचुर साधन प्रदान कर सकता है और न ही अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी भूमिका का भली प्रकार निर्वाह कर सकता है। औधोगीकरण संपन्नता का प्रतीक है। भारत प्रचुर, प्राकृतिक साधनों का धनी है, यदि कोई कमी है तो समुचित विदोहन की जिसके बिना संपन्नता में भी विपन्नता का जीवन देने के लिए ये विवश हैं। अत: अपने विपुल साधनों का भरपूर उपयोग करके राष्ट्रीय उत्पादन एवं प्रति व्यक्ति आय को बढ़ा सकते हैं और नागरिकों को निर्धनता की रेखा से ऊपर उठाकर उन्हें एक संतोषजनक जीवन प्रदान कर सकते हैं।

प्रस्तावना – औधोगीकरण आधुनिक सभ्यता का मूल आधार है औधोगीकरण के अभाव में विकास के आधुनिक मापदंडों की ऊँचाईयों को छूना असंभव है औधोगीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से परम्परागत सामाजिक व्यवस्था के अवगुणों को प्रभावित करते हुए, विश्वजनित व्यवस्थाओं के समकक्ष आर्थिक व सामाजिक प्रगति को नवीन आयाम प्रदान किये जाते हैं विकास के किसी भी सुदृढ़ कार्यक्रम में औद्योगिक विकास को अनिवार्य रूप से व्यापक भूमिका का निर्वाह करना होता है। औधोगिक विकास औधोगीकरण के बिना संभव नहीं हैं क्योंकि 'व्यापक रूप में औधोगीकरण आर्थिक प्रगति एवं उन्नत जीवन स्तर की कुंजी है।'

भारत शासन द्वारा ग्रामीण एवं लघु उद्योगों को पर्याप्त प्राथमिकता प्रदान करने के लिए ऐसे शासकीय अभिकरणों की स्थापना की गई, जिनसे अतिलघु उपक्रमों को प्रोत्साहित कर स्वावलंबी बनाने का प्रयास किया गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु दिसंबर 1977 में घोषित नवीन औद्योगिक नीति के अंतर्गत सरकार ने ग्रामीण एवं लघु उद्योगों को आवश्यक सुविधायें एवं सहायता उपलब्ध कराने के लिए जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना का प्रस्ताव पारित किया। जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना का मूल उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों एवं छोटे नगरों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित करना है ताकि लघु एवं ग्रामीण उद्यमियों के लिए आवश्यक सुविधाएँ एक ही स्थान पर उपलब्ध करायी जा सकें। नवीन उद्यमियों के लिए जिला उद्योग केन्द्र, प्रौद्योगिकी, वित्तीय, विपणन, कच्चा माल एवं मशीनरी संबंधी विभिन्न सुविधाओं के लिए उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

अध्ययन की आवश्यकता एवं उद्देश्य – भारत सरकार की औद्योगिक नीति के निर्धारण में जिला उद्योग केन्द्रों की महत्वपूर्ण आवश्यकता/भूमिका है। जिला उद्योग केन्द्र औद्योगिक उत्पादकता को बढ़ाने के उद्देश्य से क्रियान्वित किये जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं के क्रियान्वयन में सुधार लाने के लिए उपयोगी है। औद्योगिक विकास के लिए जिला उद्योग केन्द्रों के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं–

1. पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत औधोगीकरण में जिला उद्योग केन्द्रों की उत्पादकता में परिवर्तन की प्रवृत्ति किस प्रकार की होगी। निश्चित करना।
2. शासकीय औधोगिक नीति के अंतर्गत स्थापित जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना, विकास संगठन एवं कार्यप्रणाली कैसी होगी, यह तय करना।
3. जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों में औद्योगिक विकास की प्रवृत्ति का विश्लेषण करना।
4. ग्रामीण क्षेत्रों के उद्योगों को प्रोन्नति, हाथ करघा, हस्तशिल्प और खादी एवं अन्य ग्रामोद्योगों पर और अधिक ध्यान दिया जायेगा ताकि ग्रामों को अधिक आय प्राप्त हो सकेगी।
5. औधोगीकरण के द्वारा क्षेत्रीय असंतुलनों को दूर करने का प्रयास हो एंव औद्योगिक इकाइयॉ स्थापित की जायें।
6. सामाजिक कल्याण एवं समानीकरण एवं ग्राम विकास की दिशा में जिला उद्योग केन्द्र द्वारा किये गये कार्यो की समीक्षा एवं विश्लेषण प्रस्तुत करना।

परिकल्पना – जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे नगरों का औद्योगिक विकास कैसे होगा, इसके लिए निम्न परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है –

1. जिला उधोग केन्द्रों ने विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में औधोगीकरण को प्रोत्साहित करने में संतोषजनक भूमिका निभाई है।
2. जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से राज्य की आधोगिक उत्पादकता में संतोषजनक वृद्धि हुई है।
3. जिला उद्योग केन्द्र सीमित साधनों एवं सुविधाओं के कारण औधोगिक उपक्रमों को अधिक आकर्षित करते हैं।
4. औधोगीकरण के कार्यक्रमों को जिला उद्योग केन्द्रों के कारण प्रभावी ढंग से संचालित किये जाने की आवश्यकता है।

जिला उद्योग केन्द्र – मानव शक्ति की कृषि पर निर्भरता कम करने एवं ग्रामीण क्षेत्रों में अर्द्ध बेरोजगारी की समस्या के निदान हेतु लघु एवं कुटीर उद्योगों को निरंतर प्रोत्साहित किया जाता रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों के परंपरागत उद्योगों की सुरक्षा एवं नये लघु उद्योगों की स्थापना से कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र में समन्वय निर्मित कर आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किये जाते रहे हैं। इन प्रयत्नों के बावजूद भी लघु उद्योगों का विकास नहीं हो पाया है। स्वतंत्रता के पश्चात भारत के आर्थिक एवं सामाजिक उन्नयन हेतु समग्र औधोगीकरण को आधार बनाया गया है। शासन द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक विकास की प्रक्रिया को सुचारू एवं गतिशील बनाने के लिए जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की गई है। जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमशीलता संवर्धन के प्रयास निरंतर किये जा रहे हैं।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, देवरी, जिला-सागर (म.प्र.) भारत

नई औद्यागिक नीति के अंतर्गत ग्रामीण एवं लघु उद्योगो को आवश्यक सुविधायें और सहायता उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक जिले में जिला उद्योग केन्द्र नामक अभिकरण स्थापित किये जाने का प्रावधान किया गया। इस निर्णय का मूल उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों एवं छोटे नगरों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को विकसित एवं समृद्ध करना था। इस अभिकरण के माध्यम से औद्योगिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों में विविध परम्परागत उद्योगों को लुप्त होने से बचाया जा सका और विभिन्न प्रोत्साहन योजनाओं के माध्यम से कार्यरत उद्योगों को संबल प्रदान किया गया। जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना से विभिन्न उद्यमियों को विविध संगठनों के बाहर निकाला है। लघु एवं ग्रामीण उद्योग विकास कार्यक्रम के अंतर्गत जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना 1 मई 1978 से की गई।

मध्यप्रदेश में जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना एवं कार्यरत कुल संख्या

वर्ष	स्थापित जिला उद्योग केन्द्र	कुल कार्यरत जिला उद्योग केन्द्र
1978	22	22
1979	23	45
1989	03	48
1990	-	48
1991	-	48
2001	-	48
2015	-	51

स्रोत - मध्यप्रदेश शासन कार्ययोजना विविध जिला उद्योग केन्द्र से साभार।

सारिणी से स्पष्ट है कि वर्ष 1978 में 22 वष्र 1979 में 23 एवं 1989 में 3 जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की गई। प्रदेश की विशेष बात यह है कि मध्यप्रदेश में कुल 51 जिले हैं। जबकि वर्तमान में यहां 51 जिला उद्योग केन्द्र स्थापित हो चुके हैं। यह विशिष्ट कार्य प्रदेश में उच्च औद्योगिक विकास को प्राथमिकता देने हेतु तय किया गया। ऐसी किसी अन्य प्रान्त में अभी तक नहीं हुआ है।

जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना के उद्देश्य - ग्रामीण एवं अविकसित क्षेत्रों सहित सम्पूर्ण राष्ट्र के जिले में लघु एवं कुटी उधोगों के प्रभावशाली विकास मे सहयोग प्रदान करने के लिए जिला उद्योग केन्द्र स्थापना अभियान आरंभ किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य अधिकतम रोजगार अवसर का सृजन करना तथा लघु एवं कुटीर तथा अति लघु उद्योगों की स्थापना के लिए अति आवश्यक सहायता उपलब्ध कराना है। इसके साथ ही जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से उद्यमियों को जिले में अथवा विकास खण्डों में ग्रामीण उद्यमियों को आवश्यक सुविधाएँ एक ही छत के नीचे उपलब्ध कराने का विचार था।

उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित महत्वपूर्ण उद्देश्य निर्धारित किये गये -

1. लघु ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों को सभी तकनीकी, वित्तीय व अन्य आवश्यक व सेवायें एक ही स्थान पर उपलब्ध कराना।
2. केन्द्र सरकार द्वारा बनाई जा रही औद्योगिक नीतियों को जिलों में लागू करना।
3. उद्यमियों को औद्योगिक सूचनाएँ उपलब्ध कराने के जिला स्तर पर जिला उद्योग ब्यूरो की स्थापना करना।
4. भावी उद्यमियों को परियोजना प्रतिवेदन तैयार करने में सहायता करना।
5. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में लघु उद्योगों एवं कुटीर उद्योगों को प्रबन्धकीय एवं वित्तीय परामर्श देना।
6. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों की औद्योगिक असमानता में कमी करना।
7. छोटे नगरों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों और कुटीर उद्योगों का प्रबन्धकीय एवं वित्तीय परामर्श देना।
8. जिले की औद्योगिक संभावनाओं का पता लगाकर उसके आधार पर विकास का कार्यक्रम तैयार करना।

जिला उद्योग केन्द्र के कार्य - जिला उद्योग केन्द्र जिला स्तर पर उद्यमियों को औद्योगिक इकाईयों की स्थापना एवं प्रोत्साहन हेतु अनेक कार्य करते हैं। इनमें प्रमुख रूप से सुविधाएँ उपलब्ध कराना, एवं संबंधित तकनीकी एवं सामान्य सेवायें प्रदान करना है। इन सेवाओं और सुविधाओं में मशीनों एवं उपकरणों की पूर्ति, कच्चे माल की व्यवस्था, विपणन एवं विस्तार हेतु साख सुविधायें, इसमें निवेशित माल के साथ-साथ शीघ्र एवं उपक्रमी प्रशिक्षण आदि भी व्यवस्थाएँ सम्मिलित हैं। ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में कार्यरत कुटीर एवं लघु उद्योगों के प्रभावकारी संवर्धन के लिए गठित इस शासकीय अभिकरण के निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रमुख कार्य निर्धारित हैं।

1. भावी उद्यमियों की खोज।
2. जिले में उद्योगों की सम्भावनाओं का पता लगाना।
3. उपलब्ध्ध संसाधनो ंका उचित उपयोग।
4. औद्योगिक बस्तियों का निर्माण।
5. वित्तीय सहायता प्रदान करना
6. उद्यमिता विकास कार्यक्रम
7. विपणन कार्यक्रम।
8. आर्थिक सर्वेक्षण करना।
9. लघु उद्योगों का पंजीकरण व नवीनीकरण।
10. अनुदान एवं ऋण उपलब्ध कराना।

स्वरोजगार योजनाएँ/कार्यक्रम - शिक्षित बेरोजगार अपना स्वयं का रोजगार स्थापित करने में सहायता प्राप्त करने के उद्देश्य से शासन द्वारा अति महत्वाकांक्षी स्वरोजगार योजना घोषित की गई एवं जो कि सम्पूर्ण देश में लागू की गई, इस योजना के अंतर्गत प्रतिवर्ष देश में लगभग एक लाख युवाओं को बैंकों के माध्यम से वित्तीय सहायता उपलब्ध कराकर अपना स्वरोजगार, लघु उद्योग व्यवसाय स्थापित करने में सहायता प्रदान की जाती है एवं इकाई का सुचारू प्रबंधन करने में मार्गदर्शन/प्रशिक्षण दिया जाता है जिला उद्योग केन्द्र द्वारा शासन की इस महत्वकांक्षी योजना के माध्यमे स अधिकाधिक व्यक्तियों को व्यवसाय खोलने अथवा कोई स्वरोजगार स्थापित करने के लिए विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं जैसे कम्प्यूटर, सॉफ्टवेयर सेंटर योजना कम्प्यूटर हार्डवेयर रखरखाव, सूचना प्रौद्योगिकी, औषधीय खेती जड़ी बूटी, बिन्दी निर्माण इकाई योजना, डेयरी उत्पाद निर्माण योजना, एवं अन्य महत्वपूर्ण योजनाओं की जानकारी प्रदान की जाती है। ये योजनाएँ निम्न हैं :-

1. कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर सेंटर की योजना
2. डिजिटल कन्टेन्ट, मल्टीमीडिया एवं एनीमेशन सेंटर की योजना
3. सूचना प्रौद्योगिकी
4. भारत में ई-कॉमर्स
5. बिन्दी निर्माण की योजना
6. डेयरी उत्पाद निर्माण की योजना

7. औषधीय खेती की योजना (आंवला, सर्पगंधा, कोलियस)।

समस्या एवं सुझाव – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों द्वारा आशातीत सफलता अर्जित करने के बावजूद भी अध्ययन के दौरान केन्द्र अधिकारियों एवं उद्यमियों से वार्तालाप के पश्चात् अनेक समस्याएँ प्रकाश में आयी, जिन्हें दो भागों-प्रशासनिक एवं नीतिगत में विभक्त किया गया है। प्रशासनिक समस्याएँ जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों के प्रबंध, संगठन एवं नियुक्ति तथा पदोन्नति से संबंधित है, जबकि नीतिगत समस्याएँ जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों के संबंध में सरकार या प्राधिकृत निकाय द्वारा लिए गए नीतिगत निर्णयों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है।

प्रशासनिक समस्याएँ –

1. समन्वय का अभाव।
2. ऋण-स्वीकृति एवं वसूली संबंधी समस्या।
3. एकीकृत योजनाओं का अभाव।
4. दोषपूर्ण संगठन संरचना।
5. ग्रामीण क्षेत्रों तक केन्द्रों की पहुँच कठिन।
6. रिक्त पदों की समय पर नियुक्ति न होना।
7. पदोन्नति के सीमित अवसर।
8. योजनाओं एवं लक्ष्यों के निर्माण का विकेन्द्रीकरण ।

नीतिगत समस्याएँ –

1. बजट आबंटन संबंधी।
2. अनुदान समाप्ति की घोषणा संबंधी ।
3. राजनीतिक निर्णयों संबंधी।
4. दोषपूर्ण अनुदान आबंटन प्रक्रिया संबंधी।
5. शिक्षा संबंधी अनुदान का अभाव।
6. चिकित्सा सुविधाओं का अभाव।

जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों की समस्याओं के सुझाव –जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र की समस्याओं को दो भागों में क्रमश: प्रशासनिक नीतिगत में किया गया है। इस विभाजन से व्यावहारिक सुझाव अधिक सटीक एवं उपादेय सिद्ध होगें। संभाग के विभिन्न जिलों में स्थापित जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों की उपादेयता उदारीकरण के पश्चात अधिक महत्वपूर्ण हो गयी हैं, क्योंकि उदारीकरण के न सिर्फ लघु एवं कुटीर उद्योगों के समक्ष अस्तित्व का संकट उत्पन्न हुआ है बल्कि राष्ट्रीय वृहद एवं मध्यम उद्योग भी इसकी चपेट में आ चुके हैं। जिले में औधोगीकरण की गति को तीव्र करने के लिए इन केन्द्रों को निम्नलिखित उपाय अपनाने चाहिए –

प्रशासनिक सुझाव –

1. समन्वय का विकास।
2. एकीकृत योजनाओं में समन्वय।
3. कर्तव्य परायणता का विकास।
4. ऋण स्वीकृति एवं वसूली प्रक्रिया को उदार बनाना।
5. योजनाओं एवं लक्ष्यों के निर्माण का विकेन्द्रीकरण।

नीतिगत सुझाव –

1. अनुदान आबंटन प्रक्रिया में सुधार।
2. अनुदान समाप्ति की सूचना।
3. राजनीतिक हस्तक्षेप की समाप्ति।
4. आवासीय सुविधायें उपलब्ध कराना।
5. शिक्षा संबंधी सुविधायें उपलब्ध कराना।

निष्कर्ष – जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना से सम्पूर्ण प्रदेश की अनेक इकाईयों एवं उपइकाईयों में विभक्त कर औद्योगिक नियंत्रण एवं क्रियात्मक व्यवहारों की श्रृंखला निचले स्तर से प्रारंभ की गई है। इन केन्द्रों से लघु आकार की इकाईयों की सूक्ष्मतम समस्याओं का गहन अध्ययन किया जाता है उनके समाधानार्थ प्रत्येक स्तर पर त्वरित प्रयास किये जाते है। क्षेत्रीय असंतुलनों को दूर करने में उपलब्ध आर्थिक संसाधनों के उपायोजन की वैज्ञानिक एवं तर्कसंगत प्राथमिकताएँ निर्धारित कर जिला उद्योग केन्द्र की इस महत्वपूर्ण पृष्ठभूमि पर ही संतुलित आर्थिक विकास की अवधारणा पर होना आवश्यक है कि सफल आर्थिक विकास में क्षेत्रीय विषमताओं को दूर करने हेतु आवश्यक विकास के कुछ प्रमुख आयामों एवं विकास प्राथमिकताओं का निर्धारण प्रथमत: सुनिश्चित किया जाये जिससे दीर्घकाल में औद्योगिक संतुलन की समस्याओं का हल किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सक्सेना एस.सी. – व्यावसायिक संगठन साहित्य भवन आगरा (1997)
2. श्रीवास्तव ओ.एस. – मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
3. जाखोटिया गोपीकृष्ण-'युवा वर्ग उद्योग लगाने कैसे आगे आये', लघु उद्योग सेवा संस्थान इन्दौर (1983)
4. शर्मा दिनेश चन्द्र-'भारतीय औद्योगिक अर्थव्यवस्था' मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ (1984)
5. गोयल, रतनलाल-'विकास का अर्थशास्त्र' मीना कन्सलटेन्सी आर्गेनाईजेशन लि. भोपाल।

****

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं कृषि साख

डॉ. दिनेश कुमार परेता *

शोध सारांश – देश का भविष्य मुख्य रूप से कृषि पर ही निर्भर है। यदि विकास की गति बढ़ाना है, तो एकमात्र क्षेत्र कृषि ही है। इसमें स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने कृषि प्रधान देश में कृषि वित्त की समस्या का समाधान करने की दिशा में जो महत्वपूर्ण योगदान दिया है, उससे देश को आर्थिक प्रगति प्राप्त हुई है, जो अविस्मरणीय है। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने अपनी विभिन्न शाखायें ग्रामीण स्तर पर खोली हैं, जिससे अर्द्धविकसित ग्रामीण क्षेत्रों का विकास हो सके और भारत विकसित देशों की श्रेणी में शामिल किया जा सके।

प्रस्तावना – भारत में मुख्य रूप से 70 प्रतिशत से भी अधिक जनता का मुख्य व्यवसाय कृषि तथा उससे चलने वाले उद्योग धंधे है। उद्योग धंधों की बुनियाद डालने वाले कारकों में हम कृषि को सबसे पहले मानते है क्योंकि अधिकतर उद्योग कृषि उत्पादों पर निर्भर करते है।

इसी महत्ता के कारण शायद ऐसी कोई भी पंचवर्षीय योजना नहीं है, जिसमें आर्थिक विकास की आधारभूत की जाने वाली कृषि पर कुछ विचार न किया गया हो, परंतु इसके बाबजूद भी कृषि पर अत्याधिक दबाव बढ़ता जा रहा है, इस कारण अनेक आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। कृषि की महत्ता को सभी ने स्वीकार किया है एवं वर्तमान में कृषि विकास के अवरोधों के कारणों की ओर दृष्टि प्राय: सबने डाली है। यद्यपि समय जबकि बड़े-बड़े उद्योगों के स्थापित होने के कारण लोगों का ध्यान कृषि क्षेत्र से कुछ विचलित हुआ है, लेकिन यह ध्रुव सत्य है, कि भारत जैसा विकासशील देश तभी उन्नति कर सकता है, जबकि वह कृषि क्षेत्र में उन्नति निर्भर करती है।

वास्तव में सामाजिक दायित्व के बिना किसी सार्वजनिक संस्था की परिकल्पना भी नहीं कि जा सकती है। समाज के सभी वर्गों को प्रभावित करने वाली हमारी बैंकिंग प्रणाली भी इस दायित्व बोध से मुक्त नहीं है। आज कम्प्यूटर और दूसरे इलेक्ट्रानिक उपकरणों के आगमन ने जीवन के दूसरे क्षेत्रों के साथ बैकिंग का चेहरा भी पूरी तरह से बदल दिया है। पिछले सात वर्षो में बैंकिग के स्वरूप, तौर, तरीके, गति एवं भारतीय ग्राहक वर्ग में जितनी तेजी से परिवर्तन हुए हैं, वे कुछ समय पहले कल्पना से परे थे। वर्तमान समय में भारतीय स्टेट बैंक जनता को अधिक से अधिक सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से कई नवीन योजनाओं का प्रचार-प्रसार कर रहा है एवम् बैंकिग कंपनियों के माध्यम से जनता को कई प्रकार से कृषि साख प्रदान करके वैयक्तिक विकास के साथ-साथ देश एवं राष्ट्र के विकास में सहयोग प्रदान कर रहा है।

रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के अंतर्गत एक पृथक साख विभाग की स्थापना की है। इसका उदाहरण देश में स्थित विभिन्न वाणिज्यक बैंकों की स्थापना, सहकारी बैंकों एवं भूमि विकास, भूमि बंधक बैंकों का प्रयास सराहनीय हैं। विगत पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि क्षेत्र में प्रगति की दिशा में व्यापक प्रयास किये गये हैं।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. स्टेट बैंक ऑफ इडिया की शाखाओं की प्रशासनिक एवं योजनाओं से उत्पन्न होने वाली लाभकारी-हानिकारक प्रभावों की जानकारी प्राप्त करना।
2. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की कृषि वित्त में कार्यप्रणाली का मूल्यांकन करना।
3. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया शाखाओं में वित्तीय संसाधनों की समीक्षा करना एवं यह ज्ञात करना कि इनका समुचित उपयोग हो पर रहा है या नहीं।
4. बैंक द्वारा प्रदत्त की जाने वाली सुविधाओं एवं अनुदानों की जानकारी प्राप्त करना।
5. कृषि वित्त उपलब्ध कराने में आने वाली व्यवहारिक एवं प्रशासनिक समस्याओं की जानकारी प्राप्त कर उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना।
6. स्टेट बैंक ऑफ इडिया शाखाओं द्वारा विभिन्न योजना के अंतर्गत स्वीकृत ऋण की वसूली समय पर हो रही है अथवा नहीं, वसूली तंत्र ठीक ढंग से कार्य कर रहा है अथवा नहीं, विषयक संघी जानकारी प्राप्त करना।
7. कृषकों को वित्त उपलब्धता संबंधी जानकारी प्राप्त करना ।
8. बीड़ी उद्योग, मिट्टी के बर्तन बनाने के लिये साख उपलब्ध कराना।
9. भूमि का विकास करना।
10. कृषि से संबंधित समस्त प्रकार के वित्त व्यवस्था उपलब्ध कराना।

परिकल्पना –

1. कृषि की उन्नति के बिना देश की उन्नति संभव नहीं है।
2. किसानों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है फलस्वरूप वे कृषि क्षेत्र में निवेश की मात्रा बढ़ाने में असमर्थ हैं, अत: उन्हें पर्याप्त मात्रा में वित्त उपलब्ध करा दी जाये, तो कृषि क्षेत्र में उन्नति की जा सकती है।
3. कृषि की उन्नति से कृषि से संबंधित अन्य उद्योगों का विकास होगा, जिससे रोजगार के अवसर में वृद्धि होगी।
4. कृषि क्षेत्र में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया पर्याप्त मात्रा में साख उपलब्ध नहीं करा पा रहा है, इसके लिए प्रशासन (वित्त/साख) तंत्र में कोई कमी है।
5 स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा यदि कम ब्याज दर पर कृषि साख कृषकों को उपलब्ध करा दी जाये, तो कृषकों का आर्थिक विकास संभव हो सकता है।

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं कृषि साख –

अपनी स्थापना से ही स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने कृषि के क्षेत्र में निर्धारित लक्ष्यों के प्रतिपालन में सेवारत रहे हैं। यह बैंक मुख्य रूप से कृषि के समग्र विकास हेतु कृत संकल्पित है। यह बैंक कृषि से संबंधित समस्त साधनों की पूर्ति में निर्धारित योजनाओं के लाभों को कृषकों तक प्रदान करता चला आ

*अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

रहा है। कृषि साख की पूर्ति के साथ-साथ यह अधिकांश जनता को से सभी बैंकिंग सुविधायें प्रदान कर रहा है। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने अलग से कृषि प्रभाग की स्थापना की है। इस प्रभाग के खुल जाने से कृषि साख से संबंधित सभी प्रकार की लेन-देन अधिक सरलता से एवं शीघ्रता से हो जाते है।

सन् 1911 ग्रामीण ऋण ग्रस्तता 300 करोड़, 1991-92 में 650 करोड़, 1961-62 में 1034 करोड़ है, 1995 में 3848 करोड़ है जिसमें से (1995) से 96 करोड़ रूपये वस्तुओं पर शेष नगद रूप में है। इस ऋण का 88 प्रतिशत कृषकों द्वारा लिया जाता हैं, शेष 12 प्रतिशत कृषि श्रमिकों, कारीगरों व अन्य दस्तकारों द्वारा लिया जाता है।

स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने सीमांत व लघु कृषकों को पर्याप्त सहायता प्रदान की है तथा विभिन्न विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत पर्याप्त साख सहायता प्रदान की है। इन विकास कार्यक्रमों के सर्वोन्नमुखी बनाने के लिए बैंक ने राहत एवं छूट प्रदान की हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने कमजोर वर्ग के उत्थान के लिए भी अनेक ऋण प्रदान किये है। हरिजन एवं आदिवासी वर्गो को विशेष सहायता उपलब्ध करायी है। शहरी व ग्रामीण कमजोर वर्गो का जीवन स्तर उंचा उठाने के लिए अग्रिम राशि प्रदान की है।

बेरोजगारी आज जिले में ही नहीं बल्कि सारे भारत में ज्वलंत समस्या बनी हुई है ऐसी स्थिति में स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने स्वरोजगार कार्यक्रम के अंतर्गत कई हितग्राहियों को लाभान्वित किया है। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने आधुनिक कृषि उपकरणों के लिए अधिक सहायता दी है, इससे कृषक पुरातन तकनीक को त्यागकर आधुनिक तकनीक को अपना रहा है, जिससे उत्पादन में अपेक्षाकृत बृद्धि हुई है।

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया कृषि शाखा के उद्देश्य -

अ. सिंचाई सुविधाओं के लिए व्यवस्था- किसानों द्वारा बहुफसलीय कार्यक्रम अपनाने तथा फसलों की उत्पादकता बढ़ाने को प्रोत्साहन देने की दृष्टि से इस बैंक ने सिंचाई योजनाओं जैसे- नवीनकृत, कूप मरम्मत, डीजल पंप, स्प्रिकलर पाईप लाईन आदि के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

ब. भूमि विकास- भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए वित्त की आवश्यकता प्रदान करना, ताकि वर्तमान सिंचाई सुविधाओं का पूरा उपयोग हो सके।

स. कृषि औजार- यांत्रिक कृषि के लिये आवश्यक मशीनरी, ट्यूब बेल, पंपिग मशीन, स्प्रे मशीन सेट थ्रेसर कल्टीवेटर आदि वस्तुओं के लिये आर्थिक सहायता प्रदान करता है।

द. बीज खाद्-नाशक दवाओं की पूर्ति-खेती में उत्तम बीज, उर्वरक खाद और कीटनाशक दवाईयों का विशेष योगदान रहा है, अत: इनकी पूर्ति एवं इनसे संबंधित उपकरणों के लिये यह बैंक आर्थिक सहायता प्रदान करता है।

इ. कृषि में सहयोगी कार्यो में पूर्ति-पशुपालन, डेरी, फार्म, मुर्गी पालन, भेड़ पालना आदि अनेक योजनाओं के लिये यह बैंक ऋण प्रदान करता है।

य. सेवा व्यवसायों की वित्तीय सहायता- स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की कृषि शाखा द्वारा अनेक व्यवसायों को भी आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है, जैसे किराना दुकान, मनहारी दुकान, कपड़ा दुकान, धोबी की दुकान, टेलरिंग, जिल्दवाबी, डीजल, विद्युत पंप मरम्मत आदि।

र. लघु एवं ग्रामीण उद्योगों के वित्त सहायता व्यवस्था- कृषि विकास के क्षेत्र में बैंक ने अपनी स्थापना से ही लघु उद्योगों जैसे केनकर समितियां, अगरबत्ती उद्योग, मिट्टी के बर्तन बनाना, बीड़ी के उद्योग के लिए निरंतर सहायता प्रदान की है।

कृषि साख की समस्यायें - किसी भी देश की आर्थिक उन्नति बैंकिंग व्यवस्था पर निर्भर करती है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में बैंकिंग विकास भी अपनी चरमोत्कर्ष सीमाओं पर पहुंचते जा रहे हैं। इसमें बैंक कृषकों को अपनी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति में संस्थागत वित्तीय सुविधाओं का जो लाभ मिलता है कृषि साख से संबंधित निम्नलिखित समस्यायें विद्यमान हैं -

1. चूंकि भारत ग्राम प्रधान देश है और अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण होने के कारण कृषि से ही जीवन यापन करती है। कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। अत: ग्रामीण कृषक वित्त/साख की समस्या से ग्रसित होते है और प्राय: हर ग्रामीण स्तर तक बैंकिग संस्थाएं भी उपलब्ध नहीं होती है, जिस कारण उन्हें कृषि साख प्राप्त करने में कठिनाई होती है।
2. कृषि साख के लिये बैंक में आये हुये कृषकों द्वारा अपनी भूमि का उचित मूल्य प्रदर्शित नहीं किया जाता है। जिस कारण बैंक द्वारा कृषकों को आनुपातिक दर से ऋण उपलब्ध कराने में असुविधा होती है।
3. बैंकिंग संस्थाओं द्वारा कृषि साख उपलब्ध कराने के लिये अनेक प्रकार की कागजी कार्यवाहियां करवायीं जाती है जो अशिक्षित व छोटे कृषकों के लिये एक जटिल समस्या है।
4. सामान्यत: फसल के आने पर मंडी में फसल की आवक ज्यादा होने पर कृषकों को अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है तथा कृषक वेयरहाऊस द्वारा जारी भंडारण रसीद पर मिलने वाले वित्तीय साख से भी अनभिज्ञ होते है एवं इस दिशा में बैंकिंग संस्था द्वारा भी कोई भी प्रचार-प्रसार नहीं किया जाता है, इस अज्ञानता के कारण किसानों को आर्थिक हानि होती है।
5. अनेक कृषक अपने वित्त/साख का लेखा-जोखा समुचित ढंग से नहीं रखते हैं। जिससे इनकी मांग को पूरा करने में बैंक को कठिनाई आती है और बैंक उस साख के बारे में सही जानकारी नहीं दे पाती है। यह एक प्रमुख समस्या है।

समस्याओं के निराकरण हेतु समाधान -

1. कृषकों की वित्त की इस गंभीर समस्या का सामाधान करने के लिए स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया को ग्रामीण स्तर पर अपनी शाखाएँ खोलनी चाहिए ताकि कृषकों को साख संबंधी योजनाओं व सुविधाओं का लाभ प्राप्त हो सके।
2. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा एक निरीक्षण अधिकारी होना चाहिए जिससे कि वह उक्त दस्तावेजों में दर्शाये हुये स्थान पर जाकर भूमि का उचित मूल्यांकन एवं जल उपलब्धता को देखते हुए निरीक्षण करे।
3. बैंकिंग संस्थाओं को भी कृषि साख उपलब्ध कराने के लिए लंबी और जटिल कागजी कार्यवाहियों से मुक्त रखते हुए, सुलभ एवं सस्ती ब्याज दरों पर साख उपलब्ध कराना चाहिए।
4. बैंकिंग संस्थाओं द्वारा कृषकों को म.प्र. बेयर हाऊसिंग एवं लाजिटिक्स कार्पोरेशन द्वारा स्कंद के भंडारण के उपरांत जारी की जाने वाली भंडारण रसीद पर बैंकिंग संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली ऋण सुविधा की जानकारी कृषकों को देनी चाहिये। ताकि जहाँ एक ओर कृषक मंडी ज्यादा फसल आवक पर उचित मूल्य न प्राप्त होने की समस्या से मुक्त होना वहीं उसे इस भंडारण के स्कंद पर साख सुविधा प्राप्त होती है और उचित समय पर उपज बेचने पर उपज का उचित मूल्य भी प्राप्त होता है।
5. बैंक अधिकारी ऋणी व्यक्ति से लगातार संपर्क बनाये रखे। उसे यह

विश्वास दिलाये कि उसके द्वारा दी गई, जानकारी का उपयोग बैंक स्वयं करता है। इस जानकारी के द्वारा बैंक को साख के निर्धारण एवं संचालन में सहायता मिलती है।

निष्कर्ष – हम यह कह सकते है कि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ने कृषि प्रधान देश में कृषि वित्त की समस्या का समाधान करने की दिशा में जो महत्वपूर्ण योगदान दिया है, उससे देश की आर्थिक प्रगति प्राप्त हुई है, जो अविस्मरणीय है। साथ ही स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया की अपनी और भी शाखाएं ग्रामीण स्तर तक बोलना नितांत आवश्यकता है। ताकि भारत को अर्द्ध विकसित देशों की श्रेणी में खड़ा किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. B. Ramachandra Rao: India Banking, Deep & Deep Publications.
2. Dr. A.B. Kalkunditkar: Banking Law & Practice, M.N. Khembhavi, R. Natraj, Himalaya Publishing House Bombay, Delhi 1990
3. M.L. Chhipa : Monetary And Banking, Development of India, Jaipur-1996.
4. T.A. Vaswani : The Banker and The Balance Sheet, Lalvani Publishing House, Bombay-2000
5. S.N. Gupta : Law and Banking, The Commercial Law Publicaations, Delhi-1985
6. डी.एस. मेहता एवं पी.ए. जैन : भारतीय बैंकिंग, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
7. आर.डी. सक्सेना एवं वाय एस भंडारी: भारतीय बैंकिंग विकास एवं समस्याएं, विकास पब्लिकेशन हाउस नई दिल्ली।
8. डॉ. हरीशचंद वर्मा – बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, साहित्य भवन, आगरा
9. हेमेन्द्र जैन– कृषि वित्त, रामप्रसाद एण्ड संस, भोपाल।
10. डॉ. एम.एल. सेठ : मुद्रा एवं बैकिंग, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

पत्र–पत्रिकायें –

1. मध्यप्रदेश संदेश – भोपाल।
2. योजना – नई दिल्ली।
3. कुरूक्षेत्र – नई दिल्ली।
4. उद्योग व्यापार – नई दिल्ली।
5. रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया बुलेटिन – मुंबई।

****

भण्डारण की आवश्यकता और उपाय

डॉ. आशीष चौरसिया *

शोध सारांश – भण्डारण या संग्रहण की आवश्यकता का जन्म प्राचीन काल में हुआ होगा, जैसे-जैसे समाज का विकास व विस्तार होता गया, वैसे-वैसे भण्डारण या संग्रहण का प्रश्न भी जटिल होता गया। आज संग्रह का प्रश्न आर्थिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण बन चुका है। वर्तमान युग में किसी भी विकसित अथवा विकासशील अर्थव्यवस्था में संग्रहण की प्रक्रिया को विपणन व्यवस्था के एक प्रमुख अंग के रुप में स्वीकार कर विशेष महत्व प्रदान किया जाने लगा है। जिस कारण उत्पादन तथा वितरण की आर्थिक क्रियाओं के बीच महत्वपूर्ण श्रृंखला के रुप में इसकी उपयोगिता में निरंतर वृद्धि हुई है, जो वैज्ञानिक व तकनीकी प्रगति से काफी प्रभावित है। वैसे तो अंग्रेजों के शासन काल से ही भण्डारण या संग्रहण की दिशा में सुधारात्मक प्रयास शुरु किये गये थे, परंतु संग्रहण अवैज्ञानिक पद्धति पर आधारित होने के कारण उनकी योजनाएं प्रगति नहीं कर सकी।

प्रस्तावना – भारत में भण्डारगृह व्यवस्था का अस्तित्व उतना ही प्राचीन है जितना की भारत वर्ष। ऋगवेद, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत आदि प्राचीन ग्रंथों में इसका प्रमाणिक उल्लेख मिलता है। सिंधु घाटी सभ्यता काल के एक प्रमुख नगर की खुदाई के दौरान विशाल भण्डारागार के साक्ष्य प्राप्त हुये है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व अंग्रेजों द्वारा भण्डारण योजना के संबंध में पहल अवश्य की गई परंतु कृषि उत्पादन कम होने, अवैज्ञानिक संग्रहण पद्धति एवं भण्डारगृहों की कमी के कारण विकास न के बराबर हुआ। भारत जैसे विकासशील देश में भण्डारण या संग्रहण अत्यंत व्यापक है क्योंकि यह देश की वृद्धिगत जनसंख्या की उपभोग आवश्यकताओं की सतत् एवं व्यापक पूर्ति बनाये रखने के लिये, उत्पादों की सुरक्षा, श्रेणीकरण, प्रमाणीकरण, स्थानान्तरण, उचित वितरण, मूल्य स्थायित्व एवं कृषकों व उत्पादकों को साख सुविधा दिलाने में महत्वपूर्ण घटक के रुप में अपनाया जा रहा है। हमारे देश में लम्बे समय तक खाद्य-असुरक्षा के कारण भुखमरी की स्थिति बनी रही क्योंकि हमारे यहां न तो जनसंख्या के अनुरूप उत्पादन था न ही भण्डारण क्षमता। कृषि उत्पाद का उपभोग मानव या तो स्वंय करता है या फिर उनकी खपत उद्योगों में होती है। सरकार को आपातकाल में देश को अकाल, सूखे, विपत्ति आदि के समय कृषि उपजों के वैज्ञानिक तरीके से भण्डारण करने की आवश्यकता महसूस हुई परंतु सरकार के लिये खाद्यान्नों का उचित रख-रखाव, क्रय-विक्रय तथा जनता तक सरलतम व सस्ते दामों पर उपलब्ध कराने का कार्य अत्यंत जटिल था। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि एवं तृतीय पंचवर्षीय योजना में खाद्यान्न के मामले में आत्म निर्भरता प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया।

प्रति वर्ष प्रकृति के प्रकोप, असुरक्षित भण्डारण, कीड़ों, चूहों व चोरी आदि के कारण लगभग 50,000 करोड़ रूपये का अनाज नष्ट हो जाता है। इसमें 80 प्रतिशत से अधिक हिस्सा सरकारी अनाज का है। वैज्ञानिक सर्वेक्षणों बताते है कि देश में उत्पादित खाद्यान्न का मुख्य भाग कीड़ों, चूहों, पक्षियों, सीलन, फुंगी, गलत हैन्डलिंग, ट्रांसपोटेशन तथा अवैज्ञानिक भण्डारण विधियों के कारण नष्ट हो जाता है, जो अनुमानत: प्रति वर्ष कुल उत्पादित खाद्यान्न का लगभग 10 प्रतिशत यानि करीब 9 करोड़ मन या 36 लाख टन है। इसमें से 6 प्रतिशत भाग तो केवल गलत भण्डारण के कारण नष्ट हो जाता है। यदि इसे नष्ट होने से बचा लिया जाये तो वह संपूर्ण भारतवासियों के 15 दिनों के भोजन के लिये पर्याप्त होगा।

शोध आलेख के उद्देश्य – शोध के उद्देश्य निम्न है

1. संग्रहण व भण्डारण को जानना।
2. शासकीय स्तर पर इस दिशा में प्रयासों को जानना।

परिकल्पना – यह किसी भी शोध प्रक्रिया का सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण है। मेरे इस आलेख की परिकल्पनायें निम्न है

1. कृषि उत्पादन के क्षेत्र में वांछित उन्नति एवं प्रमुख निर्यातक देश होने के बाद भी भण्डारण के क्षेत्र में पर्याप्त विकास नहीं हुआ है।
2. कार्पोरेशन की भण्डारण प्रणाली में सुधार कर कृषकों व जमाकर्ताओं को अधिकतम लाभ दिया जा सकता है।

संग्रहण – यह बात सर्वमान्य है कि मानव अपनी प्रकृति के अनुरुप अपनी भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये खाद्यान्न उत्पादों एवं धन का संग्रह करता है। बचत करना भविष्य की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण नियोजन है और यह सभी के लिये आवश्यक भी है। यह भी सत्य है कि प्रत्येक वस्तु जिसका उत्पादन हुआ है, उत्पादित होते ही उपभोग नहीं कर ली जाती है वरन् भविष्य के लिये उसका कुछ भाग संचित कर लिया जाता है। अत: उत्पादित वस्तु को उस अवधि तक सुरक्षित व व्यवस्थित रखना जब तक उसका उपभोग नहीं कर लिया जाता 'संग्रहण' कहलाता है।

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो. क्लार्क एण्ड क्लार्क के अनुसार- 'संग्रह, माल रखने एवं रक्षा करने की रीति है' एवं प्रो. पाइले के अनुसार- 'संग्रह, समय उपयोगिता प्रदान करता है तथा वस्तुओं के एक समय या ऋतु में उत्पन्न होने और दूसरे समय में उपयोग किये जाने के मध्य में जो समय का असंतुलित उत्पादन होता है उसको ठीक करता है'। अत: उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि संग्रहण वह विधि है, जो कि भविष्य की आवश्यकताओं की समस्या का समाधान करती है।

उत्पादन प्रणाली में जितना गुणात्मक एवं परिणात्मक सुधार होता जायेगा, संग्रहण की आवश्यकता एवं महत्व उतना ही बढ़ता जायेगा।

भण्डारण – साधारणतया संग्रहण और भण्डारण में कोई अंतर दिखायी नहीं देता है लेकिन भण्डारण शब्द विस्तृत है, इसमें संग्रहण भी आता है। इसे कई तरह से परिभाषित किया जा सकता है, जैसे- विशिष्ठ संस्थाओं के द्वारा व्यावसायिक लाभ के उद्देश्य से संग्रहण, 'भण्डारण' कहलाता है, अथवा भण्डारगृहों में वैज्ञानिक विधियों द्वारा विभिन्न स्कंधों का लम्बी अवधि के लिये रखा जाना, 'भण्डारण' कहलाता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) श्री राजीव गांधी शासकीय महाविद्यालय, बण्डा, जिला-सागर (म.प्र.) भारत

संग्रहण एक कार्य है जबकि भण्डारण एक प्रक्रिया है।

भण्डारण एक ऐसी आर्थिक क्रिया है, जो कृषि उत्पादन में समय उपयोगिता का ह्रास होने से बचाती है। भण्डारण की आवश्यकता समयानुकूल उत्पादन, मौसमी मांग, वस्तु के गुण, मांग व पूर्ति में संतुलन, मुद्रा प्रसार व मुद्रा स्फिति पर नियंत्रण, विपणन की विभिन्न क्रियाओं, तत्कालीन आवश्यकताओं, उत्पादकों व व्यापारियों के संदर्भ में भी देखी जाती है।

भण्डारगृह – भण्डारगृह वह भवन या स्थान है, जहां पर विशिष्ट संस्थाओं द्वारा वाणिज्यिक वस्तुओं का संग्रहण वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है। भण्डारगृह अधिनियम 1974 के अनुसार भण्डारगृह से आशय एक भवन या सुरक्षित घेराबंदी से है, जिसमें कृषि उत्पाद को संग्रहित किया जाता है या किया जा सकता है।

भण्डारगृहों के प्रकार – भण्डारगृह कई प्रकार के होते हैं। जिसमें उत्पादक, व्यापारी अथवा कृषक अपने उत्पाद को आवश्यकता न पड़ने तक या उचित मूल्य प्राप्त न होने तक रख सकता है, जैसे– निजी भण्डारगृह, सार्वजनिक भण्डारगृह, सहकारी भण्डारगृह, सरकारी भण्डारगृह, नियंत्रक भण्डारगृह, शीतक भण्डारगृह, बंधक भण्डारगृह, रेल्वे भण्डारगृह, कृषकों द्वारा निर्मित भण्डारगृह, वर्गीकृत भण्डारगृह, भण्डारगृह निगमों के भण्डारगृह, अन्य भण्डारगृह (साइलो, बिन, एलिवेटर, कैप भण्डारण, हस्तांतरणीय भण्डारगृह, स्वचलित भण्डारगृह, क्षेत्र भण्डारगृह, अनुबंध भण्डारगृह, कारखाना प्रतिबंधित भण्डारगृह एवं वेयरहाउसिंग हब) आदि।

भण्डारगृहों से लाभ –किसान व व्यापारी अपने खाद्यान्नों को जब तक सुरक्षित रख सकते है, जब तक उन्हें इसका उचित बाजार मूल्य प्राप्त न हो जाये या जब तक उन्हें आवश्यकता न हो। वैज्ञानिक भण्डारण प्रक्रिया के तहत उपभोक्ता को उत्पाद की सुरक्षा, श्रेणीकरण, प्रमाणीकरण, स्थानान्तरण, कीटोपचार, विपणन, परिवहन, पैंकिग, मूल्यस्थिरीकरण, मांग व पूर्ति में संतुलन व निश्चिन्त संग्रहण की सुविधा आदि का लाभ मिलता है, वहीं दूसरी ओर अति महत्वपूर्ण बात यह है कि वह अपने द्वारा भण्डारित किये गये स्कंध की भण्डारगृह रसीद पर किसी भी राष्ट्रीयकृत बैंक या सरकार द्वारा अनुसूचित बैंक से अपनी पात्रता सिद्ध करते हुए प्रति कृषक अधिकतम 1 लाख रूपये (25 प्रतिशत मार्जिन मनी के साथ) भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित ब्याज दर पर 6 माह की पुनर्भुगतान अवधि की शर्तो के अधीन साख सुविधा ले सकता है जबकि व्यापारी अपनी निश्चित वांछनीय पात्रता सिद्ध करते हुये 10 लाख रूपये तक मांग ऋण एवं 10 लाख रूपये से अधिक केवल नगद साख (40 प्रतिशत मार्जिन मनी के साथ) समय–समय पर निर्धारित दर से 3 से 6 माह अथवा वेयर हाउस रसीद की तिथि (जो भी पहले हो) की अवधि के लिये वित्त सुविधा ले सकता है।

इससे किसानों की ऋणग्रस्तता में कमी आती है। स्कंध को आकस्मकताओं, आग, चोरी आदि से बचाने के लिये बीमा प्राप्त हो जाता है। श्रमिकों को कई रुपों में रोजगार प्राप्त होता है।

उपभोक्ताओं को वर्ष भर वस्तुओं की आपूर्ति करना संभब हो जाता है। भण्डारगृहों से प्राप्त आय भारतीय आयकर अधिनियम की धारा 10(29) में कर मुक्त आय है। जमाकर्त्ताओं को वैज्ञानिक भण्डारण से कीड़ों, चूहों, पक्षियों व दीमक से सुरक्षा व सरकार को भी इससे कई प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष लाभ प्राप्त होते है।

समस्यायें –

1. खाद्यान्नों व उर्वरकों का एक ही स्थान पर भण्डारण करने से खाद्यान्न की गुणवत्ता में कमी होना।
2. स्कंध का लम्बी अवधि तक भण्डारण होने से श्रेणी व वजन में कमी होना।
3. जमाकर्ताओं द्वारा जमा स्कंध मानक गुणवत्ता स्तर का न होना, जिस कारण लाभदायकता घटती है।
4. जमा के समय नई फसल में नमी का प्रतिशत अधिक होना।
5. कृषकों व व्यापारियों को भण्डारगृह एवं भण्डारगृह रसीद से प्राप्त लाभों की जानकारी का न होना।
6. भण्डारगृहों पर सुरक्षा व सुविधाओं की कमी।
7. निजी भण्डारगृह स्थापित करने में उद्यमियों में रुचि की कमी।
8. भण्डारण तकनीकों के लिए शोध व अनुसंधान कार्य न के बराबर होना।

सुझाव –

1. वैज्ञानिक भण्डारण के लिए पर्याप्त सरकारी तंत्र विकसित करना चाहिए।
2. स्कंध की गुणवत्ता मानक स्तर की होनी चाहिए।
3. आबादी की वृद्धि के साथ खाद्यान्न की उपलब्धता व भण्डारण क्षमता घटना नहीं चाहिए।
4. भण्डारगृहों का वृहत जाल फैलाना होगा ताकि बंफर स्टाक की स्थिति में उसे सुरक्षित किया जा सके।
5. परिवहन व संचार के साधनों का विकास करना होगा।
6. मंडियों में भण्डारगृहों की आधारभूत संरचनाओं का विकास करना होगा।
7. किसानों का दृष्टिकोण आर्थिक से वैज्ञानिक बनाना होगा।
8. भण्डारण की दरों को अपेक्षाकृत कम व पुनरीक्षित करना होगा।
9. भण्डारण तकनीकों के लिए आवश्यक शोध व अनुसंधान कार्य होना चाहिए।
10. निजी भण्डारण व्यवस्था को पारदर्शी सुदृढ़ व जन–उपयोगी बनाना होगा ताकि वह केवल लाभ कमाने के लिए न हों।
11. भण्डारगृहों में खाद्यान्न सुरक्षा हेतु (चूहों, कीट, पतंगों, कीडों आदि) पर्याप्त उपाय योग्य व प्रशिक्षित वैज्ञानिक भण्डारण अधिकारियों की निगरानी में करवाये जायें।

निष्कर्ष – अन्य देशों की तुलना में हमारी राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा आज भी अच्छा है। इसके बाबजूद भी भारत की तस्वीर निराशाजनक नहीं तो, संतोषप्रद भी नहीं कही जा सकती क्योंकि हमारे यहां आज भी गरीबी, बेरोजगारी, निर्धनता, भुखमरी और आधारभूत सेवाओं व सुविधाओं की कमी है। एन. ई. वौरलाग एवं एम.एस. स्वामीनाथन के विज्ञान एवं परिश्रम ने देश में हरितक्रांति को जन्म दिया, जिससे हमारे देश का उत्पादन 50 मिलियन टन से बढ़कर 150 मिलियन टन हो गया, परंतु अब भी देश में खाद्यान्न भण्डारण के अभाव से उत्पादित खाद्यान्न की क्षति के कारण खाद्यान्न सुरक्षा हमारी प्रमुख व भयावह समस्या थी। जिसके उपाय के लिये इस दिशा में सरकार ने स्वयं व अपने नियंत्रण में निजी क्षेत्र के सहयोग से कार्यवाही प्रारंभ की और कृषि उपज मंडी, सहकारी विपणन संघ, भारतीय खाद्य निगम, सिविल सप्लाईज कार्पोरेशन, राष्ट्रीय बीज निगम, केंद्रीय भण्डारगृह निगम एवं राज्यों में राज्य भण्डारगृह एवं लॉजिस्टिक्स् कार्पोरेशन जैसी संस्थाओं की स्थापना की और इन्हें भण्डारण का दायित्व सौपा। इन संस्थाओं के सम्मिलित प्रयासों ने खाद्य–सुरक्षा और उससे संबंधित प्रमुख समस्याओं में से एक वैज्ञानिक भण्डारण प्रणाली में हमें सक्षम बनाया और वे अपने उद्देश्यों पर खरी उतरी है। खाद्यान्नों के वैज्ञानिक भण्डारण की प्रक्रिया ने हमारे देश को खाद्य सुरक्षा की श्रेणी में खड़ा कर दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंघल, डॉ. अमरचंद्र: भारत में कृषि विपणन, ए.बी.डी. पब्लिशर्स, जयपुर, 1994.
2. निजी वेयर हाउस संचालन हेतु मार्गदर्शिका : मध्यप्रदेश राज्य भण्डारगृह निगम, भोपाल, 2002.
3. अधिनियम मध्यप्रदेश शासन: सेंट्रल प्राविंस एण्ड बरार कृषि भण्डारगृह अधिनियम, 1947.
4. अधिनियम मध्यप्रदेश शासन: मध्यप्रदेश कृषि भण्डारगृह नियम, 1961.
5. अधिनियम मध्यप्रदेश शासन: राज्य भण्डारगृह निगम अधिनियम, 1962.
6. अधिनियम मध्यप्रदेश शासन: मध्यप्रदेश राज्य भण्डारगृह निगम नियम, 1971.
7. अन्न सुरक्षा अभियान: खाद्य विभाग, कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली.
8. अनाज की वैज्ञानिक भण्डारण आवश्यकता एवं महत्व: भारतीय अनाज संचयन संस्थान, हापुड़ (उ.प्र.)
9. वेयर हाउसिंग रसीद की जमानत पर अग्रिम: मध्यप्रदेश भण्डारगृह एवं लॉजिस्टिक्स् कार्पोरेशन, भोपाल (म.प्र.)
10. वार्षिक रिपोर्ट: ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, 2004-05.
11. कृषि चयनिका: कृषि मंत्रालय, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल
12. कुरूक्षेत्र: ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अंक- जून 2011, जुलाई 2011, सितम्बर 2011.
13. योजना: योजना भवन, नई दिल्ली, अंक-जनवरी 2007 एवं सितम्बर 2011.
14. उद्यमिता: उद्यमिता विकास केन्द्र म.प्र. (सेडमैप), भोपाल, अंक- अक्टूबर 2002, मार्च-2007, एवं नबम्बर 2008.

****

मध्यप्रदेश में कृषि एवं उद्यानिकी फसलों में सिंचाई का विस्तार एवं महत्व

डॉ. गजेन्द्र पाठक *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश की अर्थ-व्यवस्था का आधार कृषि है और कृषि का आधार सिंचाई। वैसे तो प्रदेश की कृषि मुख्यत: वर्षा आधारित है और इसी कारण सिंचाई क्षमता कम होने से कृषि के क्षेत्र में वांछित उन्नति नहीं हो पा रही थी। राज्य सरकार ने बीते एक दशक में सिंचाई पर विशेष ध्यान दिया। इसके जो परिणाम सामने आये हैं, उनसे एक तरह से प्रदेश में जल-क्रांति हो गई है।

कृषि उत्पादकता को प्रभावित करने वाले तत्वों में सिंचाई के साधनों का विशेष महत्व है। पौधों को ठीक समय पर पर्याप्त मात्रा में पानी मिलने पर अच्छी फसल होती है। भारत की जलवायु में वर्ष भर वनस्पति पैदा हो सकती है। इसलिए पानी मिलने पर उर्वरकों, अच्छे बीजों और नई कृषि विधियों के प्रयोग से उत्पादकता को सहज ही बढ़ाया जा सकता है। अत: भारतीय विभिन्न योजनाओं में प्रारंभ से ही सिंचाई की व्यवस्था को कृषि विकास के लिए अनिवार्य माना गया हैं। इस सम्बन्ध में दो मत नहीं हैं कि सिंचाई की व्यवस्था होने पर उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। योजना आयोग के अनुसार सिंचित भूमि पर असिंचित भूमि की तुलना में उत्पादकता दुगुनी है।

प्रदेश सरकार ने संकल्प लिया है कि हम प्रदेश की खेती को लाभ का धंधा बनाएंगे। विगत 9 वर्षों में इस दिशा में सरकार ने अनेक ठोस प्रयास किये हैं एवं उन्हें क्रियान्वित भी किया है। इन्हीं प्रयासों का परिणाम है कि हमें कृषि कर्मठ पुरस्कार भारत के राष्ट्रपति के कर कमलों से प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ हैं। कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि एवं खाद्य सुरक्षा की दिशा में निरंतर आगे बढ़ने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश में सिंचाई को प्राथमिकता दी है एवं सिंचाई रकबे में निरंतर वृद्धि की है। इस दशक में हमने सिंचाई का रकबा 9 लाख से बढ़ाकर लगभग 25 लाख हेक्टेयर करने में सफलता हासिल की है। विभिन्न सिंचाई परियोजनाओं को समयबद्ध तरीके से पूरा किया जा रहा है। साथ ही निर्मित सिंचाई क्षमता में शत-प्रतिशत उपयोग को सुनिश्चित किया जा रहा है। नहरों के रख रखाव एवं अंतिम छोर तक सिंचाई जल उपलब्ध करवाने पर विशेष जोर दिया गया हैं। सिंचाई जल के अपव्यय को रोकने के लिये बड़े पैमाने पर नहरों की लाइनिंग भी जा रही है। राज्य शासन द्वारा 500 से अधिक लघु सिंचाई परियोजनाएँ विगत 2 वर्ष में स्वीकृत कर निर्माण कार्य किये गये। इनमें अधिकतर कार्य पूर्ण हो चुके हैं।

प्रदेश में सिंचाई जल के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए राज्य **माइक्रो इरीगेशन मिशन** प्रारंभ किया गया है, ताकि कृषकों को अधिक से अधिक ड्रिप, स्प्रिंकलर एवं रेनगन जैसे आधुनिक उपकरणों के उपयोग के लिये प्रेरित कर सिंचाई जल का अपव्यय रोका जा सके। गरीबी रेखा से नीचे के कृषकों के खेतों में **कपिल-धारा योजना** में कूप निर्माण एवं सिंचाई उपकरण प्रदाने कर हमें उन्हें खेती की मुख्य धारा से जोड़ने से सफल हुए है प्रदेश में ग्रीष्मकालीन फसलों के उत्पादन के लिये कमाण्ड क्षेत्रों में विशेष अभियान प्रारभ किया गया है। इसका उद्देश्य उत्पादन में वृद्धि के साथ ही सिंचाई जल का पूर्ण उपयोग सुनिशिचित करना हैं।

नर्मदा हमारे प्रदेश की जीवन-रेखा है। विभिन्न बाँधों का निर्माण कर हमने नर्मदा नदी के जल का उपयोग प्रदेश के विकास के लिए करने का संकल्प लिया हैं। प्रदेश की अन्य नदी से जोड़ने के लिए प्रथम चरण में नर्मदा क्षिप्रा लिंक परियोजना पर कार्य प्रारंभ किया गया है।

भारतीय कृषि की प्रमुख समस्याओं में एक यह है कि यह मानसून पर बहुत अधिक निर्भर है। देश में केवल 45 प्रतिशत कृषि भूमि सिंचित है, जिसके कारण उत्पादन में व्यापक स्तर पर अनिश्चितता कायम है। इस बजट में **प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई)** के माध्यम से इस समस्या को हल करने की कोशिश की गई 17,000 करोड़ रू. के परिव्यय वाली इस प्रमुख सिंचाई योजना का लक्ष्य लगभग 28 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई के अतर्गत लाना है। इसके अलावा **त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम (एआईबीपी)** के तहत 89 पुरानी सिंचाई योजनाओं को पुनर्जीवित करने का प्रस्ताव भी है, जिससे 81 लाख हेक्टेयर भूमि के लाभान्वित होने की संभावना है। मनरेगा योजना के तहत कृषि तालाबों को सुधारने, गाद निकालने और कुएं खोदने जैसे पूरक कार्यक्रम चलाए जाएंगे।

कृषि विकास के लिए पानी की समस्या सबसे बड़ी है। पांचवी पंचवर्षीय योजना के बाद से यह काम राज्य सरकारों के भरोसे छोड़ दिया गया था। सम्यक प्रयास के अभाव से अपेक्षित सुधार कार्यक्रम से कृषि वंचित रह गया। अब हर खेत तक पानी पहुंचाने का लक्ष्य हासिल करने के लिए विभिन्न सिंचाई योजना तय की गई हैं। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय को इस मद में 2015-16 के बजट में 1550 करोड़ रूपये आबंटित किये गये थे। उस आबंटन में 51 प्रतिशत की वृद्धि करते हुए उसे 2016-2017 के बजट में 2340 करोड़ रूपये कर दिया गया है। साथ ही नाबार्ड के माध्यम से 20 हजार करोड़ रूपये का सिंचाई कोष सृजित किया गया है। हर खेत में पानी पहुँचाने के लक्ष्य की दिशा में बढ़ते हुए अगले पांच साल में 86 हजार 500 करोड़ रूपये की आवश्यकता होगी। जिसमें से 23 सिंचाई योजनाएं पूरी करने के लिए जल संसाधन मंत्रालय को वर्ष 2016-17 के बजट में 12 हजार 517 करोड़ रूपये का आबंटन किया गया है।

सिंचाई सुविधाओं का विस्तार – राज्य सरकार द्वारा सिंचाई सुविधाएँ बढ़ाने को कितना महत्व दिया गया है, इसका अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि वर्ष 2003-04 में सिंचाई के लिये जहाँ 1005.57 करोड़ का प्रावधान किया गया था, वहीं वर्ष 2015-16 में 6255.83 करोड़ का प्रावधान किया गया है। सिंचाई सुविधा बढ़ने से किसानों के जीवन में उल्लेखनीय सुधार तो आया ही है, खेती भी बढ़ा है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल आपूर्ति में भी सुधार आया हैं।

* (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, कुरवाई, जिला - विदिशा (म.प्र.) भारत

कृषि के क्षेत्र में मध्यप्रदेश की इन उपलब्धियों में सिंचाई सुविधाओं के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। वर्ष 2010-11 में जहाँ नहरों से सिंचित क्षेत्र मात्र पौने दस लाख हेक्टेयर था, वहीं वर्ष 2014-15 में यह बढ़कर 32 लाख 29 हजार हेक्टेयर हो गया है। अकेले वर्ष 2014-15 में 3 लाख 26 हजार हेक्टेयर क्षेत्र सिंचाई के अन्तर्गत लाया गया। प्रदेश में वर्ष 2012-13 में सभी स्त्रोतों से कुल सिंचित क्षेत्र 89 लाख 25 हजार हेक्टेयर था, जो वर्ष 2014-15 से बढ़कर 1 करोड़ 2 लाख 48 हजार हेक्टेयर हो गया। पिछले दो वर्ष में सभी स्त्रोतों से सिचिंत क्षेत्र में 13 लाख हेक्टेयर की वृद्धि हुई है।

फसलों में सिंचाई प्रबंधन - फसलों को सिंचाई जल नहर, तालाबों, रिजर्वायिरों, ट्यूब बैल, सतह-कूपों इत्यादि से आता है क्योंकि राज्य के पास बड़ी संख्या में नदियाँ एवं उनकी पूरक नाले व छोटी नदियाँ हैं, वे सिंचाई के मुख्य श्रोत हैं। फिर भी, उबड़-खाबड़ धरातल और पहाड़ी क्षेत्र जो कि बहुत मात्रा में है जो उद्यान की फसलों के लिए प्राकृतिक साधनों का पूर्ण लाभ उठाने में अड़चन पैदा करते हैं। कुशल नहर सिंचाई प्रबंधन में उल्लेखनीय सफलता हासिल की गई। नहरों के अंतिम छोर तक पानी पहुँचाने के लिए निरंतर मॉनीटरिंग और फॉलो-अप के फलस्वरूप वांछित परिणाम मिले। छोटे-छोटे निवेश कर 1000 से अधिक लघु सिंचाई परियोजनाओं को सुदृढ़ किया गया।

कृषि, राजस्व और अन्य विभाग तथा जिला प्रशासन के बीच बेहतर समन्वय स्थापित किया गया। वीडियो कान्फ्रेंसिंग तथा आईसीटी सिस्टम के जरिए सघन मॉनीटरिंग की गई। नहरों के अंतिम छोर तक पानी पहुँचाने के लिए उन्हें पूर्ण सप्लाई लेवल तक परिचालित किया गया। आवश्यकतानुसार समय-समय पर नहरों की मरम्मत की गई। यह व्यवस्था की गई कि अंतिम छोर पहले पानी मिले। मध्यप्रदेश में वर्ष 1986 के पहले निर्मित की सिंचाई परियोजनाओं का कायाकल्प किया गया है। वॉटर सेक्टर री-स्ट्रक्चरिंग प्रोजेक्ट में 30 जिलों में 229 परियोजनाओं को नया रूप दिया गया है। यह परियोजनाएँ चम्बल, सिंध, केन, ओर वेनगंगा नदी के कछारों में स्थित है। विशेष तौर पर ग्वालियर में चम्बल परियोजना, हरसी नहर और बालाघाट जिले में वेनगंगा नहर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। कई क्षेत्र तो ऐसे हैं, जहां 30 वर्ष बाद सिंचाई की सुविधा मिली है।

राज्य की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होने के फलस्वरूप यहां सिंचाई का विशेष महत्व है। राज्य की 10 प्रमुख नदियों में वार्षिक औसतन 81523 मिलियन घनमीटर सतही जल उपलब्ध है, जिसमें से लगभग 56857 मिलियन घनमीटर जल का उपयोग सिंचाई हेतु किया जा सकता है, जो कुल उपलब्ध जलक्षेत्र का 69.74 प्रतिशत है। प्रदेश में सकल बोया गया क्षेत्रफल वर्ष 1999-2000 में 204 लाख हेक्टेयर था जो वर्ष 2003-04 में घटकर 198 लाख हेक्टयर रह गया। सकल कृषि क्षेत्र से शुद्ध सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत वर्ष 1999-2000 में 28.54 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2004-05 में 30.54 प्रतिशत हो गया है। कुल सिंचित क्षेत्र में वृद्धि दर 3.32 प्रतिशत है। नलकूप से सिंचित क्षेत्र में 9.66 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर्ज की गयी है जो कि जल भूमि के जल के अधिकाधिक दोहन को इंगित करता है। तालाब तथा कुएँ से सिंचित क्षेत्रफल में अत्यधिक उतार-चढ़ाव परिलक्षित है जो मानसून के प्रभाव को इंगित करता है। वर्ष 1999-2000 की तुलना वर्ष 2004-05 के कुएँ से सिंचित क्षेत्र में कमी आयी है।

वर्तमान में प्रदेश में 21 वृहद योजना 11 मध्यम योजनाएं तथा 948 लधु सिंचाई योजनाएं निर्माणधीन है, इन योजनाओं के पूर्ण होने के पश्चात् प्रदेश की वर्तमान निर्मित सिंचाई क्षमता शासकीया स्त्रोतों 22.49 (वर्ष 2003-04) लाख हेक्टर से बढ़कर लगभग 31.37 लाख हेक्टर हो जावेगी एवं 30 जिलों में 290 पुरानी सिंचाई परियोजनाओं का कायाकल्प किया गया हैं।

निष्कर्ष - सरकार द्वारा कुशल सिंचाई के स्त्रोतों का प्रबंधन किया जाना चाहिए। जिन योजनाओं का काम शेष है उन्हें तेै जी से पूरा किया गया है, इन योजनाओं को पूरा करने का उद्देश्य कृषि को उन्नत बनाना हैं। केन्द्र सरकार ने वर्ष 2015-16 में 25,988 करोड़ रू. एवं 2016-17 में 47,912 करोड़ रू. कृषि और सिंचाई के लिए आवंटन किये है।

कृषि संबधी कार्यबल (नीति आयोग 2015) के अनुसार पानी की लगातार बढ़ती कमी, अति सिंचाई के कारण पानी की बर्बादी और मिट्टी की लवणता की समस्या के चलते भारत के कई भागों में सिंचाई की पुरानी प्रणालियों अव्यवहार्य हो गई है, इस कारण किसानों को आधुनिक उपकरणों के उपयोग करने पर बल दिया जा रहा है।

मध्यप्रदेश के आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक विकास में उद्यानिकी सशक्त जारिया साबित हो रहा है। मध्यप्रदेश फल, सब्जी, मसाला फसलों के उत्पादन में आत्मनिर्भर होकर अग्रणी उत्पादक राज्य बने इसके लिए अनेक विकासोन्मुखी योजनाएँ क्रियान्वित की जा रही हैं।

संदर्भ ग्रंन्थ सूची -

1. भारतीय अर्थव्यवस्था -हिमालया पब्लिशिगं हाऊस।
2. म. प्र. आर्थिक सर्वेक्षण मध्यप्रदेश भोपाल।
3. संचानलय उद्यानिकी, प्रक्षेत्र वानिकी (म.प्र.)।
4. प्रमुख अभियंता जल संसाधन विभाग, मध्यप्रदेश, भोपाल।
5. योजना विशेषांक।
6. घटना चक्र समय-सामयिक।
7. पेपर- नईदुनियां, रोजगार निर्माण।

****

महिला एवं बालिका कल्याण हेतु सरकारी प्रयास एवं योजनाएँ (म.प्र.के विशेष संदर्भ में)

प्रो. अंचल रामटेके * डॉ. भावना बर्मन **

शोध सारांश – नारी सृष्टि निर्माता की अद्धितीय रचना है। नारी के अभाव में सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अत: महिला उन्नति तथा विकास वर्तमान समय की प्रमुख आवश्यकता है। महिला हिंसा तथा उत्पीडन को रोकने एवं महिला शिक्षा को प्रोत्साहित करने हेतु सरकार द्धारा अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। कन्या भ्रूण हत्या को रोकने एवं बालिका के जन्म को दोष नहीं वरदान समझाने हेतु सामाजिक मानसिकता में बदलाव किया जा रहा है। समाज में महिलाओं एवं बालिकाओं की उन्नति होना महत्वपूर्ण आवश्यकता समझते हुऐं अनेक प्रयास किये जा रहे हैं, जिसके परिणाम स्वरूप आज महिलाओं ने प्रगति के नये आयाम प्राप्त किये हैं।

प्रस्तावना – प्राचीन समय से ही हमारे देश में नारी को विशेष सम्मान एवं स्थान प्राप्त है। कहा भी गया है जहाँ नारी की पूजा होती है, वहां देवता वास करते हैं। सभ्यता की दौड के साथ आज मानव प्रगति के पथ पर निरंतर विज्ञान और तकनीकी के साथ दौड़ लगा रहा है। विज्ञान तकनीकी के इस युग में आज कोई भी ऐसा क्षेत्र नही है, जहाँ महिलाओं ने विशेष कीर्तिमान स्थापित न किये हो। आज की महिला का कार्य केवल घर की चार दिवारों तक ही सीमित नहीं रह गया है। शिक्षा प्राप्त कर महिलाएँ घर से बाहर पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है, तथा प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिष्ठित पद प्राप्त किये हुये हैं। शिक्षा प्राप्त कर महिलायें न केवल स्वयं प्रगति कर रही है, अपितु परिवार व समाज का उद्धार भी कर रही हैं। समाज व सरकार के संयुक्त प्रयासों के परिणाम स्वरूप आज महिलाओं की स्थिति बदल गई है। अब बेटी के जन्म को अभिशाप नहीं अपितु वरदान माना जाने लगा है।

उद्देश्य –
1. महिला कल्याण की आवश्यकता
2. महिला कल्याण हेतु किये गये प्रयास
3. महिला कल्याण हेतु किये गये प्रयासों से लाभ
4. वर्तमान समय में आवश्यकता

शोध प्रविधि – महिला कल्याण हेतु सरकार द्धारा अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। इस हेतु द्धितीयक स्त्रोत के रूप में संदर्भ पुस्तक, समाचार पत्र, पत्रिकायें, इंटरनेट, विभिन्न आलेखों के माध्यम से सामग्री प्राप्त की गई है।

महिला कल्याण हेतु सरकारी प्रयासों की आवश्यकता – महिलाओं का शिक्षा प्राप्त कर उन्नति करना एवं उच्च स्थान प्राप्त करना सिक्के का एक पहलू है। आज भी घर के भीतर महिलाएं शोषण, उत्पीडन, दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा से ग्रस्त है। पुरूष प्रधान समाज की मानसिकता आज भी महिलाओं की प्रगति में बाधा बने हुये है, आज भी अधिकांश महिलाएं घर पर आर्थिक रूप से पुरूषों पर ही निर्भर रहती हैं। घरेलू हिंसा का एक मुख्य कारण महिलाओं की आर्थिक निर्भरता भी है। इसके अतिरिक्त महिलाओं की अशिक्षा, महिलाओं का कानून व न्याय के प्रति जागरूक न होना, पुरूषों का शराब आदि व्यसन से ग्रसित होना भी घरेलू हिंसा के मुख्य कारण है। आज समाज में बलात्कार, हत्या, विधवाओं के प्रति हिंसा, नारी एवं भ्रूण हत्या, छेडछाड आदि अपराध भी बढते जा रहे हैं।

इन सभी अपरोधों को रोकने एवं महिलाओं एवं कन्याओं की दशा सुधारने हेतु सरकार द्धारा नियम एवं सुधार कानून बनाने की आवश्यकता महसूस हुई।

महिला कल्याण हेतु सरकारी प्रयास –
1. दहेज प्रथा के निवारण हेतु 1961 में दहेज निरोधक अधिनियम बनाया गया है।
2. पुरूष और महिलाओं के लिये समान वेतन की व्यवस्था करने हेतु 1979 में समान वेतन अधिनियम पारित किया गया।
3. गर्भवती महिलाओं को मातृत्व का लाभ प्रदान किया गया।
4. महिला विकास निगम (WDC) की स्थापना सन् 1986-87 में की गई।
5. महिलाओं का अश्लील चित्रण निवारण अधिनियम 1986 बनाया गया, जिसके द्धारा विज्ञापनों में महिलाओं के अश्लील प्रदर्शन को रोका जा सके।
6. ऐसी जरूरतमंद महिलाएं जो गरीबी में जीवन यापन कर रही है, उनकी सहायता हेतु राष्ट्रीय ऋण कोष की स्थापना की गई।
7. स्त्रियों पर पति अथवा पुरूष साथी द्धारा की जाने वाली घरेलू हिंसा एवं अत्याचार को रोकने के लिये घरेलू हिंसा महिला संरक्षण अधिनियम 2005 बनाया गया।
8. गर्भवती महिलाओं को स्वास्थ्य केन्द्र में पंजीकरण कराने के बाद से शिशु जन्म तक स्वास्थ्य सुविधा का लाभ पहुँचाने हेतु जननी सुरक्षा योजना को प्रारंभ किया गया। इस योजना को 1 अप्रैल 2005 से गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली गर्भवती महिलाओं के लिये शुरू किया गया।
9. महिलाओं के अधिकरों एवं हितों की सुरक्षा हेतु राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई।
10. महिलाओं को कुपोषण से मुक्ति दिलाने हेतु राष्ट्रीय पोषण मिशन का प्रारंभ किया गया।
11. गंभीर बीमारियों से महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने हेतु जीवन भारती महिला सुरक्षा योजना प्रारंभ किया है।

* सहायक प्राध्यापक (प्राणीशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत

12. ऐसी महिलाएं जो पारिवारिक विवाद, सामाजिक बहिष्कार, नैतिकता के पतन के कारण समस्याओं से ग्रस्ति है। उनके लिए अल्पावधि प्रवास ग्रह परियोजना प्रारम्भ की गई है।
13. पिता की संपत्ति में पुत्र के सामान पुत्रियों को अधिकार प्रदान करने हेतु कानून को 9 सितम्बर 2005 को संसद में पारित किया गया।
14. महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य की घर घर जाकर जानकारी एकत्रित करने हेतु आशा योजना 2004-2005 प्रारंभ किया गया।

महिला एवं कन्याओं के कल्याण हेतु म.प्र. में संचालित प्रमुख योजनायें -

1. सबला योजना- किशोरियों के सशक्तिकरण हेतु प्रारंभ की गई इस योजना ने 17 लाख से अधिक बालिकाओं को लाभान्वित किया है।

2. मुख्यमंत्री कन्यादान योजना-

1. गरीब, जरूरतमंद, निराक्षित परिवारों को अपनी बेटियों, विधवाओं या तलाकशुदा के विवाह के लिये वित्तीय मदद उपलब्ध कराता है।
2. वित्तीय मदद के तहत 25,000/- रू. दिये जाते हैं। जिसमें से 9,000/- रू. घर का सामान खरीदने के लिये दिये जाते हैं।

वर्ष	माह	सामूहिक विवाह
2013-2014	नवम्बर	53.16 हजार

3. लाडली लक्ष्मी योजना- इस योजना को लागू कर समाज की उस मानसिंकता को बदलने का कदम उठाया गया, जिसमें बेटी होने को बोझ समझा जाता था। इस योजना के अंतर्गत बालिका के जन्म से 21 वर्ष तक उसकी पढाई से लेकर विवाह तक की जिम्मेदारी और उसके समुचित विकास का आर्थिक आधार सरकार तैयार करेगी। इसकी एक ही शर्त होगी कि परिवार में दो ही बेटियां हों।

योजना लागू वर्ष	माह	लाभांवित बालिकायें
2007	अप्रैल	21 लाख

4. बेटी बचाओ अभियान- 5 अक्टूबर को बेटी बचाओ दिवस घोषित किया गया है। इसके द्वारा यही संदेश फैलाया जा रहा है कि बेटी है तो कल है।

वर्ष	पूर्व मृत्यु दर	वर्तमान मृत्यु दर
2012-2013	927 प्रति हजार	911 प्रति हजार

1. गौरवी अभियान- महिलाओं को संरक्षण देने के लिये गौरवी अभियान की शुरूआत की गई है। इसमें प्रताड़ित महिलाओं को चिकित्सीय, विविध और मानसिक स्तर पर सहायता देने के उद्देश्य से मेधा महिला सेवा केन्द्र प्रारंभ किये जायेंगे। प्रदेश का पहला केन्द्र भोपाल के जे.पी. अस्पताल में 18 जून 2014 को प्रारंभ हुआ।

2. सुपोषण अभियान- महिलाओं के साथ बच्चें का विकास हो मातृ एवं शिशु मृत्यु कम हो, इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सुपोषण अभियान चलाया जा रहा है। प्रदेश के 12,588 गांवों में स्नेह शिविर में 1,55,835 बच्चें शामिल हुये। इनमें कम वजन के बच्चों को सुपोषित करने के प्रयास किये जा रहे हैं। इनके परिणाम भी बेहतर आये है। स्नेह शिविर के 26 हजार कुपोषित बच्चों के वजन में 180 से 250 ग्राम तक का वजन बढ़ा है।

3. जननी सुरक्षा योजना- इस योजना की शुरूआत 1 अप्रैल 2005 को निर्धारित रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाली गर्भवती महिलाओं के लिये की गई है। इस योजना के द्वारा प्रदेश सरकार ने मातृत्व मृत्यु दर एवं शिशु मृत्यु दर को कम करने में सफलता प्राप्त की है।

योजना प्रारंभ	आयु	प्रोत्साहन राशि
1 अप्रैल 2005	19 वर्ष	1,400/- रू0

4. प्रतिभा किरण योजना- इस योजना का उद्देश्य ऐसे शहरी बी0पी0एल0 परिवारों की बालिकाओं के शैक्षिक स्तर में सुधार लाना है जिन्होंने कक्षा 12वीं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के बाद उसी वर्ष उच्च कक्षा में प्रवेश लिया है। इस योजना में पात्र बालिका को 10 महिनों के लिये 500/- रू. प्रतिमाह तथा तकनीकी पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने पर 750/- रू. प्रतिमाह प्रोत्साहन राशि के रूप में दिये जाते हैं।

5. गाँव की बेटी योजना - यह योजना गाँव के स्कूलों से 12वी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण छात्राओं के लिए है। ऐसी छात्राएँ जब उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए महाविद्यालय में प्रवेश लेती हैं तो उन्हें 500रू. प्रतिमाह की दर से 5000रू. (दस माह) प्रदान किए जाते हैं।

पात्रता	राशि (प्रतिमाह)	अवधि (माह)
12वीं प्रथम श्रेणी गांव के विद्यालय से उत्तीर्ण	500/-	10 माह

6. बालिका साक्षरता हेतु कार्य- बालिका की शिक्षा निर्वाध पूरी हो, इसके लिए प्रदेश की लगभग बीस लाख बालिकाओं को साइकिलें दी गई। सरकारी प्रयासो के लाभ- सरकार द्वारा महिलओं के कल्याण हेतु किए गए इन प्रयासों से महिलाओं के जीवन स्तर में सुधार आया है। वर्तमान में सरकार बालिका शिक्षा से लेकर उनके स्वास्थ्य, विवाह, आश्रय आदि हर क्षेत्र में महिलाओं एवं कन्याओं को सहायता प्रदान कर रही है। इन योजनाओं से न केवल ग्रामीण एवं सुदूर अंचल में रहने वाली महिला लाभान्वित हो रही है अपितु शहरी क्षेत्रों में रहने वाली महिलाएं भी इन प्रयासों का लाभ ले रही है। शिक्षित समाज आज भी ऐसी मान्यताओं और धारणाओं से ग्रस्त है जो नारी को कुप्रथाओं के बंधन में बॉधकर रखे हुए है। इन सरकारी प्रयासों के द्वारा स्त्री अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही है तथा उसके जीवन स्तर में सुधार आया है।

उपसंहार - वर्तमान समय की आवश्यकता सामाजिक मानसिकता में बदलाव की है, ताकि कन्या के जन्म को अभिशाप नहीं बल्कि वरदान माना जाए। स्त्री शक्ति को समान अधिकार देने व उनके उत्थान के लिए किय गए इन कार्यो से महिलाओं की स्थिति में सुधार आया है। महिला बोझ नहीं जिम्मेदारी है और जरूरी भी ऐसी सोच समाज में स्थापित हो रही है। वर्तमान में महिलाओं के लिए आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में लिए गए फैसलों ने महिलाओं को मुख्य धारा से जोड़ा है।

आधुनिक युग में नारी ने अपने महत्व को पहचाना है। उसने दासता के बंधनों को तोड़ दिया और स्वतंत्रता की साँस ली। उपरोक्त सरकारी प्रयासों के परिणाम स्वरूप आधुनिक नारी ने शिक्षा, राजनीति, व्यवसाय आदि विभिन्न क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर - 28 अगस्त 2015 पेज नं. 15
2. समाजशास्त्र - प्रो. एम.एल. गुप्ता, डॉ. डी.डी. शर्मा।
3. मध्यप्रदेश समसामायिकी।
4. इंटरनेट।

****

भारत में बैंकिंग क्षेत्र में जोखिम और जोखिम प्रबधन

डॉ. राजू रैदास *

शोध सारांश – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में सुदृढ़ वित्तीय ढ़ांचे का होना उस देश की प्रगति की ओर इंगित करता है तथा बैंकिंग क्षेत्र एक अर्थव्यवस्था के विकास में अहम भूमिका निभाते हुए सुदृढ़ता प्रदान करता है। बैंक देश के आर्थिक विकास की कुंजी हैं। अत: यह आवश्यक हो जाता है कि देश में एक सुदृढ़ बैंकिंग क्षेत्र हो, सन् 1991 से प्रारम्भ हुए उदारीकरण स्वरूप बैंकों को नए उत्पादों तथा सेवाओं को प्रारम्भ कर कई क्रांतिकारी बदलाओं अपने प्रबंध में करना पड़े। परिणामस्वरूप बैंकिंग व्यवसाय के साथ बैंकिंग आय बढ़ी और बैंकिंग क्षेत्र में नवीन जोखिमों का प्रादुर्भाव हुआ। यह सत्य है कि जितनी जोखिम ज्यादा होगी लाभ की सम्भावना भी उतनी ही अधिक होगी और बैंकिंग व्यवसाय में तो लाभ का आधार ही जोखिम में है। अत: बैंकिंग क्षेत्र में जोखिम को पहचान कर उन्हें समाप्त तो नहीं किया जा सकता है। पर कम अवश्य कम किया जा सकता है। इस हेतु समस्त बैंकिंग एवं वित्तीय एक जोखिम प्रबन्ध तंत्र की स्थपाना कर स्वयं को भावी अनिश्चताओं एवं जोखिम से बचाने के प्रयास करते रहते है। जिसे हम जोखिम – प्रबन्धन कहते है।
शब्द कुंजी – बैंकिंग क्षेत्र में जोखिम एवं प्रबन्ध।

प्रस्तावना – अध्ययन का उद्देश्य –

1. बैंकिंग संस्थाओं की जोखिम के प्रकारों का अध्ययन करना।
2. बैंकिंग संस्थाओं की जोखिम को न्यूनतम करने वाले कार्यों का अध्ययन करना।
3. बैंकिंग संस्थाओं की जोखिम को नियन्त्रित करने वाले उपायों को जानना।

आंकड़ों व तथ्यों का संकलन –प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक व द्वितीयक तथ्यों पर आधारित है। जिसमें संकलन बैंक अधिकारियों कर्मचारियों से समूह चर्चा, दूरभाष पर चर्चा कर जानकारी एकत्र की गई है। द्वितीयक तथ्यों का संकलन पुस्तकों, पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख, शोध जर्नल व इन्टरनेट से जानकारी एकत्र की गई है।

अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण –प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से उद्देश्यों के अनुसार भारत में बैंकिंग संस्थाओं व कारोबार में जोखिम के प्रकार, जोखिम के तरिकों आदि का वर्गीकरण व विश्लेषण किया गया है।

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन – बैंकिंग व्यवसाय में एशियाई वित्तीय संकट जो जुलाई सन् 1997 में शुरू हुआ दुनिया भर में आर्थिक मंदी के रूप में परिणीत हुआ। यह संकट थाईलैंण्ड से शुरू हुआ जिनके वित्तीय कर्ज ने उसे दिवालिया बना दिया। जिसका परिणाम विश्व के कई देशों पर मुद्रा अवमूल्यन, निजी ऋणों में तेज वृद्धि। मुद्रा संकट के रूप में देखा गया।

भारत में बैंकिंग कारोबार में जोखिम – बैंक जोखिम प्रबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें संस्था अपनी व्यवसायिक व वित्तीय गतिविधियों सें जुड़ी जोखिमों को पहचानने, उसके सकारात्मक व नकारात्मक प्रभाव का आकलन करने के साथ उन्हे कम या नियन्त्रित करने हेतु कार्यविधियों का निर्माण करने से है ताकि भावी विकास का पथ अग्रसर हो सके। पोस्टल एलपीजी की अवधि में घरेलू बैंकों के साथ विदेशी बैंकों की मध्यस्थहीनता के कारण कड़ी प्रतिस्पर्धा को देखा गया। बैंकिंग कारोबार को बढ़ाने के लिए एटीएम,क्रेडिट कार्ड, डेबिट कार्ड, मोबाईल बैंकिंग, इन्टरनेट बैंकिंग, ई एफ. डी., म्यूचुअल फंड, ऑन लाईन अनेक सुविधाएं प्रदान की गई। इस तकनीकी नवाचार ने बैंकिंग कारोबार को जहाँ सुलभ बनाया वहीं बैंकिंग कारोबार में जोखिम में भी काफी वृद्धि हुई।

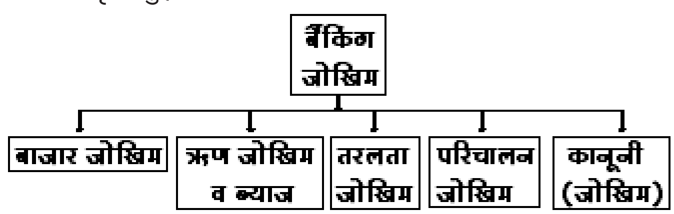

1. बाजार जोखिम – बाजार जोखिम वर्तमान तथा भावी आय तथा अंषधारकों के अंशों पर पड़ने वाले प्रतिकुल ब्याज दरों तथा कीमतों के कारण उत्पन्न होती है। इसके दो प्रकार है –

(अ) विदेशी मुद्रा जोखिम – जो विनमय दरों में और उत्पाद कीमत के घटने–बढ़ने के कारण उत्पन्न होती है।

(ब) बाजार में तरलता जोखिम – जो उत्पाद कीमतों के घटने–बढ़ने, लाभप्रदता या परिसम्पतियों के मूल्य में परिवर्तन के कारण अनिश्चिता का वातावरण उत्पन्न करते है।

2. ऋण जोखिम – ऋण सम्बन्धित जोखिम का मूल्य कारण ऋणी द्वारा समय पर मूलधन व ब्याज का भुगतान स्वीकार्य शर्तों के अनुसार पूरा न कर पाने के कारण, ग्राहकों की आर्थिक स्थिति बदल जाने के कारण उत्पन्न होती है। चूंकि बैंकिंग सस्थाओं का मूलकार्य ग्राहकों को ऋण उपलब्ध करवाना है अत: ऋण जोखिम का उचित प्रबन्धन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

3. तरलता जोखिम – तरलता जोखिम बैंक की अस्तियों तथा देयताओं में असन्तुलन के कारण उत्पन्न होती है। तरलता जोखिम प्रबन्धन के अन्तर्गत बैंक द्वारा अपनी समस्त देयताओं को समय पर भुगतान करना तथा निवेश के अवसरों पर धन उपलब्ध करवाना महत्वपूर्ण कार्य माना जा सकता है।

4. परिचालन जोखिम – बासेल समिति के अनुसार – अपर्याप्त व विफल आन्तरिक क्रिया कलापों, प्रणालियों अथवा ब्राह्य गतिविधियों के कारण

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

उत्पन्न हानियों की जोखिम ही परिचालन जोखिमें है और इन जोखिमों के उत्पन्न होने के मुल कारण – अपर्याप्त सूचना तंत्र, आन्तरिक नियन्त्रणिय, धोखाधड़ी, चोरी, विफलता, अवांछनीयगतिविधियों के कारण उत्पन्न होती है।

5. कानूनी जोखिम – बैंकिंग क्षेत्र एक अत्यधिक नियामक वातावरण में कार्य करता है तथा अपनी प्रत्येक गतिविधि के लिए उसका न्याय संगत होना कानूनी दृष्टि से आवश्यक होता है। अत: जोखिमों से बैंक अपनी समस्त गतिविधियों चाहे वे जमाओं से सम्बन्धित हो या ऋणों से सम्बन्धित हो सम्पूर्ण विवरण समस्त सम्बन्धित पक्षों को उपलब्ध करवाना अनिवार्य है।

6. अन्य जोखिम – दो भागों में विभक्त किया जा सकता है –

(अ) समाजिक जोखिम – जो गलत व्यापार निर्णयों के कारण निर्णयों में कमी के कारण या अनुचित कार्यान्वयन के कारण और उद्योग की स्थिति में परिवर्तन के कारण संगठन की रणनीति में परिवर्तन के कारण व प्रबन्धन में गुणवत्ता की कमी के कारण बैंकिंग कारोबार में जोखिम उत्पन्न होती है।

(ब) प्रतिष्ठा जोखिम – प्रतिष्ठा जोखिम ग्राहकों पर बैंकिंग व्यवहार की अविश्वनियता, मुकदमेबाजी व बैंकिंग कर्मचारियों के नकारात्मक व्यवहार के कारण जोखिम उत्पन्न होती है।

बैंकिंग कारोबार में जोखिम को न्यूनतम व नियन्त्रित करने वाले उपाय–सामान्यत: बैंकिंग संस्थाओं में जोखिम का कुशल प्रबन्धन ही बैंकिंग संस्था की सफलता का आधार है।

1. बाजार जोखिम प्रबन्धन –

(अ) वर्तमान तथा भावी कारणों व स्थितियों का आकलन कर निवेष गतिविधियों का संचालन करना।

(ब) कुशल प्रबन्धकों, वित्तीय विषेशज्ञों, अनुभवी व्यक्तियों से समय–समय पर परामर्श लेकर नीतियों का निर्धारण करना।

(स) जोखिम व क्षमता का आकलन कर बैंकों को अपनी तुलनात्मक भावी रणनीति तैयार करना चाहिए।

2. ऋण जोखिम प्रबंन्धन–

(अ) ग्राहकों की साख एवं कार्यकुशलता के स्तर का पूर्ण आकलन करना।

(ब) संस्था के वित्तीय व्यवहारों का आकलन करना।

(स) ग्राहकों की वित्तीय, वित्तीय विवरणों का गहन अवलोकन व विश्लेषण करना।

(द) बैंक ऋण न डुबे इसलिए जोखिम आकलन व विश्लेषण की सुदृढ़ प्रणाली का विकास करना।

(ई) बैंक द्वारा उपलब्ध करवाये गये ऋणों की निगरानी व नियन्त्रण हेतु तंत्र की स्थापना करना।

3. तरलता जोखिम –

(अ) बैंकों को अपनी तरलता स्थिति पर सूक्ष्म नजर रखते हुए भावी असन्तुलन से बचने हेतु पूर्व में तरलता की व्यवस्था कर लेना।

(ब) बैंक द्वारा प्रतिमाह जमाओं व भुगतानों की समीक्षा कर असन्तुलन के वित्तीय आंकड़े तैयार करना।

(स) तरलता प्राप्ति हेतु केन्द्रीय बैंक से पुनर्वित्त की पूर्व व्यवस्था का आश्वासन लेना।

(द) उच्च तरलता प्रतिभूतियों में निवेश करना ताकि आवश्यकता होने पर इन्हें बेच कर तुरन्त तरलता प्राप्त की जा सके।

4. परिचालक जोखिम प्रबन्धन –

(अ) आन्तरिक नियन्त्रण व्यवस्था को सुदृढ़ करना।

(ब) समस्त वित्तीय गतिविधियों के संकलन हेतु एक केन्द्रीय समंक संग्रहण स्थल व प्रशिक्षण स्थल का निर्माण करना।

(स) बैंक द्वारा स्पष्ट नीतियों का निर्माण व नियन्त्रण करना।

(द) उन्नत व सुरक्षित सॉफ्टवेयर का प्रयोग बढ़ाना।

5. कानूनी जोखिम प्रबन्धन –

(अ) जमाकर्ताओं व ऋणों से सम्बन्धित कानूनी शर्तो, नियम व दस्तावेजों के प्रति पूर्व में ही उपलब्ध करवाना ताकि कानूनी समस्याएं बैंकों के समक्ष भविष्य में उपलब्ध न हो।

6. अन्य जोखिम प्रबन्धन –

(अ) कुशल अनुभवी परामर्शदाताओं से समय पर सलाह लेकर उन्नत तकनीकी गुणवत्ता का प्रयोग करना।

निष्कर्ष – वर्तमान में बैंक जोखिम व उससे निपटने के लिए प्रभावी ढ़ग से जोखिम प्रबन्ध की रणनीति तैयार कर रहे है। इसलिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा साईड़ व ऑफ साईड़ की निगरानी के तरीकों को लागू किया जा रहा हैं। जोखिम का पता लगाने, इनको मापने व जोखिम को नियन्त्रित करते व काम करते हुए अपने बैंकिंग व्यवस्था को उन्नति के पथ पर ले जाया जा सकता है। वर्तमान प्रतिस्पर्धी युग में कार्यकुशलता ही संस्था के विकास का आधार होती है। अत: जोखिम प्रबन्धन के महत्वपूर्ण कार्य को सुक्ष्मता व गहनता के साथ लागू करना चाहिए ताकि बैंकिंग व्यवसाय नये विकास को प्राप्त कर सके।

संदर्भ गन्थ सूची :-

1. बैंकिगं व्यवसाय में जोखिम प्रबंन्धन शोध समीक्षा – जयपुर प्रकाशन।
2. www.google.com/wikipedia.com.

****

विश्व व्यापार संगठन एवं भारत

डॉ. एन. एल. गुप्ता * रणजीत सिंह रावत **

प्रस्तावना – भारत गैट (GATT) तथा विश्व व्यापार संगठन का प्रारंभ से ही सदस्य रहा है। भारत ने WTO के समझौते के अंतर्गत आयोजित प्रशुल्क एवं व्यापार मंत्रणाओं में भाग ही नहीं लिया है अपितु विभिन्न समितियों की बैठकों में विकासशील देशों की समस्याओं एवं दृष्टिकोण को भी स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया है।

विश्व व्यापार संगठन में भारत के सम्मिलित होने का उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय व्यापार वृद्धि का रहा, लेकिन विभिन्न अध्ययनों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत के निर्यात की अपेक्षा आयातों में अधिक वृद्धि हुई तथा इसका प्रमुख कारण विकसित देश विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से विकासशील व अविकसित जैसे देशों को अपने व्यापारिक अवरोधकों को समाप्त करने और वस्तुओं के बेरोक-टोक प्रवाह के लिये मजबूर करते हैं।

विश्व व्यापार संगठन एक नई विश्व व्यापार प्रणाली है 1930 में विश्व में आयी अंतर्राष्ट्रीय मंदी के कारण सभी देशों ने अपने हितों को ध्यान में रखते हुए अन्य देशों से आने वाली वस्तुओं के आयात पर नियंत्रण लगा दिया। जिसके परिणाम स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का विकास रूक सा गया। इस व्यापार संकुचन से उबरने के लिये कई प्रस्ताव रखे गए पर कोई खास सफलता प्राप्त नहीं हुई। यह गैट की ही एक उत्तराधिकारी संगठन है इसकी स्थापना सदस्य राष्ट्रों की संसदों द्वारा अनुमोदित एक अंतर्राष्ट्रीय संधि के आधार पर हुई है। इसका मुख्यालय जिनेवा में है। इसकी स्थापना एक जनवरी 1998 को हुई। गैट का कार्यक्षेत्र केवल वस्तु व्यापार तक ही सीमित था। जबकि WTO में सेवाएं बौद्धिक सम्पदा,निवेश, कृषि, वस्त्र एवं कपड़ा उद्योग, विवाद, निपटारा, निगम, व्यापार नीति निरीक्षण आदि बातों को भी सम्मिलित किया जाता है।

भारतीय बाजार पर जब विदेशी निवेशक निवेश करेंगे तो उद्देश्य अनावश्यक या अधिक आयात को रोकना होगा। ताकि भुगतान अनावश्यक या अधिक आयात को रोकना होगा। अनुचित प्रतिस्पर्धा से बचाया जा सके लेकिन विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत यह संभव नहीं है कि विदेशी कंपनी या विकसित देश अपना विनियोग विकासशील देशों के व्यापारों का हनन करने के लिए न करें। सेवा क्षेत्र के अंतर्गत बैंकिंग, बीमा, विदेशी सेवादाता कंपनियों की प्रतियोगिता का भारतीय अर्थव्यवस्था व मुद्रा पर विपरीत प्रभाव होगा। विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत आयातों से मंत्रात्मक प्रतिबंध हटाया गया है, तब से जिसके कारण आयात में वृद्धि से पर्याप्त मजदूरी स्वास्थ्य एवं स्वच्छ कार्य दर्शाए सामाजिक कल्याण ये ऐसे मुदर्दे है, जिन पर अंतर्राष्ट्रीय मानक है, कार्य लिया जाने पर भारतीय उत्पादन लागत बढ़ जायेगी और विदेशी उत्पादों का मुकाबला भारतीय उत्पाद नहीं कर पायेंगे।

समीक्षा – विश्व व्यापार संगठन भारत पर दबाव डालता रहा है कि भारत में आयात निर्बाध हो इसके लिये वह आयात शुल्क को कम करें, उपभोग वस्तुओं के आयात पर प्रतिबंध हटाए। भारत ने ईमानदारी से संधि का अनुसरण किया है, सीमा शुल्कों को प्रतिवर्ष घटाया और आयात शुल्कों का संरक्षण हटा लिया। इससे भारतीय उद्योग पतन की ओर अग्रसर हो रहे हैं। इनके विपरीत विकसित देश भारत के निर्यात में रूकावट उत्पन्न करते रहे, जैसे डम्पिंग विरोधी शुल्क आरोपण, एक प्रतिस्पर्धा को निरस्त करते आ रहे हैं। कृषि संधियों, सैद्धान्तिक रूप में भारतीय कृषि पर दुष्प्रभाव डाल रही है। विश्व व्यापार संगठन विश्व के विभिन्न देशों के मध्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन देने तथा तटकरों के बंधनो को कम करने के लिए किया गया आवश्यक सिद्धांत तथा नियमों से संबंधित बहुपेक्षीय समझौते वाला बंधन मुक्त संगठन है। यह एक बहुपक्षीय समझौते वाला बंधन मुक्त संगठन है। जो अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के नियमों का निर्धारण करता है।

भारत विश्व व्यापार संगठन के संस्थापक देशों में शामिल है। भारत प्रारंभिक दौर से ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के पक्ष में रहा है। विश्व व्यापार संगठन के कारण जहाँ रोजगार, उत्पादन, उच्चतम उपभोग, जीवन स्तर, आय आदि में वृद्धि हुई है, वही भारत जैसे विकासशील देश जो विकसित देश बनने की राह पर अग्रसर है, विभिन्न क्षेत्रो में विश्व व्यापार संगठन के अनुकूल प्रभाव देखने को मिलते है।

गैट में यह कहा गया है कि अगर कोई देश किसी अन्य देश में उत्पादित किसी भी वस्तु का कोई लाभ, समर्थन या सुविधा प्रदान करता है, तो यह लाभ, समर्थन , सुविधा स्वत: और तुरंत इस वस्तु के उत्पादक अन्य सभी सदस्य देशों को बिना शर्त प्राप्त हो जाएगी। गैट के महानिदेशक आर्थर डंकल ने एक अंतिम एक्ट पेश किया। इसे डंकल ड्राफ्ट का नाम दिया गया (जिसका अर्थ यह था कि किसी भी अंश को स्वीकार्य तब तक नहीं माना जाएगा जब तक सभी अंशो को स्वीकार न किया जाए) अर्थात इसे पुरी तरह स्वीकार करना आवश्यक था। इस समझौते पर गैट के सदस्य देशों ने हस्ताक्षर किए।

भारत के दृष्टिकोण से एक अत्यंत चिंता का विषय व्यापार संबद्ध बौद्धिक संपदा अधिकारों का क्षेत्र है। विकसित देशों ने इन अधिकारों के सरंक्षण के लिए कई कड़ी शर्तो को विकासशील देशों पर थोपा है। इसका उददेश्य विकासशील देशों की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को लाभ पहुंचाना है। अब उत्पाद पेटेंट लागू होने पर औषधियों का उत्पादन वही कंपनियाँ कर पाएगी, जिन्हें उनका उत्पाद पेटेंट प्राप्त हुआ है। मुचकुंद दुबे का यह तर्क सही है कि हालांकि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में विकसित देश मुक्त व्यापार में बांधा है और प्रतिस्पर्धा व उदारीकरण की भावना के विपरीत है। अगर वे संरक्षणात्मक नीतियों का हिस्सा नहीं है तो क्या है ?

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडवानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जहाँ तक व्यापार संबंद्ध निवेश उपायों का संबद्ध है वे भी विकसित देशों के हितों को ध्यान में रखकर बनाए गए है। विकासशील देशों के दृष्टिकोण से व्यापार संबद्ध बौद्धिक संपदा अधिकार को संतुलित बनाने का तरीका यह होना चाहिए था कि विदेशी निवेशकों के प्रतिबंधात्मक व्यावसायिक व्यवहार पर अंकुश लगाने के लिए कुछ कदम उठाए जाते।

विश्व व्यापार संगठन के समझौते के अधीन सेवा क्षेत्र को भी खोलने की व्यवस्था की गई है। सेवा क्षेत्र में बहुत सी आर्थिक गतिविधियां आ जाती है। जैसे बैंकिग, बीमा, परिवहन, संचार इत्यादि। इन सभी क्षेत्रों को खोलने पर विकसित देशों को विकासशील देशों की तुलना में कही ज्यादा लाभ प्राप्त होंगे।

आने वाले समय में विश्व व्यापार संगठन के तत्वाधान में विकसित देशों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ प्राप्त होंगे। एक अन्य बात जिसकी और ध्यान दिलाना आवश्यक यह है बहुत सारे मुदद्दे जिन पर निर्णय पहले सरकारो द्धारा लिये जाते थे। अब नई अतंर्राष्ट्रीय व्यवस्था के तहत उन पर निर्णय विश्व व्यापार संगठन द्धारा लिये जायेंगे। चाहे व्यापार संबद्ध बौद्धिक संपदा का प्रश्न हो या सेवा क्षेत्र के विभिन्न उप क्षेत्रो (बैंकिंग, बीमा, परिवहन, संचार आदि) का प्रश्न हो या कृषि क्षेत्र का प्रश्न हो या कोई अन्य आर्थिक गतिविधि हो। अब विश्व व्यापार संगठन का प्रभाव सब नीतियों पर दिखाई देगा।

निष्कर्ष– विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से कुछ हद तक स्वतंत्र व्यापार एवं वैश्वीकरण को बढ़ावा मिला, परन्तु विश्व व्यापार संगठन के अधिकांश समझौते धनी देशों के हितों के पोशक तथा अधिक विकसित देशों को और अधिक विकास मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

भारत के परिपेक्ष में उद्योगों, कृषि, विदेशी व्यापार ने कोई विशेष उपलब्धि होने के बजाए इनको गर्त में जाने से रोकने के लिये निरंतर संघर्ष कर रहा है। विश्व व्यापार संगठन ने विकसित देशों का अधिक प्रभाव होने से भारत को अधिक लाभ प्राप्त नहीं हो सका। भारत की सफलता की अपनी सीमा है व अवसरों का लाभ उठाने के लिये नियोजित प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.पी.डी.माहेश्वरी – अर्थशास्त्र– कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
2. डॉ.अनुपम गोयल– अर्थशास्त्र– शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर।
3. अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र – डॉ. रामरतन शर्मा, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
4. मुद्रा, बैकिंग, लोकपाल एवं अन्र्राष्ट्रीय व्यापार – डॉ. दीपक अग्रवाल, हिमालया पब्लिकेशन हाउस प्रा.लि. नई दिल्ली 2010

****

भारत के बैंकिंग क्षेत्र पर सुधारों का प्रभाव

डॉ. एन. एल. गुप्ता * ऊँकार सिंह रावत **

प्रस्तावना – जिस प्रकार मानव शरीर में रीढ़ हड्डी का महत्व है यही महत्व किसी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था में बैंकिंग क्षेत्र का है।

यह उनके विशेषाधिकार अर्थात मौद्रिक देनदारियों को वितरित करने की अद्वितीय क्षमता के कारण है। पिछले तीन दशकों से वैश्विक वित्तीय प्रणाली परिवर्तनों की वजह से वित्तीय मध्यस्थता की प्रक्रिया में बैंकिंग की भूमिका गम्भीर परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। एक उन्नतशील तथा जीवत बैंकिंग प्रणाली के लिये विभिन्न जोखिम मात्राओं वाले बाजारों में कार्यरत असंख्य मध्यस्थों के साथ एक सुविकसित वित्तीय संरचना की आवश्यकता है।

विश्व में प्रत्येक राष्ट्र का एक केन्द्रीय बैंक होता है। भारत का केन्द्रीय बैंक 'रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया' है। जिसके अंतर्गत भारत में कार्यरत विभिन्न प्रकार के बैंक कार्य करती है तथा रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा बनाये गये नियमों और विनियमों का पालन करने के लिये अन्य सभी प्रकार की बैंक अनिवार्य रूप से बाध्य है।

भारतीय वित्त बैंकिंग संस्थाओं में राष्ट्रीय बैंक निजी बैंक, विदेश बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक एवं भूमि विकास बैंक को सम्मिलित किया जाता है। एक सामान्य बचतकर्त्ता जो कि नियमित रूप से बचत कर उस पर सुरक्षित व सुनिश्चित प्रतिफल अर्जित करना चाहते हैं। वो बैंको द्वारा प्रस्तावित योजनाओं में धन विनियोजित करते है। भारत में प्रथम बैंक वर्ष 1786 में The General Bank of India व The Hindustan के रूप में स्थापित किये गये थे। भारत में सबसे पुराना बैंक भारतीय स्टेट बैंक है, जिसकी स्थापना 1806 में की गई थी, जिसे बैंक ऑफ कोलकाता के नाम से जाना जाता था। सन् 1935 में केन्द्रीय बैंक के रूप में भारतीय रिजर्व बैंक स्थापित किया गया। जिसका मुख्य कार्य भारत में बैंकिंग उद्योग का नियमन ,संवर्धन व नियंत्रण करना था। वर्ष 1969 व वर्ष 1980 में 20 बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया, जिससे बैंकों के लिये उसके ग्राहकों व निवेशकों के विश्वास में बढ़ोत्तरी हुई है।

इस अवधि में देश की बैंकिंग व्यवस्था में काफी सुधार हुआ। यद्यपि बैंको की संख्या कम थी, लेकिन शाखाओं की संख्या धीरे धीरे बढ रही थी। शाखाओं की संख्या बढ़ने के बावजूद भी बैंक की सुविधाओं का लाभ आर्थिक और सामाजिक रूप से कमजोर लोगों को नहीं मिल पा रहा था, बैंक अपने लाभों पर विशेष ध्यान दे रहे थे और इसकी सुविधाओं का लाभ केवल धनी वर्ग ही उठा रहा था। इस समस्या के समाधान और बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण स्थापित करने के उद्देश्य से सन् 1968 में बैंकिंग अधिनियम में संशोधन किया गया किन्तु इससे कोई सफलता नही मिल सकी, अत: सरकार ने 19 जुलाई 1969 को 14 बड़े वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीकरण कर दिया। कुछ वर्षो पश्चात 15 अप्रैल 1980 को 6 और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के परिणाम स्वरूप देश की बैंकिंग व्यवस्था में बहुत बदलाव आया। आर्थिक और सामाजिक रूप से कमजोर वर्ग के लोगों को भी बैंकिंग सेवा ओर सुविधाओं का लाभ मिलने लगा जो, बैंक पहले अपने लाभों पर ध्यान देते थे, वे अब जनहित पर ध्यान देकर सरकारी योजनाओं के अनुसार कार्य करने लगे सन् 1975 से वाणिज्यिक बैंकों द्वारा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको का प्रवर्तन प्रारम्भ हुआ इसी क्षेत्र के लोग अपने अनुभव के आधार पर अपने ही क्षेत्र के लोगों की अच्छी सेवा कर सके।

सरकार द्वारा बैंकिंग क्षेत्र में किये गये सुधारों के उपरांत देश में निजी एवं विदेशी बैंकों ने बैंकिंग क्षेत्र के परिदृश्य को परिवर्तित कर अधिक तकनीकीपूर्ण व विश्वसनीय बनाया है, साथ ही बैंकिंग संबंधी किसी भी शिकायत के निवारण हेतु एवं ग्राहकों व निवेशकों के संरक्षण हेतु वर्ष 2006 में बैंकिंग लोकपाल योजना का शुभारम्भ किया गया है।

सिफारिशों पर अनुवर्ती कार्यवाही – नरसिंहम समिति 1998 की सिफारिशों के अनुरूप हाल में बैंकिंग क्षेत्रों में विभिन्न सुधार किये गये हैं, जिनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जोखिम परिसम्पत्ति के साथ न्यूनतम पूँजी अनुपात कठोरता के साथ लागू करना, विवेकपूर्ण लेखा मापदण्ड कड़े बनाने परिसम्पत्ति ,दायित्व करना और बैंक तुलन पत्र में पारदर्शिता बढ़ाने के लिये 'लेखों पर टिप्पणी ' के अंतर्गत अतिरिक्त सूचना प्रदान करने के लिये बैंकों को निर्देश देना।

दुनियाभर में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक पुन:संरचना के कठिन दौर से गुजर रहे हैं और हम भी इस समायोजन से अछूते नहीं रह सकते। हमारे सामने गम्भीर प्रश्न है कि क्यों इस नई शताब्दी के आरम्भिक भाग में भारत के लिये एक बड़ा अंतर्राष्ट्रीय बैंकिंग तथा वित्तीय केन्द्र ब नाने का लक्ष्य यथार्थवादी है?

वर्तमान में भारत में कुल 88 अनुसूचित बैंक हैं,जिसमें 27 बैंक सार्वजनिक क्षेत्र के 31 बैंक निजी क्षेत्र के एवं 38 विदेशी बैंक सम्मिलित हैं। इन बैंकों की 53000 शाखाऐं देश भर में फैली हुई हैं, जिनके द्वारा भारतीय अर्थव्यवस्था में बचतों को विनियोग हेतु संग्रहित किया जाता है।

भारतीय बैंकिंग व्यवस्था को आधुनिकीकरण का परिवेष प्रदान करने में इंटरनेट ने महत्पवूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। प्राचीनकाल की वस्तु विनियम पद्धति से प्रारंभ होकर आज बैंकिंग व्यवस्था का आधुनिक स्वरूप ऐसे दौर में पहुंच गया है जहाँ इसकी अनुपलब्धता की कल्पना करना ही असंभव सा प्रतीत होता है। बैंको ने अपने द्वारा प्रदत्त सुविधाओं का विस्तार करते हुए इंटरनेट के माध्यम से चौबीसों घंटे एटीएम के रूप में रूपयों के लेनदेन की जो प्रणाली विकसित की है उसने बैंकिंग तंत्र को एक नई परिभाषा प्रदान कर दी है। इंटरनेट के माध्यम से संचालित होने वाले ये एटीएम आज मानवीय

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडवानी (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

गतिविधियों का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। एटीएम प्रौद्योगिकी को और भी अधिक आधुनिक बनाते हुए भारतीय स्टेट बैंक और पंजाब नेशनल बैंक ने नकद राशि जमा करने वाली मशीनें भी अपनी प्रमुख शाखाओं में लगाई हैं। भारत की बैंकिंग प्रणाली के स्वयं को घरेलू से वैश्विक स्तर पर ले जाना वर्तमान में दूर की बात हो सकती है लेकिन यदि हमारे पास इच्छाशक्ति और दृढ निश्चय है तो यह हमारी क्षमता से परे नहीं है। बैंकिंग उद्योग को अंतर्राष्ट्रीय सर्वोच्चता की ऊँचाइयों पर ले जाने के लिये नई प्रौद्योगिकी ऋण तथा जोखिम मुल्यांकन की बेहतर प्रक्रियाओं , कोष प्रबंधन, उत्पादन, विविधता, आंतरिक नियंत्रण बाहरी विनियम और मानव संसाधनों की आवश्यकता होगी। सौभाग्यवश लगभग इन सभी क्षेत्रों में हमें तुलनात्मक लाभ प्राप्त है। पेशेवर पूरे विश्व में प्रौद्योगिकी परिवर्तन और वित्तीय गतिविधियों के क्षेत्र में सबसे आगे हैं। नई शताब्दी में बैंकिंग के विकास के लिये इन संसाधनों का लाभ उठाने का समय है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. माधुर (2008) मुद्रा बैंकिंग एवं राजस्व, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
2. प्रो.अग्रवाल वी.पी. भारत में अधिकोषण,साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा 03 2010
3. एस.के मिश्र एवं बी.के पुरी- भारतीय अर्थव्यवस्था,हिमालय पब्लिशिंग हाउस मुम्बई 2010
4. सामान्य बैंकिंग- इंडियन इंस्टीटयूट ऑफ बैंकर्स, मुम्बई 1990
5. आर्थिक सर्वेक्षण- भारतीय योजना आयोग।
6. वार्षिक प्रतिवेदन- भारतीय रिजर्व बैंक सांख्यिकी मंत्रालय, भारत सरकार।

****

इन्दौर जिले में कृषि उत्पाद के विपणन से रोजगार (एक विश्लेषण)

डॉ. आभा सिंह * कविता खत्री **

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की अहम भूमिका है क्योंकि यह देश की जनसंख्या के लिए खाद्यान्न प्रदान करने के साथ-साथ औद्योगिक उत्पादन का आधार भी है भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का अभिर्भाव कृषि क्षेत्र से हुआ है जिसके कारण आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का कथन है- 'भारत गाँवों का देश है और कृषि भारत की आत्मा है।' आज भी प्रासंगिक है।

जितना महत्व अर्थव्यवस्था में कृषि का है। उतना ही महत्व कृषि क्षेत्र में विपणन का है। कृषि विपणन के अंतर्गत वे क्रियायें आती है, जिनके द्वारा कृषक अपनी फसलों का मूल्य प्राप्त करते है। फसलों की विपणन क्रियाओं में फसलों का एकत्रीकरण, श्रेणीयन, प्रमापीकरण, भण्डारण विक्रय आदि क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है। कृषि विपणन की सुद्दढ़ता पर उद्योगों को कच्चे माल की नियमित आपूर्ति निर्भर करती है। जिससे देश में औद्योगिक विकास की गति में वृद्धि होती है। सभी प्रकार के कृषि उत्पाद जैसे खाद्य फसल (चावल, गेहूँ, दाले, ज्वार, बाजरा, मक्का) नकद फसलें (कपास, पटसन, चाय, कॉफी) व्यापारिक फसलें, रेशे वाली फसलें बागवानी, शर्करा वाली, तिलहन, उद्दीपक फसलें आदि की देश के आर्थिक एवं औद्योगिक विकास में अपनी-अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। साथ ही इन सभी के उत्पादन एवं विपणन कार्य में लगे लोगों के लिये यह आजीविका एवं रोजगार का महत्वपूर्ण साधन है।

चूँकि बेरोजगारी हमारी अर्थव्यवस्था की एक बहुत बड़ी समस्या है और इस समस्या के निराकरण में कृषि उत्पादों का उत्पादन एवं उससे जुड़े विभिन्न क्षेत्र अपना महत्वपूर्ण योगदान देते है। अत: इस विषय पर शोध कार्य करके कृषि उत्पादों के विपणन से जुड़े विभिन्न रोजगार के अवसरों की जानकारी प्राप्त कर इस प्रणाली में सुधार के अवसरों की खोज करने का प्रयास किया गया है तथा विपणन प्रणाली में आधुनिकता एवं नये सुधारों के माध्यम से विकास की संभावनाओं की जानकारी प्राप्त की गई है।

विशेषणात्मक अध्ययन – भारतीय खाद्य एवं कृषि विभाग के अनुसार इन सभी कृषि विपणन संबंधी क्रियाओं से देश की लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त हुआ है। कृषि जो आज से 15-20 वर्षों पूर्व तक अपने पारंपरिक तरीकों से की जाती थी। जिसके कारण कृषि को अपेक्षाकृत कम उत्पादक, अनार्थिक एवं अलाभप्रद कार्य माना जाता था। किसानों की स्थिती को दयनीय माना जाता था एवं इसके विपणन कार्यों में भी लोगों की प्राय: कम रूचि थी क्योंकि उस समय विपणन कार्य संबंधी सुविधाएँ जैसे-परिवहन, सड़क निर्माण, सिंचाई सुविधा, वित्त आपूर्ति, कृषि बीमा, आधुनिक यंत्र एवं उत्पादन तकनीक, विपणन समाचार आदि का अभाव था। जिसके कारणवश किसान पर्याप्त मात्रा में उपज का उत्पादन भी नहीं कर पाता था तथा उत्पादित उपज का उचित मूल्य भी प्राप्त नहीं कर पाता था। किन्तु विगत वर्षो में उक्त सभी विपणन संबंधी सुविधाओं का सरकार द्वारा पर्याप्त मात्रा में प्रचार प्रसार एवं विस्तार किया गया है एवं कृषि विपणन के विकास में सरकार में अपनी अहम भूमिका निभाई है। जिसके परिणाम स्वरूप न केवल कृषि उत्पादकता बढ़ी है, बल्कि कृषकों का जीवनस्तर भी ऊँचा हुआ है। वे अपने आश्रित परिवारजनों की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति सहजता से कर लेते हैं तथा समाज में उनकी प्रतिष्ठा भी बढ़ी है। कुछ वर्षो पूर्व जो कृषक मौसमी बेरोजगारी से ग्रस्त थे। उस स्थिति में सुधार हुआ है साथ ही उत्पादन बढ़ने से कृषि विपणन संबंधी कार्यो में भी तेजी आई है। जिसके परिणाम स्वरूप कृषि उपजों के भण्डारण, श्रेणीयन, प्रमापीकरण, परिवहन एवं थोक तथा फुटकर विक्रय कार्य में लगे लोगों के लिए रोजगार के अवसर बढ़े है। विभिन्न स्त्रोतों एवं सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी के अनुसार इन्दौर जिले में भी कृषि उत्पाद विपणन रोजगार के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इन्दौर जिले की देपालपुर, सांवेर तथा महू तहसील ऐसे क्षेत्र है। जहाँ वर्ष 2012-13 में तहसीलों से जुडे ग़ाँवों की क्रमश: 69.90 प्रतिशत, 72.59 प्रतिशत तथा 43.09 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्यो में लगी हुई है। चूंकी उक्त तहसीलों में अधिकांशतया ग्रामीण क्षेत्र शामिल है। अत: यहाँ कृषि विपणन लोगों के जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन है। इन्दौर तहसील में अधिकांश क्षेत्र शहरी क्षेत्र में सम्मिलित है तथा औद्योगिकरण से प्रभावित है। इसीलिए इन्दौर शहर में कृषि उत्पाद विपणन में प्रत्यक्ष रूप से कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत अन्य तहसीलों की तुलना में कम हैं किन्तु यदि हम कृषि उपज से जुड़े अप्रत्यक्ष कार्यों की बात करें तो हमें ज्ञात होगा कि जितने लोग कृषि विपणन से प्रत्यक्ष रोजगार प्राप्त करते है। उससे कई गुना अधिक लोग कृषि उत्पाद विपणन से अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए है। इन्दौर जिले में कृषि उत्पादों से संबंधित कच्चे माल पर आधारित कई कारखाने एवं उद्योग विकसित है। जिनमें लाखों श्रमिक, मजदूर एवं कर्मचारियों को रोजगार प्राप्त है जैसे - चीनी मिल, टेक्सटाईल मिल, तेल मिल, दाल मिल, बाँस के बने सामान से संबंधित उद्योग, लाख से बने सामान के उद्योग, झाडु उद्योग आदि।

उपसंहार –'इन्दौर शहर में कृषि उत्पाद विपणन में रोजगार के अवसरों का विश्लेषणात्मक अध्ययन' करने के पश्चात् अंत में यह कहा जा सकता है कि इन्दौर जिले की अर्थव्यवस्था में कृषि उद्योग एवं व्यापार, वाणिज्य का

* प्राध्यापक (वाणिज्य) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल, (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, (म.प्र.) भारत

मिलाजुला महत्व है। विशेषतौर पर यदि हम शहरी क्षेत्र को देखें तो वहां व्यापार एवं उद्योगों का प्रसार अधिक मात्रा में है, जबकि जिले के ग्रामीण क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। यह एक सर्वमान्य सत्य है कि न केवल इन्दौर जिले के ग्रामीण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था बल्कि हमारे सम्पूर्ण देश की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। इन्दौर शहर में कृषि उत्पाद विपणन के क्षेत्र में रोजगार के अवसर बड़े स्तर पर हैं किन्तु विपणन व्यवस्था में कतिपय समस्याओं एवं कमियों की वजह से उनका उचित विदोहन नहीं हो पा रहा है इसके लिये आवश्यक है कि सरकार द्वारा आवश्यक कदम उठाये जायें, ग्रामीणों में कृषि विपणन के प्रति जनजागृति अभियान चलाया जाये क्योंकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कथन 'कृषक की एक आंख हल पर तथा दूसरी बाजार पर' नहीं बल्कि 'कृषक की दोनों आंखें बाजार पर तथा दोनों हाथ हल पर' होना चाहिए अधिक उचित प्रतीत होता है। इसीलिए राज्य शासन को चाहिए कि कृषि उत्पाद विपणन की व्यवस्था को और विस्तारित करें। यद्यपि सरकार द्वारा इस क्षेत्र के विकास हेतु कई विकासात्मक संस्थाओं की स्थापना की गई है किन्तु उनके प्रयास अभी भी पर्याप्त नहीं है। अतः इन व्यवस्थाओं को और विकसित किया जाना चाहिए तभी..

'कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में कृषि उत्पाद विपणनकर्ता इस क्षेत्र में रोजगार के अवसरों को सार्थक बना पायेंगे तथा कृषि क्षेत्र में व्याप्त कतिपय अर्ध एवं मौसमी बेरोजगारी को दूर कर आर्थिक दृढ़ता की ओर अग्रसर हो सकेंगे।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारत की आर्थिक समस्याऐं, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना, डॉ. सिंह. सी.डी.
2. कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य पब्लिकेशन, डॉ. मिश्र जयप्रकाश
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका
4. www.agricultureindiawikipedia.com
5. www.mpmandiboard.com

****

Food Security Schemes In India

Aneeta Sen * Dr. Asha Sakhi Gupta **

Introduction - India is the seventh largest country by area and the second most populous nation in the world with 1.32 billion. India represents 17.85 percent of the world population. Having a big size of population India has been facing so many problems since many decades. Poverty, starvation and food insecurity are the major challenges in front of India. As per the survey conducted in 2011-12, the percentage of persons below poverty line in India for the year 2011-12 has been estimated as 25.7 percent in rural area, 13.7 percent in urban area and 21.9 percent for the country as a whole.

Food security is one of the major challenges confronting the India even world today. It is now well recognised that the availability of food grains is not a sufficient condition to ensure food security to the poor. It is also necessary that the poor have sufficient means to purchase food. The capacity of the poor to purchase food can be ensured in two ways – by raising the incomes or supplying food grains at subsidised prices.

Indian government started so many programs to remove poverty such as employment generation programs, food security programs etc. India has government program named Public Distribution System for proper distribution of food grains, nutrition programs like Mid-Day Meal, Antyodaya Ann Yojna to improve food and nutrition security.To increase access to food and nutrition government has been running NREGS and self-employment programmes. Social protection programmes in India have also helped in improving incomes especially for the poor. For the availability of food government has been running many programmes related to increase the agricultural productivity.The Public Distribution System is one of the best system run by government to develop the food security and remove the poverty.

Objectives Of The Study :

1. To know the Public Distribution System, revamped Public Distribution System and targated Public Distribution System.
2. To know the other food security schemes of India.

Research Methodology Of The Study - This research paper is in theoretical form and the information have been collected by the secondary sources such as existing research paper, books, publications and internet.

Public Distribution System - The Public Distribution System (PDS) in India is an important public intervention for enhancing food security. The PDS provides subsidised food grains (and other essential commodities) through a network of 'fair price shops'. Essential commodities like rice, wheat, sugar, kerosene and the like are supplied to the people under the PDS at reasonable prices. PDS is a boon to the people living below the poverty line. PDS is the primary social welfare and antipoverty programme of the Government of India. Public Distribution System (PDS) is a poverty alleviation programme and contributes towards the social welfare of the people. PDS is a very important instrument in the hands of state government against food insecurity, while Central Government & State Governments have been actively involved in steering the operations for the success of the PDS. This huge network can play a more meaningful role only if it ensures the availability of food to the poor households.

Revamped Public Distribution System - The Revamped Public Distribution System (RPDS) was launched in June, 1992 with a view to strengthen and streamline the PDS as well as to improve its reach in the far-flung, hilly, remote and inaccessible areas where a substantial section of the poor live. It covered 1775 blocks wherein area specific programmes such as the Drought Prone Area Programme (DPAP), Integrated Tribal Development Projects (ITDP), Desert Development Programme (DDP) and certain Designated Hill Areas (DHA) identified in consultation with State Governments for special focus, with respect to improvement of the PDS infrastructure. The RPDS included area approach for ensuring effective reach of the PDS commodities, their delivery by State Governments at the doorstep of FPSs in the identified areas, additional ration cards to the left out families, infrastructure requirements like additional Fair Price Shops, storage capacity, etc. and additional commodities such as tea, salt, pulses, soap, etc. for distribution through PDS outlets.

Targated Public Distribution System - Public Distribution System in India was started with a goal of price stabilisation

* Research Scholar (Economics) D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA
** Professor (Economics) S.B.N. Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) INDIA

in the grain market. PDS had been ensuring the supply of food grain on an affordable price to the people. In 1997 the system of PDS was changed to a new system called Targeted Public Distribution System (TPDS). The basic objective of TPDS is to provide food grains to the poor families on subsidised prices. The TPDS has a hidden objective of income redistribution by providing food cheaper to the poor than to the non-poor. This means that effective and transparent functioning of TPDS is an important tool of poverty eradication through increased calorie intake among the poorer families. The reduction in poverty through increased calorie intake depends on two things, first is the timely availability of subsidised food grain through PDS and second is sustained purchasing capacity of poorer household. The second condition can be met if the poorer families have enough cash with them to buy subsidies food grains from PDS shop. The effective functioning of TPDS is important in States where major proportion of population lives in rural areas and people mainly depend on primary sector of economy for their livelihood. The effectiveness of TPDS is also important in States where agriculture depends on rains and the secondary and tertiary sectors are underdeveloped or in initial stage.

Other Food Schemes - Food security is one of the important instruments to provide food to all. " Food security exists when all people, at all times, have physical, social and economic access to sufficient safe and nutritious food that meets their dietary needs and food preferences for an active life." Government of India launched many other food schemes that is Antyodaya Anna Yojna, Annapoorna Scheme, Mid-Day Meal, Integrated Child Development Scheme, Sampoorna Grameen Rojgar Yojna, Family Benefit Scheme, Maternity Benefit Scheme, Old Age Pension Scheme and Indian National Food Security Act, 2013. These schemes play an important role in providing food security to poor people in India.

Antyodaya Anna Yojna - A national sample survey estimated that 5% of the total population in the country sleeps without two square meals a day. This 5% population can be called hungry. The government of India launched Antyodaya Ann Yojna (AAY) TO ensure food security to poorest of the poor section in rural and urban areas through PDS. This yojna has been started from 25 december 2000. At the time of introduction of AAY Scheme each beneficiary was given 25 kg per month at the rate of Rs.3/kg for rice and Rs.2/kg for wheat. But later it has been increased to 35 kg. per month per card. They are issued yellow card. At present if the number of member of the family under AAY is more than 6, they come in priority holder house hold and the get 5kg per person per month like BPL family.

Annapoorna Scheme - The Annapoorna scheme has been launched with effect from 1st April 2000. This is 100 percent centrally sponsored scheme, under this scheme 10kg. of food grain per month are provided free of cost to the old destitute people of 65 years and above age. The main eligibility criteria for the benefit of this scheme is that the person should not be in receipt of person under the National Old Age Pension Scheme. They are issued special green ration cards from 2002-03. It has been transferred to state plan along with the National Social Assistance Program comprising the National Old Age Pension Scheme and The National Family Benefit Scheme.

Mid-Day Meal Scheme - Mid-Day Meal Scheme was launched in 1995 to nutritional support to primary education. It is a national wide central scheme intended to improve the enrollment and regular attendance and reduce dropout in school. It is also intended to improve the nutritional status of primary school children. Mid-Day Meal is the largest school nutritional program in the world. In 2001 Mid-Day Meal became a cooked Mid-Day Meal Scheme under which every child in every Government and Government allied primary school was to be served a prepared Mid-Day Meal with a minimum content of 300 calories of energy and 8-12 gram protein per day for a minimum of 200 days.

Integrated Child Development Scheme - Government of India launched Integrated Child Development Scheme in 1975. The ICDS comes under the purview of the Ministry of Women and Child Development. The scheme aims at providing an integrated package of services. These services include supplementary nutrition, immunization, medical check-ups, recommendation services, pre-school non formal education and nutrition and health awareness. The purpose of providing these services as a package is because each of these issues is dependent on the other. The ICDS national development program is one of the largest in the world. It reaches more than 34 million children aged 0-6 years and 7 million pregnant and lactating women.

Sampoona Grameen Rojgar Yojna - The Sampoorna Grameen Rojgar Yojna has been launched on 25 september 2001 by merging the on-going scheme of Employment Assurance Scheme and Jawahar Gram Samriddhi Yojna to provide wage employment in the rural areas. This is centrally sponsored scheme and it is called composite Rural Employment Scheme because under it wages will be paid to those offered employment both in case and food grains. Since feb. 2006 this scheme has been merged with NREGS. This scheme aims to provide additional wage employment and food security alongside creation of durable community assets in rural areas.

Indian National Food Security Act, 2013 - Indian National Food Security Act, 2013 passed in parliament on 10th September, 2013 with the objective to provide for food and nutritional security in human life cycle approach, by ensuring access to adequate food at affordable prices to live a life with dignity. The act provides for coverage of upto 75% of the rural population and upto 50% of the urban population for receiving subsidized foodgrains under TPDS, thus covering about two-thirds of the population. The eligible persons wil be entitled to receive 5 kgs of foodgrains per person per month at subsidized prices of 3/2/1 per kg for rice/wheat/ coarse grains. The existing AAY household, will continue to receive 35 kgs of foodgrains per household per month.

The act also has a special focus on the nutritional support to women and children. Besides meal to pregnant women and lactating mothers during pregnancy and six months after the child birth, such women will also be entitled to receive maternity benefit of not less than Rs. 6000. Children upto 14 years of age will be entitled to receive to nutritious meals as per the prescribed nutritional standard.

Conclusion - After the study of so many food security plan of Government of India we can say that the govt . of India has been trying to ensure food security to the poor and poorest section of the country. But on the basis of review of literature and observation it is obvious to say that there is some problems, the first one is in implementation of the policies that the policies can not be reached to the needy person. The second one is that the lack of awareness of the people towards the policies. Besides these problems government is trying its best.

References:-

1. K. Devindrappa & R. Gurubasappa. T. (may 2014), "Role Of Government Schemes In Ensuring Food Security In India", Golden Research Thoughts, vol-3, issue-11, Impact Factor: 2.2052(UIF)
2. Das dinesh, (feb,2013) "Food Security programme in India: Who Sows! Who Reaps?", Global Reseach AAnalysis, vol.(2), Issue (2), ISSN NO-2277-8160
3. Mayilvaganan S. & Varadarajan B., "Antyodaya Ann Yojna Schem Is To Ensure Food Security To The Poorest Of The Poor",(2012), Zenith International Journal of Business Economics & Management Research, Vol. No. 2, Issue 2, ISSN 2249 8826.
4. Misra K.S. & Puri K.V.(2010), "Indian Economy", 28th Revised Edition.
5. Datt Gourav & Mahajan Ashwani, "Indian Economy", 68th Revised Edition, ISO 9001-2008.

Websites:-

1. http://nenithreseach.org.in/
2. www.Statisticstime.com
3. www.mahafood.gov.in
4. www.oldagesolution.org
5. www.archive.india.gov.in

****

भारतीय परिवेश में महिलाओं की दशा एवं दिशा

सपना पटेल *

प्रस्तावना – महिलाओं तथा बालिकाओं के प्रति हमारे रुख में बदलाव की ज़रूरत है, पिछले दो दशकों के दौरान महिलाओं को अधिकार सपन्न बनाने के लिये महत्वपूर्ण उपाय किए गए हैं, फिर भी और अधिक उपायों की ज़रूरत है। महिला अधिकारिता के स्तभों में साक्षरता, शिक्षा, बेहतर स्वास्थ्य सुविधां तथा मां और बच्चों के लिये पौष्टिकता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा स्वरोज़गार के सुअवसर सहित वित्तीय सुरक्षा शामिल हैं ताकि वे आत्मनिभर्र बन सकें। ये सारे प्रयास महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाने, महिलाओं को गरिमापूर्ण जीवन जीने का सुअवसर प्रदान करने पर ही पूरे हो सकेगें। अक्सर यह देखा जाता है कि महिलाओं को कम मज़दूरी वाले काम दिए जाते हैं और विकास के जैसे अवसर पुरूषों को मिलते हैं उन्हें नहीं मिल पाते। जब कभी भारतीय महिलाओं को अनुकूल माहौल और सही सुविधाएं मिली हैं, वे सफल हुई हैं और इंजीनियर, डॉक्टर, प्रशासक, उद्योगपति, पुलिस बल तथा सशस्त्र बल के सदस्य, यहां तक कि आतंरिक्ष यात्री बन गई हैं। महिलाओं की शिक्षा तथा अधिकारिता विकास एवं ग़रीबी उन्मूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। राज्य सरकारों को ऐसी योजनाएं लागू करनी चाहिए, जो बालिका शिक्षा को प्रोत्साहित करे। इससे स्कूल की पढ़ाई बीच में ही छोड़ने वाली बालिकाओं की संख्या में भी कमी आएगी। घरेलू हिंसा तथा सामाजिक भेदभाव कम करने के लिये एक समुचित सामाजिक एवं कानूनी माहौल बनाने की ज़रूरत है, जिसके लिये समाज के सभी वर्गो, सामाजिक सगंठनों मीडिया तथा सरकार को मिलकर प्रयास करना चाहिए। हमारी नीतियां तथा कार्यक्रम भी ऐसे होने चाहिए, जो महिलाओं की ज़रूरतों तथा हितों को ध्यान में रखकर तैयार हों। महिलाओं को स्वसहायता समूहों द्वारा ऋण सुविधा देकर अपना कारोबार शुरू करने के लिये मदद दी जानी चाहिए। ये उपाय महिलाओं को आर्थिक स्वाबलंबन प्राप्त करने में मदद पहुंचाएंगे तथा उनकी अधिकारिता में योगदान करेंगे।[1] महिलाओं को काम करने के लिए सुअवसर उपलब्धता तथा ऐसा माहौल बनाऐं जिसमें महिलाएं सम्मान एवं गरिमा के साथ रह सकें और राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके। एक राष्ट्र के रूप में हमारी पूरी क्षमता का उपयोग तभी हो सकेगा जब महिलाएं, जो हमारी आबादी का क़रीब आधा हिस्सा हैं, अपनी पूरी क्षमता का उपयोग कर सके। जब तक ऐसा नहीं होता है, प्रतिभा का आधा हिस्सा, प्रगति का आधा भाग बर्बाद होता रहेगा। एक राष्ट्र के रूप में ऊर्जा व प्रतिभा का आधा हिस्सा व्यर्थ नहीं कर सकते। जिस तरह एक रथ के आगे बढ़ने के लिये उसके दोनों पहियों के आगे चलने की ज़रूरत होती है उसी तरह पुरुषों और महिलाओं को सयंकुत रूप से मज़बूत होने और आगे बढ़ने की ज़रूरत होती है।

आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका द्वितीय मध्ययुद्धोत्तर काल से काफी ज्वलन्त व विवादस्पद विषय रहा है। यही वह समय था, जब स्त्री श्रमिकों की संख्या में वृद्धि तथा संरचनात्मक रूप से 'सेवा क्षेत्र नौकरियों' के पक्ष में परिवर्तन आरम्भ हुआ। चूँकि अब तक तीसरी दुनियाँ के देशों में स्त्रियों की स्थिति काफी हद तक औपनिवेशक उत्तराधिकार से नियंत्रित रही हैं तथा 65 प्रतिशत से भी अधिक कामकाजी महिलाएँ कृषि में संलग्न हैं और इनके कार्य के घण्टे भी असामान्य रूप से अधिक हैं, ऐसी स्थिति में उक्त विचारार्थ विषय की सघन उपयोगिता दिखाई देती है, विशेषकर उस स्थिति में जब हम यह देखते हैं कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया के दौरान महिलाओं का निम्न जीवन स्तर और सीमित विकास प्रक्रिया के कारण अधिक खराब हो गया है।[2]

यद्यपि 1981 के द्वितीय फैक्ट्री कानून से अब तक स्त्रियों के हितों की रक्षा के लिये कई कानून बनाये गये लेकिन वे प्रभावशाली नहीं रहे।[3]

इस सम्बन्ध में तीन बातें उल्लेखनीय हैं–

1. विकास प्रक्रिया में महिलाओं को किस प्रकार से स्वीकृत किया जा सकता है?
2. गैर परम्परागत क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति को कैसे सुधारा जा सकता है?
3. हमें औद्योगीकरण के वर्तमान स्वरूप पर गंभीरता से विचार करना होगा। क्योंकि यह गरीब मजदूर महिलाओं को विभेदात्मक बाजारों में काम करवाने के अनुकूल नहीं है?

महिला एवं बाल विकास की एक ऐसी व्यूह रचना पर है जिसमें स्त्रियाँ पर्याप्त एवं प्रभावशाली रूप से एकीकृत की जा सकें और आर्थिक विकास के लाभों में अपना उचित अंश पा सके। मानव विकास का लक्ष्य महिला विकास के बिना संभव नहीं है क्योंकि देश की जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत महिलाओं का है।[4] इसके बावजूद कन्या भ्रूण हत्या की सामाजिक साजिश ने महिला अस्तित्व पर संकट का ग्रहण लगा दिया। स्वतन्त्रता पूर्व व पश्चात् प्रति 1000 पुरूषों की तुलना में महिला की संख्या को तालिका क्रमांक 1 में व्यक्त किया गया है–

तालिका क्रमांक –1 – लिंग अनुपात 1901 से 2011

वर्ष	लिंग अनुपात			
	कुल	ग्रामीण	शहरी	अन्तर
1890–1901	972	979	910	–69
1901–11	964	975	872	–103
1911–21	955	970	846	–124
1921–31	950	966	838	–128
1931–41	945	965	831	–134
1941–51	946	965	860	–105
1951–61	941	963	845	–118
1961–71	930	949	858	–91
1971–81	934	951	879	–72
1981–91	926	938	894	–44
1991–2001	933	946	900	–46
2001–2011	940	947	926	–21

Source: Office of the Registrar General, India

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अध्ययन शाला विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

चित्र क्रमांक - 1.1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 1 से स्पष्ट है कि वर्ष 1901-1911 के दशक के मध्य लिंग अनुपात प्रति 1000 पुरूषों की तुलना में महिलाओं की कुल संख्या 972, ग्रामीण क्षेत्रों में 979 तथा शहरी क्षेत्रों में 910 थी। वर्ष 1911-1991 के दशक के मध्य लिंग अनुपात प्रति 1000 पुरूषों की तुलना में महिलाओं की कुल संख्या ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में लगातार कमी की प्रवृत्ति दर्ज की गई किन्तु शहरी क्षेत्रों में बडे अन्तर के साथ महिलाओं की संख्या में कमी दर्ज की गई है। वर्ष 2001 तथा 2011 तक शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की संख्या में वृद्धि हुई है।

तालिका क्रमांक - 1.2

स्वतन्त्रता से पुर्व एवं पश्चात् जन्म पर जीवित रहने की प्रत्याशित दर

वर्ष	जन्मदर			
	कुल	पुरूष	महिला	कमी-वृद्धि
1901-11	22.9	22.6	23.3	0.7
1911-21	20.1	19.4	20.9	1.5
1921-31	26.8	26.9	26.6	-0.3
1931-41	31.8	32.1	31.4	-0.7
1941-51	32.1	32.4	31.7	-0.7
1951-61	41.9	40.6	41.3	0.7
1961-71	46.4	44.7	45.6	0.9
1971-81	51.0	51.5	50.5	-1
1981-91	56.7	56.5	56.9	0.4
1991-00	61.4	60.8	62.5	1.7
2001-11	63.4	62.6	64.2	1.6

Source : Department of Family Welfare, Ministry of Health & Family Welfare

चित्र क्रमांक - 1.2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 1.2 से स्पष्ट है कि वर्ष 1901-1911 व 1911-21 के दशक के मध्य महिला जन्म दर पुरूषों से क्रमश: 0.7 प्रतिशत तथा 1.5 प्रतिशत अधिक थी। किन्तु वर्ष 1921-31 से 1941-51 तक क्रमश: 0.3 प्रतिशत, 0.7 प्रतिशत तथा 0.7 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई। स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता के पूर्व महिला जन्मदर लगातार तीन दशकों तक गिरावट दर्ज है वहीं स्वतन्त्रता पश्चात् वर्ष 1951-61 से 1961-71 तक क्रमश: 0.7 प्रतिशत तथा 0.9 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। वर्ष 1971-81 में 1 प्रतिशत की कमी तथा वर्ष 1991-2000 तथा 2001-2011 के मध्य 1.7 प्रतिशत तथा 1.6 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई।

तालिका क्रमांक - 1.3

मृत्युदर प्रति 1000 जनसंख्या पर वर्ष

मृत्युदर प्रति 1000 जनसंख्या पर

	ग्रामीण	शहरी	कुल
1961-71	138	82	129
1971-81	119	62	110
1981-91	87	53	80
1991-2001	72	42	66
2001-2011	49	38	43

चित्र क्रमांक - 1.3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 1.3 से स्पष्ट है कि वर्ष 1961-71 में प्रति 1000 जनसंख्या पर ग्रामीण क्षेत्रों में 138 तथा शहरी क्षेत्रों में 82 मौतें होती थी। वर्ष 1971-81 में प्रति 1000 जनसंख्या पर ग्रामीण क्षेत्रों में 119 तथा शहरी क्षेत्रों में 62 मौतें दर्ज की गई। वर्ष 2001-11 के मध्य में प्रति 1000 जनसंख्या पर ग्रामीण क्षेत्रों में 49 तथा शहरी क्षेत्रों में 38 मौतें दर्ज की गई। मृत्यु दर में कमी का मुख्य कारण स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि के साथ शिक्षा में वृद्धि के कारण

इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में देश में 22 करोड़ से अधि लोग कुपोषण के शिकार थे। ग्रामीण क्षेत्रों मे पांच वर्ष से कम उम्र के लगभग आधे बच्चों का पौष्टिक भोजन न मिलने के कारण समुचित विकास नहीं हो रहा था।[1] महिलाऐं विशेष रूप से गर्भवती महिलाऐं और जच्चा-बच्चा की स्थिति ख़राब थी।[6]

देश में ग़रीबी कितनी है, यह हमेशा विवाद का विषय रहा है। प्रारंभ में ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों का आकलन भोजन में कैलोरी की मात्रा से किया जाता था। 1973-74 के मूल्यों पर भोजन में ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी और शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी से कम प्राप्त करने वाले लोग ग़रीबी की रेखा से नीचे समझे जाते थे।[2] इसे धयान में रखकर आय का अनुमान लगाया जाता था।[7]

देश में महिलाओं के पोषण की स्थिति जानने के लिए लगभग डेढ़ दशक पहले एक और अध्ययन हुआ था। कर्नाटक के ग्रामीण इलाके में देखा गया कि पुरुष अपना 31 प्रतिशत काम निपटाने के लिए 2,473 कैलोरी प्रतिदिन खर्च करते हैं, जबकि महिलाएं इससे ज्यादा 53 प्रतिशत कार्य करने में पुरुष की तुलना में कम कैलारी ख़र्च करती हैं। एक अध्ययन बताता है कि भारत के ग्रामीण इलाक़ों में पुरुषों को प्रतिदिन 1,700 कैलोरी ऊर्जा की तुलना में महिलाओं को प्रतिदिन 1,400 कैलोरी ही मिल पाती है जबकि इन ग्रामीण महिलाओं पर पुरुष की तुलना में काम का बोझ ज़्यादा होता है।[2]

शिशु और प्रसूति कल्याण केन्द्रों व स्वास्थ्य केन्द्रों में जच्चा-बच्चा और अन्य बच्चों को पौष्टिक तत्व देने की व्यवस्था की गई है। यद्यपि केन्द्र सरकार द्वारा विभिन्न योजनाऐं महिलाओं हेतु संचालित की गई जिनमें राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना (NMBS) 1995, किशोरी शक्ति योजना (KSY) 2000, जननी सुरक्षा योजना (JSY) 2003, इन्दिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना (IGMSY) 2010, राजीव गांधी युवा बालिका रोजगार योजना (Sabla) 2010, जननी-शिशु सुरक्षा कार्यक्रम (JSSK) 2011 तथापि, आदिवासी क्षेत्रों, शहरी झोपड़पट्टियों और कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी स्वास्थ्य स्थिति संतोषजनक नहीं है।[3] ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र महज प्राथमिक चिकित्सा तथा पूरक सेवाएं (जैसे टीकाकरण, परिवार नियोजन आदि) ही मुहैया कराते हैं।

देश की स्वास्थ्य प्रणाली में महिलाओं की सेहत संबंधी समस्याओं को मातृ स्वास्थ्य' के अंतर्गत रखा गया है। 15 से 40 वर्ष की औरतों को जैविक रूप से कमज़ोर माना जाता है, क्योंकि उन्हें गर्भावस्था का अतिरिक्त जोख़िम भी बना रहता है। शेष आबादी को ऐसा कोई खतरा नहीं रहता। यह जोख़िम भारत में और भी ज़्यादा माना जाता है क्योंकि भारतीय औरतों में जच्चा मृत्युदर विकसित देशों से कहीं ज़्यादा है।[4] कुछ क्षेत्रों में भूमिहीन किसानों, दलितों और आदिवासियों की स्वास्थ्य स्थिति दयनीय है। उन्हें लाभप्रद रोजगार नहीं मिलता, समय पर मजदूरी नहीं मिलती और पर्याप्त और पौष्टिक भोजन नहीं मिलता।[5] इन परिवारों के प्रतिव्यक्ति भोजन में 1600-1700 कैलोरी मात्र मिलती है, जो निर्धारित मानक 2400 से काफी कम है। उनके परिवारों में औरतों और बच्चों की स्थिति तो और भी खराब है।[6] इसी कारण वे

तरह-तरह की बीमारियों के शिकार होते हैं और अकाल मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

तालिका क्रमांक - 1.4

स्वास्थ्य सुविधा प्रति 100000 जनसंख्या पर

वर्ष	स्वास्थ्य सुविधा			
	डॉक्टर	नर्स	सहायक नर्स/दाई	महिला स्वास्थ्य विशेषज्ञ
1991	47	40	18	2.03
1995	51	63	31	2.90
2000	55	78	42	3.60
2001	56	78	42	3.49
2003	59	80	46	3.72
2004	59	81	47	3.81
2005	60	83	48	4.62
2008	64	144	49	4.5
2009	65	92	50	4.5
2010	69	NA	NA	NA

Source: CBHI, DGHS, Ministry of Health and Family Welfare.

चित्र क्रमांक - 1.4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 1.4 से स्पष्ट है कि वर्ष 1991 से वर्ष 2010 के मध्य प्रति 100,000 जनसंख्या पर डॉक्टरों की उपलब्धता में 47 से बढ़कर 69 दर्ज है। वहीं नर्स की उपलब्धता वर्ष 1991 से वर्ष 2009 तक 40 से बढ़कर 92 दर्ज है। दाईयों की संख्या वर्ष 1991 से वर्ष 2009 तक 18 से बढ़कर 50 दर्ज है। महिला विशेषज्ञों की संख्या वर्ष 1991 से वर्ष 2009 तक 2.03 से बढ़कर 4.5 दर्ज है। ग्रामीण महिलाओं में अनेक प्रकार की स्वास्थ्य समस्याएं व्याप्त हैं तथा उन्हें स्वास्थ्य पक्षों के बारे में शिक्षित करने की आवश्यकता महसूस नहीं की गई थी। इनसे काफी बड़ी संख्या में महिलाएं ष्वासनली रोग, जुकाम, बदहजमी, कब्ज अतिसार, नेत्ररोग, रूसी, दन्त-शर्करा, चर्मरोगों, स्त्री रोगों, तथा वातरोग, गठिया आदि जैसे अन्य रोगों से पीड़ित पाई गई। महिलाओं की स्वास्थ्य-समस्याओं के निवारण की दिशा में गांव के नजदीक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं पाया गया। अधिकांश महिलाओं की धारणा सरकारी अस्पताल द्वारा दिया जाने वाला उपचार प्रभावकारी नहीं होता है तथा उपचार सुविधाओं को उपयोग में लाने के बारे में अनेक कठिनाईयां का सामना करना पडता है।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Das Gupta, Sukti, **"Women organization for socio-economic, security'** The Indian Genral of Labour Economics, Vo. 46 No.1 Jan-March, (2003)
2. मिश्र, इंदिरा, **'गरीब महिलाएँ उधार एवं रोजगार'** किताब प्रकाशन नई दिल्ली, (2002).
3. जगधारी, अंजू में **'मध्यप्रदेश शासन द्वारा महिला कल्याण कार्यक्रमों का क्रियान्वयन'** अप्रकाशित (2006)
4. पंवार, मीनाक्षी **'नारी उत्पीड़न और कानून'** निकुंज प्रकाशन बड़वानी (1994).
5. लारेन्स, जास्मिन, **'महिला श्रमिक, सामाजिक स्थिति एवं समस्याएँ'**, आदित्य पब्लिशर्स, बीना, (1999).
6. Agrawal. Bina. Rural Women, **"Poverty and Natural Resources: substance, sustainability and struggle for change',** economic and political weekly, vol. XXIN. (1989).
7. **गुप्ता, रेखा, 'काम की अस्वास्थ्यकर दशाएँ एवं असंगठित कामगार'** डॉ. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर
8. **मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण 1999-2000, 2011**, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय भोपाल मध्यप्रदेश।
9. भारत की जनगणना 2011
10. **मध्यप्रदेश के प्रमुख आंकड़े 2001**, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, मध्यप्रदेश
11. wwww.madhyapradeshstatics2011

चित्र क्रमांक - 1.1

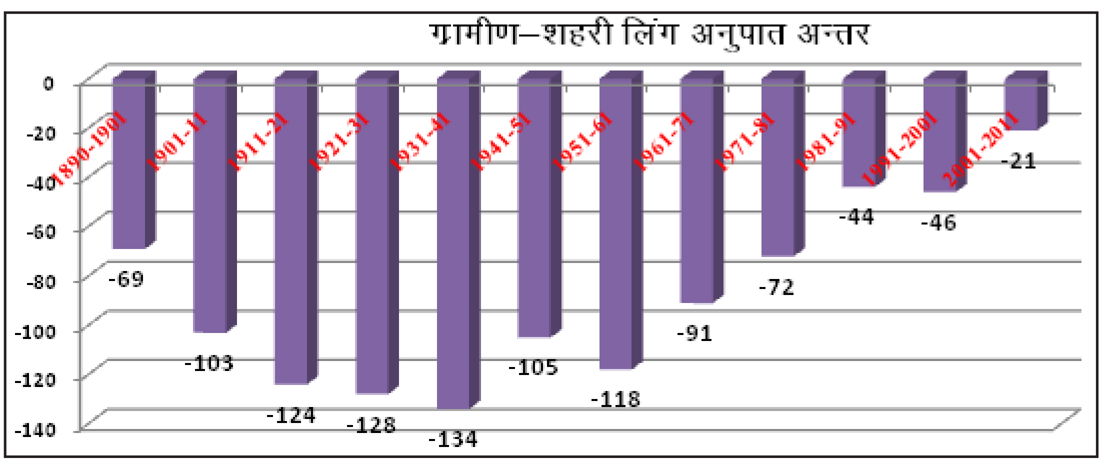

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

चित्र क्रमांक – 1.2

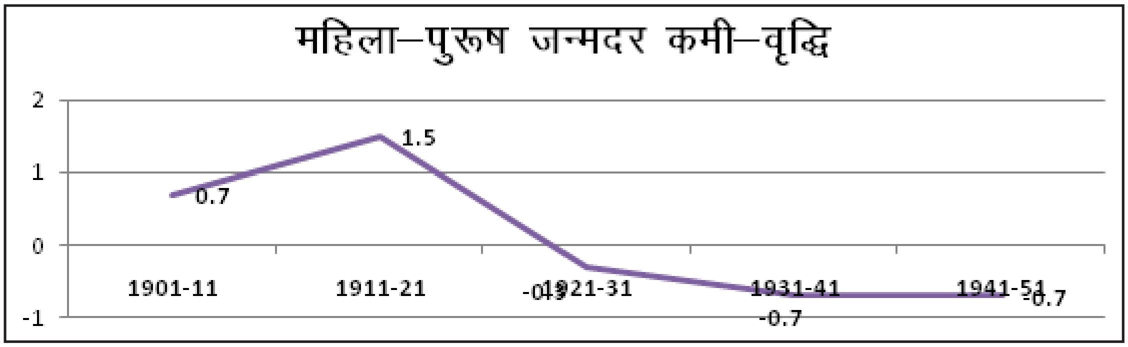

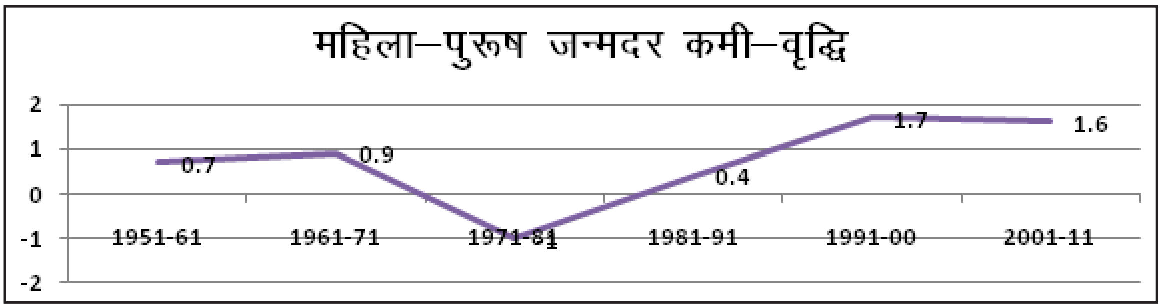

चित्र क्रमांक – 1.3

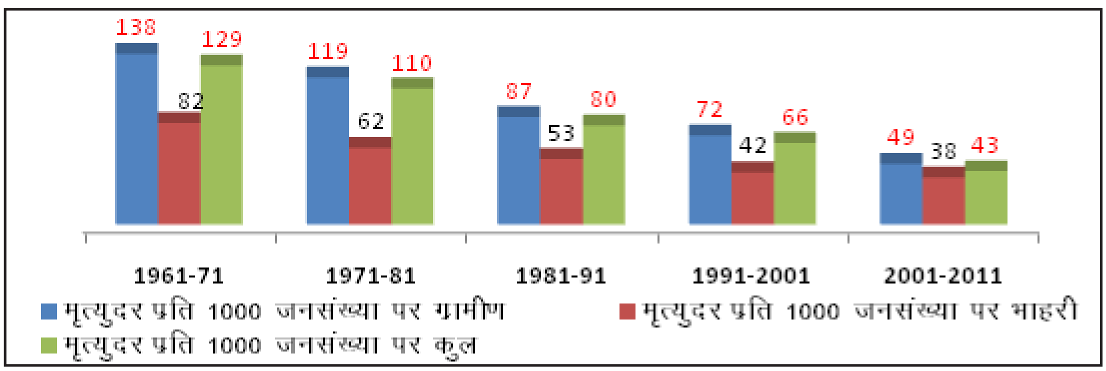

चित्र क्रमांक – 1.4

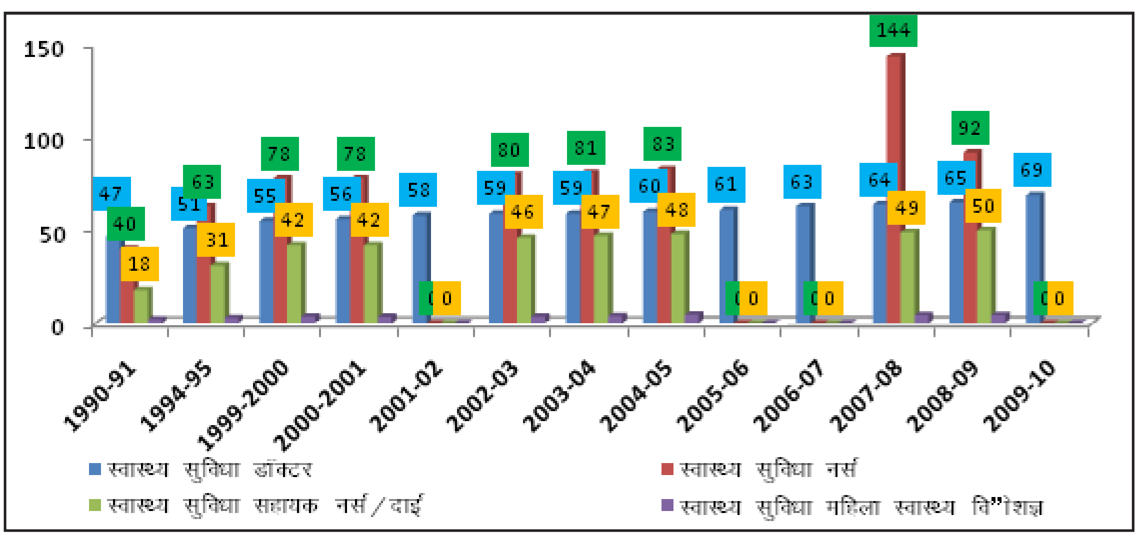

****

अनुसूचित जाति की महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना का विश्लेषणात्मक अध्ययन(खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में)

मुकेश कुमार सावले *

प्रस्तावना – किसी भी देश के आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान में उस देश का लिंगानुपात भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। सामान्यत: यह देखा जाता हैं पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों में कार्य करने की शारीरिक क्षमता कम होती हैं। अत: यह उत्पादन के कार्य में उतना हाथ नहीं बटा पाती हैं, जितना की उपभोग में, जिससे प्रति व्यक्ति आय इस बात पर निर्भर करती हैं कि वहॉ स्त्री जनसंख्या उत्पादन में कितना हाथ बंटाती हैं। देश में समाज अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग तथा सामान्य वर्ग में विभाजित हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश में 15.6 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित जाति की है जिसमें खरगोन जिले 15.7 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित जाति की हैं। जिले की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होने से अनुसूचित जाति के पुरूष एवं महिला दोनों कृषि संबंधी विभिन्न कार्यो से आय अर्जित कर अपनी जीविका चलाते है।

एक ओर जहां देश के समक्ष विकास की महान् चुनौतियां मुंह बांये खड़ी हैं, जिनकी तरफ सारी दुनियां की नजर है, वहीं दूसरी ओर देश के सामने महानतम् चुनौती हैं, महिलाओं के विकास की, उसकी स्थिति में सुधार की जिसे सब जानते हुए भी नजर अन्दाज करते रहे हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब कभी पुरूष प्रधान सभ्यता ने नारी जाति की अवहेलना की, समाज का विकास अवरूद्ध हुआ, उसका पतन हुआ, किन्तु जब नारी जाति को मान–सम्मान दिया गया। उसे प्रेरणा व स्फूर्तिदायिनी जगतजननी का स्थान दिया गया, समाज उन्नति के शिखर पर पहुंच गया।

महिला और पुरूष सृष्टि निर्माण और मानव समाज के आधार हैं। दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। ये जीवन रूपी रथ के ऐसे पहिये हैं, जिनसे जीवन–यात्रा सुचारू रूप से संचालित होती हैं। परिवार और समाज में स्थायित्व के लिए दोनों की ही भूमिका समान रूप से महत्वपूर्ण रही हैं। किसी समाज में परिवर्तन और विकास का आधार पुरूषों और महिलाओं के पारस्परिक मेल–जोल, कदम से कदम मिलाकर चलने और दोनों की समान गतिशीलता पर ही निर्भर हैं। किसी भी एक पक्ष के पिछड़ने पर सामाजिक जीवन में अराजक स्थिति निर्मित होती हैं। मानव जाति का इतिहास इसका साक्षी है कि जहॉं महिलाओं की उपेक्षा की गई हैं, वहॉं समाज का विकास अवरूद्ध हुआ हैं। महिला की भूमिका पुरूष से कहीं अधिक महत्वपूर्ण होने से समाज रचना में उसकी स्थिति केन्द्रीय हो जाती हैं। अत: स्त्रियों की उन्नति के बिना मानव जाति और समाज का उत्थान नहीं हो सकता। जहॉ तक भारत का संबंध है 'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता'। अर्थात् जहॉं महिलाओं की पूजा होती हैं वहां देवताओं का वास होता हैं। इस आदर्श के साथ कोई भी भारतीय स्त्री पष्चिमी स्त्री की तुलना में गौरव का अनुभव कर सकती हैं। भारतीय महिलाएँ किसी भी दृष्टि से पुरूषों से कम नही हैं। इतिहास के प्रारंभिक समय मे उन्हें पुरूषों से कम नहीं माना गया। मध्यकाल एवं विदेशी शासनकाल में उनकी स्थिति दोयम दर्जे की हो रही। उन्हें पूर्णत: पुरूषों पर निर्भर बना दिया गया। यहॉ तक की उन्हें दासी कहकर संबोधित किया गया तथा उनके नागरिक एवं सार्वजनिक अधिकार छीनकर उन्हें घर की चहारदीवारी में बंद कर दिया गया। **रायडन** का कथन हैं–'स्त्रियों ने ही प्रथम सभ्यता की नींव डाली हैं और उन्होंने ही जंगलों में मारे–मारे भटकते फिरते हुए पुरूषों का हाथ पकड़कर उन्हें स्थिर जीवन या घर में बसाया हैं।'

भारतीय समाज में वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति न केवल अच्छी थी, अपितु अत्यन्त उन्नत थी। स्त्रियों को शिक्षा, विवाह, सम्पति आदि में पुरूषों के समान अधिकार था और स्त्रियों में आत्मसम्मान था। लेकिन उत्तर वैदिक काल से महिलाओं के लिए समस्यायें उत्पन्न होने लगी। धर्मसूत्रों में बाल विवाह का निर्देश दिया गया। जिससे शिक्षा प्राप्ति में बाधा उत्पन्न हुई और इसी काल में स्त्रियों को धार्मिक और सामाजिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया। स्मृति युग में स्त्रियों की स्थिति और भी निम्न हो गई। इसी प्रकार मध्यकाल से लेकर आधुनिक काल के प्रारंभ तक स्त्रियों की बड़ी दयनीय दशा थी।

अध्ययन का उद्देश्य– अनुसंधानकर्ता अनुसन्धान पद्धति के ज्ञान द्वारा छिपे सत्य को, जो स्त्रोत सामग्री में होता है, उसे प्राप्त करता है। अनुसंधानकर्ता को अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अनावश्यक रूप से भटकना नहीं पड़ता अनुसंधान का कार्य आसान हो जाता है। अनुसंधानकर्ता को सही उद्देश्य के लिए पहले से ही अनुसंधान रीति का ज्ञान कर लेना चाहिए। विषय और उसके क्षेत्र का निर्णय करने के साथ–साथ शोध के उद्देश्यों पर गहराई से चिंतन मनन आवश्यक है। उद्देश्यों के आधार पर समस्या को विशुद्ध, व्यावहारिक अथवा क्रिया शोध की समस्या के रूप में देखा जा सकता है। उद्देश्यों की स्थापना से प्राथमिकताओं को स्थापित करने तथा समस्या का समाधान खोजनें मे सहायता प्राप्त होती है। खरगोन जिले में मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्रदान करने के प्रयास कितने सार्थक रहे है।

प्रस्तुत शोध कार्य के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है–

1. इस योजना के अन्तर्गत अध्ययन अवधि में कितने हितग्राहियों को वित्तीय सहायता एवं लाभ प्राप्त हुआ जानने का प्रयास किया गया है।
2. जिले में अनुसूचित जाति की महिलाओं के आर्थिक एंव सामाजिक विकास हेतु संचालित योजना की जानकारी प्राप्त करना।
3. योजना के अन्तर्गत लाभान्वित हितग्राहियों की संख्या का अध्ययन करना।
4. शासन द्वारा संचालित योजना से प्राप्त आवंटन का व्यय शत् प्रतिशत होता है।

*शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अध्ययन शाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शोध प्रविधि–प्रस्तुत शोध में प्राथमिक एवं द्वितीय संमको को सम्मिलित किया गया है। इन समको का संकलन सामाजिक न्याय विभाग, जिला कार्यालय पंचायत एवं सामाजिक न्याय विभाग, खरगोन जिला–खरगोन (म.प्र.) व व्यक्तिगत सर्वेक्षण के द्वारा प्राप्त किये गये है।

जिले में संचालित योजना–

मुख्यमंत्री कन्यादान योजना–दीनदयाल अंत्योदय मिशन के अन्तर्गत मुख्यमंत्री कन्यादान योजना का आरम्भ 1 अप्रैल 2006 से हुआ हैं। इसी प्रकार अनुसूचित जाति के लिए सामूहिक विवाह योजना और उसमें कन्या विवाह के लिए साहुकारों के कर्ज से बचाने के लिए तथा विवाह में फिजूल खर्च को रोकने के लिए आर्थिक सहायता अनुग्रह अनुदान के रूप में दी जाना हैं।

योजना के उद्देश्य–इस योजना का मुख्य उद्देश्य मध्यप्रदेश शासन द्वारा गरीब, जरूरतमंद निराश्रित/निर्धन परिवारों की विवाह योग्य कन्या/विधवा/परित्यक्ता के सामूहिक विवाह के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना। योजना का विस्तार सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में हैं।

पात्रता शर्तें–

1. मध्यप्रदेश का निवासी हो तथा परिवार मध्यप्रदेश में निवासरत हो।
2. नराश्रित एवं निर्धन परिवार की कन्या/विधवा/परित्यक्ता ने विवाह के लिए निर्धारित आयु पूर्ण कर ली हो।

सहायता राशि–प्रति आवेदक के मान से 6500 रूपये केवल कन्या की गृहस्थी की व्यवस्था/स्थापना हेतु तथा इसके अतिरिक्त प्रति आवेदक 1000 रूपये सामूहिक विवाह आयोजन के खर्चो की प्रतिपूर्ति के लिए प्रायोजक को राशि उपलब्ध कराई जायेगी।

चयन समिति–जिला स्तर पर दीनदयाल अन्त्योदय मिशन की एक कार्यकारिणी समिति होगी जिसके द्वारा आवेदकोंका चयन किया जायेगा। इस हेतु सम्पर्क जिला कार्यालय पंचायत एवं सामाजिक न्याय विभाग।

मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना में प्राप्त आवटंन एवं व्यय की स्थिति – समाजिक न्याय एवं कल्याण विभाग द्वारा संचालित मध्यप्रदेश शासन की मुख्यमंत्री कन्यादान योजना प्रदेश में अनुसूचित जाति वर्ग की कन्याओं के आर्थिक, सामाजिक व नैतिक उत्थान हेतु संचालित है। इस योजना के अन्तर्गत गरीब, जरूरतमंद व निर्धन परिवारों को सहायता का लाभ मिलता है। इसमें योग्य कन्याओं के विवाह के लिए सरकार के द्वारा आर्थिक सहायता के रूप में कुछ राशि कन्यादान के माध्यम से प्रदाय की जाती हैं। जिसका लाभ अनुसूचित जाति वर्ग की कन्याएं जो पात्र होती हैं, वह आर्थिक सहायता के रूप में प्राप्त करती है। जिले के अध्ययन अवधि में इस योजना के अन्तर्गत प्राप्त आवटंन (आय) एवं व्यय तथा लाभान्वित हितग्राहीयों की स्थिति का विवरण निम्न प्रकार दिया गया है।

तालिका क्रमांक–1

खरगोन जिले में मुख्यमंत्री कन्यादान योजना की प्रगति का विवरण

(राशि लाख में)

वर्ष	प्राप्त आवटंन (आय)	व्यय	ला.भा.संख्या
2006–07	8.76	2.40	62
2007–08	10.69	90.80	49
2008–09	19.95	46.47	150
2009–10	98.05	88.72	211
2010–11	118.09	126.39	154
2011–12	185.00	122.90	66
2012–13	203.00	162.90	46
2013–14	354.25	262.25	166
2014–15	252.82	227.50	910
कुल योग	1250.61	1130.33	1814

स्त्रोत– सामाजिक न्याय विभाग , जिला कार्यालय पंचायत एवं सामाजिक न्याय विभाग, खरगोन जिला –खरगोन (म.प्र.)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि मुख्यमंत्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत प्रत्येक वर्ष राशि का आवटंन शासन के द्वारा सामाजिक न्याय एवं कल्याण विभाग को प्राप्त होता हैं, एवं उसका व्यय पात्र हितग्राहीयों पर किया जाता है। वर्ष 2006–07 में प्राप्त आवटंन 8.76 हजार था। जिसकी व्यय राशि 2.40 थी, तथा प्राप्त राशि से लाभान्वित हितग्राहीयों की संख्या 62 थी। जिन्होंने मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना से लाभ प्राप्त किया। वर्ष 2007–08 में प्राप्त राशि 10.69 हजार थी एवं व्यय राशि अधिक है, लाभान्वित हितग्राही 49 है।

सन् 2008–09 में 19.95 हजार की राशि प्राप्त हुई, व व्यय की गई राशि 46.47 है। व्यय से लाभान्वित हितग्राही संख्या 150 थी। 2006–07 से 2014–15 तक कुल राशि 1250.61 प्राप्त हुई है। व हितग्राहियों पर व्यय की गई राशि 1130.33 है। इससे लाभान्वित प्रात्र हितग्राहियों की संख्या 1814 है। अन्त में स्पष्ट हैं कि कभी–कभी योजना के अन्तर्गत प्राप्त आवटंन से अधिक व्यय हो जाता है। इस योजना में अन्य स्त्रोतों से भी आय प्राप्त की जाती है। प्रात्र हितग्राहीयों को जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती है शासन के द्वारा दिया जाता है।

मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत वर्षवार लाभान्वित संख्या

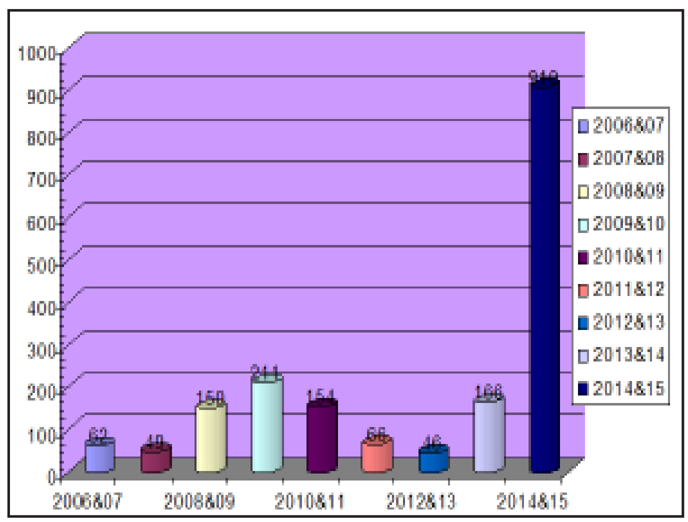

वर्षवार लाभान्वित संख्या – प्रस्तुत अध्ययन हेतु खरगोन जिले के 9 विकास खण्डों में से 6 अनुसुचित जाति बाहुल्य विकास खण्ड क्रमष: बड़वाह, महेश्वर, कसरावद, खरगोन गोगांवा तथा सेगांव के 30 अनुसुचित जाति बाहुल्य गांवों (प्रत्येक विकास खण्ड से 5 गांव) की कुल 300 अनुसूचित जाति महिला हितग्राहियों (प्रत्येक गांव से 10 महिलाओं) का सर्वेक्षण अध्ययन क्षेत्र में उनके निवास पर जाकर किया गया। प्रत्येक विकास खण्ड में सर्वेक्षण का 16.7 प्रतिशत अंश सम्मिलित है।

तालिका क्रमांक-2

आयु के आधार पर अनुसूचित जाति महिला हितग्राहियों का विवरण

क्रमांक	आयु समूह	आवृति	प्रतिशत
1	0 से 25 वर्ष	74	24.7
2	25 से 30 वर्ष	70	23.4
3	30 से 35 वर्ष	79	26.3
4	35 से 40 वर्ष	58	19.3
5	40 से अधिक वर्ष तक	19	06.3
	योग	**300**	**100.00**

स्त्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर।

तालिका से स्पष्ट है कि आयु समुह में 0 से 25 वर्ष तक की अनुसूचित जाति हितग्राहियों की महिलाओं की आवृति 74 व इनका 24.7 प्रतिशत रहा, 25 से 30 वर्ष तक की संख्या 70 तथा 23.4 प्रतिशत है, 30 से 35 वर्ष की महिलाओं की सख्या 79 जिनका 26.3 प्रतिशत 35 से 40 वर्ष की अनुसूचित जाति महिलाओं की संख्या 58 व 19.3 प्रतिशत, 40 से अधिक वर्ष तक की महिलाओं की संख्या 19 रही जिनका 06.3 प्रतिशत है। सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि 30 से 35 वर्ष की अनुसूचित जाति महिलाओं का प्रतिशत सर्वाधिक है, इस आयु वर्ग में कार्य करने की शक्ति के साथ-साथ अनुभव का भी सम्मिश्रण होता है।

शासकीय योजना में मुख्यमंत्री कन्यादान योजना का व्यक्तिगत सर्वेक्षण का विवरण-

तालिका क्रमांक-3

सर्वेक्षित अनुसूचित जाति महिलाओं में शासकीय योजना के लाभ का विवरण

क्रमांक	मुख्यमंत्री कन्यादान योजना	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	40	13.3
2	नही	260	86.7
	योग	**300**	**100.0**

स्त्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर।

उपरोक्त तालिका द्वारा स्पष्ट है कि सर्वेक्षित अनुसूचित जाति महिला हितग्राहियों में 40 महिलाओं ने शासकीय योजना का लाभ प्राप्त किया जिनका 13.3 प्रतिशत है। 260 महिला हितग्राही ऐसी है। जिन्होंने शासकीय योजना का लाभ प्राप्त नहीं किया। जिनका 83.7 प्रतिशत है, इसी प्रकार लाभ प्राप्त करने वाली हितग्राहि महिलाओं का प्रतिशत न प्राप्त करने वाली महिलाओं से कम है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण के द्वारा प्राप्त संमको का विवरण स्पष्ट किया गया है।

मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत लाभान्वित संख्या का प्रतिशत (ग्राफ देखे)

निष्कर्ष-निष्कर्ष में यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2006-07 में प्राप्त आवटंन 8.76 हजार था। जिसकी व्यय राशि 2.40 थी, तथा प्राप्त राशि से लाभान्वित हितग्राहीयों की संख्या 62 थी। जिन्होंने मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना से लाभ प्राप्त किया। जबकि 2014-15 में प्राप्त आवटंन 252.82 हजार था तथा व्यय 227.50 हजार रूपयें हुआ एवं लाभान्वित हितग्राहियों कि संख्या 910 थी इससे स्पष्ट होता है। कि अनुसूचित जाति वर्ग कि महिलाओं में इस योजना से उनमें सामाजिक एवं आर्थिक विकास हुआ है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर स्पष्ट होता है कि मुख्यमंत्री कन्यादान योजना का लाभ 300 हितग्राहियो में से 40 हितग्राहियों द्वारा प्राप्त किया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पाटिल डॉ. अशोक डी. एवं भदौरिया डॉ. एस. एस. 2009-भारतीय समाज-प्रकाशन-मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग बानगंगा, भोपाल. पृष्ठ सख्या-339-340
2. श्रीवास्तव डॉ. ए. पी. आर पी (2015)-समाजशास्त्र, प्रकाशक -राम प्रसाद एण्ड संस, हमीदिया रोड, भोपाल- पृष्ठ सख्या, 177-178
3. आगे आयें लाभ उठायें, प्रकाशक-आयुक्त, जनसम्पर्क विभाग, मध्यप्रदेश, भोपाल, जनवरी 2010, पृष्ठ संख्या- 97 व 98
4. सामाजिक न्याय विभाग, जिला कार्यालय पंचायत एवं सामाजिक न्याय विभाग, खरगोन जिला-खरगोन (म.प्र.)

मुख्यमन्त्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत लाभान्वित संख्या का प्रतिशत

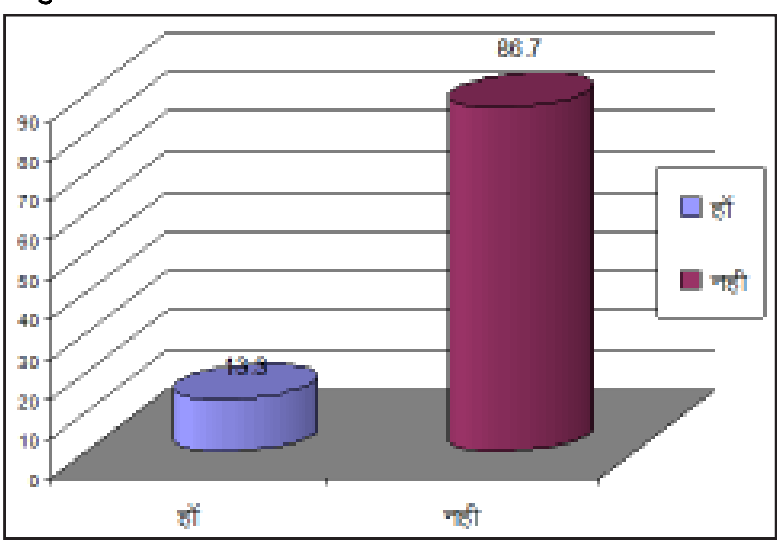

शासकीय योजना के लाभ का आधार

****

मध्यप्रदेश का औद्योगिक विकास, वर्तमान स्थिति और भावी सम्भावनाएँ

छगन वसुनिया * डॉ. मनोहर जैन **

प्रस्तावना – इक्कीसवीं सदी में जिस प्रकार से हम औद्योगिक विकास और भौतिक समृद्धि की ओर बढ़ चले आ रहे हैं, जिससे औद्योगीकरण आधुनिक युग की एक अनिवार्य माँग बन गई है, औद्योगिक विकास के बिना राष्ट्र का विकसित होना असम्भव है। आज विश्व के प्राय: सभी देश औद्योगीकरण की ओर अग्रसर हो रहे हैं, क्योंकि औद्योगीकरण किसी राष्ट्र की प्रगति एवं सम्पन्नता का केवल आधार ही नहीं, बल्कि उसके आर्थिक विकास का मापदण्ड भी माना जाता है। विश्व के जितने भी राष्ट्र हैं, औद्योगीकृत देशों की श्रेणी में गिन जाते हैं। इसके अतिरिक्त जो राष्ट्र अभी विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में नहीं गिने जाते, किन्तु विकास के पथ पर आगे बढ़ चुके हैं। वे सब औद्योगीकरण के द्वारा ही अपने आर्थिक विकास के लिए प्रयत्नशील हैं।

पिछले कुछ दशकों में अनेकों विकासशील राष्ट्रों द्वारा औद्योगीकरण की दिशा में पर्याप्त प्रगति भी की गई है। औद्योगिक अर्थव्यवस्था एक ऐसी अर्थव्यवस्था का पर्याय बन चुकी है, जो आधुनिकता एवं वैज्ञानिक चकाचौंध से ओतप्रोत है तथा जिसमें भौतिक दृष्टि से सम्पन्न होते हुए भी विपन्न है। औद्योगीकरण के द्वारा अपने विपुल साधनों का भरपूर उपयोग करके राष्ट्रीय उत्पादन एवं प्रतिव्यक्ति आय को बढ़ा भी सकते हैं। इस प्रकार अन्तत: अपने नागरिकों को निर्धनता की रेखा से ऊपर उठाकर उन्हें एक सन्तोषजनक जीवन स्तर प्रदान कर सकते हैं।

इस समय हमारा देश विकासशील अर्थव्यवस्था के दौर से गुजर रहा है जो विकसित देशों के साथ औद्योगीकरण तथा आर्थिक विकास की दौर में सम्मिलित है। भारत की भाँति मध्यप्रदेश भारत का क्षेत्रफल की दृष्टि से दूसरा बड़ा प्रदेश है। चूँकि म.प्र. गाँवों में रहता है। दरअसल प्रदेश की 72.41 प्रतिशत जनसंख्या आज भी गाँव में ही निवास करती है। कृषि इनका एकमात्र उद्यम है। इस तरह से कृषि प्रदेश का मुख्य उद्योग है और यहाँ की अर्थव्यवस्था के लिए रीढ़ की हड्डी भी है। प्रदेश की कुल अर्थव्यवस्था का लगभग 44 प्रतिशत हिस्सा कृषि व इससे जुड़े कार्यकलापों से प्राप्त होता है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् मध्यप्रदेश की गिनती अथाह खनिज सम्पदा और अतुलनीय नैसर्गिक सौन्दर्य से परिपूर्ण एक दशक पहले औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए राज्यों के रूप में होती थी। मध्यप्रदेश में प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि क्षेत्र को व द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उद्योगों को प्राथमिकता दी गई। छठी पंचवर्षीय योजना में देश भर में 240 पिछड़े जिलों की पहचान की गई थी जिनमें से 87 उद्योग विहीन थे। इनमें से सर्वाधिक 18 मध्यप्रदेश में थे। प्रदेश के सिर्फ 5 जिले ग्वालियर, भोपाल, इन्दौर, जबलपुर व दुर्ग विकसित जिले घोषित किए गए थे। शेष जिले को पिछड़ा घोषित कर तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है। इसके बाद से ही औद्योगिक परिदृश्य में परिवर्तन की शुरूआत हुई। सन् 1991 में केन्द्र सरकार की उदारीकरण की नीति के बाद तो प्रगतिधारा ऐसी है कि औद्योगिक घरानों के लिए मध्यप्रदेश प्राथमिकता हो गया है।

मध्यप्रदेश के अधिकांश उद्योग खनिज, वन, सीमेण्ट तथा कृषि उत्पादों पर आधारित है। अविभाजित मध्यप्रदेश प्राकृतिक सम्पदा से उत्पन्न क्षेत्र था। वहीं इन संसाधनों की औद्योगिक इकाईयाँ पश्चिमी मध्यप्रदेश में अवस्थित थी। छत्तीसगढ़ अलग हो जाने के बाद भी प्रदेश के उद्योगों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं छोड़ा है।

मध्यप्रदेश को अस्तित्व में आए छ: दशक बीत चुके हैं। इस दौर में मध्यप्रदेश का औद्योगिक परिदृश्य तेजी से बदल रहा है। प्रदेश में पूँजी निवेश के लिए विगत वर्षों से सुनियोजित अभियान चलाया जा रहा है। जिससे आज के मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास की तस्वीर कुछ अलग ही दिखाई पड़ती है। मध्यप्रदेश में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं एवं औद्योगिक नीतियों के लागू होने के कारण मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास में उन्नति के नये द्वार खोले हैं।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. म.प्र. में विगत वर्षो में हुए औद्योगिक विकास का अध्ययन करना।
2. म.प्र. में औद्योगिक इकाइयों की उत्पादन, रोजगार क्षमता तथा पूँजी निवेश का अध्ययन करना।
3. म.प्र. में औद्योगिक विकास की नवीन सम्भावनाओं का पता लगाना।

समंक आधार एवं संकलन विधि – प्रस्तुत शोध-पत्र को पूर्ण करने के लिए शोधार्थी द्वारा विगत पाँच वर्षो के द्वितीय समंकों को आधार बनाया गया है तथा द्वितीय समंकों के संकलन हेतु सन्दर्भित पुस्तकों, वार्षिक प्रतिवेदन, शोध-पत्रों का उपयोग किया जाता है।

विश्लेषण उपकरण – द्वितीय आँकड़ों के माध्यम से सारणियों का निर्माण किया गया है। सारणियों के विश्लेषण किया जाता है।

मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास केन्द्रों की स्थापना – औद्योगिक विकास के लक्ष्य को त्वरित गति से प्राप्त करने के लिए औद्योगिक विकास की संकल्पना के अनुसार उपयुक्त स्थानों को उनकी औद्योगिक विकास एवं स्थिति की सम्भावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए चयन कर विकास केन्द्र बनाया गया है। शासन द्वारा चरणबद्ध आधारभूत सुविधाओं का विकास एवं प्रक्रियागत सरलता से इन केन्द्रों के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। प्रदेश में आज यही स्थान औद्योगिक विकास के केन्द्र बिन्दु हैं।

प्रदेश में नियोजित औद्योगिक विकास होने के कारण अन्य क्षेत्रों में औद्योगिक विकास या तो धीमा रह गया है या नितान्त पिछड़ा है। मध्यप्रदेश की कुल औद्योगिक इकाइयों का 50 प्रतिशत से अधिक केवल 05 स्थानों पर ही केन्द्रित है।

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.) भारत

सारणी क्रमांक-1
मध्यप्रदेश में औद्योगिक इकाइयों का वितरण

क्र.	औद्योगिक विकास केन्द्र का नाम	स्थापित औद्योगिक इकाइयों का प्रतिशत
1.	पीथमपुर	16.67
2.	देवास	11.48
3.	मण्डीदीप	9.48
4.	मालनपुर	7.53
5.	इन्दौर	6.17

इसके अतिरिक्त प्रदेश के वाणिज्य, उद्योग एवं रोजगार विभाग द्वारा औद्योगीकृत जिलों के वर्गीकरण में केवल 03 जिलों को अग्रणी पिछड़े जिलों की 'अ' श्रेणी में 05 जिले, 'ब' श्रेणी में 02 जिले तथा 'स' श्रेणी में 37 जिलों को स्थान दिया गया है।

मध्यप्रदेश में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों का विकास - औद्योगिक विकास की दृष्टि से मध्यप्रदेश समृद्ध राज्य है। औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश का देश में सातवाँ स्थान है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में निर्माण उद्योग का योगदान लगभग 27.82 प्रतिशत है। मध्यप्रदेश में अनेक क्षेत्रों के विकास के लिए सरकार अनेक प्रकार की सहायता प्रदान कर रही है, ताकि इन क्षेत्रों में आय अर्जन गतिविधियाँ बढ़े। बेरोजगारी की समस्या का समाधान हो, सभी प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का अधिक उपयोग हो जिससे प्रदेश में क्षेत्रीय असन्तुलन को समाप्त किया जा सके। वर्तमान समय में विभिन्न क्षेत्रों में औद्योगिक विकास होने से अनेक लोगों को रोजगार प्राप्त हो रहा है।

सारणी क्रं.-2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि म.प्र. में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों में लोगों को रोजगार मिला। सन् 2011-12 में 20105 हजार उद्योग, पूँजी निवेश 47517 लाख तथा रोजगार 46501 हजार लोगों को मिला। सन् 2012-13 में उद्योगों की संख्या 19894 हजार, पूँजी निवेश 67243 लाख रुपये तथा 44924 हजार लोगों को रोजगार मिला है। सन् 2014-15 में स्थापित उद्योगों की संख्या 18660 हजार से 48.87 प्रतिशत कम है। पूँजी निवेश 50492 लाख रुपये था। जो कि 2013-14 में निवेशित लाख रुपये से 17.57 प्रतिशत कम है तथा 2014-15 में 25803 हजार रोजगार निर्मित किए गए, जो कि 2013-14 में निर्मित रोजगार 44924 हजार से 42.56 प्रतिशत कम है।

सम्भावनाएँ - किसी भी राष्ट्र की आर्थिक प्रगति में उस देश के औद्योगिक विकास के ढ़ाँचे का महत्तवपूर्ण स्थान होता है। चूँकि मध्यप्रदेश गाँवों में बसता है और इसकी 72.41 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। इसी तरह कृषि यहाँ का मुख्य उद्योग है और यहाँ की अर्थव्यवस्था के लिए रीढ़ की हड्डी भी है। मध्यप्रदेश औद्यागिक विकास की समुचित सम्भावनाओं वाला प्रदेश है। यहाँ पर प्राकृतिक संसाधनों का भण्डार धरा के आन्तरिक भागों से लेकर बाहरी आवरण तक ओतप्रोत है। प्रकृति की इस अनुपम भेंट से लेकर प्रदेश के ही लोग लाभान्वित हो रहे हैं। बेशक हमने यहाँ के खनिज स्त्रोतों का दोहन नहीं किया, परन्तु बेशकीमती जलीय स्त्रोतों के प्रवाहों का नियन्त्रित करने उनकी धाराओं से जल शक्ति के रूप में अन्य राज्यों के घरों में उजाला व अनेक उद्योगों को चमकाया है। यहाँ की नदियों को नहरों के रूप में विकसित कर हमारे दूर-दराज के राज्य जमीन में सोना उगल रहे हैं। हमने अपने प्रदेश की तरक्की की राह में असंख्य मील का पत्थर तय करते हुए अपने प्रत्येक क्षेत्र को सँवारने का प्रयास किया है। इस प्रकार की कामयाबी प्रदेश में झलक रही है।

म.प्र. विकास की धारा में बदला हुआ नवोन्मुखी प्रदेश है। यहाँ प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुर उपलब्धता, सस्ता श्रम, कृषि, औद्योगिक वातावरण की अनुकूलता तथा औद्योगिक नीतियों का अपने स्तर पर परिवर्तन कर तथा निवेशकों की रुचि के कारण प्रदेश में अनेक क्षेत्रों में उद्योगों के विकास हेतु प्रस्तावों पर सहमति हुई है। म.प्र. के संसाधनों एवं निवेश के अवसरों के बारे में निवेशकों में जागरूकता पैदा करने के लिए राज्य सरकार निवेशकों की संगोष्ठी का आयोजन कर रही है जिससे अपने संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और निवेशकों के लिए एक सुविधाजनक वातावरण बनाने की ओर अग्रसर है। प्रदेश को औद्योगिक दृष्टि से विकसित राज्यों की श्रेणी में लाने हेतु औद्योगिक विकास में कृषि, वन, खनिज तथा सामान्य माँग पर आधारित उद्योगों के विकास व विस्तार की म.प्र. में प्रबल सम्भावना हैं।

आज नवीन सम्भावनाओं को तलाशने अनेक कम्पनियों के समूह म.प्र. में इन्वेस्टमेण्ट हेतु आने के लिए अग्रसर है। मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास की सम्भावनाओं की बहुत ज्यादा आशा झलकती है। यहाँ कच्चे माल की बहुलता के कारण औद्योगिक विकास की प्रबल सम्भावना हैं।

निष्कर्ष - निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मध्यप्रदेश में पर्याप्त संसाधन मौजूद हैं जिनसे अनेक औद्योगिक क्षेत्रों का विकास किया जा सकता है। इसलिए इस प्रदेश में लोगों को सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने और खासतौर पर युवा वर्ग को अपनी सोच में बदलाव लाने की जरुरत है। साथ ही सरकारी विभागों तथा संस्थाओं को औद्योगिक विकास को आगे बढ़ाने हेतु जमकर प्रयास करने होंगे। प्रदेश के चहुमुँखी आर्थिक विकास के लिए फिलहाल इस प्रदेश को जीवन्त, प्रफुल्ल और सुदृढ़ उद्यमियों की खासतौर पर सूक्ष्म तथा लघु उद्योगों की आवश्यकता है। आज म.प्र. उद्योग क्षेत्र की उपलब्धियों में देश के औद्योगिक नक्शे पर नया आकार ले चुका है। इसी तरह मध्यप्रदेश अपने संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और निवेशकों के लिए सुविधाजनक वातावरण बनाने पर ध्यान देते हुए बहुत जल्द ही औद्योगिक समुदाय के लिए सबसे पसन्दीदा गंतव्य बनने की उम्मीद रखता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कुलश्रेष्ठ, रघुवीर सहाय (1964) - 'भारत में उद्योगों का संगठन, प्रबन्ध एवं वित्त', साहित्य भवन, आगरा पृ.क्रं. 1, 2
2. सुरजन, ललित वर्मा, विनोद (1997-98) - 'देश बन्धु सन्दर्भ म.प्र.', देश बन्धु प्रकाशन विभाग, पत्रकार प्रा.लि., रायपुर, पृ.क्रं. 291
3. गौतम राकेश, भदौरिया जितेन्द्रसिंह (2011) - 'म.प्र. एक परिचय', टाटा मैक्ग्रा-हिल पब्लिशिंग कं. लिं., नई दिल्ली, पृ.क्रं. 15.5, 15.7
4. 'म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण' (2014-15) : आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, भोपाल, पृ.क्रं. 81, 82

सारणी क्रं.-2
मध्यप्रदेश में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग एक नजर

वर्ष	सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों की संख्या (हजार में)	सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों में पूँजी निवेश (लाख में)	सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों में रोजगार (हजार में)
2010-11	19860	43562	43296
2011-12	20105	47517	46501
2012-13	19894	67243	47414
2013-14	18660	61256	44924
2014-15	9540	50492	25803

स्त्रोत – म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15 पृष्ठ क्र. 8.82

****

प्लास्टिक पर्यावरण प्रदूषण व प्रबंधन

डॉ. शक्ति जैन *

प्रस्तावना – कुछ समय पहले कहा जाता था कि यह लौह युग है, लेकिन वर्तमान युग प्लास्टिक का युग है। प्लास्टिक की खोज प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक लम्बी छलांग है। प्लास्टिक आधुनिक समाज में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है, यह हमारी जीवन शैली का अहम हिस्सा बन चुका है और अब इसे जीवन से बाहर निकाल पाना संभव नहीं रह गया है।

एक अनुमान के अनुसार सम्पूर्ण विश्व में लगभग एक अरब पचास करोड़ टन (1500000000) प्लास्टिक का उपयोग किया जा रहा है, जो प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। प्लास्टिक के उत्पादों एवं उपयोग का क्षेत्र बहुत ही बड़ा है कुछ प्रमुख उपयोग जैसे –

1. सभी प्रकार के केरी बेग के निर्माण में।
2. पानी की टंकिया, पाइपों तथा अन्य नल सम्बन्धी अन्य उपकरणों के निर्माण में।
3. मिनरल वाटर, पेय पदार्थो, दूध, बिस्किट, खाद्य तेल, अनाज आदि खाद्य सामग्री की पेकिंग में।
4. दैनिक उपयोग की वस्तुओं जैसे टूथ ब्रुश, टूथ पेस्ट, ट्यूब, शैम्पू बाटल, चश्में तथा कंघी आदि।
5. दवाइयों और उनके डिब्बों, रक्त भंडारण थैलों, तरल ग्लूकोज आदि में।
6. विभिन्न आकार में ढाले गये फर्नीचरों जैसे मेज, कुर्सी, अलमारी, दरवाजे आदि।
7. वाहनों, हवाई जहाजों तथा अन्य उपकरणों के हिस्सों के निर्माण में।
8. इलेक्ट्रिक सामग्री, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, टेलीविजन, रेडिया, कम्प्यूटर आदि के निर्माण में।
9. खिलौना, बाल्टियाँ आदि में।

प्लास्टिक के फायदें – प्लास्टिक के कुछ महत्वपूर्ण फायदे है, जिसे नकारा नहीं जा सकता जैसे –

1. यह हल्का होता है, जलावरोधी होता है, इसमें जंग प्रतिरोधक शक्ति तो होती ही है, यह सर्द गर्म को सहने करने की क्षमता रखता है।
2. प्लास्टिक निर्माण में प्रयुक्त कच्चे माल को तैयार माल में परिवर्तित करने में ऊर्जा बहुत कम मात्रा में खर्च होती है।
3. प्लास्टिक के विभिन्न प्रकार के उपयोगों से बनाये गये उपकरणों की सहायता से होने वाली कार्यक्षमता में वृद्धि के कारण 530 करोड़ यूनिट की बिजली की बचत होती है।
4. घरों में दूध पहुँचाने वाले प्लास्टिक बैग शीशे की बोतलों की तुलना में मात्र 1/10 हिस्सा ही ऊर्जा का उपभोग करते है।
5. जलापूर्ति करने वाले लोहे के पाइपों की तुलना में पी.बी.सी. पाइप उनके निर्माण में अधिक उपयोगी एवं ऊर्जा की बचत करने वाले होते है।
6. कागज के थैलों के निर्माण में प्रयुक्त ऊर्जा के मुकाबले में प्लास्टिक थैलों के निर्माण में मात्र 1/3 ऊर्जा ही व्यय होती है।
7. प्लास्टिक के कुछ अनोखे गुण – रबड़ प्रतिरोधक, रसायन प्रतिरोधक, कम रख–रखाव लागत तथा टिकाऊपन आदि के कारण इसकी देखभाल करना अन्य धातुओं अथवा पदार्थो की तुलना में सहज एव सरल होता है।

प्लास्टिक जनित समस्याएं – इन सभी अच्छाइयों के कारण प्लास्टिक ने देखते–देखते मानव जीवन पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया लेकिन प्लास्टिक के बढ़ते उपयोग में प्रदूषण की समस्या को बहुत हद तक बढ़ा दिया है, जिसे प्लास्टिक प्रदूषण की समस्या कहा जाने लगा है। प्लास्टिक कचरा पर्यावरण का सबसे बड़ा दुश्मन बन चुका है, जिस तरह वनों की कटाई हुई, लकड़ी की उपयोगिता कम हुई, उसी गति से प्लास्टिक ने पॉव पसारा और यह विश्व के लिए खतरा बन चुका है। प्लास्टिक का आविष्कार 1862 में इंग्लैण्ड में हुआ लेकिन आज इसकी सबसे अधिक खपत भारत में हो रही है। प्लास्टिक ने अपनी उपादेयता के कारण दैनिक जिन्दगी में इस हद तक स्थान बना लिया है कि उसे जीवन से बाहर निकाल पाना संभव नहीं रह गया है। इसकी कई समस्यायें है :–

1. प्लास्टिक का सबसे बड़ा अवगुण कि यह प्राकृतिक रूप से विघटित नहीं होता, दीर्घ अवधि तक अपना अस्तित्व बनाये रखने के कारण यह पर्यावरण और प्रकृति को व्यापक पैमाने पर क्षति पहुँचाता है।
2. प्लास्टिक एक कार्बन पदार्थ होने से इसे बहिष्करण करके सांचे में ढालकर विभिन्न रूप दिया जाता है, इसमें पाये जाने वाले मोनोमर से कैंसर हो सकता है। इसमें पाये जाने वाले नाइलोन के संश्लेषण के लिए बैंजीन कच्चे माल के तौर पर उपयोग होती है, यह भी कैंसर का वाहक है।
3. प्लास्टिक उपयोग में कार्यरत श्रमिकों के स्वास्थ्य पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। उनके फेफड़े, किडनी तथा स्नायुतंत्र दुष्प्रभावित होते है।
4. निम्न गुणवत्तायुक्त प्लास्टिक पैकिंग सामग्री पैक किये जाने वाले भोजन एवं औषधियों के साथ रासायनिक प्रतिक्रिया करके उन्हें दूषित एवं स्वास्थ्य के लिए खतरा उत्पन्न करती है।
5. प्लास्टिक को जलाये जाने से निकलने वाली विषाक्त गैसों के परिणामस्वरूप वायु प्रदूषण की समस्यायें उत्पन्न होती है। प्लास्टिक को जलाये जाने से इसमें डाइऑक्सीन नामक अत्यन्त विषैली गैस निकलती है, जो पर्यावरण में लंबे समय तक बनी रहने से मनुष्यों एवं पशुओं के शरीर में उनके श्वांस के साथ प्रवेश करके बसा तंतुओं में एकत्रित हो जाती है, जिससे कैंसर, शारीरिक कुविकास एवं श्वांस रोग जैसी समस्यायें उत्पन्न हो जाती है।
6. समुद्री पर्यावरण में प्लास्टिक का कचरा फेंके जाने से सामुद्रिक पारिस्थितिकी को हानि पहुँचती है।
7. प्लास्टिक को गड्ढों में गाड़ दिये जाने से भी पर्यावरण को हानि पहुँचती है क्योंकि अभी कोई भी ऐसा सूक्ष्म जीवाणु नहीं है, जो प्लास्टिक का

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

विघटन करने में सक्षम हो। (अत: वह कभी नष्ट नहीं होता) जिससे मृदा के अनुपजाऊ होने, पानी के विषाक्त होने, पारिस्थितिकी असंतुलन आदि समस्यायें उत्पन्न होती है।

8. कुछ विकसित देशों में पेथालेट्स से प्लास्टिक गलाने का उपयोग प्लास्टिक को गड्डों में भरते समय किया जाने लगा है, जिससे भूगर्भीय जल विषाक्त होता है, कई गंभीर बीमारियॉ होती है।
9. हर वर्ष दस लाख से ज्यादा समुद्री जीव प्लास्टिक कचरे की वजह से मारे जाते हैं। पॉलीथिन, प्लास्टिक के टुकड़े, कैन जैसी हजारों चीलों को ये जीव भोजन समझ कर खा लेते है। हजारों टन प्लास्टिक नदियों से होते हुए समुद्र में मिल रहा है तो जहाजों से भी इसमें उड़ेला जा रहा है एक अनुमान के अनुसार समुंदर के हर वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में औसतन 46 हजार प्लास्टिक की चीजें तैर रही है।

प्लास्टिक जनित समस्याओं का समाधान कैसे हो तो दो बातें महत्वपूर्ण है – 1. प्लास्टिक के विकल्प, 2. प्लास्टिक प्रबंधन जागरूकता

1. प्लास्टिक के विकल्प –

1. जैव आधारित प्लास्टिक – जैव आधारित प्लास्टिक नवीकरणीय स्त्रोत जैसे – स्टार्च, शर्करा, वनस्पति तेल या लकड़ी की लुगदी से बनता है ये जैव अपघटनीय या गैर – जैव निम्न करणीय हो सकते है। उदाहरण – पॉलीथीन (पीई) प्लास्टिक जैव एल्कोहल से उत्पन्न होती है, जो कि जैव आधारित है परन्तु जैव अपघटनीय नहीं है।

जैव अपघटनीय प्लास्टिक – यह जैव अपघटनीय मानकों के स्तर को पूरा करती है, जो कि अक्सर जैव आधारित होते है लेकिन यह पेट्रोलियम आधारित भी हो सकती है, कुछ जैव प्लास्टिक जैसे – थर्मोप्लास्टिक (बिना नष्ट हुए घोल और द्रव किसी भी अवस्था में परिवर्तित किये जा सकते है) स्टार्च शुद्धता के कारण यह आर्द्रता को अच्छे से अवशोषित करता है, औषध कैप्सूल बनाने में प्रयुक्त होता है।

पॉलीलेक्टिक एसिड – यह पारदर्शी प्लास्टिक है, इसका कम्प्यूटर, मोबाइल, फाइल और टिन आदि बनाने में उपयोग होता है।

पालीहाइड्राक्सी ब्यूटाइरेट – यह पारदर्शी और जैव अपघटनीय है, रस्सी, बैंक नोट और कार आदि में प्रयोग होता है।

पॉलीएमाइड II (PAII) – यह वनस्पति तेल से उत्पन्न होता है तथा इसका ट्रेड नाम रिसलेन है, यह तापरोधी होने के कारण कार के ईधन, गैस–तेज पाइप तथा दीमकरोधी आवरण बनाने में प्रयोग होता है।

2.बायोप्लास्टिक – यह डिस्पोजेवल और नान डिस्पोजेवल दोनों तरह के उत्पाद में प्रयुक्त होती है। जैव प्लास्टिक एक प्रौद्योगिकी है, जो कम समय में पूरी तरह से अपघटित होती है, पर्यावरण के लिए यह लाभकारी है क्योंकि इसमें ग्रीन हाउस गैस और हानिकारक कार्बन कम उत्सर्जित होते है। अपघटनीय प्लास्टिक की तुलना में इसमें आधे से कम ऊर्जा लगती है तथा कम लागत आती है, पुनर्चक्रण भी आसान है, यह अविषाक्त है जबकि सामान्य प्लास्टिक हानिकारक है। जैव प्लास्टिक बैग, ई–कंटेनर (फल, सब्जी, अण्डे, मांस, बोतल, डेरी उत्पाद) आदि के पैकिंग में काम आती है। नानडिस्पोजेवल उपयोगिता के अन्तर्गत मोबाइल फोन, कालीन, कार सजावट, ईंधन, प्लास्टिक पाइप आदि में इसका उपयोग होता है। चिकित्सीय इम्प्लान्ट पी.एल.ए. में भी इसका उपयोग होता है।

जैव प्लास्टिक ऊर्जा क्षमता, पैट्रोलियम उपयोग कार्बन उत्सर्जन आदि में पेट्रो प्लास्टिक में उत्तम है। बायोप्लास्टिक बाजार अभी प्रारंभ अवस्था में है तथा यह प्लास्टिक का अच्छा विकल्प बन रहा है।

2. प्लास्टिक प्रबंधन जागरूकता – प्लास्टिक जनित समस्याओं के निराकरण में प्लास्टिक प्रबंधन जागरूकता महत्वपूर्ण स्थान रखती है। प्लास्टिक का उपयोग दो तिहाई कम किया जा सकता है, यदि थोड़ा सा इरादा व जागरूकता हो जैसे –

1. वह प्रत्येक चीज जो धातु या लकड़ी से बनती है, उसे प्राथमिकता दे जैसे – बच्चों के खिलौने, बाल्टियाँ, बोतलें, दरवाजें, खिड़कियॉ, स्टोर करने के बर्तन, फर्नीचर आदि।
2. प्लास्टिक की पतली थैलियों का उपयोग बिल्कुल बंद कर दें। सर्वाधिक कचरा पतली पन्नियों का होता है तथा इनकी रिसाइकिलिंग होने की समस्या नगण्य होती है। कागज की थैली व पुड़िया में दुकानदारों द्वारा सामान दिया जाये तथा ग्राहक की खरीददारी के लिए जाते समय खादी का जूट का थैला ले जायें।
3. कागजी थैलियां या अन्य बायोडिग्रेडेवल पेकिजिंग सामग्री प्लास्टिक की तुलना में थोड़ी ज्यादा मूल्य की हो सकती है, यदि हम खाने–पीने की चीजों में प्राकृतिक का ध्यान रखते है ज्यादा कीमते चुकाने को तैयार रहते है, तो इसमें क्यों नहीं ? जागरूक नागरिक बनकर कागज, कपास, जूट आदि का उपयोग करने से किसान भी लाभान्वित होंगे। प्लास्टिक की पुरानी पन्नियों से क्या–क्या बन सकता है – साड़ियाँ, डिजाइनर बैग, शानदार जूते चप्पल फोल्डर, फाइल, बेल्ट, लैम्प शेड आदि। यह दिल्ली में एक गैर सरकारी संगठन (कंजर्व इंडिया) है यह दिल्ली के कूडे से डिजाइनर चीजे बनाता है। जिनकी मांग विदेशों में भी है। वे इसे रिसाइकिलिंग के बजाय आपसाइकिलिंगि कहती है यानी कुछ नया जोड़कर कीमत बढ़ाना करीब एक हजार कचरा बीनने वाले और कबाड़ी उनके लिए काम करते है। जिन्हें प्रशिक्षण और सम्मानजनक वेतन दोनों मिलते है।
4. घर में प्लास्टिक कचरा अलग छांटकर रखें उसे कबाड़ी या कचरे वाले को ही दे उसे सड़क पर न फेंके।
5. प्लास्टिक के पदार्थ सीवर, नदियों के किनारे अथवा समुद्र के आसपास नहीं फेंकना।
6. नगर निगम अधिकारी को यह सुनिश्चित करना होगा कि प्राकृतिक रूप से विघटित न होने योग्य तथा प्राकृति रूप से विघटित होने योग्य कचरे के लिए अलग–अलग कूड़ेदानों की व्यवस्था करें तथा परिवार या घर में भी दोनों कचरे के अलग–अलग डिब्बे बनाना चाहिए।
7. ऐसे उत्पाद लेना जिसकी पेकिंग में प्लास्टिक का उपयोग कम किया गया हो।
8. पानी की एक लीटर की बोतल बनाने में 3 लीटर पानी लगता है और 11 लीटर पेट्रोल/डीजल जितनी ऊर्जा। ज्यादातर बोतले रीसाइकिलिंग नहीं होती और प्राकृतिक रूप से खत्म होने में एक बोतल को 1000 वर्ष लगता है इसका उपयोग न कर पर्यावरण प्रबंधन में अपना योगदान दे सकते है।
9. डिस्पोजल कप का उपयोग न कर सिरोमिक का कप लिया जा सकता है। एक सर्वे के अनुसार दुनिया भर में इस्तेमाल किये जाने वाले डिस्पोजल कप को इकट्ठा कर ले तो इसमें पृथ्वी को 12 बार लपेटा जा सकता है।
10. यूज एंड थ्री की प्रवृत्ति को कम करना आवश्यक है।

प्लास्टिक प्रदूषण की भयावह तस्वीर यदि समझना है तो यह जानना होगा कि वर्तमान समय में पूरी पृथ्वी पर लगभग 1500 लाख टन प्लास्टिक एकत्रित हो चुका है, जो पर्यावरण को क्षति पहुॅचा रहा है। भारत में रोजमर्रा के

85 प्रतिशत उत्पाद प्लास्टिक के है, देश में 3 किलो प्रतिव्यक्ति खपत है। तथा 700 टन प्लास्टिक कचरा प्रतिवर्ष निकल रहा है। प्लास्टिक प्रबंधन में जागरूकता व बचाव ही एक मात्र साधन है तथा ई-वेस्ट से निपटने का सबसे अच्छा मंत्र रिड्यूज, रियूज, रिसाइकिलिंग का है।

रिड्यूज – कम से कम कचरा पैदा होने दें। जब तक जरूरी न हो।

जरियूह – फिर से इस्तेमाल करें मरम्मत करवाकर उपयोग किया जा सकता है

रिसाइकिलिंग – कीमती हिस्सों और तत्वों का फिर से इस्तेमाल। कई कंपनियॉ ई-कचरे का निपटारा वैज्ञानिक तरीके से करती है, बेकार उपकरण ऐसी कम्पनियों को दें।

वर्तमान में प्लास्टिक के बढ़ते उपयोग को देखकर तथा कई जगह उसकी उपयोगिता देखकर कम तो नहीं किया जा सकता परन्तु उसका उपयोग थोड़ी सी समझदारी व जागरूकता के माध्यम से नियंत्रित किया जा सकता है। अत: वर्तमान समय में मानव स्वास्थ्य पर प्लास्टिक के दुष्प्रभाव व पर्यावरण पर इसके दुष्प्रभाव तथा असमय में मरने वाले पालतू पशु व समुद्री जीव को देखते हुए प्लास्टिक से तौबा करना होगी उसके विकल्पों को अपनाना होगा तथा प्लास्टिक का कम उपयोग, पुनर्उपयोग व पुनश्चक्रण अपनाकर हम प्लास्टिक पर्यावरण प्रबंधन में एक अच्छे नागरिक बनकर योगदान दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पर्यावरण अध्ययन – डॉ. विजय कुमार तिवारी।
2. विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र – बी.सी. सिन्हा।
3. पर्यावरण भूगोल – सचिन्द्र सिंह।
4. परीक्षा मंथन – पर्यावरण विशेषांक, जून।
5. विज्ञान प्रगति – पत्रिका – 2014
6. दैनिक भास्कर – समाचार पत्र – 3 जून 2015, जून 2016

****

भारत में खाद्य सुरक्षा एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली

डॉ. निर्मला वास्केल *

शोध सारांश – किसी देश की खाद्य सुरक्षा एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली सुनिश्चित होती है, जब उसके सभी नागरिकों को पोषक भोजन उपलब्ध होता है। सभी व्यक्तियों के पास स्वीकार्य गुणवत्ता के खाद्य खरीदने के सामर्थ्य होती है और भोजन तक पहुँचने में कोई अवरोध नहीं होना। निर्धनता रेखा के नीचे रह रहे लोग खाद्य की दृष्टि से सदैव ही असुरक्षित रह सकते हैं। जबकि सम्पन्न लोग भी आपदाओं के समय खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित हो सकते है। समाज के सभी वर्गो के लिए खाद्य की उपलब्धता सुनिश्चित करने के भारत सरकार ने सावधानीपूर्वक खाद्य प्रणाली तैयार की है, जिसके दो घटक है।

1. बफर स्टॉक और
2. सार्वजनिक वितरण प्रणाली।

सार्वजनिक वितरण प्रणली के अतिरिक्त कई निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम भी शुरू किए गए, जिनमें खाद्य सुरक्षा का घटक भी शामिल था। इनमें से कुछ **कार्यक्रम –** एकीकृत बाल विकास सेवाएँ, काम के बदले अनाज, दोपहर का भोजन, अंत्योदय अन्न योजना आदि। खाद्य सुरक्षा उपल्ब्ध कराने में सरकार की भूमिका के अतिरिक्त अनेक सहकारी समितियाँ और गैर सरकारी संगठन भी है, जो इस दिशा में तेजी से काम कर रहे हैं।

प्रस्तावना – खाद्य सुरक्षा का अर्थ है, सभी लोगों के लिए सदैव भोजन की उपलब्धता, पहुँच और उसे प्राप्त करने का सामर्थ्य। जब भी अनाज के उत्पादन या उसके वितरण की समस्या आती है, तो सहज ही निर्धन परिवार इससे अधिक प्रभावित होते है।

खाद्य सुरक्षा एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली, शासकीय सतर्कता और खाद्य सुरक्षा के खतरे की स्थिति में सरकार द्वारा की गई कार्यवाही पर निर्भर करती है।

खाद्य सुरक्षा क्या है ? – जीवन के लिए भोजन उतना ही आवश्यक हैं जितनी कि साँस लेने के लिए वायु। लेकिन खाद्य सुरक्षा मात्र दो जून की रोटी पाना नहीं है, बल्कि उससे कहीं अधिक है। खाद्य सुरक्षा के निम्नलिखित आयाम है –

- खाद्य उपलब्धता का तात्पर्य देश में खाद्य उत्पादन, खाद्य आयात और सरकारी अनाज भंडारों में संचित पिछले वर्षो के स्टॉक से है।
- पहॅुच का अर्थ है खाद्य प्रत्येक व्यक्ति को मिलता रहे।
- पहॅुच का अर्थ है लोगों के पास अपनी भोजन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त ओर पौष्टिक भोजन खरीदने के लिए धन उपलब्ध हो।

किसी देश में खाद्य सुरक्ष केवल तभी सुनिश्चित होती है, जब –

- सभी लोगों के लिए पर्याप्त खाद्य उपलब्ध हो।
- सभी लोगों के पास स्वीकार्य गुणवत्ता के खाद्य पदार्थ खरीदने की क्षमता हो।
- खाद्य की उपब्लधता में कोई बाधा नहीं हो।

खाद्य सुरक्षा क्यों? – समाज का अधिक गरीब वर्ग तो हर समय खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त हो सकता है परन्तु जब देश भुकंप, सुखा, बाढ़, सुनामी, फसलों के खराब होने से पैदा हुए अकाल आदि राष्ट्रीय आपदाओं से गुजर रहा हो, तो निर्धनता रेखा से ऊपर के लोग भी खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त हो सकते है।

किसी आपदा के समय खाद्य सुरक्षा कैसे प्रभावित होती है – किसी प्राकृतिक आपदा जैसे सूखे के कारण खाद्यान्न की कुल उपज में गिरावट आती है। इससे प्रभावित क्षेत्र में खाद्य की कमी हो जाती है। खाद्य की कमी के कारण कीमते बढ़ जाती है। कुछ लोग ऊँची कीमतों पर खाद्य पदार्थ नहीं खरीद सकते। अगर यह आपदा अधिक विस्तृत क्षेत्र में आती है, या अधिक लंबे समय तक बनी रहती है, तो भुखमरी की स्थिति पैदा हो सकी है। व्यापक भुखमरी से अकाल की स्थिति बन सकती है। अकाल के दौरान बड़े पैमाने पर होती है, जो भुखमरी तथा विवश होकर दूषित जल या सड़े भोजन के प्रयोग से फैलने वाली महामारियों तथा भुखमरी से उत्पन्न कमजोरी से रोगों के प्रति शरीर के प्रतिरोधी क्षमता में गिरावट के कारण होती है। भारत में जो सबसे अचानक अकाल पड़ा था, वह 1943 का बंगाल का अकाल था। इस अकाल में भारत के बंगाल प्रांत में तीस लाख लोग मारे गए थे।

खाद्य असुरक्षित कौन है? – यद्यपि भारत के लोगों का एक बड़ा वर्ग खाद्य एवं पोषण की दृष्टि से असुरक्षित है, परन्तु इससे सर्वाधिक प्रभावित वर्गो में निम्नलिखित शामिल है – भूमिहीन जो थोड़ी बहुत अथवा नगण्य भूमि पर निर्भर है, पारंपरिक दस्तकार, पारंपरिक सेवाएँ प्रदान करने वाले लोग, अपना छोटा–मोटा काम करने वाले कामगार और निराश्रित तथा भिखारी। शहरी क्षेत्रों में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित वे परिवार है जिनके कामकाजी सदस्य प्राय: कम वेतन वाले व्यवसायों और अनियत श्रम–बाजार में काम करते है। ये कामगार अधिकतर मौसमी कार्यो में लगे है और उनको इतनी कम मजदूरी दी जाती है कि वे मात्र जीवित रह सकते है। खाद्य पदार्थ खरीदने में असमर्थता के साथ सामाजिक संरचना भी खाद्य की दृष्टि से असुरक्षा में भूमिका निभाती है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ी जातियों के कुछ वर्गो का या तो भूमि का आधार कमजोर होता है या फिर उनकी भूमि की उत्पादकता बहुत कम होती है, वे खाद्य की दृष्टि से शीघ्र असुरक्षित हो जाते है वे लोग भी खाद्य की दृष्टि से सर्वाधिक असुरक्षित हो जाते है, जो प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित है, जिन्हें काम की तलाश में

* 210 त्रिमूर्ति नगर, धार (म.प्र.) भारत

दूसरी जगह जाना पड़ता है। कुपोषण से सबसे अधिक महिलाएं प्रभावित होती है यह गंभीर चिंता का विषय है, क्योंकि इससे जन्में बच्चों को भी कुपोषण का खतरा रहता है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य और पारिवारिक सर्वेक्षण (एन.एच.एफ.एस. 1998-99) के अनुसार भारत में ऐसी महिलाओं और बच्चों की संख्या 11 करोड़ के लगभग है।)

भुखमरी खाद्य की दृष्टि से असुरक्षा को इंगित करने वाला दूसरा पहलू है। भुखमरी गरीबी की एक अभिव्यक्ति मात्र नहीं है, यह गरीबी लाती है। इस तरह खाद्य की दृष्टि से सुरक्षित होने से वर्तमान में भुखमरी समाप्त हो जाती है और भविष्य में भुखमरी का खतरा कम हो जाता है। गरीब लोग अपनी अत्यन्त निम्न आय और जीवित रहने के लिए खाद्य पदार्थ खरीदने में अक्षमता के कारण दीर्घकालिक भुखमरी से ग्रस्त होते है।

स्वतंत्रता के बाद खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता होना भारत का लक्ष्य रहा हैं। खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के सभी उपाय किये गये, भारत ने कृषि में एक नयी रणनीति अपनाई, जिसकी परिणिति हरितक्रांति में हुई, विशेषकर गेहूँ और चावल के उत्पादन में 70 के दशक के प्रारंभ में हरितक्रांति के आने के बाद से मौसम की विपरीत दशाओं के दौरान भी देश में अकाल नहीं पड़ा है।

देश भर में उपजाई जाने वाली विविध फसलों के कारण भारत पिछले तीस वर्षो के दौरान खाद्यान्नों के मामले में आत्मनिर्भर बन गया है। सरकार द्वारा सावधानीपूर्वक तैयार की गई खाद्य सुरक्षा व्यवस्था के कारण देश में अनाज की उपलब्धता और भी सुनिश्चित हो गई। इस व्यवस्था के दो घटक है -

(क) बम्फर स्टॉक और (ख) सार्वजनिक वितरण प्रणाली

बम्फर स्टॉक क्या है? - बम्फर स्टॉक भारतीय खाद्य निगम (एफ.सी.आई) के माध्यम से सरकार द्वारा अभिप्राप्त अनाज, गेहूँ और चावल का भंडार है भारतीय खाद्य निगम अधिषेष उत्पादन वाले राज्यों में किसानों से गेहूँ और चावल खरीदता है। किसानों को उनकी फसल के लिए पहले से घोषित कीमतें दी जाती है। इस मूल्य को न्यूनतम समर्थित कीमत कहा जाता है। इन फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से बुआई के मौसम से पहले सरकार न्यूनतम समर्थित कीमत की घोषणा करती है। खरीदे हुए अनाज खाद्य भंडारों में रखे जाते हैं। क्या आप जानते है कि सरकार बफर स्टॉफ क्यों बनाती है? ऐसा कमी वाले क्षेत्रों में और समाज के गरीब वर्गों में बाजार कीमत से कम कीमत पर अनाज के वितरण के लिए किया जाना है। इस कीमत को निर्गम कीमत भी कहते है। यह खराब मौसम में या फिर आपदाकाल में अनाज की कमी समस्या हल करने में भी मदद करना है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली क्या है? - भारतीय खाद्य निगम द्वारा अभिप्राप्त अनाज को सरकार विनियमित राशन दुकानों के माध्यम से समाज के गरीब वर्गो में वितरित करती है। इसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पी.डी.एस.) कहते है। अब अधिकांश क्षेत्रों, गाँवों, कस्बों और शहरों में राशन की दुकाने हैं। देशभर में लगभग 4.6 लाख राशन की दुकानें है। राशन की दुकानों में, जिन्हें उचित दर वाली दुकानें कहा जाता है, चीनी खाद्यान्न और खाना पकाने के लिए मिट्टी के तेल का भंडार होता है। ये सब बाजार कीमत से कम कीमत पर लोगों को बेचा जाता है। राशन कार्ड रखने वाला कोई भी परिवार प्रतिमाह इनकी अनुबंधित मात्रा (जैसे 35 किलोग्राम अनाज, 5 लीटर मिट्टी का तेल, 5 कि.ग्रा. चीनी आदि) निकटवर्ती राशन की दुकान से खरीद सकता है।

राशन कार्ड तीन प्रकार के होते है -

1. निर्धनों में भी निर्धन लोगों के लिए अंत्योदय कार्ड
2. निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों के लिए बी.पी.एल. कार्ड
3. अन्य लोगों के लिए ए.पी.एल. कार्ड।

भारत में राशन व्यवस्था की शुरूआत बंगाल के अकाल की पृष्ठभूमि में 1940 के दशक में हुई। हरितक्रांति से पूर्व भारी खाद्य संकट के कारण 60 के दशक के दौरान राशन प्रणाली पुनर्जीवित की गई। गरीबी के उच्च संकटों को ध्यान में रखते हुए 70 के दशक के मध्य एन.एस.एस.ओ. की रिपोर्ट के अनुसार खाद्य संबंधी तीन महत्वपूर्ण कार्यक्रम प्रारंभ किये गये।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली (जो पहले से ही थी, लेकिन उसे और मजबूत किया गया) एकीकृत बाल विकास सेवाएं (आई.सी.डी.एस. जो प्रायोगिक आधार पर 1975 में शुरू की गई) और काम के बदले अनाज (एफ.एफ.डब्ल्यू. 1977-78 में प्रारंभ) इन वर्षो में कई नए कार्यक्रम शुरू किए गए है और कार्यक्रमों का पुनर्गठन किया गया। वर्तमान में अनेक गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम (पी.ए.पी.) चल रहे है जो अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में है। इनमें स्पष्ट रूप से घटक खाद्य भी है, जहाँ सार्वजनिक वितरण प्रणाली, दोपहर का भोजन आदि विशेष रूप से खाद्य की दृष्टि से सुरक्षा के कार्यक्रम है। अधिकतर पी.ए.पी. भी खाद्य सुरक्षा बढ़ाते है, रोजगार कार्यक्रम गरीबों की आय में बढ़ोत्तरी खाद्य सुरक्षा में बड़ा योगदान करते है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की वर्तमान स्थिति - सार्वजनिक वितरण प्रणाली खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में भारत सरकार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम है। प्रारंभ में यह प्रणाली सबके लिए थी और निर्धनों और गैर-निर्धनों के बीच कोई भेद नहीं किया जाता था। बाढ़ के वर्षो में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अधिक दक्ष और अधिक लक्षित बनाने हेतु संशोधित किया गया। 1992 में देश के 1700 ब्लॉकों में संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (आर.पी.डी.एस.) शुरू की गई। इसका लक्ष्य दूर-दराज और पिछड़े क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली से लाभ पहुँचाना था। जून 1997 से सभी क्षेत्रों में गरीबों को लक्षित करने के सिद्धांत को अपनाने के लिए लक्षित करने के सिद्धांत को अपनाने के लिए लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टी.पी.डी.एस) प्रारंभ की गई। यह पहला मौका था जब निर्धनों और गैर-निर्धनों के लिए विभेदक कीमत नीति अपनाई गई। इसके अलावा 2000 में दो विशेष योजनाएँ अंत्योदय अन्य योजना और अन्नपूर्णा योजना प्रारंभ की गई। ये योजनाएँ क्रमशः गरीबों में भी सर्वाधिक गरीब और दीन वरिष्ठ नागरिक समूहों पर लक्षित है। इन दोनों योजनाओं का संचालन सार्वजनिक वितरण प्रणाली के वर्तमान नेटवर्क से जोड़ दिया गया है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं का सारांश सारणी 1 में दिया गया है।

सारणी 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

इन वर्षो के दौरान सार्वजनिक वितरण प्रणाली मूल्यों को स्थिर बनाने और सामर्थ्य अनुसार कीमतों पर उपभोक्ताओं को खाद्यान्न उपलब्ध कराने की नीति में सर्वाधिक प्रभावी साधन सिद्ध हुई है। इसने देश के अनाज की अधिषेष क्षेत्रों से कमी वाले क्षेत्रों में खाद्य पूर्ति के माध्यम से अकाल और भुखमरी की व्यापकता को रोकने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। इसके अतिरिक्त, आमतौर पर निर्धन परिवारों के पक्ष को कीमतों का संशोधन होता रहा है। न्यूनतम समर्णित कीमत और अधिप्राप्ति ने खाद्यान्नों के उत्पादन की वृद्धि में योगदान दिया है तथा कुछ क्षेत्रों में किसानों को आय सुरक्षा प्रदान की है।

तथापि सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अनेक आधारों कड़ी/आलोचना का सामना करना पड़ता है। अनाजों से ठसाठस भरे अन्य भंडारों के बावजूद भुखमरी की घटनाएँ हो रही है। एफ.सी.आई. के भंडार अनाज से भरे है। कहीं अनाज सड़ रहा है, तो कुछ स्थानों पर चूहे अनाज खा रहें है।

चिंता का एक और प्रमुख कारण सार्वजनिक वितरण प्रणाली की विफलता रहीं है, जो इस तथ्य से स्पष्ट है कि अखिल भारतीय स्तर पर पी.डी.एस. खाद्यान्नों की औसत मात्रा 1 किलोग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह है। बिहार, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश में उपभोग का आँकड़ा 300 ग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह से भी कम है। इसके विपरीत केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु जैसे अधिकतर दक्षिणी राज्यों में और हिमाचल प्रदेश में औसत उपभोग 3-4 किलोग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह के बीच है। फलस्वरूप निर्धनों को अपनी सत्य आवश्यकताओं के लिए राशन दुकान के बजाय बाजार पर निर्भर होना पड़ता है। मध्यप्रदेश में निर्धनों द्धारा गेहूँ और चावल के उपभोग की मात्र 5 प्रतिशत राशन की दुकानों के माध्यम से पूरा होता है। उत्तरप्रदेश और बिहार में यह प्रतिशत और भी कम है।

पी.डी.एस. डीलर अधिक लाभ कमाने के लिए अनाज को खुले बाजार में बेचना, राशन दुकानों में घटिया अनाज बेचना, दुकान कभी-कभार खोलना जैसे कदाचार करते हैं। राशन दुकानों में घटिया किस्म के अनाज का पड़ा रहना आम बात है, जो बिक नहीं पाना। यह एक बड़ी समस्या साबित हो रही है। जब राशन की दुकानें इन अनाजों को बेच नहीं पाती, तो एफ.सी.आई. के गोदामों में अनाज का विशाल स्टॉक जमा हो जाता है।

हाल के वर्षो में एक और कारण से सार्वजनिक वितरण प्रणाली में गिरावट आई हैं। पहले प्रत्येक परिवार के पास निर्धन या मेरे निर्धन राशन कार्ड था जिसमें चावल, गेहूँ, चीनी आदि वस्तुओं का एक निश्चित कोटा होता था। ये प्रत्येक परिवार को एक समान निम्न कीमत पर बेचे जाते थे। आज आप जो तीन प्रकार के कार्ड और कीमतों की श्रृंखला देखते है, पहले यह नहीं थी। बड़ी संख्या में परिवार राशन की दुकानों से अनाज खरीद सकते हैं। हाँ उनका कोटा निश्चित था। इनमें निम्न आय वर्ग के परिवार शामिल थे, जिनकी आय निर्धनता रेखा के नीचे के परिवार की आय से थोड़ी ही अधिक थी। अब तीन भिन्न वाले किसी भी परिवार को राशन दुकान पर बहुत कम छूट मिलती है। ए.पी.एल. परिवारों के लिए कीमतें लगभग उतनी ही ऊँची है, जितनी खुले बाजार में, इसलिए राशन की दुकान से इन चीजों की खरीदारी के लिए उनको बहुत कम प्रोत्साहन प्राप्त है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

सारणी 1 - सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ

योजना का काम	आरंभ का वर्ष	लक्षित समूह	अघनन मात्रा	निर्गम कीमत
सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1992तक	सार्वजनिक	- -	गेहूँ :- 2.34 चावल :- 2.89
संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1992	पिछड़े ब्लॉक	20 कि. खाद्यान्न	गेहूँ :- 2.80 चावल :- 3.77
लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1997	निर्धन और गैर निर्धन	35 कि.खाद्यान्न	बीपीएल गेहूँ :-2.50 चावल :- 3.50 बीपीएल गेहूँ : 4.50 चावल :- 7.00
अंत्योदय अन्न योजना	2000	निर्धनों में सबसे निर्धन	35 कि.खाद्यान्न	गेहूँ :- 2.00 चावल :- 3.00
अन्नपूर्णा योजना	2000	दीनवरिष्ठ नागरिक	10 कि. खाद्यान्न	नि:शुल्क

नोट - बीपीएल निर्धनता रेखा के नीचे, एपीएल निर्धनता रेखा से ऊपर।

****

ए स्टडी ऑफ ऐजिंग पॉपुलेशन

डॉ. प्रीति श्रीवास्तव *

शोध सारांश – ऐजिंग एक प्राकृतिक प्रकिया है, जो जन्म के साथ शुरू होती है व मृत्यु के साथ समाप्त होती है। ऐजिंग का अर्थ अलग-अलग समूह वर्ग के लिए अलग-अलग होता है। हर व्यक्ति अपनी ढलती उम्र को अलग-अलग तरह से स्वीकार करते हैं। कुछ इसे दुखद अनुभव समझते है, कुछ लोग नयी राह चुनने का समय मानते है। वृद्ध अवस्था के दो पहलू हैं, एक तरफ धन का अभाव, समाज व अपनों से दूर होना, अस्वस्थ रहना आदि। दूसरी दिशा में बढ़ती आयु के साथ ज्ञान, अनुभव आदि जैसे आशावादी कारण भी उत्पन्न होते हैं। अर्थव्यवस्था में वृद्धों का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है।
जिससे अर्थव्यवस्था पर व्यय संबंधी भार भी बढ़ता जा रहा है। वृद्ध लोगों की समस्याओं में सबसे प्रमुख है समाज में स्थान तथा सम्मान में गिरावट, स्वास्थ्य का गिरता स्तर, आय में कमी और खालीपन। देखा गया है कि अधिकांश समस्याओं का कारण धन है। अगर धन नहीं हो तो समाज व परिवार में सम्मान भी अधिक नहीं रहता है। अत: वृद्धावस्था में आय की कमी एक मुख्य समस्या है।

बुजुर्गों की एक और प्रमुख समस्या है और वो है, उनकी सामाजिक स्थिति में गिरावट और उनका खालीपन जो बहुत बड़ी समस्या है। अत: हमने अपने अध्ययन में वृद्ध जनसंख्या की सामाजिक व आर्थिक स्थिति के संदर्भ में ध्यान आकर्षित किया है।
शब्द कुंजी–ऐजिंग, वृद्धावस्था, सामाजिक स्थिति, आर्थिक स्थिति, स्वास्थ्य समस्याऐं, आश्रित जनसंख्या, नैतिक जिम्मेदारियाँ उपभोक्तावाद, शहरीकरण।

प्रस्तावना – ऐजिंग का अर्थ अलग-अलग समूह वर्ग के लिए अलग-अलग होता है। उच्च वर्ग के लोगों में जैसे-राजनेता, वकील, डॉक्टर व पूँजीपति आदि के संदर्भ में ऐजिंग का अर्थ उनकी स्थिति में और सुधार, धन का अधिक संचय और सामाजिक स्थिति को और बेहतर बनाना और अधिक शक्ति का संचय है। यहाँ ये सफलता और शक्ति को अपनी व्यय हुई युवा अवस्था की भरपाई मानते हैं मध्यम वर्ग के संबंध में ऐजिंग का अर्थ उनका अपने कार्यकाल से बिना इच्छा के सेवा निवृत्त से है। वे अपने पेंशन फंड पर निर्भर हो जाते हैं और निम्न वर्ग व मजदूर वर्ग के संदर्भ में वे अपने को आर्थिक रूप से पूर्णत: आश्रित मान लेते हैं।

ऐजिंग मुख्य रूप से दो प्रकार की होती है।

1. फिजिकल ऐजिंग अर्थात् शारीरिक रूप से आये हुए परिवर्तनों के आधार पर जैसे बाल पक जाना, दाँत कमजोर होकर टूट जाना, दृष्टि कमजोर होते जाना, शरीर दुर्बल होना।
2. सोशल ऐजिंग अर्थात् सामाजिक स्तर में आये हुए परिवर्तन से है, जैसे कि नौकरी से सेवा निवृत्त हो जाना बच्चों का विवाह सम्पन्न कर देना, नाती-पोतो का आगमन होना आदि।

मनुष्य वृद्ध कब होता है, यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसका उत्तर इतना आसान नहीं है, अगर सिर्फ आयु ही एक पैमाना है, तो भी उसका सही आंकलन इतना आसान नहीं है। कुछ लोग 40 वर्ष के होते हुए भी 60 वर्ष के लगते है। और कुछ लोग 60 वर्ष के होते हुए भी 40 वर्ष के लगते हैं। वृद्धावस्था सिर्फ उम्र का आकलन नहीं बल्कि शरीर और मन के सामन्जस्य का आकलन है।
Charlies S. Becker ने ऐजिंग को समझाया है, "as those changes occurring in an individual as the result of passage of time'

बेकर ने ऐजिंग को समझाते हुए बताया है कि वो परिवर्तन जो किसी भी व्यक्ति में समय के बीतने के साथ-साथ आता है उसे एजिंग कहते हैं। उनके अनुसार परिवर्तन का अर्थ शारीरिक, मानसिक सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन से है।

हमारे अध्ययन में ऐजिंग पापुलेशन के अंतर्गत 60 वर्ष व उससे अधिक आयु वर्ग के वृद्ध व्यक्तियों को सम्मलित किया गया है।

साधारणतय: एक व्यक्ति को वृद्ध तब कहा जाता है, जब वह अपने बच्चों का विवाह कर दे और वह बाबा या दादी बन जाये। पुत्र की शादी या बहु का आगमन मनुष्य के जीवन में एक ऐसा मोड़ है, जो उसे युवा से वृद्ध की श्रेणी में ला देता है।

ग्रामीण भारत में वृद्ध लोग समाज में बड़ा योगदान देते हैं। गाँव में पंचायत हुआ करती है। यह पंचायत पाँच वृद्धों का समूह होता है, जिनका चुनाव उनकी योग्यता और अनुभव के आधार पर होता है। वे गाँव के किसी भी मामले में अपना फैसला देते हैं और झगड़ों को अपने अनुभवों के आधार पर सुलझाते हैं। और इस तरह गाँव के विकास में अपना योगदान देते हैं।

शहरी क्षेत्र में इस तरह की पंचायत तो नहीं होती पर घर में सबसे बड़े होने के नाते उन्हें मुखिया का दर्जा प्राप्त होता है। उनके फैसलों को कोई भी बदल नहीं सकता, वह सम्पूर्ण सम्पत्ति का मालिक होता है और इस बात का निर्धारण करता है कि उसके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा कैसे होगी, उनका विवाह कब और कहाँ होगा। वह एक छत की तरह पूरे परिवार को उसके नीचे समेटे रहते हैं और बाहर से आने वाले हर धूप, पानी अर्थात कष्टों से उनको बचाते हैं। यह उनका दायित्व होता है कि वह उनको सही राय और दिशा-निर्देश दें।

धीरे-धीरे संयुक्त परिवार का चलन खत्म हो रहा है। वृद्धों को देखभाल के लिए बच्चों पर निर्भर रहना पड़ता है, हालांकि अब सरकार विभिन्न तरीकों से उनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति को सुधार रही है, पर फिर भी यह तभी सम्भव है, जब उनके बच्चे अपने नैतिक जिम्मेदारियों को समझें। बच्चों के बढ़तें हुए खर्च, उनके शौक, उनकी जरूरतों को पूरा करने की वजह से परिवार संकुचित होता जा रहा है। व्यक्ति हमारा परिवार से मेरे परिवार पर आ गया है। स्वच्छंद वातावरण और आजादी से जीने की ललक ने पीढ़ियों के

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) सजंय गांधी स्मृति महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

अन्तर को और बढ़ा दिया है। हर बच्चे को व्यक्तिगत स्वतंत्रता चाहिए, एक अलग कमरा चाहिए, इन्हीं सब वजहों से वृद्ध अपने आप को व्यवस्थित नहीं कर पाते और धीरे-धीरे दूरियाँ आ जाती हैं।

बहुत से कारक हैं, जो वृद्धों के प्रति बच्चों के लगाव, उनके स्वास्थ्य तथा सुरक्षा को प्रभावित करते हैं, जैसे कि जीवन मूल्यों में बदलते स्तर, सिर्फ अपने या अपने परिवार के लिए सोचना और उपभोक्तावादी होना, उच्च शिक्षा, शहरीकरण पश्चिमी सभ्यता के प्रति लगाव और औद्यीगिकरण, ये सारे वे कारक हैं। जो किसी भी मनुष्य को सिर्फ अपने उत्थान के प्रति सोचने को प्रेरित करता है, साथ ही महिलाओं को घर से बाहर निकल कर रोजगार करने के लिए। इसका परिणाम यह होता है कि बुजुर्ग माँ-बाप को जिन्हें चलने के लिए सहारा चाहिए, उनको अकेला छोड़ सब अपने अपने काम में व्यस्त हो जाते हैं। धीरे-धीरे उन वृद्धों को ये लगने लगता है कि शायद वे अपने परिवार के लिए बोझ बनते जा रहे हैं।

अत: वह उनसे दूर जाने का मन बनाने लगते हैं और चले भी जाते हैं। युवा वर्ग नौकरी की तलाश में बड़े-बड़े महानगरो में छोटे से कमरों में रहते हैं। महंगा किराया उन्हें छोटे से कमरो में रहने के लिए विवश करता है। ऐसे में माँ बाप को अपने साथ रखने की स्थिति नहीं बन पाती। कमाई का बहुत बड़ा हिस्सा अपने बच्चों की पढ़ाई और परवरिश पर खर्च हो जाता है। आज की शिक्षा इतनी मंहगी हो गई है कि एक मध्यम वर्गीय व्यक्ति के लिए अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाना कठिन काम है, वह इतने दबाब में रहता है कि उसको अपने सुख -सुविधाओं का भी ध्यान नहीं रहता, ऐसे में वृद्धों के प्रति उसके व्यय को गुंजाइश नहीं रहती, अगर वह पूर्णत: बच्चों पर निर्भर हो तो उसकी स्थिति बहुत दयनीय हो जाती है। शहरी क्षेत्र में वही वृद्ध सुखी हैं जो शारीरिक रूप से स्वस्थ्य है तथा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर तथा किसी न किसी कार्य में अपने आप को व्यस्त किए हुए हैं।

हर व्यक्ति अपनी ढलती उम्र को अलग-अलग तरह से स्वीकार करते हैं। कुछ इसे दुखद अनुभव समझते हैं तथा कुछ लोग उन कार्यो को करने की कोशिश करते हैं, जिन्हें करने का समय ही नहीं मिल पाता।

वृद्धावस्था के दो पहलू हैं, एक तरफ धन का अभाव, समाज व अपनों से दूर होना अस्वस्थ रहना आदि जैसे निराशावादी कारक प्रबल होने का प्रयास करते हैं। दूसरी दिशा में बढ़ती आयु के साथ ज्ञान, अनुभव आदि जैसे आशावादी कारण भी उत्पन्न होते हैं कि वह इनमें से किसको अपने ऊपर प्रबल होन देते हैं। पूर्वी देशों में जैसे जापान, चाइना वृद्धावस्था को खुशी-खुशी अपनाने का प्रयास रहता है। क्योंकि इनमें जो कारक सम्मिलित हैं। उनकी महानता इन देशों में अधिक मानी जाती है। इसी प्रकार भारत में हमारे ऋषि मुनि साधुसंत का भी महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है, और यही कारण है कि धार्मिक गोष्ठी व प्रवचन में लोग भारी मात्रा में जाते हैं। साथ ही अनेक प्रकार से तनाव व कठिनाईयों का जब व्यक्ति सामना नहीं कर पाता तब वह ऐसे महानुभवों के निकट जाने का प्रयास करता है। ताकि उनकी शरण में रह कर मनुष्य को जीवन के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सके और इन्हें नई दृष्टि से देखने का प्रयास कर सके, जिससे उनको शांति मिल सके।

निष्कर्ष - वृद्धावस्था एक ऐसी अवस्था है, जिसका आंकलन नितांत आवश्यक है। फिर चाहे वह उसके व्यक्तिगत जीवन पर हो, उसकी आर्थिक स्थिति पर हो या उसकी सामाजिक दायित्व पर हो या फिर अन्य किसी क्षेत्र में।जिस प्रकार राष्ट्र का विकास उस देश के युवाओं पर निर्भर है, उसी प्रकार उसकी समृद्धि वहाँ के वृद्ध व्यक्तियों पर निर्भर है। वृद्ध व्यक्ति उस विशालकाय वृक्ष की तरह है जो अब फल तो नहीं दे सकता पर छाया आज भी दे सकता है। हमें यहाँ उनकी योग्यता को समझना होगा। किसी भी राष्ट्र के विकास में युवाओं और वृद्धों का सामंजस्य होना बहुत जरूरी है।

नीतिगत सुझाव-औधोगिकीकरण, शहरीकरण, उपभोक्तावाद व व्यक्तिवाद के कारण संयुक्त परिवार टूट रहा है तथा इन कारणों से सामाजिक, आर्थिक व स्वास्थ्य संबंधी आदि समस्याएँ उत्पन्न होती है। इनके निराकरण हेतु इस शोध में कुछ नीतिगत सुझाव देने का प्रयास किया गया है। कि परिवार, समाज व देश में वृद्धों को महत्व देने की आवाश्यकता है। इनके लिए अपने घर परिवार से ही आरम्भ करना होगा तथा परिवार के सदस्यों को अपने अंदर झाँककर उत्तरदायित्व व करूणा का भाव जाग्रत करने की आवश्यकता है। आज के माता-पिता से यह आपेक्षित है कि वह अपनी संतान में ऐसे संस्कार डालें कि वे बड़ो व वृद्धों का सम्मान व आदर करें। युवाओं को यह एहसास दिलाने की आवश्यकता है कि वे भी इस अवस्था से गुजरेंगे, इसलिए सदैव बड़ों का सम्मान करें युवाओं में वृद्धों के प्रति सेवा-भाव को भी बढ़ावा देने की आवश्यकता है जिससे बुजुर्गो में अपनत्व का एहसास हो और वे अपने आप को अकेलापन महसूस न करें।

अंतत: कह सकते हैं कि वृद्धों को परिवार समाज व देश में सम्मान, सहयोग और सुरक्षा उपलब्ध कराने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Muttagi P.K. (1997) 'Ageing issue and old age care' New delhi classical publishing.
2. Selye Hens (1960) " The philosophy of stress, in Tibitts, clark and Donahue, crilma (ed.) Aging in todays society, prentia /Hall.
3. Becker charlies S. (1959) Physical Functioning of older People in Towards better Understanding of the Ageing , Council on social work.
4. Bose, A. B (1888) Ageing in India : Demographic Dimension. The Ageing in India: Problems and Potentialities, New Delhi, Abhinar Publication.
5. मनुस्मृति गंगानाथ झा द्वारा सम्पादित।
6. आर.एस. त्रिपाठी, इण्डियन आर्कियोलॉजी 1954-1955

****

महिला सशक्तिकरण - पृष्ठ भूमि, महत्व एवं आर्थिक विकास

डॉ. ममता नामदेव *

प्रस्तावना – किसी देश की आर्थिक, सामाजिक संरचना में जब विकास के बीज डाले जाते हैं। प्रगति की सिंचाई की जाती है वृद्धि की खाद पड़ती है तो संरचना में नई फसल नई सोच के साथ उगती है। देश के आर्थिक विकास को विभिन्न योजनाओं द्वारा एक स्वरूप दिया गया है। आर्थिक, सामाजिक विकास और प्रगति को लोकतंत्रीय राजनीतिक मॉडल से निर्मित किया गया है। यह गहराई से महसूस किया जा रहा है कि देश की आधी आबादी का यदि समुचित विकास नहीं हुआ तो प्रगति नहीं हो सकती है। स्त्री पुरुष की विकास के कार्यों में सहभागिता ही देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करती है। इस दृष्टि से स्त्री और पुरूष के मध्य शक्ति का संतुलन होना अत्यन्त आवश्यक है, इसके लिए आवश्यक है कि स्त्री को प्रत्येक दृष्टि से सक्षम, योग्य, शिक्षित और प्रगतिशील बनाया जाए। उसे देश व विदेश की महिलाओं की भूमिकाओं से अवगत कराया जाए।

महिला सशक्तिकरण की पहल सर्वप्रथम 1985 में नेरौबी में संपन्न अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में की गई थी। इसके बाद विश्व के सभी भागों में इसने एक आंदोलन का रूप ले लिया।

लोकतंत्र में महिला सशक्तिकरण की पहली नींव उस दिन पड़ी जिस दिन हर व्यस्क महिला को पुरुषों की बराबरी में मतदान करने और चुनाव में खड़े होने का हक मिला। आजादी की लड़ाई में उनके योगदान के फलस्वरूप पहले चुनाव में कई महिलाओं ने विजय प्राप्त की। संविधान में संशोधन करके ग्राम पंचायत की जो नई विधा लाई गई उसमें महिलाओं के लिए आरक्षण रखा गया। जिसके परिणामस्वरूप जाग्रति और सशक्तिकरण की एक नई लहर आई। नव निर्वाचित कई महिला पंचो और सरपंचो ने पिछले वर्षो में महिला शिक्षा, ग्रामीण विकास, शराबबन्दी, जलसंचारण के क्षेत्रों में महिलाओं ने बेहतर भूमिका का निर्वहन किया है।

महिलाओं को जिस तरह पंचायतों में आरक्षण दिया गया है और वे अपने लक्ष्य पर खरी उतरी उसी तरह महिलाओं को हर क्षेत्र में महत्व देने की आवश्यकता है ताकि समाज और देश के विकास में प्रगति हो सकें।

सशक्तिकरण – सशक्तिकरण एक बहु आयामी धारणा है और इसका संबंध लोगों की सामाजिक उपलब्धियों आर्थिक और राजनीतिक सहभागिता से जुड़ा होता है। इसके साथ ही सशक्तिकरण एक सतत् प्रक्रिया है। सशक्तिकरण का सार जाति, लिंग, आयु व शारीरिक अपूर्णता के कारण उपेक्षित वंचित असमानता के शिकार लोगों के उत्थान में निहित है।

महिला सशक्तिकरण – महिला सशक्तिकरण का सामान्य अर्थ है महिला को शक्ति संपन्न बनाना परन्तु व्यापकता में इसका अभिप्राय सत्ता प्रतिष्ठानों एवं जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं की साझेदारी से है। निर्णय लेने में क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक कहा जा सकता है। इस प्रकार महिला सशक्तिकरणा से तात्पर्य महिलाओं को पुरुषों के बराबर वैधानिक, राजनीतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में निर्णय लेने की स्वायत्तता से है। महिलाओं को सही अर्थो में सशक्त और समर्थ बनाने के लिए जरूरी है कि पहले उन्हें अपने घर में अधिकार मिले, यह प्रक्रिया घर और बाहर साथ-साथ चलानी होगी। परिवार में और कार्य स्थल में भी उन्हें पुरुषों के समान ही अधिकार मिलना चाहिए। महिला सशक्तिकरण का सबसे व्यापक तत्व है, उन्हें सामाजिक पद प्रतिष्ठा और न्याय प्रदान करना।

महिला सशक्तिकरण के प्रमुख लक्षण है- शिक्षा, सामाजिक असमानता और स्थिति, बेहतर स्वास्थ्य, आर्थिक अथवा वित्तीय सुदृढ़ता और राजनीतिक सहभागिता।

प्रतापमल देवपुरा- सशक्ति के लिए लिखते है 'महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य है सामाजिक सुविधाओं की उपलब्धता, राजनीतिक और आर्थिक नीति निर्धारण में भागीदारी, समान कार्य के लिए समान वेतन, कानून के तहत सुरक्षा एवं प्रजनन अधिकारों आदि को इसमें सम्मिलित किया जाता हैं। महिलाओं को जागरूक करके उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य संबंधित साधनों को उपलब्ध कराया जाए, ताकि उनके लिए सामाजिक न्याय और पुरुष महिला समानता का लक्ष्य हासिल हो सके। सशक्तिकरण का अभिप्राय सत्ता प्रतिष्ठानों में स्त्रियों की साझेदारी से भी है। क्योंकि निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है।

उपर्युक्त परिभाषा महिला सशक्तिकरण के कुछ परिभाषित मानक को इस प्रकार प्रस्तुत कर रही है-

1. महिलाओं के आत्म सम्मान व आत्म विश्वास की भावना विकसित करना।
2. महिलाओं की सकारात्मक छवि का निर्माण- यह कार्य सामाजिक-आर्थिक जीवन में उनके योगदान को मान्यता देकर किया जा सकता है।
3. महिलाओं में आलोचनात्मक चिंतन की क्षमता का विकास करना।
4. निर्णय लेने की क्षमता का पोषण व उसे उन्नत करना।
5. विकास प्रक्रिया में समान भागीदारी सुनिश्चित करना।
6. आर्थिक स्वतन्त्रता हेतु सूचना ज्ञान व कुशलता उपलब्ध करना।
7. महिलाओं के कानूनी ज्ञान का विकास तथा स्वयं के अधिकारों संबंधी सूचनाओं तक उनकी पहुंच को सुनिश्चित करना।
8. सामाजिक-आर्थिक जीवन के सभी क्षेत्रों में समान रूप से उनकी सहभागिता में वृद्धि हेतु प्रयास करना।

इस प्रकार स्पष्ट है कि महिला सशक्तिकरण की अवधारणा व्यापक भी है और विशाल भी।

महिला सशक्तिकरण महत्व – भारत शासन ने वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया वर्ष 2001 को पूरे वर्ष भर आयोजित होने

* अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय शमशाबाद, विदिशा (म.प्र.) भारत

वाले कार्यक्रमों में महिलाओं के अधिकार, आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक सशक्तिकरण, राजनीतिक सशक्तिकरण जैसे विषयों को शामिल किया गया। अब यह माना जाने लगा है कि सुशासन का सीधा संबंध महिला सशक्तिकरण से है। राष्ट्र के व्यापक विकास में भी महिला सशक्तिकरण की अहम भूमिका को स्वीकार किया जाने लगा है। वर्तमान समय में भारतीय महिलाओं के स्तर सुधारने उनको पुरुषों के साथ समान स्तर लाने के लिए अनेक स्वेच्छिक महिला संगठन निर्मित किए गए हैं। इस योजना के अंतर्गत स्वसहायता समूहों का निर्माण करके पुरुष व महिलाएं आय सर्जक गतिविधियों को संपन्न करते हैं तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करते हैं।

महिला सशक्तिकरण में सूक्ष्म वित्त सेवाओं का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। वर्तमान में सरकार सूक्ष्म वित्त के माध्यम से महिला सशक्तिकरण हेतु प्रयासरत है। सूक्ष्म वित्त वह अत्यंत छोटी ऋण राशियां होती है जो उन महिलाओं को दी जाती है जो अत्यंत निर्धन है और उनके पास ऋण की पहुंच नहीं है। इसमें वे महिला शामिल होती है जिनके पास बैंकों से ऋण प्राप्त करने के बदले जमानत रखने के लिए कुछ भी नहीं होता है। म.प्र. ने अल्पसाख की विभिन्न योजनाएं शासन के विभिन्न विभागों जैसे पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग, म.प्र. महिला वित्त एवं विकास निगम के अंतर्गत संचालित है। महिलाओं द्धारा आत्मनिर्भरता प्राप्त करना ही सच्चे मायने में सशक्तिकरण है।

20वीं शताब्दी में भारत में स्त्रियों की स्थिति में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ। महिलाओं के लिए अब कोई क्षेत्र ऐसा नहीं रहा, जहां उनकी पहुंच न हो आज विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की जागरूकता एवं सहभागिता को देखते हुए कहा जा सकता है कि घर हो या दफ्तर आज प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएं अपने को सिद्ध कर रहीं हैं तथा आज अंतरिक्षयान तक की यात्रा कर रहीं हैं।

महिला सशक्तिकरण एवं आर्थिक विकास – आर्थिक विकास आर्थिक जगत की सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या है। विकासशील देशों के लिए यह इसलिए महत्वपूर्ण है कि आर्थिक विकास के रूप में वे अपनी सामान्य निर्धनता, पिछड़ेपन और अस्वाभाविक घुटन से छूटकारा पा सकते हैं, तो दूसरी तरफ विकसित देशों के लिए आर्थिक विकास का महत्व इसको निरंतर रूप से बनाए रखने में निहित है।

आर्थिक विकास हेतु मानव पूंजी अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि मानवीय साधनों की कुशलता एवं दक्षता पर ही आर्थिक विकास का ढांचा खड़ा किया जा सकता है। चूंकि महिलाएं मानव संसाधनों की आधी फीसदी जनसंख्या है अत: मानव पूंजी निर्माण की दृष्टि से महिलाओं का विकास अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

महिलाएं सामाजिक व्यवस्था की धूरी है, समाज की संरचना एवं विकास में उनकी भूमिका अन्य वर्ग की तुलना में बहुत ही महत्वपूर्ण है।

विश्व के सभी देशों का आंकलन मानव संसाधन के विकास के विभिन्न आयामों में हुई प्रगति के आंकड़ों के आधार पर किया जाता है। यह माना जाता है कि किसी भी देशों की प्रगति का असली मूल्यांकन वहां की महिलाओं की स्थिति के आधार पर हो सकता है, जो कुल जनसंख्या की आधी है। महिलाओं की अशिक्षा स्वास्थ्य के प्रति, उपेक्षा, शोषण, लिंग के आधार पर भेदभाव, लिंग अनुपात में भिन्नता आर्थिक सुदृढ़ता का अभाव ये कुछ ऐसे मुद्दे हैं। जिन पर प्राथमिकता के साथ योजनाबद्ध तरीके से काम किया जाना आवश्यक है ताकि इन विषमताओं से समाज को बचाया जा सकें एवं समानता के साथ विकास किया जा सकें तथा महिला व पुरुष दोनों आर्थिक विकास में बराबर के भागीदार बन सकें।

महिला सशक्तिकरण के तीन मुख्य आधार है – शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आर्थिक स्वावलंबन महिलाओं में उचित शिक्षा, बेहतर, स्वास्थ्य एवं आर्थिक स्वावलंबन से ही देश में सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्थाओं को सुदृढ़ बनाया जा सकता है। समाज की प्राथमिक इकाई सिर से सरकते घूंघट और रूढ़ियों के बीच परिवार की धुरी महिला को सशक्त बनाकर ही समाज और प्रगतिशील राज्य की संकल्पना को साकार किया जा सकता है। मध्यप्रदेश में बीते छ: साल इस बदलाव के साक्षी है कि महिलाएं निरंतर आगे आ रही है। महिला पंचायत में मुख्यमंत्री ने आम सहमति से स्थानीय संस्थाओं में महिलाओं के मौजूदा 33 प्रतिशत आरक्षण को बढ़ाकर 50 प्रतिशत किए जाने की घोषणा की। महिला पंचायत में हुए फैसले के बाद वर्ष 2007–08 के वार्षिक बजट में जेण्डर बजट की व्यवस्था पहली बार लागू की गई। महिलाओं की समानता आर्थिक सशक्तिकरण और विकास योजनाओं में उनकी भागीदारी सुनिष्चित करने के 13 विभागों में इसकी शुरूआत की गई है।

सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन की दिशा में पहल करते हुए मासूम लड़कियों को लाड़ली और लक्ष्मी बनाने की प्रतिज्ञा ली। महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा रोकने के लिए उषा किरण योजना लागू की गई। इसके तहत पीड़ितों को अस्थायी आश्रम, कानूनी सहायता, चिकित्सा सुविधा, पुलिस सहायता, 24 घंटे हेल्पलाइन, पुनर्वास सुविधा, आवश्यक प्रशिक्षण नि:शुल्क उपलब्ध कराया जाता है। प्रदेश सरकार ने समस्त मेडिकल कॉलेज, जिला चिकित्सालय, प्राथमिक सामुदायिक केन्द्र व प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में पीड़ित महिला को चिकित्सीय सहायता के लिए नोटीफाई किया गया है।

निर्धन महिलाओं के लिए मुख्यमंत्री कन्यादान योजना शुरू की गई, जनजातीय महिलाओं के उत्थान के लिए आदिवासी महिला सशक्तिकरण योजना लागू की गई। महिलाओं के सुरक्षित प्रसव के लिए जननी सुरक्षा योजना गांव से बाहर पढ़ाई के लिए जाने वाली छात्राओं को निशुल्क साईकिल सुविधा योजना के तहत अब तक छ: वर्षो में दस लाख से अधिक साईकिलें दी गई है। हॉकी के मैदान में महिलाएं अपना परचम लहरा सकें। रचनात्मक क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि हासिल करने वाली महिलाओं के लिए दो लाख रूपये का रानी दुर्गावती पुरस्कार रखा गया है। समाज सेवा वीरता के क्षेत्र में उल्लेखनीय काम करने वाली महिलाओं के रानी अवंतीबाई विजयाराजे सिंधिया समाज सेवा पुरस्कार प्रारंभ करने की घोषणा की गई है। महिला वित्त एवं विकास निगम द्धारा छ: जिलों में आयफेड की सहायता से महिलाओं के आर्थिक सामाजिक विकास और सशक्तिकरण के लिए तेजस्विनी ग्रामीण महिला सशक्तिकरण योजना लागू की गई।

8 मार्च 2010 को भारतीय महिलाओं ने दो महत्वपूर्ण उपलब्धियां पाई। पहली थी सेना कमीशन में स्थायी नियुक्ति और दूसरा चेन्नई से कोलंबो की एयर इंडिया को उड़ान सिर्फ महिलाओं ने उड़ाई जिसकी कैप्टन एम. दीपा तथा सह पायलट सोनिया जैन थी।

वर्तमान में यह प्रवृत्ति देखने को मिल रही है कि पंचायती राज की महिला प्रतिनिधि अकेले सार्वजनिक क्षेत्रों में एवं अपने कार्यालयों में जाने लगी है। पुरुष प्रतिनिधियों के साथ कुर्सियों पर बैठने लगी है। सार्वजनिक चर्चाओं में हिस्सा लेने लगी है और ये सभी कदम महिला सशक्तिकरण की ओर अग्रसर हैं।

महिलाओं को पंचायत के माध्यम से विकास प्रक्रियाओं एवं निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहभागिता एक और सामाजिक, राजनीतिक न्याय तथा समानता के मध्य संबंधों को अभिव्यक्त करती है तथा दूसरी ओर लोकतांत्रिक जड़ों को मजबूत करती है साथ ही महिलाएं वित्तीय संसाधनों का उचित

प्रयोग करती है। अपनी इस क्षमता का उपयोग उन्होंने गांवों के वित्तीय संसाधनों को नियंत्रित करने में किया है, जहां महिलाएं पंच व सरपंच है वहां उन्होंने पानी सड़क व शिक्षा के लिए प्रस्तावित बजट से कम में ही कार्य को पूर्ण कर दिखया है। बड़ी संख्या में महिला स्वसहायता समूहों के निर्माण से महिलाओं का आर्थिक आधार सुदृढ़ हुआ है। ममत्व मेले के रूप में महिला उद्यमियों को बाजार उपलब्ध करवाने के सराहनीय प्रयास है। आपसी लेन देन कर ग्रामों के साहूकारी के जाल को तोड़ा है। अब ये महिलाएं स्वयं की बचत राशि और बैंकों से प्राप्त होने वाले सहयोग से अपने लिए आजीविका विस्तार के अवसर तलाश व उपयोग कर रही है। ये महिलाएं आज ग्रामों में एक मिसाल प्रस्तुत कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह वी.एन. एवं जनमेजय सिंह (2010) 'आधुनिकता एवं महिला सशक्तिकरण' रावत पब्लिकेशन्स 3 जवाहर नगर जयपुर नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 100
2. शुक्ला अखिलेश कुमार (2009) 'महिलाओं पर शिक्षा एवं विधानों का प्रभाव' सीरियल्स पब्लिकेशन्स 8430/24 प्रहलाद गली अन्सारी रोड दरियागंज नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 45-50
3. व्होरा आशारानी (2006), 'स्त्री सरोकार' आर्य प्रकाशन मंडल 1/221 सरस्वती भंडार गांधी नगर नई दिल्ली - 110031 पृष्ठ क्र. 15-25
6. सारस्वत स्वप्निल एवं डॉ. निशान्त सिंह (2004) 'श्रमिक महिलाओं का संघर्ष' राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 124
7. तिवारी आर.पी. एवं डी.पी. शुक्ला (1999) भारतीय नारी-वर्तमान समस्याएं और भावी समाधान, 5 अन्सारी रोड दरियागंज नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 77

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

कृषि विकास और खेतिहर महिला श्रमिक - समस्यायें एवं समाधान

गौरेलाल डावर *

प्रस्तावना - आदिकाल से ही महिलाएं हमारे देश के विकास और उसकी प्रगति में अपना अमूल्य किन्तु मूक योगदान देती रही है। विकास का प्रत्येक पक्ष चाहे शिक्षा हो या संस्कृति,विज्ञान हो या ललित कला,व्यवसाय हो या कृषि, भारतीय महिलाओं ने उसे समुन्नत करने तथा उसे उन्नति के शिखर तक पहुँचाने में अपनी सराहनीय भूमिका निभायी है। आज से पैंसठ वर्ष पूर्व जब हम स्वतंत्र हुऐ थे, तब कृषि के क्षेत्र में हमारी स्थिति बहुत अधिक दयनीय थी। अनेक प्रकार के खाद्यान्नों की आपूर्ति हमें विदेशों से आयात करके करना पड़ती थी। परन्तु आज हम कृषि उत्पादों के क्षेत्र में बहुत कुछ आत्मनिर्भर है। अगर हमें कुछ कृषि उत्पादों का आयात करना पड़ता है, तो अनेक कृषि उत्पादों का निर्यात भी हम करते हैं। कृषि क्षेत्र की इस चतुर्मुखी उन्नति के पीछे हमारी ग्रामीण महिलाओं का बहुत बड़ा हाथ है। हमारे कृषि प्रधान देश में आज भी हमारी अर्थव्यवस्था का लगभग 70 प्रतिशत भाग कृषि या उससे संबंधित उद्योगों पर निर्भर है। हमारे देश की कुल जनसंख्या का लगभग 48 प्रतिशत हिस्सा महिलाओं का है, जिनमें से लगभग 70 प्रतिशत महिलायें ग्रामीण अंचलों में निवास करती है। आज भी ग्रामीण क्षेत्र में कृषि एवं पशुपालन तथा उससे संबधित उद्योग ही ग्राम्य अर्थव्यस्था का मुख्य आधार है। हमारे देश के कुल कृषि कार्य का लगभग 65 प्रतिशत कार्य महिलाओं के द्धारा किया जाता है। वे फसल उगाने से पूर्व खेत की तैयारी तथा बाद में बीजों की बुवाई, पौधों की रोपाई, खरपतवार नियंत्रण, फसल की कटाई, निंदाई, गुडाई आदि समस्त कार्यो में अपना पूर्ण योगदान देती है। अपनी स्वयं की जमीन पर कृषि कार्य करने वाली अथवा खेतिहर मजदूर के रूप में कार्य करने वाली ये महिला शक्ति चूंकि असंगठित, अषिक्षित,शोषित, रूढ़िवादी तथा समाजिक परंपराओं से जकड़ी हुई है। अत: इनके कार्यो का मूल्यांकन न तो इनका परिवार करता है, न समाज और न राष्ट्र।

आज भी अधिकांश खेतिहर महिला श्रमिक कृषि कार्यो में परंपरागत यंत्रों का प्रयोग करती है, उन्हें कृषि की आधुनिक तकनीकों, वैज्ञानिक प्रविधियों तथा आधुनिक कृषि उपकरणों का कोई ज्ञान नहीं होता। घर में पारिवारिक दायित्वों की पूर्ति तथा खेत के मैदान में कड़ी मेहनत करने वाली ये महिलायें परिवार समाज व देश में उपेक्षित एवं शोषित जीवन व्यतीत करने को विवश है।

खेतिहर महिला श्रमिकों की समस्याऐं- कृषि कार्य में संलग्न खेतिहर महिला श्रमिकों की योग्यताओं व क्षमताओं का पूर्ण लाभ हमारी कृषि व्यवस्था को नहीं मिल रहा है। इसका प्रमुख कारण वे समस्याएं है जिनका सामना आज कृषि क्षेत्र से जुड़ी महिला श्रमिक को करना पड़ रहा है। कुछ समस्याओं का विवरण इस प्रकार है।

1. **शिक्षा एवं तकनीकी ज्ञान का अभाव -** हमारे देश में कृषि कार्य में लगी महिला श्रमिक अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। ग्रामीण स्तर पर महिलाओं में साक्षरता का प्रतिशत बहुत कम है। अशिक्षित महिलाएं कृषि की उन्नत तथा वैज्ञानिक विधियों तथा आधुनिक तकनीकों से अनभिज्ञ रहती है। कृषि कार्य का जो 65 प्रतिशत हिस्सा महिलाओं के द्धारा किया जाता हैं, वह सभी परपंरागत साधनों तथा प्राचीन अवैज्ञानिक पद्धतियों के द्धारा किया जाता है।

2. **वित्तीय संसाधनों का अभाव -** हमारे देश में ग्रामीण स्तर पर निर्धनता का प्रतिशत बहुत अधिक है। अधिकांश ग्रामीण खेतिहर महिला श्रमिक अत्यन्त निर्धन होती है। उनके पास वित्तीय संसाधनों का अभाव होता है। इसी कारण वे कृषि की उन्नत तकनीकों का प्रयोग करने में असमर्थ रहती है।

3. **सामाजिक रूढ़ियॉं तथा परंपराऐं -** ग्रामीण समाज अत्यन्त रूढ़िवादी तथा पिछड़ा हुआ है। वहां महिलाओं की स्थिति बहुत दयनीय है। बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा आदि कुरीतियों के कारण स्त्रियों का जीवन अनेक यंत्रणाओं तथा उत्पीड़न के दौर से गुजरता है। अपने परिवार की आय में बराबरी का और कभी-कभी तो अधिक योगदान देने के बाद भी उनको अपने परिवार तथा समाज में सम्मान तथा अधिकार प्राप्त नहीं है।

4. **पारिवारिक दायित्वों का बोझ -** देश की अन्य कामकाजी महिलाओं की तरह हमारे देश की खेतिहर महिला श्रमिक को भी कार्यो का दोहरा बोझ उठाना पड़ता है। अधिकांश ग्रामीण स्त्रियों को अपने घर की कुछ अनिवार्य आवश्यकताओं जैसे पीने के पानी की व्यवस्था, जानवरों के चारे की व्यवस्था, ईधन की व्यवस्था के लिये कठिन परिश्रम करना पडता है। इससे उनकी शारीरिक क्षमताओं पर विपरीत असर पड़ता है साथ ही उनका कृषि कार्य भी प्रभावित होता है।

5. **अस्वस्थ परिवेष, कुपोषण और बीमारी की शिकार -** ग्रामीण स्त्रियॉं जिस वातावरण में कार्य करती है अथवा रहती हैं, वह स्वास्थ्य की दृष्टि से रहने लायक बिल्कुल नहीं होता। इनके निवास स्थान के आसपास पानी के निकास की उचित व्यवस्था न होने के कारण गंदगी फैलती है। स्वास्थ्य की सामान्य जानकारी का अभाव होने के कारण उन्हें संक्रामक रोगों का खतरा हमेशा उठाना पड़ता है। ग्रामीण महिला श्रमिक कुपोषण का शिकार भी होती है।

6. **भूस्वामित्व तथा संपत्ति के उत्तराधिकार से वंचित -** वर्तमान समय में बहुत कम खेतिहर महिला ऐसी है जिनके पास अपनी स्वयं की जमीन है। अपने पिता या पति की जमीन पर उत्तराधिकार न मिलने के कारण अपनी पारिवारिक जमीन पर ही महिलाओं की स्थिति खेतिहर मजदूर जैसी हो जाती है। जिसमें उनका श्रम तो लगा होता है परन्तु उस श्रम के फल पर उनका कोई अधिकार नहीं होता। सरकार द्धारा जो जमीन भूमिहीन किसानों को दी जाती है वह भी सामान्य तौर पर पुरूष किसानों को ही दी जाती है। महिलाओं

*शोधार्थी (अर्थशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

के लिये अलग से भूमि प्रदान करने की कोई पृथक नीति सरकार द्वारा नहीं बनाई जाती।

7. सामाजिक असमानता एवं शोषण की शिकार – हमारे देश की अधिकांश निर्धन ग्रामीण महिलाएं खेतिहर मजदूर है। वे बड़े तथा सम्पन्न किसानों के यहां दिहाड़ी पर कार्य करती है। संविधान द्वारा समान कार्य के लिए समान मजदूरी का नियम होने के बाद भी महिलाओं को पुरूषों के बराबर मजदूरी नहीं मिलती। पुरूषों के अपेक्षा अधिक काम करने के बाद भी उनको कम पैसा मिलता है। इसके अतिरिक्त वे शोषण की शिकार भी होती है।

8. कुटीर तथा लघु उद्योगों की जानकारी का अभाव – कृषि कार्य में लगी महिला श्रमिक को पूरे साल भर कार्य नहीं मिलता क्योंकि वर्ष भर कृषि कार्य नहीं चलते। वैसे तो कृषि तथा उसके उत्पादों से संबधित अनेक लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना गांवों में की जाने की योजनाएं है परन्तु महिला श्रमिक को उनकी जानकारी नहीं होती। वे उद्योगों को कैसे संचालित करे, उसके लिये कच्चा माल कहां से प्राप्त करे तथा तैयार माल की विक्रय व्यवस्था किस प्रकार करे इन सब जानकारीयों के अभाव के कारण वे अपने खाली समय का उपयोग अपने जीवन स्तर को ऊंचा उठाने में नहीं कर पाती।

9. महिला कल्याण कार्यक्रमों के उचित कार्यान्वयन का अभाव – हमारे देश का स्वतंत्रता के पश्चात् अनेक कार्यक्रमों जैसे सामुदायिक विकास कार्यक्रम, पंचायती राज व्यवस्था, बीस सूत्रीय कार्यक्रम तथा वर्तमान कार्यरत राजीव गांधी मिशन एवं ग्रामीण विकास अभिकरण के द्वारा ग्रामीण महिलाओं के विकास के लिये अनेक योजनाओं जैसे– ट्रायसेम, डवाकरा, महिला समृद्धि योजना आदि का निर्माण किया गया है, परन्तु पुरूष प्रधान सामाजिक एवं राजनैतिक व्यवस्था होने के कारण तथा अधिकारियों द्वारा इन योजनाओं के क्रियान्वयन के कारण महिलाएं इसका समुचित लाभ नहीं उठा पाती।

उपर्युक्त समस्यायें आज हमारे देश में कृषि तथा उस पर आधारित ग्रामीण उद्योगों क्षेत्र में महिला शक्ति के उचित प्रयोग तथा उसके योगदान से समुचित लाभ उठाने के मार्ग की बहुत बड़ी बाधायें है। यदि हमने ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध महिला संसाधनों के उचित दोहन तथा उनके योगदान के उचित मूल्यांकन की व्यवस्था नहीं की तो देश को विकास पथ पर अग्रसर करने में काफी कठिनाई आयेगी। आज जिस प्रकार महिलाएं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कामयाबी के नये कीर्तिमान बना रही है, उसको देखते हुये यह आवश्यक हो गया है कि महिलाओं की कार्यक्षमता तथा कार्य कुशलता का प्रयोग कृषि तथा उससे संबंधित उद्योगों के विकास में किया जाये। इस क्षेत्र में कार्यरत ग्रामीण महिला श्रमिक के श्रम का उचित मूल्यांकन कर तथा उन्हें उसका समूचित पारिश्रमिक देकर अधिक से अधिक महिलाओं को इस कार्य के लिये प्रेरित करना आवश्यक है।

खेतिहर महिला श्रमिकों की स्थिति सुधारने हेतु समाधान –

1. ग्रामीण महिलाओं के लिये विशेष प्रकार की शिक्षा व्यवस्था – ग्रामीण महिलाओं के लिये एक ऐसी शिक्षा नीति का निर्माण करना चाहिये जो ग्रामीण आवश्यकताओं व समस्याओं का समाधान करती हो। महिलाओं को ग्रामीण स्तर पर कृषि की आधुनिक तकनीकों,वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोग की शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्हें कृषि उपकरणों की देखभाल तथा उनके सुधार की तकनीक की शिक्षा दी जानी चाहिए।उन्हें अपने पर्यावरण को स्वच्छ रखने तथा बच्चों के उचित पालन पोषण की शिक्षा दी जानी चाहिएं।

2. वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता – ग्रामीण महिला श्रमिक को सरकारी तथा गैर सरकारी उदाहरण के लिये बैंकों, सहकारी समितियों तथा स्वैच्छिक वित्तीय संगठनों के माध्यम से आवश्यक वित्तीय संसाधन उपलब्ध करवाये जाने चाहिएं ताकि वे आत्मनिर्भर होकर स्वतंत्रतापूर्वक अपना योगदान कृषि तथा उससे संबंधित उद्योगों के विकास को प्रदान कर सके।

3. महिलाओं के पारिवारिक दायित्वों को कम करने का प्रयत्न – ग्रामीण महिला श्रमिक द्वारा किये जाने वाले घरेलू कार्यो को सुगम तथा कम श्रमसाध्य बनाने के प्रयत्न किया जाना चाहिएं। खाना बनाने के आधुनिक उपकरणों जैसे धुंआ रहित चूल्हा, गोबर गैस, सोलर कुकर आदि उन्हें उपलब्ध कराये जाने चाहिएं। गांवों में पीने के पानी की उचित व्यवस्था की जानी चाहिये।

4. महिलाओं को भूमि के उत्तराधिकार तथा सरकारी भूमि के आवंटन में प्राथमिकता – सरकार द्वारा कानून पारित करके पिता एवं पति की भूमि पर पुत्री तथा पत्नी का उत्तराधिकार सुनिश्चित किया जाना चाहिएं। वैसे देश के बहुत से हिस्से में इसे लागू कर दिया गया है। सरकार द्वरा भूमिहीनों को कृषि योग्य भूमि प्रदान करते समय खेतिहर महिला श्रमिक को प्राथमिकता दी जानी चाहिएं। यदि शादीशुदा आदमी को भूमि का पट्टा दिया जाता है तो उसमें उसकी पत्नी का नाम भी सम्मिलित किया जाना चाहिएं।

5. राष्ट्रीय कृषि नीति में खेतिहर महिला को उचित सम्मान व स्थान दिया जाऐ– हमारे देश में लगभग 65 प्रतिशत महिलाएं कृषि कार्य में लगी हुई है परन्तु उन्हें किसान का दर्जा नहीं दिया जाता। सरकार की कृषि नीति में उनकी आवश्यकतओं व समस्याओं को ध्यान में नहीं रखा जाता। यदि हमें अपनी अर्थव्यवस्था के मुख्य आधार कृषि का समग्र विकास करना है, तो खेतिहर महिला श्रमिक को उचित सम्मान तथा राष्ट्रीय कृषि नीति में उनका यथोचित स्थान सुरक्षित करना होगा।

6. कृषि से संबंधित घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में महिलाओं का प्रवेश – कृषि कार्य में लगी खेतिहर महिला श्रमिक अत्यन्त निर्धन है। हमारे यहां कृषि पूर्णतया मानसून पर निर्भर है। यह एक पूर्णकालिक कार्य भी नहीं है। जब कृषि संबंधी कार्य नहीं हो रहा हो उस समय महिलाओं को लघु तथा कुटीर उद्योगों जैसे टोकनी बनाना, बीड़ी, पापड़, चिप्स, आचार आदि बनाना, अगरबत्ती, मोमबत्ती, मिट्टी के बर्तन व खिलौने तथा अन्य ग्रामीण हस्तशिल्प, की वस्तुओं के निर्माण का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे अपने खाली समय का सदुपयोग कर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर सकें। ग्रामीण महिला श्रमिक द्वारा उत्पादित व निर्मित वस्तुओं के विक्रय की व्यवस्था भी सरकार द्वारा की जाना चाहिए।

7. महिलाओं के विकास के लिये चलाऐं जा रहे कार्यक्रमों का उचित कार्यान्वयन – महिला स्वास्थ्य, महिला साक्षरता, आत्मनिर्भरता, महिला संरक्षण कानून तथा महिलाओं को उनके अधिकारों का ज्ञान देने के लिये अनेक विकास के कार्यक्रम बनाये गये है। उनका सही कार्यान्वयन होना अत्यधिक आवश्यक है। अन्यथा उसका लाभ महिलाओं को नहीं मिल पायेगा। यदि महिलाओं के विकास कार्यक्रमों की जानकारी देने के लिये लगाये गये महिला शिविरों अथवा सम्मेलनों का स्थान व समय महिलाओं की सुविधा को ध्यान में रखकर निश्चित किया जायेगा, तो वे अधिक मात्रा में उसमें उपस्थित होकर उनका लाभ उठा सकती है।

8. कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों का प्रशिक्षण – कृषि कार्य में लगी खेतिहर महिला श्रमिक की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिये मुर्गीपालन, मछली पालन, डेयरी उद्योग आदि क्षेत्रों में भी उनकी भागीदारी बढ़ाना आवश्यक है। सरकार द्वारा इन कार्यो का प्रशिक्षण महिलाओं को प्रदान किया जाना चाहिये तथा इसे संचालित करने के लिये आर्थिक सहायता दी

जानी चाहिये।

अन्त में निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि आज कृषि के महिलाकरण की आवश्यकता है। शिक्षित या प्रशिक्षित दोनों ही प्रकार की स्त्रियों को कृषि कार्य हेतु प्रोत्साहित व जागरूक करने की आवश्यकता है। पंचायती राज में महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण प्रदान करने से अनेक महिलाएं पंच, सरपंच तथा जनपद व जिला पंचायत की पदाधिकारी के रूप में निर्वाचित हुई है। उनका दायित्व है कि वे कृषि कार्य में लगी महिलाओं को संगठित करें उनकी समस्याओं का निराकरण करें तथा सरकार द्वारा उनके लिये चलाये जा रहे विकास कार्यक्रमों का उचित क्रियान्वयन करवाने की व्यवस्था करें। यदि ग्रामीण महिला शक्ति का उचित प्रबंधन व दोहन कृषि तथा उनसे संबंधित व्यवसायों के विकास में किया जायेगा, तो ये ग्राम्य लक्ष्मियां अन्नपूर्णा के रूप में देश को कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने में अमूल्य योगदान प्रदान करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्राथमिक अर्थशास्त्र -ज्योति प्रकाश सक्सेना, 1972, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
2. भारतीय सामाजिक व्यवस्था -एस.एल.दोषी एवं पी.सी.जैन, 2007, नेशनल पब्लिशिंग हाउस,जयपुर
3. श्रम समस्यायें एवं सामाजिक सुरक्षा -सक्सेना एस.सी. 1997,रस्तोगी पब्लिकेशन्स शिवाजी रोड़ मेरठ।
4. भारतीय कृषि का अर्थशास्त्र -अग्रवाल एस.एन .2000, राजस्थान,हिन्दी ग्रंथ अकादमी,जयपुर।
5. महिला मजदूर कमरतोड़ मेहनत के बावजूद-चन्द्र एम. 2001,,समाज कल्याण,नई दिल्ली।
6. आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन - एम.एन.श्रीनिवासन।
7. महिला श्रमिक:सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं - सक्सेना एस.सी.1998 रस्तोगी पब्लिकेशन्स शिवाजी रोड़ मेरठ।
8. महिला श्रमिक - राय सरोज,राव पब्लिकेशन जयपुर एव नई दिल्ली।
9. भारतीय सामाजिक समस्याएँ - मदन जी.आर 1990 विवेक प्रकाशन, दिल्ली।

****

ग्रामीण कृषि ऋण व्यवस्था में वित्तीय समावेशन

डॉ. आर. एस. मण्डलोई *

प्रस्तावना – भारतीय कृषि को मानसून का जूआं कहा जाता है। मानसून मेहरबान होने पर कृषि में अच्छी उपज प्राप्त की जाती है। किन्तु वर्तमान कृषि पद्धति को देखते हुए कृषि ऋण व्यवस्था पर आधारित हो गयी है। चूंकि मंहगाई व मानसून की अनिश्चितता के कारण कृषि का विकास संभव नहीं है।

इसलिए इस हेतु ऋण व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की गई है। कोई भी देश ऋण व्यवस्था के बिना आगे नहीं बढ़ सका है। ग्रामीण लोग निर्धन होते है, उन्हें उन्नत कृषि कार्य करने हेतु खाद–बीज, उपकरण, दवाईयाँ आदि की व्यवस्था करने हेतु ऋण की व्यवस्था ग्रामीण लोग मुख्यत: सेठ साहूकारों से ऊँची ब्याज दर पर करते है।

बहुत वर्षो पुरानी कहावत आज भी सही सिद्ध हो रही है कि – **भारत ग्रामीण एवं कृषि प्रधान देश है तथा कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है।** 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की 68.8 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है एवं उनका मुख्य व्यवसाय कृषि है। कृषि से लगभग 60 प्रतिशत लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त होता है। अत: कृषि विकास से ही ग्रामीण विकास तथा देश का विकास संभव है। इसलिए कृषि तथा कृषकों के विकास के बिना राष्ट्र के विकास की कल्पना अधूरी है।

ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को अभी भी कृषि कार्य हेतु ऋण साहूकारों से ही लेना पड़ रहा है, जिससे उनकी उपज का लगभग 60 प्रतिशत हिस्सा साहूकारों के पास ब्याज चुकाने में चला जाता है। कृषि असफल होने के कारण इन साहूकारों की राशि वापस भुगतान नहीं कर पाने के कारण वर्तमान में कई कृषकों द्वारा आये दिन आत्महत्या करने की प्रवृत्ति देखने को मिल रही है। तथा खेती में घाटा अधिक होने के करण लगभग 45 प्रतिशत लोग खेती छोड़कर अन्य व्यवसाय की और पलायन कर रहे है।

अत: समय रहते भारतीय कृषि तथा कृषकों को बचाने की उचित व्यवस्था करने की त्वरित आवश्यकता है। अन्यथा हमारे देश में आने वाले समय में कृषि व कृषकों की स्थिति संकटमय हो सकती है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में ऋण व्यवस्था में कृषि शाखा एवं ऋण उपलब्ध कराने वाली संस्थाओं एवं योजनाओं का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

वित्तीय समावेश – सामान्यत: वित्तीय समावेश का आशय है कि कम आय व कमजोर वर्गो के लिए वित्तीय सेवाएँ समय–समय पर उपलब्ध कराना ही वित्तीय समावेशन है।

अत: गरीबों, वंचित समूहों, कम आय वाले लोगों तक वित्तीय सेवाओं व उत्पादों को पहुँचाना वित्तीय समावेशन है।

ग्रामीण साख का अर्थ – ग्रामीण लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति जिस साख या ऋण से की जाती है, उसे ग्रामीण साख कहते है।

अध्ययन का उद्देश्य – निम्न उद्देश्य है –

1. कृषि ऋण के किये गये प्रयासों का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण लोगों को ऋण उपलब्ध कराने वाली संस्थाओं का अध्ययन करना।
3. कृषि ऋण की स्थिति का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध द्वितीयक समंको पर आधारित है। अध्ययन हेतु 2008–09 से 2014–15 तक की अवधि अध्ययन हेतु चयनित की गई है।

वित्तीय समावेशन एवं ग्रामीण ऋण व्यवस्था – आज अधिकांशत: कृषक समुदाय गरीबी और वंचना में जी रहा है, जबकि कृषि में उत्पादन प्राप्ति के लिए लागत काफी बढ़ गई है। इस लागत को पूरा कर पाने की क्षमता उन गरीब कृषकों के पास लगभग नहीं के बराबर है। साथ ही उनके उत्पादों के लिय बाजार और कीमत इतनी नहीं है कि लागत की वसूली सही समय और सही तरीके से हो सके।

अत: यह अनिवार्य बन जाता है कि हम उनकी इन समस्याओं का समाधान करें। उसके दो ही तरीके हो सकते है, एक तो हम पर्याप्त ऋण सुविधा उपलब्ध करायें या दूसरा उनके उत्पादों के बाजार व कीमत ऐसी कर दे कि उन्हें लागत व मुनाफा प्राप्त हो सके।

भारतीय ग्रामीण लोग गरीबी एवं निरंतर अभाव में जीवन जी रहे है। रायल कमिशन ने 1928 में अपने प्रतिवेदन में कहा है कि – **भारतीय कृषक ऋण का बोझ कंधो पर लेकर जन्म लेता है, ऋण में ही जीता है और ऋण में ही मर जाता है।**

अत: भारत में विगत पिछले दशकों से कृषि एवं कृषकों की स्थिति अतिदयनीय हो चुकी है। इसके लिए हर वर्ग को सोचने हेतु मजबूर कर दिया है। चूंकि कृषक ऊँची ब्याज दर से ऋण साहूकार या अन्य निजी व्यक्तियों से प्राप्त करता है तो उसे मुनाफा प्राप्त नहीं हो सकता है। इस हेतु शासन अपने स्तर से कई प्रयास कर रहा है।

कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने के लिए वर्ष 2015–16 के बजट में कृषि कर्ज की राशि 8.0 लाख करोड़ से बढ़कर 8.5 लाख करोड़ कर दिया है। ग्रामीण वित्तीय कोष के लिए 15000 करोड़ रूपये उपलब्ध करायें गये है। कृषि उन्नत योजना के लिए 12257 करोड़ रूपये, फसल बीमा योजना हेतु 2823 करोड़, राष्ट्रीय कृषि विकास के लिए 4500 करोड़, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन को 1300 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया हैं।

कृषकों को उचित मूल्य व समय पर तथा ब्याज पर उपलब्ध कराये गये ऋण साख वितरण का लक्ष्य निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

तालिका-1
कृषि साख का वर्षवार लक्ष्य (करोड़ में)

वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धि	वृद्धि	वृद्धि दर
2008-09	2,80,000	3,01,908	55,000	19.64
2009-10	3,25,000	3,84,514	45,000	13.64
2010-11	3,75,000	4,68,291	50,000	13.33
2011-12	4,75,000	5,11,029	1,00,000	21.05
2012-13	5,75,000	6,07,376	1,00,000	17.39
2013-14	7,00,000	7,30,765	1,25,000	17.85
2014-15	8,00,000	3,70,828	1,00,000	12.55

स्त्रोत - नाबार्ड, वार्षिक प्रतिवेदन 2014-15

तालिका से स्पष्ट है कि कृषि साख हेतु जो लक्ष्य निर्धारित किये गये है, उससे उपलब्धि अधिक रही है तथा वर्ष 2011-12 में वृद्धि दर सबसे अधिक 21.05 प्रतिशत रही है। सबसे कम 2014-15 में 12.55 रही है।

ग्रामीण क्षेत्रों में साख बनाने के लिए नाबार्ड, भूमि विकास बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक सहकारी बैंक आदि बैंकों की स्थापना की गई। बाद में लीड बैंक, स्वसहायता समूह, सूक्ष्म वित्त, किसान केडिट कार्ड, नकद अन्तरण योजना, सब्सिडी आदि ग्रामीण वित्तीय समावेशन हेतु प्रारंभ किया गया है। इसी के साथ 28 अगस्त 2014 को प्रधानमंत्री जनधन योजना प्रारंभ की गई है, जो ग्रामीणों को सीधे वित्तीय सुविधाएँ उपलब्ध करायेगी। ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के जीवन स्तर में सुधार तभी आ सकता है, जब तक उन्हें वित्तीय सहायता प्राप्त न हो जाये। चूंकि वित्त के अभाव में आज भी अधिकांश लोगों की स्थिति ज्यों-कि-त्यों है। इस हेतु शासन द्वारा कई योजनाएँ चलाई जा रही है। जिनमें प्रमुख निम्नवत है -

1. प्रधानमंत्री जन धन योजना - यह योजना 28 अगस्त 2014 को प्रारंभ किया गया है। जो मूलतः राष्ट्रीय वित्तीय समावेशन है। जिसके अन्तर्गत खातें खोलने से लेकर धन अन्तरण, ऋण, पेंशन, बीमा आदि की सुविधा उपलब्ध करायेंगी। सरकार इसकी मदद से गरीबों को आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा मुहैय्या करायेगी। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश लोग साहूकार, महाजन, सूदखोर आदि से ऋण लेते है। वर्ष 2014 में इस योजना के तहत 5.29 करोड़ खाते खोले गये। जो 2015 में बढ़कर 13.68 करोड़ हो गये है तथा 1.78 करोड़ डेबिट कार्ड जारी किये गये है।

2 स्व सहायता समूह - यह एक अप्रैल 1999 से शुरू की गई है जो समान आर्थिक स्थिति वाले गरीबों का स्वैच्छिक संगठन है। प्रत्येक समूह में 15-20 सदस्य होते है। ये सदस्य अपने बचत एकत्र कर आवश्यकतानुसार ऋण प्राप्त करते है, योजना के तहत 2014-15 में 53.43 लाख स्वसहायता समूह का गठन किया जा चुका है। जिसमें 220 लाभ स्वरोजगारियों को 56273.56 करोड़ रूपये निवेश के साथ सहायता दी गई है।

3 भूमि विकास बैंक - किसानों को दीर्घकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेत इस बैंक की स्थापना की गई है। इसे भूमि बन्धक बैंक भी कहते है। ये किसानों को भूमि खरीदने, भूमि सुधार, पुराने ऋणों के भुगतान आदि के लिए दीर्घकालीन ऋण की व्यवस्था करते है।

4. नाबार्ड - नाबार्ड का गठन 12 जुलाई 1982 में कृषि ऋण एवं वित्तीय समावेशन हेतु किया गया। यह ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण प्रदान करने वाली शीर्ष संस्था है। इसके अन्तर्गत अनेक वित्तीय संस्थाओं को ग्रामीण ऋण व्यवस्था के लिए पुनर्वित सुविधाएँ प्रदान करती है। ये संस्थाएँ राज्य भूमि विकास बैंक, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रमीण बैंक आदि।

5. किसान क्रेडिट कार्ड योजना - ग्रामीण कृषकों को अल्पकालीन ऋण की सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना लागू की गई। इसका मुख्य उद्देश्य कृषकों को साहूकारों के चूंगल से निकालकर निम्नतम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराना है। इसमें ब्याज दर 4 प्रतिशत निर्धारित है। जो देश के सभी वाणिज्यिक बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंकों तथा ग्रामीण बैंकों के माध्यम से दिये जाते है

6. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक -इस बैंक की स्थापना 2 अक्टोबर 1975 को हुई। इसका मुख्य उद्देश्य दूरदराज ग्रामीण पिछड़े लोगों को बेहतर बैंकिंग ऋण सुविधाएँ उपलब्ध कराना है, साथ ही ग्रामीण बचत को जुटाकर उत्पादक गतिविधियों में लगाना है।

7. सूक्ष्म वित्त - यह एक प्रकार का लघु ऋण है। इसके तहत गरीब और वंचित लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लघु मात्रा में ऋण उपलबध कराया जाता है। हमारे देश में लघु वित्त का सूत्रपात 1992 में हुआ है।

निष्कर्ष - उपरोक्त अध्ययन से निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि ग्रामीण ऋण व्यवस्था हेतु शासन कई प्रकार के बैंक, संस्थाएँ एवं समितियाँ संचालित कर रही है। जिससे ग्रामीण लोगों को आसानी से ऋण उपलब्ध हो जाये तथा उनका जीवन स्तर सुधर सके। संस्थाओं के माध्यम से कम ब्याज पर ऋण शासन द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अभी संस्थागत ऋणों का प्रतिशत धीरे-धीरे बढ़ रहा है। लोग फसल बीमा, कृषि यंत्र हेतु ऋण, बीज, खाद आदि के लिए शासन से ऋण प्राप्त कर कृषि उत्पादन बढ़ा रहे है। जिससे उत्पादन एवं उत्पादकता दोनों में ही वृद्धि हो रही है। किन्तु इसका दूसरे पक्ष से भी नकारा नहीं जा सकता है। इस प्रकार की ग्रामीण वित्तीय व्यवस्था होने के बावजूद ग्रामीण कृषक निरंतर आत्महत्या कर रहे है। लोग साहूकारों सूदखोरों से पैसा उधार लेना पसंद करते है और ऊँचीं ब्याज दर से ऋण लेने तथा खेतों का उत्पादन साहूकारों के पास ही देने से उनके जीवन स्तर में आमूलचूल परिवर्तन नहीं हो रहा है। उन्हें जागरूक कर संस्थागत ऋण का प्रचार एवं प्रक्रिया का सरलीकरण कर उन्हें आसानी से ऋण प्रदान कर दिया जाकर जीवन स्तर में सुधार किया जा सकता है। तथा शासन जिस उद्देश्य से योजना चला रही है, वह सफल होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्ता जी.के (2012) 'कृषि अर्थशास्त्र' वृन्दा पब्लिकेशन प्रा.लि. मयूर विहार, दिल्ली।
2. दत्त एवं सुन्दरम (2013), 'भारतीय अर्थव्यवस्था' एस.चंद एण्ड कम्पनी, दिल्ली।
3. ललीता एन. (2005) सूक्ष्म वित्त एवं ग्रामीण विकास, कनिष्ठ प्रकाशन, नईदिल्ली।
4. कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका (2013) प्रकाशन विभाग, दिल्ली।
5. योजना (2015) पत्रिका, प्रकाशन विभाग दिल्ली।

****

जनजातियों की आर्थिक स्थिति पर आधुनिक कृषि पद्धतियों का प्रभाव

डॉ. नाहार सिंह बर्डे *

प्रस्तावना – भारत प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। उस समय देश में विस्तृत कृषि पद्धति प्रचलित थी। ग्रामवासी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में स्वावलंबी थें। जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि होने के कारण स्वतंत्रता के समय से ही खाद्यान्नों की कमी प्रतीत होनी शुरू हुई। खाद्यान्नों का भारी मात्रा में प्रतिवर्ष आयात किया गया। इसलिए देश में खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि करने के लिए विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि विकास को प्राथमिकता दी गई। कृषि विकास के लिए देश में सामुदायिक विकास कार्यक्रम, सघन कृषि योजना,उन्नत बीजों का आविष्कार एवं उपयोग, उर्वरकों, किटनाशकों दवाईयों का उपयोग, कृषि क्षेत्र में आवश्यक ऋण की उपलब्धि हेतु बैंकों का राष्ट्रीयकरण, कृषि बीमा आदि के साथ-साथ कृषि की उन्नत विधियों का आविष्कार अर्थात आधुनिक कृषि पद्धतियों का उपयोग किया जाने लगा।

यह भी एक विडंबना रही कि जनजातीय क्षेत्रों में अनेक कृषि के उत्पादनों में आत्म निर्भर नहीं हो सके। जनजातीय क्षेत्रों में कृषि उद्योगों में असंख्य, अशिक्षित, असंगठित, रूढ़िवादी कृषक होते है, जो उत्पादन हेतु अन्य साधनों की अपेक्षा श्रम साधन को अधिक उपयोग करके जीविकोपार्जन करते है। अपनी अज्ञानता एवं धन की कमी के कारण जनजातीय लोग कृषि की उन्नत विधियाँ, बीज, उवंर्रक आदि नही अपना पाते है। साथ ही प्रकृति पर निर्भरता के कारण कृषि में जोखिम अधिक होता है।

पूर्व में शिक्षा एवं जागरूकता के अभाव में इनके द्वारा स्थानांतरित कृषि की जाती रही है। इन्हें कृषि का पर्याप्त ज्ञान नहीं था। जंगलों में घूम-धूमकर पेड़ पौधों को काटना, जलाना, जमीन खोदना और उस पर बीज बिखेर देना तथा जो उत्पादन होता, उसी से अपना जीवन निर्वाह करना ही कृषि कार्य में शामिल था। जब धींरे-धींरे जमीन की उर्वरा-शक्ति कम हो जाती है। परिणामस्वरूप उत्पादन कम होने लगता। ऐसी स्थिति में ये लोग अपना स्थान बदल दिया करते थे। इस प्रक्रिया को 'स्थानान्तरित कृषि' या 'झूम खेती' कहा जाता है। धींरे-धींरे इस प्रक्रिया में बदलाव आया और एक ही स्थान पर स्थायी कृषि की जाने लगी। स्थाई खेती करने पर भी जनजातीय वर्ग अपने क्षेत्रों मे पर्याप्त उत्पादन नहीं कर पाए क्योंकि वे इसमें परंपरागत साधनों का उपयोग करते थे और आज भी यही स्थिति है। कुछ क्षेत्रों में लोगों में शिक्षा व जागरूकता आयी वहाँ कृषि की नई-नई तकनीकों का उपयोग किया जाने लगा, परिणामस्वरूप वर्तमान में जनजातियों की आर्थिक स्थिति में बदलाव होने लगें है। जनजातियों को कृषि में आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिए वर्तमान में कृषि उत्पाद की बढ़ती माँग ने भी प्रेरित किया।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अगर देखें तो इन जनजातियों ने शिक्षा, जागरूकता, एवं सरकारी प्रयासों के द्वारा कृषि में आधुनिक तकनीकों का प्रयोग करना प्रारंभ कर दिया हैं। कृषि कार्य में परंपरागत साधनों का उपयोग पूर्णत: बंद तो नहीं किया जा सका है, लेकिन इसके साथ-साथ आधुनिक कृषि पद्धतियों एवं आधुनिकतम साधनों का प्रयोग किया जाने लगा। इस प्रकार कृषि में परंपरागत साधनों से लेकर आधुनिक साधनों तक का उपयोग उत्पादन क्षमता बढानें में सहायक हो सका। सरकारी प्रयासों एवं शैक्षणिक तथा वन आधारित उद्योग धंधे स्थापित करने हेतु प्रेरित किया। इस प्रकार जनजातीय क्षेत्रों में कृषि की आधुनिक पद्धतियों की शुरूआत हुई है। इससे कृषि क्षेत्र में नवीन पद्धतियों का उपयोग होने लगा जिसे आधुनिक कृषि और उसमें प्रयुक्त पद्धतियों को आधुनिक कृषि तकनीकी कहा गया है।

उद्देश्य –

1. आदिवासियों की आर्थिक स्थिति पर आधुनिक कृषि पद्धितियों के प्रभावों का अध्ययन करना।
2. आधुनिक कृषि पद्धितियों को अपनाने के प्रति आदिवासियों की जागरूकता का अध्ययन करना।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य खरगोन जिले का चयन किया गया है, जिले के चयन के पश्चात तीन ऐसे विकासखण्डों का चयन किया गया है, जिसमें सबसे अधिक आदिवासी जनसंख्या निवास करती है इस आधार पर जिले की भगवानपुरा (80.83%),झिरन्या (80.05%) तथा सेगाँव (74.20%) विकासखण्डों का चयन किया गया है। इन तीनों विकासखण्डों में आदिवासियों की जनसंख्या का प्रतिशत सर्वाधिक है। इसके बाद तीनों विकासखण्डों से 5-5 गाँवों का चयन किया गया है तथा प्रत्येक गाँव से 20-20 आदिवासी कृषक परिवारों का चयन किया गया है।

परिकल्पना – 1. आधुनिक कृषि पद्धतियों का आदिवासी कृषकों की आर्थिक स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

शोध व्याख्या – आधुनिक कृषि पद्धति के उपयोग से आर्थिक स्थिति पर प्रभाव के संबंध में अभिमत ।

शोध क्षेत्र में आदिवासी कृषकों द्वारा आधुनिक कृषि का पद्धति का उपयोग करने से उनकी आर्थिक स्थिति पर प्रभाव के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए है, उन्हे तालिका क्र. 1.1 (अ) में दर्शाया गया है-

तालिका क्र.1.1 (अ)

आधुनिक कृषि पद्धति के उपयोग से आर्थिक स्थिति पर प्रभाव के संबंध में अभिमत

क्र.	आधुनिक कृषि पद्धति का उपयोग	आर्थिक स्थिति में सुधार		कुल योग
		हाँ	नही	
1.	हाँ	204 (68.00)	96 (32.00)	38
	कुल योग	204 (100)	96 (100)	300

* सदस्य, पद्मिनी वेलफेयर (सोसायटी) फॉर डवलपमेन्ट एण्ड रिसर्च, उज्जैन (म.प्र.) भारत

तालिका से यह स्पष्ट है कि 68 प्रतिशत उत्तरदाता आधुनिक कृषि पद्धति को अपनाने से अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार मानते है,जबकी 32 प्रतिशत उत्तरदाता कोई प्रभाव नहीं मानते है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के आदिवासी उत्तरदाता अपने कृषि कार्य में विभिन्न प्रकार की आधुनिक कृषि पद्धति का उपयोग करते है।

अध्ययन किए गए विकासखण्डों के आदिवासी कृषकों की आर्थिक स्थिति एवं आधुनिक कृषि पद्धति के मध्य स्वतंत्रता परीक्षण **(Test of Independent)** करने के लिए **x^2 Test** उपयोग किया गया है। जिसके अन्तर्गत शून्य परिकल्पना **(H01)** निम्नलिखित है**–** ***H01 – आधुनिक कृषि पद्धति का आदिवासी कृषकों की आर्थिक स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।*** इस परिकल्पना के परीक्षण के लिए तालिका में दर्शाए गए आँकडो के **x^2 Test** के जो परिणाम प्राप्त हुए है, उन्हें तालिका क्र. 1.1 (ब) में दर्शाया गया है–

तालिका क्र. 1.1 (ब)

Chi -Square

Calculated value x2	d.f.	Table value x2-05	Result
38.880	1	3.841	Ho1 =Rejected

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि **1 d.f.** के **5%** सार्थकता स्तर पर **x2** का तालिका मूल्य **(3.841)** 2 के परिगणित मूल्य **(38.880)x2** के गणना मूल्य से कम है। अर्थात $x^2t < x^2c$ है। अत: हमारी शुन्य परिकल्पना **(H01)** अस्वीकार की जाती है।

समस्याएँ एवं सुझाव – प्रस्तुत शोध पत्र में जनजतीय क्षेत्र में आधुनिक कृषि पद्धतियों के अपनाने से आर्थिक स्थिति में सकारात्मक परिणाम देखने को मिले है, साथ ही आदिवासी कृषकों की जागरूकता के संबंध में भी सकारात्मक परिणाम आए है।

किंतु जनजतीय क्षेत्र में आधुनिक कृषि पद्धतियों के प्रयोग एवं इससे होने वाले लाभ वर्तमान हेतु आवश्यक है किंतु विकास इस दौड़ में कृषि में आधुनिक तकनीकों से होने वाले दुष्परिणामों को भी हम नजरअंदाज नहीं कर सकते।

प्रस्तुत शोध पत्र में समस्याएँ एवं सुझाव निम्नलिखित हो सकते है –

1 अधिकांश आदिवासी कृषकों की आय का स्तर निम्न है, इस स्थिति में उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए साहूकारों एवं महाजनों से ऊँची ब्याज दर पर काफी मात्रा में ऋण लेना पड़ता है। इस कारण से उनका लंबे समय तक शोषण होता रहता हैं। इस हेतु सुझाव यह है कि आदिवासियों को उनकी सहुलियत के अनुसार निम्न ब्याज दर पर सरकारी संस्थाओं द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इससे उनकों शोषण से बचाया जा सकता है।

2 अध्ययन क्षेत्र के सर्वाधिक आदिवासी कृषक ऐसे है, जिन्हें कृषि क्षेत्र से संबंधित शासकीय कार्यक्रमों एवं योजनाओं की जानकारियों का अभाव है। अत: आवश्यकता इस बात की है कि सरकार के कृषि से संबंधित समस्त कार्यक्रमों एवं योजनाओं के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए आदिवासी कृषकों के गाँवों के शिक्षित युवाओं को ही नियुक्त कर दिया जाना चाहिए, ताकि वे आदिवासियों को अच्छी तरह से समझा सके।

3 कृषि में आधुनिक तकनीकों के प्रयोग से एक तरफ सकारात्मक परिणाम है, वहीं पर इसके दुष्परिणाम जैसे पर्यावरण पर प्रभाव,वित्तिय ऋणग्रस्तता,पानी की उपलब्धता आदि के परिणाम भी दिखने लगे है। इस हेतु आवश्यक है कि कृषि में मँहगी तकनीकों के प्रयोग प्रत्येक कृषक वर्ग नहीं कर पाता है, साथ अत्यधिक उत्पादन के लालच में ऋणग्रस्तता के जाल में फँस जाता है। साथ ही पर्यावरण के उपर होने वाले प्रभावों को भी दृष्टिगत रखना आवश्यक होना चाहिए।

4 आधुनिक कृषि पद्धतियों के अपनाने से जमीनों में पानी की उपलब्धता जो कि नलकुपों आदि के माध्यम से पानी निकाला जा रहा है। जिससे पेयजल एवं जमीन की उर्वरा शक्ति पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। इस संबंध में शासन को अधिक से अधिक जलसंवर्धन नीति पर जोर देना चाहिए एवं देश विभिन्न मुख्य नदियों वापस में जोड़ा जाना चाहिए। जिससे जिस क्षेत्र में पानी की कमी होगी। वहाँ पर आसानी से पानी की पूर्ति की जा सकती है। साथ ही किसानों को मँहगे ट्यूबवेल आदि हेतु अनावश्यक ऋण के जाल में फँसने से रोका जा सकता है।

5 शासकीय नीतियों का प्रचार-प्रसार क्षैत्रिय भाषाओं में करना चाहिए जिससे अशिक्षित कृषक वर्ग आशानी से लाभन्वित हो सकेगा।

निष्कर्ष–निष्कर्ष यह निकलता है कि आधुनिक कृषि पद्धति के अपनाने के परिणामस्वरूप दोनों पहलुओं को ध्यान में रखना चाहिए। इसके अपनाने से एक ओर लाभ दिख रहा है। तो वहीं दूसरी ओर इसके दुष्परिणामो को भी देखते हुए शोध क्षैत्र में भी आधुनिक कृषि पद्धतियों का उपयोग किया जाने लगा है एवं आदिवासी कृषकों की आर्थिक स्थिति में सकारात्मक सुधार देखने को मिला है। तथा इस हेतु जनजातीय कृषक वर्ग आकर्षित हो रहे है। इस प्रकार स्पष्ट कहा जा सकता है कि जनजातिय क्षेत्रों में भी आधुनिक कृषि पद्धति प्रभावशील है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हसनैन नदीम,(2000) 'जनजातीय भारत' रवि मजूमदार, जवाहर पब्लिर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली पृ. सं. 1
2. अग्रवाल डॉ. एन. एल. (2008) 'भारतीय कृषि का अर्थतन्त्र' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर पृ.सं. 580-595
3. शुक्ल एवं सहाय,(2004)'सांख्यिकी के सिद्धान्त' साहित्य भवन पब्लिकेशन,आगरा पृ.स.-613
4. आर.एल. पाटनी, '*कृषि अर्थशास्त्र'* संजीव प्रकाशन मेरठ पृ.सं. – 24
5. स्त्रोत–जिला सांख्यिकीय पुस्तिका खरगोन (म.प्र.)

****

भारतीय राज्य व्यवस्था में विद्यमान भ्रष्टाचार एवं विकासशील राज्यों में पाये जाने वाले भ्रष्टाचार का एक तुलनात्मक अध्ययन - (वर्तमान परिदृश्य के संदर्भ में)

लल्ला रैदास *

शोध सारांश - आज भारतीय लोकतंत्र एक बड़े इम्तेहान के बरक्स खड़ा है क्योंकि यहाँ की राजनीतिक संस्थाएँ उस प्रकार से कार्य नहीं कर रही हैं, जिस प्रकार के कार्य निष्पादन की उनसे अपेक्षाएँ की गई थी। ऐसा इसलिए है कि संस्थाओं के आरोपण मात्र से राज्य व्यवस्था की कार्यक्षमता में वृद्धि नहीं की जा सकती।[1] वास्तव में प्रावधान से ज्यादा क्रियान्वयन महत्वपूर्ण पहलू है[2] और संस्थाओं को व्यावहारिक बनाने के लिए आवश्यक आधार अर्थात् परिवेश तैयार कर मुहैया करने की आवश्यकता है।[3] संस्थाएँ किस प्रकार से कार्य करती हैं, केवल यह जानकारी पर्याप्त नहीं है। यह जानना भी आवश्यक है कि राज्यव्यवस्था में संस्थाएँ इस प्रकार ही कार्य क्यों करती हैं ?[4] हमारे जनप्रतिनिधि सभी के लिए शिक्षा को प्राप्त करने का एक समान अवसर (अर्थात एक समान क्वालिटी एजुकेशन) देने को तैयार क्यों नही है ?[5] जनप्रतिनिधियों द्वारा देश को शर्मसार कर देने वाली नकारात्मक भूमिकाएँ प्रस्तुत करने के बावजूद भी संक्रमण कालीन समाजों की तरह हमारे यहॉ भी इनके पकड़े जाने की संभावनाएँ कम क्यों रहती हैं ?[6] जबकि ऐसे मामलों को उजागर मात्र कर देने वालों को इन भ्रष्ट्राचारियों द्वारा जान से मारकर फिर छुट्टा घूमने तथा जनप्रतिधिसामान्य नागरिक बन जाने की अधिक संभावनाएँ क्यों बनी रहती हैं ? इसका कारण हैं-वर्तमान समाज के मूल्य और आदर्श।[7] इसी तरह अनिर्णय का रोग हमारी राज्य व्यवस्था में ऊपर से नीचे तक क्यों फैल गया है ? जनता खुद इस बीमारी से क्यों घिर गई है ? अनिर्णय का सबसे बड़ा कारण है-सोच विचार कर दिया गया कु:शासन, जिसने पार्टी हितों की रक्षा की और जनता को पीछे धकेल दिया। उपरोक्त इन्हीं विभिन्न पहलुओं को समझने के लिए प्रस्तुत शोध में विकासशील राज्यों में विद्यमान भ्रष्टाचार एवं भारतीय राज्य व्यवस्था में पाये जाने वाले भ्रष्टाचार का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है एवं तुलनात्मक राजनीति के तुलना के प्रमुख आधारों के अन्तर्गत भारतीय राज्यव्यवस्था को परखने का प्रयास किया गया है तथा उन परिवर्त्यों, प्रभावों का भी विवेचन किया गया है, जो हमारी राज्य व्यवस्था को प्रभावित करते हैं।

शब्द कुंजी-भारतीय राज्य व्यवस्था का भ्रष्टाचार व उसके परिवर्त्य एवं विकासशील राज्यों का भ्रष्टाचार।

प्रस्तावना - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में भी पश्चिमी राजनीतिक समाजों के समान अधिकाधिक राजनीतिक संरचनाओं की स्थापना और शक्तियों का अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण किया गया है।[8] अत: इसकी संरचनाओं की समानता से यह माना गया कि इसमें राजनीतिक विकास एक समान नहीं होगा, तो भी कम से कम एक ही दिशा में होगा, लेकिन बाद के वर्षो में हुए अनेक विकासों ने स्पष्ट कर दिया कि इसमें एक-सी संरचनाएँ होने पर भी राजनीतिक विकास के स्तर, दिशाएँ और अनुक्रम भिन्न- भिन्न प्रकार के है। अत: यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि इसके राजनीतिक विकास को भिन्नता प्रदान करने वाला मौलिक तथ्य क्या है? वस्तुत: यह तथ्य है-भ्रष्टाचार। भ्रष्टाचार के उत्पादक परिवर्त्य ये हैं-परम्परागत राजनीतिक संरचनाएँ, धर्म, संस्कृति, खासकर आर्थिक ढाँचा, काल-नियति, राजनीतिक नेतृत्व व उसका दृष्टिकोण, समाज की सबसे निचली इकाई व्यक्ति का आचरण और उसकी संवेदना। व्यक्ति की संवेदना ऐसी होनी चाहिए, जैसा कि हाल में ही स्थानीय निकायों द्वारा कुत्तों को मारे जाने के एक मामले को लेकर सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिए गए आदेश में एवं अरूणाचल प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लगाने के मामले को लेकर सुप्रीम कोर्ट द्वारा की गई एक तल्ख टिप्पणी में दिखती है।[9] इसी प्रकार सुप्रीम कोर्ट ने वकीलों के संदर्भ में कहा कि इसमें (वकीलों में) क्षमता से अधिक भीड़ बढ़ गई है और प्रणाली सुधार के लिए कराह रही है।[10] लेकिन विडंबना है कि भारतीय समाज द्वारा कभी-कभी, कहीं-कहीं व किसी-किसी मामलें में ही उपर्युक्त प्रस्तुत संवेदना की तरह संवेदना प्रकट की जाती है और ऐसी संवेदनाएँ, जो माननीय सुप्रीम कोर्ट को व्यक्त करनी पड़ती है, उसकी शुरूआत सबसे पहले समाज की तरफ से हो तो और बेहतर होगा। उदा. के लिए 2015 व 2016 में घटित हुई तीन गंभीर चिन्ताजनक घटनाओं पर भारतीय समाज द्वारा अलग-अलग तरह से संवेदना प्रगट की गई। जहाँ एक घटना को राष्ट्रीय स्तर के समाचार-पत्र में जगह मिली, वही दूसरी घटना के बारे में अधिकांश लोग अनजान हैं या जॉनबूझकर बनें हुए हैं, तीसरी घटना पर संवेदना केवल उसी वर्ग ने प्रगट की, जो उससे प्रभावित है, जबकि समाज का अधिकांश भाग चुप्पी साधे है, जबकि इस तरह की घटनाओं पर समाज की संवेदना एक जैसी होनी चाहिए।[11]

तुलना के आधार और भारतीय राज्य व्यवस्था- सर्वप्रथम भारतीय राज्य व्यवस्था के स्वरूप और उसकी प्रमुख समस्याओं की जटिलताओं को समझने के लिए तुलनात्मक राजनीति के तुलना के प्रमुख आधारों के अंतर्गत परखना जरूरी है। एसईफ़ाइनर ने तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन का चौमुखी आधार बताया है, 12 उन्हीं आधारों के अंतर्गत भारतीय राज्य व्यवस्था का एक अध्ययन निम्नांकित प्रस्तुत है -

प्रथम आधार में यह देखा जाता है कि शासन-प्रक्रिया में जनता को कितना सम्मिलित किया गया है और कितना उसे इस प्रक्रिया से वंचित रखा गया है ? वर्तमान भारतीय राज्य व्यवस्था के राजनीतिक व प्रशासनिक संस्थाओं के उच्च पदों पर धनिक उच्च जाति के लोग भारी मात्रा में हैं।[13] इनकी इस प्रकार पदस्थापना हो जाने के कारण राजनीतिक सत्ता का स्त्रोत

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाहिरा नाला, जिला - सतना (म.प्र.) भारत

आज भी अड़ियल परम्परागत समाज बना हुआ है। सत्ता में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं आया है। इसलिए दलितों व गरीबों की बात वहाँ अड्रेस नही हो रही हैं।[14] दूसरे शब्दों में राज्य व्यवस्था में सभी नागरिकों की भागीदारी जनसंख्या के अनुपात में समान नहीं है। संविधान समीक्षा आयोग की रिपोर्ट के अनुसार देश में राजनीतिक पतन का सबसे मुख्य कारण निर्वाचन प्रक्रिया का दोषी होना है।[15] अवैध तरीकों का बहुतायत मात्रा में उपयोग करते हुए केवल निश्चित कालान्तरी चुनावों में जनता की भागीदारी को जनसहभागिता की औपचारिकता मात्र कहा जाएगा।

दूसरे आधार में यह देखा जाता है कि जनता शासकों के आदेशों का पालन कितनी स्वेच्छा से करती है और कितना भय के कारण करती है ? अर्थात् शासन एवं शासितों का संबंध क्या हैं? हमारे समाज का वह भाग, जो सबसे अधिक भ्रष्टाचार का शिकार है, अनेक पर्यावरणीय समस्याओं (जटिलताओं) के कारण एवं खुद की अपनी सबसे बड़ी गलती के कारण (अपने मत के महत्व व मत करने के प्रभाव के बारे मे आवश्यक राजनीतिक समझ नहीं रखने के कारण) व कुछ अन्य इस तरह की कमियों के कारण, उसके लिए ऐसी परिस्थितियाँ नहीं बन पा रही हैं, जिससे कि शासन प्रक्रिया में उनकी भी उचित भागीदारी सुनिश्चित हो सके। अतः इसका परिणाम यह हुआ कि इस शिकार जनता (आमआदमी) का छोटा-सा-छोटा कार्य भी प्रायः प्रशासनिक कार्यालयों में रिश्वत, सिफारिश व दलाली के बिना नहीं होता। प्रशासनिक भ्रष्टाचार से आम आदमी की रोजमर्रा की जिन्दगी में हताशा भर गई है तथा इससे अधिकांश लोग अपने कार्यों के लिए गैर-कानूनी उपायों का सहारा लेते हैं।[16] यह जनता शासक के आदेशों का पालन भ्रष्टाचार के जरिए (घूस, दलाली, सौदेबाजी, सिफारिश, अपने 'मत की बिक्री व कोई अवैध कार्य) स्वेच्छा से नहीं करना चाहती। अपने सभी काम भ्रष्टाचार के जरिए ही करना, करवाना, पीड़ित जनता का इस स्तर तक का भ्रष्ट स्वभाव नहीं है बल्कि वस्तुतः वह परिस्थितियों वश शासक के वैध अवैध आदेशों को मौन स्वीकृति प्रदान कर रही है व खुद ही जाने-अनजाने में उनके अवैध कार्य व्यवहारों का हिस्सा बन रही है। सरकारी निर्णयों पर वह सहमति होने के अलावा और कोई विकल्प नहीं पाती है अर्थात् न तो उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत है और न तो राजनीतिक सत्ता उनके हाथ में है। केवल उनके पास हैं-सत्ता बदलने का अवसर, जिसे खुद की कमियों व कुछ बाध्य कारणों से गवां देती है, जबकि दूसरी तरफ राजनीतिक वातावरण का अपराधीकरण भी हो गया है।[17] अतः भ्रष्टाचार, सौदेबाजी के अलावा कोई अन्य रास्ता ही नहीं बचता। शिकार जनता द्वारा शासकों के अवैध कार्य-व्यवहारों में शामिल हो जाने के बाद यह शासक समूह तो अपनी सत्ता की प्रभावकारिता के कारण कानून से साफ बच जाता है लेकिन शिकार समूह को पहुॅचा दिया जाता है-जेल। ऐसे ही कुछ कारणों से आज देश के जेलों में दलितों की संख्या सबसे अधिक है।[18] विशेषतया संकट की अवस्थाओं में लोकतंत्र में लोकप्रिय समर्पण का भी कुछ अंश प्रवेश पा लेता है।[19] इसलिए ही आज हमारे अधिकांश जनप्रतिनिधि करोड़पति अरबपतिअपराधिक पृष्ठभूमि वाले लोग ही निर्वाचित हो रहे हैं।[20] अतः स्पष्ट है कि ज्यों-ज्यों राज्य व्यवस्था में जनसाधारण व खासकर हाशिए के लोगों की भागीदारी घट रही है, हमारा लोकतंत्र अपराधिक व भ्रष्टाचारी चरित्र का होता जा रहा है।

इस आधार के अन्तर्गत यह भी देखा जाता है कि शासक, शासक बने रहने का वैधीकरण किस प्रकार स्थापित करते है? हर शासक अपनी सत्ता की वैधता के लिए मुख्यतया अवपीड़न, छल-साधन, जकड़न, अनुनयन या सौदेबाजी में से कोई एक या अनेक साधन अपनाता है। इसके लिए हमारी राज्य व्यवस्था के शासक इन सभी साधनों का कम या अधिक मात्रा में उपयोग कर रहे हैं। किन्तु इनमें से सबसे अधिक उपयोग किया जाता है-छलसाधन का। इस छलसाधन के प्रयोग का उद्देश्य हैं-जनता को अवपीड़न से अनभिज्ञ रखते हुए अधीन बनाया जाय। यही कारण है कि यहाँ की अधिकांश राजनीतिक संरचनाओं से सूचना अधिकार के तहत शासकों द्वारा या शासकों के निर्देशानुसार छुपाकर रखी गई जानकारियों को प्राप्त करने के लिए जिद कर लेना अपने जान को जोखिम में डालने के समान है।[21] हमारे यहाँ के सरकारी स्कूलों की गुणवत्ता बहुत खराब है। अतः पैसे वाले लोग अपने बच्चों को सरकारी स्कूल में भेजना हेठी समझते हैं।[22] आरटीई होने के बाद भी बहुत से गरीब बच्चों को अच्छी प्राइवेट स्कूलों में प्रवेश नहीं मिल पाते हैं।[23] दलितों के लिए आरक्षण होने बावजूद उनकी गुलामी में व उनकी स्थितियों में कोई खास परिवर्तन नही हुआ।[24] दलित वर्ग उच्च पदों पर बिरले ही मिलते हैं व अधिकांश हैं-जेल में। योजनाओं के जरिए लुभाए रखना व चुनावों में मुफ्त उपहारों की घोषणाएँ (प्रलोभन देना) व भावनात्मक मुद्दे भी छल-साधन ही है।

तीसरे आधार में यह देखा जाता है कि शासक प्रतिनिधि रूप रखते हैं या नहीं ? शासक सबका प्रतिनिधित्व सही अर्थों में करते हैं ? यह निर्विवाद तथ्य है कि हमारे शासक जिस समाज के घटक है, उस समाज या विचार धारा से जुडे हुए मामलों में प्रायः सबका प्रतिनिधित्व नहीं करते।[25] यही कारण है कि हमारी राज्य व्यवस्था में ऐसे अपने लोगों व ऐसे लोगों के कार्यों को पहचान कर कार्य करने व भेंट करने के लिए अक्सर हमारे अधिकांश शासक कोडवर्ड (सांकेतिक भाषा) का उपयोग करते हैं। व्यवस्था में अपने लोगों को पहचान कर अपने नजदीक अक्सर पदस्थ करते हैं।[26]

चौथे आधार में यह देखा जाता है कि शासकों के वर्तमान व भावी गंतव्य क्या है ? जहाँ वे पहुँचना चाहते हैं ? देश के सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दल 'समान राष्ट्रीय उद्देश्यों के संबंध में भी एकमत नहीं है तथा देश के विकास की चिन्ता किसी को भी नहीं है[27] जबकि भारतीय शासकों द्वारा घोषित गंतव्य है-सबका साथ सबका विकास।

तुलना की इकाइयाँ एवं भारतीय राज्य व्यवस्था-

1. **भारतीय राजनीतिक संरचनाओं की वास्तविक प्रकृति-** जिन समस्याओं के स्थाई रूप से मिट जाने से हमारे अधिकांश नेताओं को यह डर सता रहा है कि भविष्य में हमारी राजनीतिक यथास्थिति हमेशा के लिए खत्म हो सकती है, ऐसी समस्याओं को राजनेताओं की इच्छा बनाये रखने की है। इसी धारणा के अनुसार ऐसी प्रत्येक समस्या को मिटाने के लिए मौजूद प्रावधानों को ठीक ढंग से क्रियान्वित नहीं किया जाता और समस्याओं पर सही समय में सही निर्णय नहीं लिया जाता। अतः समस्या बरकरार रहती है और समस्या को समाप्त करने के लिए एक नई संरचना गठित कर दी जाती है। फिर समाधान न होने पर पुनः उच्च स्तरीय समिति नियुक्ति कर दी जाती है। अन्य विकासशील राज्यों के समान हमारे यहाँ भी प्रायः कार्य को उलझाने या टालने या दोषियों को बचाने के लिए 'समिति व्यवस्था' के दुरूपयोग की सामान्य परम्परा मौजूद है।[28] इस कारण राज्य व्यवस्था का आकार और वित्तीय भार तो बहुत अधिक है किन्तु इसमें नियंत्रण व उद्यमिता के गुणों का बहुत अभाव है। इन संस्थाओं के उच्च पदों पर उच्च जाति के लोगों की अधिकतम पदस्थापना किये जाने के कारण इनकी राजनीतिक सत्ता का स्त्रोत परम्परागत समाज बना हुआ है। इनमें पदस्थ कर्मचारियों के बहुसंख्यक भाग द्वारा अवैध आर्थिक प्रलोभन व अपनी सामाजिक भूमिका से प्रभावित होकर प्रायः कार्य किये जाते हैं। इनमें अवैध कार्यों को वैधता प्रदान करने व

प्रमुख संवैधानिक प्रावधानों को शिथिल व अप्रभावी कर क्रियान्वयन करने के लिए अनेक अवैध प्रक्रियाओं को निर्मित किया गया है।[29] विकासशील राज्यों में नियम-निर्माण, प्रयुक्ति व अधिनिर्णयन आदि की रूपान्तरण प्रक्रियाओं में गैर-सरकारी संरचनाओं की आधारभूत भूमिका रहती है।[30] इसे सम्पन्न करने के लिए विभिन्न सरकारी व गैर-सरकारी संरचनाएँ व उनके पदाधिकारी श्रृंखला के रूप में मिलकर कार्य करते हैं। देश में न केवल छद्म कानूनी ढाँचा तैयार कर लिया गया है, अपितु समानान्तर अर्थव्यवस्था एवं यहाँ तक कि समानान्तर सरकार भी इनकी चल रही है।[31] इस श्रृंखला में राजनीतिक स्तर की गैर सरकारी संरचनाऍं (दलाल, दबाव समूह, दल, संगठन व अपराधिक समूह) भी सम्मिलित रहती हैं क्योंकि इस स्तर में शासकों के मान-सम्मान के मुद्दे नहीं उलझे होते हैं। कुछ लोगों द्वारा इन अवैध प्रक्रियाओं का इस आधार पर समर्थन किया जा रहा है कि ये संस्थाऍं अभी संक्रमणकाल से गुजर रही हैं।

2. शासन के प्रमुख अंगो की वास्तविक कार्यप्रणाली – अन्य कुछ विकासशील राज्यों की कार्यपालिकाओं के समान हमारी राज्य व्यवस्था में भी कार्यपालिका के प्रमुख कार्य विशेषीकृत संरचनाओं के स्थान पर पदस्थ व्यक्तियों द्वारा आज भी प्राय: सम्पन्न किये जाते हैं और व्यक्तिगत सम्बन्ध का संस्थाओं व वैधता-युक्त प्रक्रियाओं से कहीं अधिक महत्व बना हुआ है व इसी प्रकार नीति निर्धारक वर्ग विशेष के हिमायती होने के कारण प्राय: निष्पक्ष ढंग से न तो नीति निर्माण करते हैं व न ही नीति निर्णय करते हैं।[32] अपवादों के अलावा वास्तविकता यह है कि भले ही देश में इतने कानून व संस्थाएँ मौजूद हैं लेकिन जिस तरह से साधन सम्पन्न लोगों को न्याय प्राप्त हो जाता है, उस ढंग से और उस ढंग का न्याय दलितों व गरीबों को प्राप्त हो जाएगा, इनमें आज भी निश्चित नहीं है व प्रशासनिक कार्य कारण में जाति व लिंग आधारित भेदभाव जारी है।[33] इन सब कारणों से निराश होकर राष्ट्र की कुछ प्रतिभाएँ विकसित राष्ट्रों की ओर पलायन कर रही हैं। हमारे देश में शासन स्तर अर्थात् ऊपर तक व्यापक भ्रष्टाचार मौजूद होने एवं एक वर्ग के विशेष के हितों को अधिक प्राथमिकता देने के निम्नांकित कारण हैं-

भारतीय राज्य व्यवस्था के पर्यावरणीय कारकों और मानवीय चरित्र में वर्चस्व कायम करने की प्रधानता एवं उनके बीच अन्तर्सम्बद्धता का होना– भारत में भ्रष्टाचार का बहुत बड़ा जटिल कारण है। राज्य व्यवस्था की समस्याएँ प्रमुखतया अपने पर्यावरण से संबंधित होती हैं और विशेषकर ये समस्याएँ आर्थिक प्रकृति की होती हैं। जमीन की अति गैर बराबरी का वितरण हमारे समाज में प्रारम्भ से ही मौजूद रहा है और आज भी है। देश की आय का 85 प्रतिशत भाग धनी वर्ग के हाँथों में जाता है, जिसकी जनसंख्या अत्यंत कम है, जबकि देश की अधिकांश जनसंख्या, जो गरीब है, उसके पास देश की आय का 15 प्रतिशत हिस्सा आता है।[34] आर्थिक शक्ति की सर्वोपरिता तथा समाज में इससे सम्पन्न वर्ग का प्रभुत्व राजनीतिक शक्ति को भी इसके अधीन बना देता है।[35] समाज में विद्यमान सभी संस्थाएँ आर्थिक शक्ति के समक्ष नतमस्तक रहती हैं।[36] देश में ऐसा ही हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, जिनके हाँथों में आर्थिक सत्ता थी, उन्हीं के हाँथों में राजनीतिक सत्ता केन्द्रीकृत हो गई। भारत में राजनीतिक शक्ति का आर्थिक शक्ति के अधीन होना भ्रष्टाचार का प्रधान कारण है। आर्थिक गैर बराबरी का ही प्रभाव है कि विकासशील राज्यों के समान हमारे यहाँ भी राजनीतिक गतिविधियाँ आज प्रधानत: अभिजनों (भारत का अभिजन धनवान वर्ग है) तक की सीमित हैं[37] और इनके सामने कानून की प्रभावकारिता कम हो जाती है व कभी-कभी कुछ मामलों में इसकी प्रभावकारिता शून्य हो जाती है।[38] ऐसी स्थिति में धनिक वर्ग कानूनों पर शासन करने लगते हैं जबकि निर्धन व दलित वर्ग भ्रष्टाचार का सबसे अधिक शिकार है और उनके लिए कानून की प्रभावकारिता बहुत अधिक होती है। तब उन्हें लगता है कि ऐसी अन्यायी व्यवस्था न होती, तो अच्छा होता और हम अपनी सुरक्षा स्वयं कर लेते। इस असमानता से भारतीय लोकतंत्र पर अप्रत्याशित दबाव पड़नें लगे हैं।

सामाजिक कारण– अन्य राजनीतिक व्यवस्थाओं की तरह भारतीय राजनीतिक समाज का भी आधारभूत घटक मनुष्य है। इस मनुष्य का अपना एक परम्परागत समाज व अपनी विचारधारा है, जिससे उसके चरित्र का गठन हुआ है। अत: हमारी राज्य व्यवस्था में आज भी राजनीतिक सत्ता के अधिकांश स्त्रोत व लक्षण इसी परम्परागत समाज, संस्कृत व धर्म के हैं और इसमें समाज के कुछ भाग को जानवर से बद्तर का प्राणी माना जाता है। यही कारण है कि स्वतंत्रता के समय की तुलना में आज देश के लोग ज्यादा विभाजित नजर आते हैं।[39] अन्य विकासशील राज्यों के समाज व प्रशासन के समान इस समाज और इसके द्वारा निर्मित किये गये प्रशासन व सरकार की प्रमुख समस्या परिवर्तन से परहेज की है और सही समय सही निर्णय न कर पाने की है।[40] इस कारण हमारे यहाँ समाज, प्रशासन, राजनीति, न्याय, सुरक्षा, कानून, प्रक्रियाएँ, अर्थव्यवस्था, तकनीक आदि सब समस्याग्रस्त पाये जाते हैं। इसी सामाजिक व्यवस्था के अनुसार हमारी राज्य व्यवस्था का अधिकांश हिस्सा आज भी कार्य करता है क्योंकि किसी भी समाज में राजनीतिक विशिष्ट वर्ग का स्वरूप व आकार सामाजिक परिस्थितियों और मुख्य रूप से सरकार पर निर्भर करता है और व्यक्ति सामाजिक भूमिकाओं के माध्यम से ही अन्य सब प्रकार की भूमिकाओं में उलझते हैं।[41] जाग्वाराइव ने भी कहा है, राजनीतिक असहमति का कारण सामाजिक असहमति होता है।[42] यह समाज दबाव समूह के जरिए राजनीतिक दलों के छद्मवेश में अपने जातीय व साम्प्रदायिक हितों की पूर्ति करने में संलग्न है।[43] हमारे देश की भौगोलिक बनावट भी जटिल है। इन विविधताओं के बीच सामंजस्य बनाए रखना (ताकि प्रत्येक विविधता जीवित रहे) एक समस्या है।[44] प्रान्तीयता, जाति, लिंग, भाषा व नस्ल आदि के प्रश्नों ने सम्पूर्ण भारतीय राष्ट्र के मानसिक वातावरण को दूषित कर रखा है।[45] इससे हमारी राज्य व्यवस्था अछूती नहीं है। अत: सामुदायिकता की भावना यहाँ केवल संकट के समय में देखने को मिलती है। इसी प्रकार हमारे यहाँ वर्तमान में सूचना की संरचनाओं में भी एक वर्ग विशेष का वर्चस्व कायम है। उपरोक्त कारणों के अलावा राजनीतिक विज्ञान का मूल सिद्धांत भी है कि व्यक्ति मूलत: स्वार्थी प्रकृति का होता है। इसके स्वार्थी स्वरूप का ही फल है-अति आर्थिक लालच का उत्पन्न होना, सत्ता प्राप्ति के लिए किसी भी हद तक चले जाना व व्यक्ति की संवेदना का गायब होना। इन्हीं उपरोक्त कारणों से हमारे यहाँ राजनीतिक तटस्थता का बेहद अभाव पाया जाता है और राष्ट्रप्रेम का छद्म स्वरूप होता है। इसी प्रकार नागरिकों की पूर्ण जनसहभागिता का अभाव होना,[46] राजनीतिक शक्ति का सुस्पष्ट संस्थाकरण न हो पाना, व्यवहार में स्पष्ट भूमिका विभिन्नीकरण का अभाव होना आदि भी भ्रष्टाचार के कारण हैं। हमारे यहाँ जो वर्ग भ्रष्टाचार सबसे अधिक शिकार है, उसका अधिकांश हिस्सा अशिक्षित है और अशिक्षित बनाये रखने के लिए कार्य किया जा रहा है। अत: ऐसे समाज में भावनात्मक मुद्दे असली मुद्दों पर भारी पड़ते हैं[47] और ऐसा समाज अपने यम के महत्व का नही समझता।

3. राजनीतिक दलों के गठन के आधार एवं उनकी कार्यप्रणाली– अन्य विकासशील राज्यों के राजनीतिक दलों के समान हमारे देश के अधिकांश राजनीतिक दलों का भी निर्माण विचारधारा के आधार पर नहीं

बल्कि जाति, धर्म, क्षेत्रीय मुद्दों, व्यक्तिगत राजनीतिक स्वार्थ, सामयिक विषयों व खासकर व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व आदि के आधारों पर हुआ है।[48] कुछ दलों की विचारधाराएँ अलग-अलग थी किन्तु सत्ता के लालच में अब उनकी भी संख्या अल्प है। अन्य कुछ विकासशील राज्यों के राजनीतिक दलो के समान भारतीय राजनीतिक दल भी 'समान राष्ट्रीय उद्देश्यों' के संबंध में एक मत नहीं है और इस कारण राजनीतिक दलों का राष्ट्रीय समस्याओं से ध्यान हट गया है।[49] यहाँ के राजनीतिक दलों में अपराधिक तत्वों की पर्याप्त घुसपैठ एवं प्रभाव है।[50] राज्य व्यवस्था की खुली प्रकृति होने के कारण एवं क्षेत्रीयता को प्रमुखता देने के कारण क्षेत्रीय दलों का बाहुल्य है। कुछ दबाव समूह राजनीतिक दलों के छद्मवेश में निर्मित हो गये हैं[51] और कार्य कर रहे हैं। अत: आज हमारे यहाँ जनतंत्रीय दल प्रणाली का विकास खतरे में है।[52] राज्य व्यवस्था में राजनीतिक अस्थिरताएँ बढ़ती जा रही हैं। कुछ दलों का गठन छद्म राष्ट्रप्रेमी विचारधारा के द्वारा होने के कारण एवं राजनीतिक शक्ति का स्पष्ट संस्थाकरण न हो पाने के कारण भारतीय संघ एवं उसके राज्यों की कुछ प्रमुख कार्यपालिकाएँ अपने वर्ग विशेष के हितों की पूर्ति के लिए दलितों के साथ अत्याचार करती हुई देखी गई हैं और इस कारण यह साबित है कि परम्परागत भारतीय समाज के मूल स्वभाव में कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं हुआ है।[53] वास्तव में ऐसे दल जन संचालन का साधन न बनकर जनता को उदासीन बनाने की परिस्थितियाँ उत्पन्न करने वाले बन गये हैं। खास बात यह है कि विभिन्न दलों के अपने-अपने नेता है व नीतियाँ है, विचार धाराएँ है, पर भ्रष्टाचार के मामले में विभिन्न दलों के बहुसंख्यक नेताओं द्वारा प्राय: श्रृंखला के रूप में मिलकर कार्य किया जाता है व चुनाव के समय एक समान चुनाव घोषणा पत्र जारी किया जाता है। ये दल सत्ता प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार के हथकडों अपनाने से नहीं चूकते हैं।[54]

4. **दबाव समूह की कार्यप्रणाली**-भारत के अधिकांश दबाव समूहों के कार्य करने की प्रकृति प्रदर्शनात्मक है।[55] यहाँ के अधिकांश दबाव समूह राजनीतिक दलों के छद्मवेश में हैं, जो प्रमुख रूप से अपने गुटीय स्वार्थ को आगे बढ़ाने में संलग्न हैं। इसी तरह ट्रेड यूनियनों के रूप में कुछ संस्थात्मक दबाव समूह भी महत्वपूर्ण बन गये हैं, जिनके दबाव के प्रमुख साधन हैं-प्रेस। देश के अधिकांश महत्वपूर्ण समाचार-पत्र बड़े पूँजीपतियों द्वारा चलाये जा रहे हैं।[56] यहाँ श्रमिक गुट समूह भी हैं लेकिन मुख्यतया ये राजनीतिक दलों से सम्बद्ध हैं और इनके नेतृत्वकर्ता राजनीतिक दलों के ख्याति प्राप्त नेता है।

5. **भारतीय लोकतंत्र का झुकाव व लगाव**-निम्नांकित व्यवस्थाओं की ओर है:-अपराधी तंत्र, धनिकतंत्र, गुटतंत्र भ्रष्टाचारी तंत्र, प्रतीक लोकतंत्र, अनावश्यक संस्थाकरण व विकेन्द्रीकरण, योजनाकरण, दिखावटीकरण, अनियंत्रित प्रशासन।

6. **गरीबों और दलितों से जुड़े विषयों में भारतीय राज्य व्यवस्था की कार्य करने की पद्धति-**

1. **आरक्षण** - हमारी राज्य व्यवस्था द्वारा दलितों व पिछडे वर्ग के लोगों के हितार्थ आरक्षण व्यवस्था लागू की गई है और अनेक योजनाएँ दिखावे के तौर पर संचालित की गई हैं। अनुजातिजनजाति के लोगों को आरक्षण से कोई स्थायी राहत व लाभ न मिल पाये, इसलिए उनसे सम्बन्धित मूल कानूनों में बदलाव, गैर अनुजातिजनजाति के लोगों को फर्जी-प्रमाण के जरिए अनुजातिजनजाति बनाना व उनकों ऐसे वर्गों की श्रेणी में सम्मिलित करना व उनकों अनुजातिजनजाति के अयोगों संस्थाओं के पदों पर आसीन करना आदि कार्य बहुतायत मात्रा में किये गये हैं। इसलिए ऐसे लोगों के घरो, चेहरो, कपड़ों या बच्चों की बोली के विकास एवं विचार-अभिव्यक्ति की स्थिति व उनकी सुरक्षा के विकास का कोई लक्षण नहीं दिखता। उपरोक्त प्रावधान होने के बावजूद भी स्वतंत्रता प्राप्ति के समय की तुलना में वर्तमान समय में गरीब और अमीर बच्चों के बीच 'लालिटी एजुकेशन में फर्क लगातार क्यों बढ़ता जा रहा है ?[57]

2. **अपराध व न्याय** - आजादी के बाद यदि उन्हें साधन सम्पन्न लोगों की तरह और उस ढंग से न्याय प्राप्त हो गया होता, तो आज दलितों की संख्या जेलों से सबसे अधिक न होती। कुछ क्षेत्रों में दलितों, आदिवासियों के विरूद्ध अपराधिक घटनाओं व हत्याओं की संख्या बढ़ती जा रही हैं और उनके विरूद्ध सबसे अधिक अपराध पंजीबद्ध किये जा रहे हैं।

3. **गरीबों के लाभों को हथियाने के लिए अपनाये जा रहे कुछ अवैध तरीके निम्नांकित है- (अ) बी.पी.एल. के संबंध में -**

- गरीबी रेखा के मापदण्ड का निर्धारण मानवीय जीवन की बुनियादी जरूरतों के आधार पर न कर व्यक्ति की शारीरिक भूख की दृष्टि से किया गया।[58]
- बी.पी.एल. सूची में गरीबों का नाम जोडे ज़ाने के नाम पर बिना किसी पूर्व सूचना के अनिश्चित दिनांक व समय को अधिकारियों द्वारा प्राय: 5 व 7 वर्ष में एक बार सर्वे करने की औपचारिकताएँ पूर्ण कर ली जाती हैं। इस प्रक्रिया के कारण अनेक पात्र गरीब व्यक्ति सूची से बाहर हो जाते हैं, जब वे उन्हीं अधिकारियों के पास अपना नाम जोड़ने के लिए निवेदन करते हैं, तब अवैध लाभ प्राप्त करने व उनसे करवाने के लिए अधिकारियों द्वारा निम्नांकित जटिल प्रक्रियाओं के जरिए बाध्य किया जाता है -
- अधिकारियों द्वारा यह कहा जाता है कि अब इस सूची में और व्यक्तियों का नाम नहीं जोड़ा जा सकता, नाम जोडे ज़ाने की अवधि व दिनांक समाप्त हो चुका है और उनके आवेदनों पर यह टीप लिख दी जाती है- किसी माँग को इस प्रकार इस अवधि में पूरा किया जाय अन्यथा इसका परिणाम होगा।[59]
- बी.पी.एल. के मामलों में अन्तिम तौर पर निर्णय कहाँ और किनके द्वारा किया जाएगा, यह निश्चित नहीं होता।[60]
- बी.पी.एल. से जुड़ी जनता की अधिकांश मांगे पर शर्तें विचित्र व विशिष्ट विधियों द्वारा लगायी जाती है।[61]
- किसी गरीब द्वारा अपना नाम सूची में जोडे ज़ाने के लिए किसी अधिकारी से जिद करने पर, उसके द्वारा सम्बंधित व्यक्ति के आवेदन पर टीप लिख दी जाती है-इनका नाम अब बी.पी.एल.सूची में नहीं जोड़ा जा सकता क्योंकि इनकी आय अब बी.पी.एल.से ऊपर है।
- राजीव गांधी विद्युतीकरण के अंन्तर्गत बी.पी.एल.परिवार केवल एकलबत्ती (25यूनिट) तक का ही उपयोग कर सकते हैं।
- प्राइवेट स्कूलों में गरीब बच्चों के नि: शुल्क प्रवेश के संबंध में शिक्षा अधिकार अधि0 2009 में प्रावधान है कि निर्धारित सीट से ज्यादा आवेदन आने पर स्कूल संचालक लाटरी करेंगे।

(ब) आरक्षित व संवेदनशील पदों के संबंध में - गरीबों के लिए आरक्षित सरकारी अति संवेदनशील पदों को हथियाकर अपनी यथास्थिति बरकरार रखने के लिए अपनाये जा रहे तरीके निम्नांकित है - प्रश्न पत्र निर्माण, उत्तर पुस्तिकाओं की जाँच, साक्षात्कार, निर्णय, मतदान, मतगणना, गंभीर मामलों की जाँच, पोस्ट मार्डम, गुप्तचर, जनप्रतिनिधि आदि सेवाओं व पदों में भ्रष्ट व अपने लोगों को चयनकर, नियुक्ति कर व विजय दिलाकर (अर्थात् पहुँचाकर) अपनी सुविधानुसार उनसे कार्य कराने के उद्देश्य से एक

निश्चित वैध नियमावली के स्थान पर विभिन्न प्रावधानों नियमों को अदला-बदली कर लागू करना। अदला-बदली करने के लिए क्रियान्वित किये जा रहे विभिन्न आधार निम्नांकित है - अनुभव, योग्यता, वरिष्ठता, प्रशिक्षण, पदोन्नति, बहुमत के आधार पर निर्णय,फर्जी प्रमाण-पत्र, कानून में बदलाव, सेवाओं की चरित्रावली, जाँच कमेटी की अनुशंसा, अधिक योग्य उम्मीदवार की तलाशकर लाना, स्थानांतरण करना व हटाना, अतिरिक्त प्रभार देना, लाटरी व साक्षात्कार कर, अपात्रों को स्थायी करने के लिए उनका दूसरे विभागों में संविलियन करना[62] व पदोन्नति देना, वरिष्ठ अधिकारियों से मार्गदर्शन, अनुमति व आदेश के आधार पर आदि। उपरोक्त प्रक्रिया सम्पन्न करने के पूर्व निम्नांकित कुछ अन्य प्रक्रियाएँ पूर्ण कर ली जाती हैं-**पहली-** सीधी भर्ती प्रक्रिया को रोक देना।[63] **दूसरी-**अनुजाति जनजाति के कल्याणार्थ स्थापित सभी संस्थाओं के उच्च पदों पर इस वर्ग का वास्तविक कल्याण कर सकने में सक्षम व्यक्तियों को पदस्थ होने से रोकना। **तीसरी-** भर्ती के लिए किये जाने वाले विज्ञापनों में यह शर्त जोंड़ देना कि उपर्युक्त अनुज़ाति जनजाति के वर्गों में से पात्र उम्मीदवार न मिलने पर अन्य स्त्रोतोंवर्गों या उसी प्रवर्ग के महिला पुरूष उम्मीदवारों से रिक्त पदों को भरा जाएगा।[64] **चौथी-**यह शर्त जोड़ना कि विज्ञापन में दिये गये कुल पदों की संख्या को शासन के निर्देशानुसार बढ़ाया या घटाया जा सकता है।[65] **पाँचवी-**अतिरिक्त श्रम की मजदूरी नही दी जाएगी।[66] **छंठवी-**अनुभव के अंक किसी भेदभावी योजना विशेष के तहत ही दिये जाएगें।[67] **सातवीं-**गरीब, अनुज़ाति जनजाति से संबंधित सूचियों व संस्थाओं में गरीब, अनुज़ाति जनजाति के लोगों का झूठा पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिखाकर गैर अनुसूचित जाति जनजाति के लोगों को भारी मात्रा में शामिल कर लिया गया है। **आठवीं-**गैर अनु जातिजनजाति के लोगों का फर्जी जाति प्रमाण पत्र बनाना। **नौ-**गैर अनु जातिजनजाति के लोगों को अनु जातिजनजाति वर्ग की श्रेणी में सम्मिलित कर देना। **दस-** कोई भी उम्मीदवार जिसकी दो से अधिक जीवित संतान है, जिनमें से एक का जन्म 26 जनवरी 2001 को या उसके पश्चात् हो, किसी सेवा या पद पर नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा।[68] **ग्यारह-** नेट परीक्षा के लिए मास्टर डिग्री में 55 % या पीएचडीवाले 50 अंकधारी उम्मीदवार ही पात्र होंगे।

(स) सरकारी ऋणों, लाभों व भूखण्डो के संबंध में-गरीबों के लिए शासन द्वारा निर्धारित ऋणों, लाभों, व सरकारी भूमि को हथियानें के लिए गैर अपात्र तत्वों द्वारा निम्नांकित तरीके अपनाएँ जा रहे हैं -

- परिवार के एक सदस्य को कागज पर किसान और बाकी सभी सदस्यों को भूमिहीन मजदूर के रूप में दिखाना।[69]
- छोटे व सीमान्त किसान के रूप में वर्गीकृत होने के लिए भूमि को सभी सदस्यों में विभक्त कर देना।[70]
- किसी वास्तविक निर्धन व्यक्ति के नाम में परिसम्पत खरीद लेना और फिर गरीब व्यक्ति को कुछ धनराशि देकर इन परिसम्पतों (पशु, गाड़ी, भूमि) को हथिया लेना ।[71]
- सरकारी जमीन को हड़पने के लिए जमीनधारियों ने अपनी जमीनों से जुड़ी सरकारी जमीनों को अपने खेतों का हिस्सा बना लिया। अतः भूमिहीन वर्ग सरकारी भूमि पर दैनिक जीवन मे उपयोग करने से भी वंचित हो गया है।[72]
- भूमि आबंटन के मामले में अधिकारियों द्वारा प्रभावशाली लोगो को तरजीह व गरीबों के साथ भेदभाव किया जाता है।[73]
- राजस्व विभाग द्वारा कूटरचना के जरिए गरीबों की जमीनों को दबंगों के नाम कर दिया गया है[74] और उन्हें कानूनी अदालती प्रक्रियाओं मे फंसाया गया है।
- दबंगों व नेताओं द्वारा दबंगई व प्रशासनिक सहयोग के जरिए बडे-बडे सरकारी भूखण्डों को हथिया कर वहाँ फार्म हाउस, कारखाने, होटल, कॅालेज, खदान, गार्डन आदि स्थापित कर दिये गये हैं, दूसरे लोगों को बेच दिया गया है।[75]
- शासन द्वारा प्राकृतिक फसल प्रकोप सरकारी मुआवजा राशि केवल भूमि के पट्टेदारों को दी जाती है[76] जबकि बटाईदारों को मुआवजा देने के लिए कोई सरकारी नियम नहीं बना हुआ है। देश के सभी राज्यों के खेतिहर मजदूरों में अधिकांश निम्न श्रेणी के जातियों के लोग हैं और बहुत से जमीनधारी पटवारी से परसेन्ट के आधार पर समझौता के जरिए उससे फर्जी सर्वेक्षण कराकर व राशि निकालकर आपस में बांट लेते हैं।
- ग्राम पंचायतों द्वारा फर्जी ग्राम सभा व फर्जी सामाजिक अंकेक्षण समिति के जरिए गरीबों के लाभों को हड़प लेना।
- दबंगो द्वारा प्राकृतिक संसाधनों (वन, खदान) को हड़प लेना।[77]
- अपने चहेते ठेकेदारों के माध्यम से कार्य कराकर सांसद व विधायक निधि का दुरूपयोग जनप्रतिनिधियों द्वारा इसकी स्थापना के समय से ही किया जा रहा है । अतः मोइली समिति ने इसे बंद करने की सिफारिश की थी।[78]

(द) शिक्षा व छात्रवृत्तियो के संबंध मे -

- हमारे यहाँ सभी के लिए शिक्षा को प्राप्त करने का एक समान अवसर (अर्थात एक समान क्वालिटी एजुकेशन) उपलब्ध नहीं है।[79] अतः इससे भारतीय समाज दो भागों में बटता जा रहा है। विश्व बैंक की रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में शिक्षा को लेकर बच्चों में खासा भेदभाव है।[80] लड़के-लड़कियों, अमीर-गरीब जातिगत आधार पर बच्चों के लिए पढ़ाई के मायने अलग-अलग है।[81] इसी प्रकार देश में उच्च शिक्षा अभी भी गरीबों की पहुँच से दूर है।[82] स्कूली भेदभाव को समाप्त करने का एकमात्र तरीका है-स्कूली शिक्षा का राष्ट्रीयकरण। उच्च शिक्षा व अनुसंधान से संबंधित छात्रवृत्तियों के चयन करने के मामले में दलित छात्रों के बीच ही खासा भेदभाव किया जा रहा है।[83] सरकारों द्वारा इसके लिए उन दलित छात्रों का अधिकांशतः चयन किया जा रहा है, जो सरकारों की चाटुकारिता कर रहे हैं। यह एक उदाहरण है-दलितों के बीच फूट डालकर शासन करने का। एक रिपोर्ट के अनुसार भारतीय विश्वविद्यालयों में बहुत आत्महत्याएँ हो रही हैं और आत्महत्या करने वाले सबसे ज्यादा दलित हैं।[84]
- इसी प्रकार हमारे यहाँ अनुसंधान की पढ़ाई एक शोधनिर्देशक के मार्गदर्शन में ही की जा सकती है। यह व्यवस्था अति दोषमय है तथा इसमें प्रायः शोध निर्देशक दलित शोधकर्त्ताओं का शोषण करते हैं और इससे सबसे अधिक प्रभावितशिकार हैं-दलित छात्र[85] क्योंकि उच्च शिक्षा में सबसे अधिक उच्च जाति के लोग ही पदस्थ हैं।

4. कर्त्तव्यपालन के दौरान दलित कर्मचारियों को प्रताड़ित करने वाले कुछ सरकारी नियम व आधार -

1. प्रशासनिक क्षेत्र में यह नियम नहीं बना हुआ है कि वरिष्ठ अधिकारी अधीनस्थ अधिकारी को अपनी हर बात या आदेश प्रारम्भ में ही लिखित रूप में ही देगा।[86]

2. प्रशासनिक क्षेत्र में एक नियम यह है कि संयुक्त सचिव से ऊपर के पदों पर आसीन अधिकारी पर मुकदमा चलाने के लिए सरकार की अनुमति जरूरी है।[87]
3. अनुज्ञाति जनजाति लोगों में से सरकार की चाटुकारिता करने वाले लोगों को उच्च पदों पर पदस्थ करने के लिए भर्ती की विभिन्न अवैध रियायती शिथिल प्रक्रियाओं को निर्मित कर क्रियान्वित करना।[88]

7. भारतीय नौकरशाही–भ्रष्टाचार को संस्थागत व स्थायी प्रक्रिया का रूप देने एवं नेताओं के भ्रष्ट व चुनावी कार्यो में सहयोग करने एवं दलालों के धंधे को जीवित रखने व सरल कार्यो को भी जटिल बना देने आदि ऐसे कृत्यों में हमारे देश की नौकरशाही की बड़ी भूमिका रही है।

8. भारतीय मीडिया–हमारे यहाँ मीडिया के एक बड़े हिस्से ने आज सत्ता-सुखो या किसी वर्ग विशेष के हितों या पैसों के साथ खुद को जोड़ रखा है और मीडिया सबसे ज्यादा जातिवादी है।[89] अत: वह सत्ता के प्रचारक व संरक्षक के रूप में या विज्ञापन प्रचारक के रूप में या किसी खास वर्ग-विशेष के प्रतिनिधि आदि के रूप में प्राय: कार्य करता है। हर घटना पर उसकी संवेदना एक जैसी नहीं है।[90] इसलिए हमारे यहाँ प्रत्येक घटना को मीडिया में जगह नहीं मिल पाती और गरीबों से जुड़ी घटनाओं पर मीडिया प्राय: चुप्पी साधे रहती है या उनसे जुड़े मामलों को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करती है।

9. भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग की भूमिका–गरीबों के साथ घटित घटनाओं के प्रति बुद्धजीवियों के अधिकांश भाग की भूमिका अत्यंत संदिग्ध, अस्पष्ट और निराशाजनक रही है।

10. भारत निर्वाचन आयोग की भूमिका–देश में राजनीतिक पतन का सबसे प्रमुख कारण निर्वाचन प्रक्रिया का दोषी होना है, जिसमें यह कमी है कि वह आज भी अपराधियों को निर्वाचन में भाग लेने से रोकने में असफल रही है।[91]

निष्कर्ष एवं सुझाव–उपरोक्त प्रदत्तों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि भारतीय राज्यव्यवस्था में भी अन्य अनेक विकासशील राज्यों के तरह की बहुत सी समस्याएँ (बुराइयाँ) न्यूनाधिक मात्रा में अब आ चुकी है। उदा0 के लिए - न्यायिक व स्वतंत्र संवैधानिक निकायों की स्वतंत्रता बनाये रखने के उद्देश्य से भारतीय संविधान निर्माताओं द्वारा सरकारों से अपने कार्य-व्यवहारों के दौरान ,जिन पहलुओं(Aspects) को न छूने, न देखने, न दखल देने, न विवश करने एवं जिन न्यायिक सिफारिशों व मांगों का सम्मान (मान लेने) करने की अपेक्षाएँ की गई थीं, उन पर सरकारों ने अपेक्षित ध्यान नहीं दिया व उनकी स्वतंत्र भारत की सरकारों द्वारा लगातार अनदेखी की जा रही हैं , जिस कारण देश के मुख्य न्यायाधीश टी. एस. ठाकुर सम्मेलन में रो पड़े थे।[92] इसी प्रकार सी.बी.आई. के कार्यो में सरकारों ने अवांछित दखल दिया है।[93] ऐसी समस्याओं में प्रमुख हैं-भ्रष्टाचार। इस बढ़ते भ्रष्टाचार को यदि सही समय पर नहीं रोका गया, तो देश को दो क्षेत्रों में बहुत गंभीर खतरा उत्पन्न हो सकता है-एक देश के गरीब लोग न्याय प्राप्त करने से वंचित हो सकते हैं और दूसरा-इससे भारत विरोधी विदेशी शक्तियाँ देश में अपना पैर जमा सकती हैं। इसके समाधान हेतु सर्वप्रथम समाज की विचारधारा में बदलाव लाने की आवश्यकता है। इसमें परिवर्तन करने का सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख माध्यम है-सबल सूचनातंत्र की स्थापना क्योंकि हमारे यहाँ की वर्तमान की सूचना संरचनाएँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शासक, भ्रष्ट व धनिक वर्ग के लोगों के द्वारा स्थापित, नियंत्रित व संचालित है। ऐसी संरचनाएँ छल करने की जीवन संरचनाएँ है। इसलिए देश के कुछ भागों में भले ही न्याय को बंधक बनाया जा रहा है और कुछ जिलो में कहीं भी ग्राम संभाएँ नहीं होती एवं इसी प्रकार कुछ जिलों में आदिवासियों की अधिक हत्याएँ की जा रही हैं, पर ये खबरे देश के सामने नहीं आती। अत: आज का हमारा लोकतंत्र वस्तुत: अधूरी सूचनाओं के प्रवाह पर संचालित लोकतंत्र है व इसलिए ही इसे भ्रमतंत्र भी कहा जाने लगा है।[94] देश के विशाल भौगोलिक आकार की दृष्टि से भी जरूरी है कि सबल सूचनातंत्र की स्थापना, ताकि देश की सभी घटनाएँ इसके कोने-कोने तक पहुँच सके। यदि देश में ऐसे सूचनातंत्र की स्थापना नहीं की जाती तो भ्रष्टाचार से लड़ाई में सफलता नहीं मिल सकती और यदि सफलता मिल भी गई, तो उसे बहुत दिनों तक कायम नही रखा जा सकता। यह सूचना तंत्र इतना सबल हो कि भारतीय समाज के राष्ट्रवादी समाज एवं भ्रष्टाचार से पीड़ित समाज में राज्य व्यवस्था और उसके पर्यावरण में घटित व संचित सूचनाओं को त्वरित, सही, पूर्ण, पर्याप्त, निर्बाध व अनिवार्य रूप से पहुँचा सकें और ऐसे तंत्र को लगातार सतर्कता बनाए रखनी होगी, जिससे कि इसमें भ्रष्टाचारी समाज छद्मवेश में प्रवेश न कर सके। समस्याओं का इसी तरीके से समाधान हेतु भारतीय समाज और उसका परिवेश अनुकूल रहा है। ऐसी सूचनाएँ जब इन समाजों की चेतनाओं में प्रवेश कर जाएगी। तब उनकी सुप्त संवेदना और उनके अंतर्गत को झकझोर देगी। जब ये सभी सत्य (जानकारियाँ) इन समाजों की चेतना पहुँच जाएगी, तो उनमें कर्त्तव्य का भाव स्वयं प्रगट हो जाएगा,[95] जागरूकता आ जाएगी और तब ऐसी स्थिति में यह सूचनातंत्र राष्ट्रवादी समाज व पीड़ित समाज के साथ मिलकर खुद योग्य लोगों की वृहद टीम बना लेगी और भ्रष्टाचार को आसानी से मिटाया जा सकेगा। उदाहरण के लिए-दिल्ली में हुआ बहुत कुछ सफल प्रभावी भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन एवं राजनीतिक दलों के विरोधों के बावजूद दूसरी बार भी उन्हें शर्मनाक शिकस्त देकर आप पार्टी द्वारा सरकार बना लेने के पीछे भी यही कारण थे-राजधानी का सबल सूचनातंत्र, आप पार्टी की योग्य टीम, दिल्ली की जागरूक जनता। दूसरा उदाहरण- 1857 के संग्राम की असफलता के कारण थे-निर्बल सूचनातंत्र, निर्बल नेतृत्वकर्ता, सम्पूर्ण देश की जनता का उसमें शामिल न होना। देश में एक बड़ा वर्ग युवाओं का है। अत: राष्ट्र-सृजन की प्रक्रिया के आधार पर युवा छात्र शक्ति को तैयार किया जाय और इस भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन में उक्त सबल सूचनातंत्र से इस युवा शक्ति को जोड़ा जाना चाहिए। स्वतंत्रता आंदोलन, जेपीआंदोलन, संसार के अनेक आंदोलनों की क्रांतिकारी धारा का एक बड़ा हिस्सा युवा विद्यार्थी था। इसी प्रकार व्हिसिल ब्लोअर की सुरक्षा किये जाने की आवश्कता है।96 राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान सैकड़ों समाचार-पत्रों का संपादन व उसके कारण लोगों द्वारा जेल में जाने के बावजूद भी न डरना व संपादन न रोकना सूचना की उपयोगिता दर्शित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गेना, डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष- 1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ-262,220
2 टोटल टीव़ी. चैनल(डिप्टी सम्पादक-आशुतोष सहाय),दिनांक- 132011, समय-8:00पी.एम.,पत्रकार-अमिताभ अग्निहोत्री
3 गेना,डॉ. सी. बी. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष- 1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ-669
4 गेना, डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ,प्रकाशन वर्ष- 1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ-111

5. राज्यसभा टीवीचैनल(भारत सरकार) दिनांक–28.2.2016, समय–9:05 पी.एम.(वाद विवाद कार्यक्रम–आरक्षण की मांग)
6. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ–676,677
- पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–11.1.2014, मुख्य पृष्ठ एवं पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–16.4.2014, पृष्ठ–09
- पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–304.2014,पृष्ठ–9 एवं पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–20.6.2014, पृष्ठ–09
7. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद)पृष्ठ–677
8. गेना, डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ–262
9. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक–13.2.2016, पृष्ठ6 एवं पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–5.2.2016, मुख्य पृष्ठ
10. नई दुनिया, समाचार पत्र, जबलपुर, दिनांक–3.3.2016 पृष्ठ–12
11. Jansatt, news paper, New Delhi, date - 2.2.2016, page-6
- jan.,sat., date-00-12-15, last page
- jansatta, news paper, New Delhi, date - 4.2.2016, page6
12. गेना, डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ–49
13. राज्यसभा टीवीचैनल(भारत सरकार)दिनांक–12.4.2015,(वाद विवाद कार्यक्रम–सामाजिक पूर्वाग्रह एवं आरक्षण के सवाल,सतीश पांडे)
14. राज्यसभा टीवीचैनल(भारत सरकार)दिनांक–12.4.2015,(वाद विवाद कार्यक्रम–सामाजिक पूर्वाग्रह एवं आरक्षण के सवाल,सतीश पांडे)
15. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक–मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ–71.5
16. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक–मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ–71.6
17. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक–मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ–71.5
18. राज्यसभा टी.वी.चैनल(भारत सरकार)दिनांक–7.12.2014,(देश में अपराधों का आंकड़ा) 19– गेना,डॉ. सी. बी. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद)पृष्ठ–54
20. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक–18.11.2013, पृष्ठ8
21. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक–26.11.2013, पृष्ठ8
22. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक–28.1.2016, पृत्त6
23. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–5.4.2014,पृष्ठ–5
24. एन.डी.टी.वी.चैनल(संस्थापक–राधिका राय एवं प्रणव राय)दिनांक–18.1.2016, समय 9:04 पी.एम.,(रोहित वेमुला आत्महत्या मामला)
- म.प्र. के मुख्य मंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही–सी.एम.भवदीय, पत्र क्रं.–ओएसडी.–98285990715, भोपाल, दिनांक–13.11.2007 के पालन में (शिकायत–08), कलेक्टर सतना द्वारा प्रतिलिपि–आवेदक लल्ला रैदास, ग्राम उमरिहा, पो.चोरमारी, तह.रामपुर बाघेलान, सतना को सूचनार्थ एवं संबंधित प्रकरण की पटवारी जाँच प्रतिवेदन, दिनांक–25.2.2008
25. म.प्र.के मुख्य मंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही–सीएमभवदीय, पत्र क्रं.–ओ.एस.डी–98285990715, भोपाल, दिनांक–13.11.2007 के पालन में (शिकायत–08), कलेक्टर सतना द्वारा प्रतिलिपि–आवेदक लल्ला रैदास, ग्राम उमरिहा, पो.चोरमारी, तह.रामपुर बाघेलान, सतना को सूचनार्थ एवं संबंधित प्रकरण की पटवारी जाँच प्रतिवेदन, दिनांक–25.2.2008
- एन.डी.टी.वी.चैनल(संस्थापक–राधिका राय एवं प्रणव राय), दिनांक–18.1.2016, समय 9:04 पी.एम., (रोहित वेमुला आत्महत्या मामला)
26. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 28.02.16 , पृष्ठ – 3
27. गेना, डॉ. सी. बी. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980, प्रकाशक–वि.प.हा., साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद) पृष्ठ–869
- लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक–मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ–715
28. आई.बी.एन.7 टी.वी.चैनल(डिप्टी मैनेजिंग सम्पादक–सुमित अवस्थी), दिनांक 07.03.16,समय–8:30पी.एम.,(वाद विवाद सहाय आयोग की रिपोर्ट)
- राज्यसभा टी.वी.चैनल(भारत सरकार)दिनांक–07.03.16, समय–9पी.एम.(वाद विवाद–मुजफ्फरपुर दंगा आयोग व उसकी रिपोर्ट)
29. कटारिया, डॉं सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष–2007, प्रकाशक–आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ–551,552
- पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–15.4.2015, मुख्य पृष्ठ
30. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा., साहिबाबाद (गाजियाबाद) पृष्ठ–204,203,205
31. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक–मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ–716
32. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ,प्रकाशन वर्ष–1980,प्रकाशक–वि.प.हा.,साहिबाबाद जि(गाजियाबाद) पृष्ठ–734,919
- पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक–1232016,पृष्ठ–10
- इंडिया न्यूज,टीवीचैनल,(प्रबन्ध निर्देशक–कार्तिकेय शर्मा), दिनांक 1103.16,समय–08:55पीएम.(वाद विवाद–श्री श्री रविशंकर मेगा शो)
- एन.डी.टी.वी.चैनल(संस्थापक – राधिका राय एवं प्रणव राय), दिनांक–18.12016, समय 9:04 पी.एम., रोहित वेमुला आत्महत्या मामला
- म. प्र. के मुख्य मंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही–सी.एम.भवदीय, पत्र क्रं.–ओएसडी.–98285990715, भोपाल, दिनांक–13.11.2007 के पालन में (शिकायत–08), कलेक्टर सतना द्वारा प्रतिलिपि–आवेदक लल्ला रैदास, ग्राम उमरिहा, पो.चोरमारी, तह. रामपुर बाघेलान, सतना को सूचनार्थ एवं संबंधित प्रकरण की पटवारी जाँच प्रतिवेदन, दिनांक–2522008
33. दैनिक भास्कर, समाचार–पत्र, दिनांक–25.02.16, पृष्ठ–12 (एम्नेस्टी इंटरनेशनल वार्षिक रिपोर्ट)
- जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक–28.1.2016,पृष्ठ–6 एवं जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक–05.11.2015, पृष्ठ–6

34. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली,पृष्ठ-715
35. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ,प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद)पृष्ठ-358
36. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद)पृष्ठ-358
37. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद)पृष्ठ-919
- तथ्य भारती, आर्थिक मासिक पत्रिका,(सम्पादक-दीनानाथ दुबे, कोटा, राजस्थान), अंक, मई-2010, पृष्ठ-11
- जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक-18.11.2013,पृष्ठ8
38. Jan.Sat.News Paper, Date-00-12-15, Last page
- Jansatta, News Paper, New Delhi, date- 02-02-16, Page-06 (न्याय की सूनी डगर)
- पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-04.02.2016,पृष्ठ-06 (मंत्रियों-अफसरों के खिलाफ जांच का क्या हुआ-हाईकोर्ट)
39 लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ-715
- जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक-28.01.2016,पृष्ठ6
40- कटारिया, डॉं सुरेन्द्र, लोकप्रशासन: सिद्धान्त व व्यवहार, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक-नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, पृष्ठ-79
- जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक-05.11.15,पृष्ठ-6 एवं पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-23.02.2014,मुख्य पृष्ठ
41. सईद, डॉ.एस.एम.,भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-387
- गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद जि. (गाजियाबाद)पृष्ठ-2
42. गेना, डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद,पृष्ठ-245,246,247
43 सईद, डॉ. एस.एम.,भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-254,263,264
- गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ,प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद,पृष्ठ-902
44. सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-437
45. वर्मा,डॉ वीपी,आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, प्रकाशन वर्ष-2012, प्रकाशक-लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, पृष्ठ-676
46. राज्यसभा टी.वी.चैनल(भारत सरकार) दिनांक-12.04.15, (वाद विवाद कार्यक्रम-सामाजिक पूर्वाग्रह और आरक्षण के सवाल।
47. पत्रिका, समाचार पत्र, सतना, दिनांक - 26.12.13, मुख्य पृष्ठ
- आशीर्वादम्, डॉ.एडी, राजनीति विज्ञान, प्रकाशन वर्ष-2001, प्रकाशक-एसचन्दएण्ड कम्पनी लि, नई दिल्ली, पृष्ठ-613,614
48. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद,पृष्ठ-869
- सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-260
- डॉ.नन्दलाल,राजनीति विज्ञान,प्रकाशन वर्ष-2016,प्रकाशक-शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, खजुरी बाजार, इन्दौर, पृष्ठ - 213,214
49. गेना, डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद,पृष्ठ-870
- लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ-715
50. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ,प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद, पृष्ठ-865
- लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ-715
- जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक-18.11.13,पृष्ठ-8
51. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद, पृष्ठ-919,920
- सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-254,329
52. सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-262
- लक्ष्मीकांत, एम., भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ-715
53. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद,पृष्ठ-734,919
- सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-387(लासवेल के अनुसार)
- एन.डी.टी.वी.चैनल(संस्थापक - राधिका राय एवं प्रणव राय), दिनांक-18.1.2016, समय 9:04 पी.एम., (रोहित वेमुला आत्महत्या मामला)
- म.प्र. के मुख्य मंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही-सी.एम. भवदीय, पत्र क्रं.-ओ.एस.डी.-98285990715, भोपाल, दिनांक-13.11.2007 के पालन में (शिकायत-08), कलेक्टर सतना द्वारा प्रतिलिपि-आवेदक लल्ला रैदास, ग्राम उमरिहा, पो.चोरमारी, तह.रामपुर बाघेलान,सतना को सूचनार्थ एवं संबंधित प्रकरण की पटवारी जाँच प्रतिवेदन, दिनांक-25.2.2008
54. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015,प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ-71.5
55. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद,पृष्ठ-920
- गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद,पृष्ठ-921
- सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-329
56. सईद, डॉ. एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक-भारत बुक सेन्टर,लखनऊ,पृष्ठ-337

57. राज्यसभा टीवीचैनल(भारत सरकार)दिनांक-28.02.16, समय-9:05 पी.एम.
58. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, केपी.एम., भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-एसचन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, पृष्ठ-303,317,318
59. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा.,साहिबाबाद,पृष्ठ-196
60. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष-1980,प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद, पृष्ठ-196
61. गेना,डॉ. सी. बी.तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ,प्रकाशन वर्ष-1980, प्रकाशक-वि.प.हा., साहिबाबाद, पृष्ठ-196
62. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक-28.02.16, पृत्त-3
63. रोजगार और निर्माण, भोपाल,दिनांक-22.02.16 से 28.02.16 तक, पृष्ठ-3(म0प्र0 सहायक प्राध्यापक परीक्षा के विज्ञापन की तिथियों में अन्तराल)
64. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-15.04.15,मुख्य पृत्त(नियम की आड़ में नियुक्ति का खेल)
- रोजगार और निर्माण, भोपाल,दिनांक-22.02.16 से 28.02.16 तक,पृष्ठ-4
65. रोजगार और निर्माण, भोपाल,दिनांक-22.02.16 से 28.02.16 तक, पृष्ठ-4
66. म0प्र0 के शा.महाविद्यालय के अतिथि विद्वानों के लिये शासन द्वारा जारी आमंत्रण सूचना, शैक्षणिक सत्र-2015-16
67. रोजगार और निर्माण, भोपाल,दिनांक-22.02.16 से 28.02.16 तक,पृष्ठ-5
68. रोजगार और निर्माण, भोपाल,दिनांक-22.02.16 से 28.02.16 तक,पृष्ठ-4
69. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, केपी.एम., भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-एस.चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, पृत्त-316,317
70. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, केपी.एम., भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-एसचन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, पृष्ठ-316,317
71. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, केपी.एम., भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक-एसचन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, पृष्ठ-316,317
- पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-07.04.15, पृष्ठ-09
72. म.प्र. के मुख्य मंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही-सी.एम. भवदीय, पत्र क्रं.-ओ.एस.डी.-9828599O715, भोपाल, दिनांक-13.11.2007 के पालन में (शिकायत-08), कलेक्टर सतना द्वारा प्रतिलिपि-आवेदक लल्ला रैदास, ग्राम उमरिहा, पो.चोरमारी, तह.रामपुर बाघेलान, सतना को सूचनार्थ एवं संबंधित प्रकरण की पटवारी जाँच प्रतिवेदन, दिनांक-25.2.2008
73. दैनिक भास्कर, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-05.06.10 पृष्ठ-13 एवं दैनिक भास्कर, जबलपुर, समाचार-पत्र, दिनांक-18.05.10, पृष्ठ-08
74. जनसंदेश, समाचार पत्र, सतना, दिनांक 06.05.2015, पृष्ठ-06 एवं उमारिहा,तह0रामपुरबाघे0,सतना,मौजा अराजी नं.1563 का मामला।
75. जनसंदेश, समाचारपत्र,सतना,दिनांक-18.04.2015, पृष्ठ-06 तथा दिनांक-01.04.2016, पृष्ठ-16(रहस्यमय तरीके से बढ़-घटरहासरकारी रकबा) एवं पत्रिका,समाचारपत्र, सतना, दिनांक 23.04.15, पृष्ठ-09
76. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-25.04.15 पृष्ठ-08
77. दैनिक भास्कर, समाचार-पत्र, दिनांक-23.03.15, पृष्ठ-3,4
78. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-25.04.15 पृष्ठ-08 (सांसद निधि पर नजर)
79. राज्यसभा टीवीचैनल(भारत सरकार)दिनांक-28.02.16, समय-9:05पीएम(वाद विवाद कार्यक्रम-आरक्षण की मांग)
80. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक - 28.02.16, समय - 9:05 पी.एम. (वाद विवाद कार्यक्रम - आरक्षण की मांग)
81. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक-28.01.16,पृष्ठ-6
82. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-21.02.16, मुख्य पृष्ठ
83. शैक्षणिक सत्र 2009-10 के दौरान शा.ठा.र.सिंह महाविद्यालय रीवा में आर.जी.एन.एफ.को प्राप्त करने वाले एवं आर.जी.एन.एफ.को प्राप्त न करने वाले अनु.जाति.जनजाति वर्ग के एमफिल छात्रों की सूची एवं उनके आवेदनों मे तत्कालीन प्राचार्य द्वारा की गई भेदभाव पूर्ण कार्यवाहियां
84. राज्यसभा टीवीचैनल(भारत सरकार)दिनांक-05.03.16, समय-7:50पीएम(वाद विवाद का विषय-मीडिया,समाज और राष्ट्रवाद)
85. जनसत्ता,समाचार पत्र,नईदिल्ली,दिनांक-04.02.16,पृष्ठ-6 एवं जनसत्ता,समाचारपत्र,नई दिल्ली,दिनांक-03.03.16,पृष्ठ-3(हरीश कुमार मामला)
- एन.डी.टी.वी.चैनल(संस्थापक-राधिका राय एवं प्रणव राय), दिनांक-18.1.2016, समय 9:04 पी.एम., (रोहित वेमुला आत्महत्या मामला)
86. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-27.04.15, पृष्ठ-8
87. जनसत्ता, नई दिल्ली,दिनांक-08.05.14,पृष्ठ-6एवं पत्रिका, सतना,दिनांक-29.04.15,मुख्य पृष्ठ तथा दैनिक भास्कर,दिनांक-20.04.15 मुख्य पृष्ठ
88. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-15.04.15, मुख्य पृष्ठ एवं स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 28.02.16 , पृष्ठ - 3
89. दैनिक भास्कर, सतना,दिनांक-22.02.15 एवं राज्य सभा टी.वी.चैनल दिनांक-05.03.16,समय-7:50पी.एम.(वाद विवाद-मीडिया, समाज और राष्ट्रवाद)
- जनसत्ता, नई दिल्ली,दिनांक-04.02.16,पृष्ठ-6 (दलित भेदभाव की जड़ें)
90. पत्रिका, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-24.02.16, पृष्ठ-10
91. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राज्यव्यवस्था, Eleventh reprient-2015, प्रकाशक-मै.ह.एजु.प्रा.लि., नई दिल्ली, पृष्ठ-71.5
92. पत्रिका, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-25.04.2016, मुख्य पृष्ठ
93. राज्यसभा, टीवी,भारत सरकार का चैनल, दिनांक- 09.05.2013 व श्री न्यूज टी.वी. चैनल (ग्रुप संपादक-पंकज वर्मा), दिनांक-30.04.2013
94. पत्रिका,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-21.04.14, पृष्ठ-08
95. गाबा, डॉ. ओ.पी., राजनीति सिद्धान्त की रूपरेखा, प्रकाशन वर्ष-2004, प्रकाशक-मयूर पेपर बैस, नौएडा, पृष्ठ-15
96. पत्रिका, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-03.03.16, पृष्ठ-09 (केन्द्रीय सतर्कता आयोग के अनुसार)

महिला सशक्तिकरण में कारगर स्व-सहायता समूह

डॉ. टी. पी. मिश्रा *

शोध सारांश - स्व-सहायता समूह संगठन में शक्ति है की मूल अवधारणा पर आधारित है। सहज मान्यता यह है कि अकेले और बिखरे हुए को उत्पीड़ित और शोषित किया जा सकता है किन्तु यदि इन्हें संगठित कर दिया जाये तो ये एक बड़ी ताकत बन सकते हैं। इसी अवधारणा पर स्व-सहायता समूह न केवल अस्तित्व में आये बल्कि घर की चार-दीवारी में कैद चूल्हा-चौके तक सिमटी महिलाओं को बन्धन मुक्त करते हुए आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में कारगर सिद्ध हो रहे हैं।

प्रस्तावना - किसी भी देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका एवं योगदान महत्वपूर्ण होता है। समाज के अभिन्न अंग महिलाओं का विकास करके ही सम्पूर्ण विकास की कल्पना को साकार करना संभव हो सकता है। पंडित नेहरू का यह कथन इस बात की पुष्टि करता है-'यदि आपको विकास करना है, तो महिलाओं का उत्थान करना होगा, महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वत: हो जायेगा।' भारत में लंबे समय तक महिलाएँ शोषित, पीड़ित और उपेक्षित रही हैं, समाज में आर्थिक स्वावलंबन तो दूर घर से निकलना उनके लिए दूभर था। ऐसे समाज में महिला सशक्तिकरण दूर की कौड़ी थी। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् हमारे संविधान निर्मात्री सभा के सदस्यों द्वारा संविधान ने स्त्रियों को भी पुरूषों के बराबर अधिकार देने और समानता की बात का प्रावधान किया गया। किन्तु सिर्फ संविधान में अधिकार दे देने और समानता की बात कर देने मात्र से सदियों से चले आ रहे परम्परागत समाज में महिलाओं के प्रति सोच में परिवर्तन आना आसान कार्य नहीं था। फलत: संविधानोत्त्र सरकारों द्वारा विविध पंचवर्षीय योजनाओं तथा अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से महिला शिक्षा, महिला जागरूकता तथा महिलाओं के उत्थान और विकास के लिए निरंतर प्रयास किये गये। जिसके परिणाम भी धीरे-धीरे ही सही समाज में परिलक्षित होने लगे। 73 वें संविधान संशोधन जो पंचायती राज से संबंधित है, ने महिला सशक्तिकरण की दिशा में मील के पत्थर का काम किया। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए केवल राजनीतिक अधिकार ही नहीं बल्कि समाज में उनके सम्मान और स्वावलंबन हेतु आर्थिक आत्म-निर्भरता भी आवश्यक है। इस दिशा में स्व-सहायता की अवधारणा ने आशातीत परिणाम देना प्रारंभ कर दिया है।

स्व-सहायता समूह की अवधारणा - वास्तव में स्व-सहायता समूह ग्रामीण निर्धनों का छोटा, आर्थिक दृष्टि से एक समान और एक दूसरे से जुड़ा समूह है। इस समूह की जरूरतें समूह के भीतर एक जैसी होती हैं और सब मिलकर एक ही कार्य सामूहिक रूप से करना चाहते हैं। यह स्व-प्रेरणा से बचत के लिए बनाया गया समूह है और सभी सदस्यों ने इसमें योगदान देना स्वीकार किया है, जिसे समूह के निर्णय के अनुसार जरूरतमंद सदस्यों को उत्पादक तथा उपभोग के प्रयोजनों के लिए ऋण के रूप में दिया जायेगा ताकि उनकी आय में बढ़ोतरी हो और उनके जीवन स्तर में बेहतरी आये।

हमारे देश में स्व-सहायता समूह बैंक सम्पर्क मॉडल को अपनाया गया है। इस मॉडल के आधार पर नाबार्ड ने स्व-सहायता समूहों के माध्यम से गरीब महिलाओं को लघु वित्त की सुविधा उपलब्ध कराते हुए उन्हें संगठित बैंकिंग सेवा से जोड़ने का प्रयास किया है। इस व्यवस्था के अंतर्गत 10 से 20 महिलाएँ अपनी छोटी-छोटी बचतों को एकत्रित कर कोष बना लेती हैं, इसका उपयोग सदस्यों के द्वारा अपनी उत्पादकता एवं उपभोग संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाता है। निश्चित समय पश्चात् इन समूहों को बैंकों से संबद्ध करके ऋण प्रदान किया जाता है। यही नहीं ऋण के सार्थक उपयोग करने की दिशा में कदम बढ़ाते हुए सरकार द्वारा महिलाओं के प्रशिक्षण हेतु राष्ट्रीय, प्रादेशिक व्यवसायी प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गयी तथा स्वयं सेवी संगठनों द्वारा भी इन्हें विकासखण्ड एवं स्थानीय स्तर पर आवश्यकतानुसार प्रषिक्षण दिया जाता है।

महिला स्व-सहायता समूह के बढ़ते कदम - महिलाओं को आर्थिक दृष्टि से सबल बनाने हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा निरंतर प्रयास किये जा रहे हैं। सरकार के इन प्रयासों के परिणाम भी दृष्टिगोचर होने लगे हैं। कल तक घर की चार-दीवारी में कैद महिलाएँ आज समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अपना परचम लहरा रही हैं। इसके माध्यम से शहर से लेकर गाँव तक वे अपनी साख को कायम रखते हुए व्यवसायिक क्षेत्र में आगे आ रही हैं। शासन ने स्वर्ण जयंती ग्राम स्व-रोजगार योजना, आजीवका मिशन जैसे अनेक योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण गरीब परिवारों को स्व-सहायता समूह के रूप में संगठित कर स्वरोजगार प्रदान करना, गरीबी रेखा से ऊपर उठाना तथा समाज के शोषित, दलित एवं कमजोर वर्ग के उत्थान में महती भूमिका अदा की है, जिसके परिणाम भी दृष्टिगोचर होने लगे हैं।

स्व-सहायता समूह के निष्पादन से किये गये सर्वेक्षणों में यह तथ्य उजागर हुआ है कि स्व-सहायता समूहों को ऋण प्रदान करने से ग्रामीण महिलाओं की सौदा शक्ति, सहभागिता व निर्णयाधिकारों में वृद्धि होने के कारण ग्रामीण विकास प्रक्रिया में उनका योगदान लगातार बढ़ता जा रहा है। स्व-सहायता समूहों ने ग्रामीण महिलाओं की दक्षता, समझ, योग्यता व कौशल बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन समूहों के बदौलत महिलाएँ स्वावलंबी बन अपने पैरों पर खड़ी हो गयी हैं, जिससे उन पर किये जाने वाले अत्याचार, उत्पीड़न व शोषण का ग्राफ नीचे आया है। सर्वेक्षण में यह तथ्य भी उभर कर आया है कि स्व-सहायता समूहों के कारण ग्रामीण महिलाओं की आय, क्रय शक्ति व जीवन स्तर में सुधार संभव हुआ है।

1970 के दशक से स्व-सहायता समूहों का उपयोग प्रारंभ हुआ। निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए इनके गठन की कवायत शुरू हुई। बाद में कई ऐसे समूह उभर कर आये जो पहले छोटे-मोटे बचत समूहों के रूप में कार्य कर रहे थे, वे अब परिवर्तन के अग्रदूत बन गये हैं। आँकड़ों के हिसाब से इस समय देश में लगभग 32 लाख स्वयं सहायता समूह सक्रिय रूप से कार्य करते हुए समूह के उद्देश्यों को पूर्णता प्रदान कर रहे हैं।

एक समूह की अध्यक्ष सरोज कहती है कि अगर स्व-सहायता समूह न होता तो, वे अपना कोई काम शुरू न कर पातीं और न ही बच्चों को पढ़ा-लिखा पाती। संतोष कुमारी का कहना है कि समूहों से जुड़ने से न केवल साहूकारों के चुंगल से मुक्ति मिली है बल्कि वे आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला - मण्डला (म.प्र.) भारत

हुई हैं। राजस्थान के आदिवासी क्षेत्र बाँसवाड़ा जिले के सैंडवानी में महिलाएँ स्व-सहायता समूहों के जरिये इतिहास रच रही हैं। यहाँ के शिव, शीला, नवज्योति, पार्वती, सरस्वती, भारत माता आदि महिला स्व-सहायता समूहों ने इस क्षेत्र को व्यापार का केन्द्र बना दिया है। मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में स्व-सहायता समूहों द्वारा पंजीकृत बैंक चेतना महिला बचत सहकारी संस्था मर्यादित महिलाओं के प्रयासों का ज्वलंत उदाहरण हैं। मध्यप्रदेश के आदिवासी जिला मण्डला के नारायणगंज एवं घुघरी विकासखण्ड महिला स्व-सहायता समूहों द्वारा बचत को प्रोत्साहन एवं अपने रोजमर्रा के कार्यो के लिए धन जुटाने के साथ-साथ बाँस की टोकरी, शहद तथा एलोवेरा जूस उत्पाद जैसे कार्यों में संलग्न होकर स्व-सहायता समूहों के उद्देश्यों को सार्थकता प्रदान कर रही हैं। इसी तरह देश के विभिन्न हिस्सों में महिला समूह स्थानीय परिवेश के आधार पर विभिन्न उत्पाद के माध्यम से अपने हुनर का परिचय देते हुए आत्म-निर्भरता, स्वावलंबन एवं सशक्तिकरण की दिशा में अग्रसर हैं।

स्व-सहायता समूहों का महिलाओं के जीवन पर प्रभाव - स्व- सहायता समूहों में कार्य करने के कारण महिलाओं के स्वाभिमान, आत्मगौरव, आत्मविश्वास आदि में वृद्धि होती है क्योंकि घरेलू परिधि के बाहर सम्पर्क एवं साक्षात्कार होने से महिलाओं में निम्नांकित क्षमताओं का विकास होता है-

1. **स्व निर्णय की शक्ति-** स्व-सहायता समूह के सदस्य के रूप में काम करने के बाद महिलाओं की स्वयं निर्णय लेने की शक्ति का विकास होता है। बैंकों से लेनदेन करने, कागजी कार्यवाही इत्यादि करने से उनमें आत्म विश्वास पनपता है। समूह की गतिविधियों के संचालन, बैठकों में भाग लेने से स्वनिर्णय की क्षमताओं का विकास होता है, जिससे धीरे-धीरे परिवार और समुदाय में उनकी सोच को आवाज मिलती है।

2. **जानकारी तथा संसाधनों की उपलब्धता-** समूह के सदस्य के रूप में महिलाओं की गतिशीलता बढ़ जाती है। घर की चारदीवारी में कैद रहने वाली महिलाएँ इन समूहों के माध्यम से पंचायत संस्थाएँ, बैंक, सरकारी तंत्र, गैर सरकारी संगठनों इत्यादि से संपर्क में आती हैं, जिससे सूचना और संसाधन में वृद्धि होती है जो महिलाओं को सशक्त बनाती है।

3. **आर्थिक आत्मनिर्भरता-** स्वयं सहायता समूह की सदस्य के रूप में महिलाएँ आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनती हैं, जिससे परिवार में उनकी स्थिति में सुधार होता है तथा इस प्रकार उपलब्ध धन का इस्तेमाल वे अपने निजी इस्तेमाल अथवा बच्चों की शिक्षा व स्वास्थ्य इत्यादि में करती हैं। अध्ययनों से स्पष्ट है कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा के मामले कम होते हैं।

4. **कौशल विकास-** हमारे देश में प्राय: महिलाएँ सिलाई कढ़ाई, पापड़-अचार बनाने जैसे कई कार्य करती हैं किन्तु इन्हीं कार्यो को स्व-सहायता समूहों के माध्यम से बड़े पैमाने पर वाणिज्यिक आधार पर किया जाता है। तथा इन्हें कौशल विकास का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। जिससे महिलाओं की स्वयं की व्यक्तिगत या समूहों की शक्ति बेहतर करने के लिए कौशल सीखने की क्षमता का विकास होता है।

5. **लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में विश्वास-** स्व-सहायता समूहों में सभी सदस्य एक जैसे सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के होते हैं तथा इनकी कार्यवाही में लोकतांत्रिक प्रविधियों को अपनाया जाता है, जिससे महिलाओं का लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विश्वास मजबूत होता है। जिसका प्रभाव राजनैतिक संस्थाओं पर दिखाई देता है।

6. **वित्तीय क्षेत्र में भागीदारी-** आज पूरे विश्व भर में महिलाओं के स्व-सहायता समूहों को गरीबी का मुकाबला करने में सबसे ज्यादा आशाजनक माना जा रहा है। भारत में 80 प्रतिशत से अधिक स्व-सहायता समूह महिलाओं से संबद्ध है। जिसमें भुगतान दर 95 प्रतिशत के आसपास है। यह महिलाओं के वित्तीय क्षेत्र में भागीदारी को स्पष्ट करता है।

महिलाओं के स्व-सहायता समूहों के विकास में बाधक तत्व व समस्याएँ-यद्यपि महिलाओं के स्व-सहायता समूहों द्वारा काफी अच्छा काम किया जा रहा है किन्तु भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिलाओं को स्वयं को समूहों के रूप में संगठित होने व किसी उद्यम के विकास में पुरूषों की तुलना में कहीं अधिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। महिलाओं के समक्ष निम्न समस्याएँ बाधक तत्व के रूप में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होते हैं-

1. घर के बाहर कार्य करने की स्थिति में दोहरे दायित्व के निर्वहन की बाध्यता।
2. प्रजनन कार्य व शिशु पालन जैसे दायित्व का निर्वहन।
3. अशिक्षा व तुलनात्मक रूप से निम्न शैक्षणिक स्तर।
4. भारतीय ग्रामीण समाज में व्याप्त नैतिक मान्यताएँ, प्रथा, रीति-रिवाज भी सशक्तिकरण की दिशा में बाधक हैं।
5. महिलाओं के प्रति ग्रामीण समाज में अभी भी दृष्टिकोण संकीर्ण हैं जो उनके विकास को अवरूद्ध करती हैं।
6. पुरूष प्रधान समाज में पुरूष का अहम् भी महिलाओं के विकास में आड़े आता है।
7. नियम कानून तथा सरकारी तंत्र की पेचीदगी एवं लालफीता शाही भी त्वरित विकास में बाधक है।

निष्कर्ष एवं सुझाव - निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि स्व-सहायता समूह, महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण योगदान कर रहे हैं। क्योंकि इन समूहों में कार्य करने से उनके स्वाभिमान, गौरव व आत्मनिर्भरता में वृद्धि होती है। परिणामत: उनकी क्षमताएँ भी स्वाभाविक रूप से बढ़ रहीं हैं। विश्व में आज भारत महिलाओं द्वारा संचालित स्व-सहायता समूहों के क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान पर है। किन्तु हमारे देश की प्रशासनिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थितियाँ महिला समूहों की गतिशीलता, व्यवहार्यता व साध्यता में अनेक चुनौतियाँ खड़ी करती हैं। इन चुनौतियों को पराजित करने या कम करने में समाजसेवी संस्थाओं, गैर सरकारी संगठनों, महिला संगठनों एवं सरकारी एजेंसियों इत्यादि द्वारा लगातार प्रयास और कार्य किये जा रहे हैं। जिसके परिणाम स्वरूप महिला समूहों की संख्या एवं सक्रियता में वृद्धि हो रही है तथा सामाजिक व आर्थिक जीवन में सार्थक परिणाम भी स्पष्ट होने लगे हैं। अत: महिला स्व-सहायता समूह, महिला सशक्तीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है।

उपरोक्तानुसार स्पष्ट होता है कि महिला स्व-सहायता समूह ग्रामीण क्षेत्रों की निर्धन, पिछड़ी, कमजोर एवं समाज में उपेक्षित महिलाओं के सशक्तीकरण एवं ग्रामीण क्षेत्रों के संतुलित विकास करने के लिए शासन से मान्यता प्राप्त संस्थागत मंच है। इस अभियान के रूप में प्रेरित एवं प्रोत्साहित करने की महती आवश्यकता है। जिससे महिला स्व-सहायता समूह बाधक तत्वों को परास्त करते हुए और अधिक सक्रियता और गतिशीलता के साथ विकसित हो सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रवक्ता डॉट कॉम, स्वसहायता समूह महिला सशक्तिकरण, लेखक निधि चौधरी।
2. चन्देल, धर्मवीर (2012), भारत में महिला सशक्तिकरण: दशा और दिशा, आलेख।
3. कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, मार्च 2008।
4. कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, जुलाई 2013 एवं अगस्त 2013।
5. www.hamsamvet.org.in/19April2010/9.html
6. www.hi.vikaspedia.in/social-welfare/

भारतीय संस्कृति और जैन धर्म

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति की दो प्रमुख धारायें रही है – ब्राह्मण संस्कृति एवं श्रमण संस्कृति। ब्राह्मण संस्कृति की कुछ अपनी आनुमानिक अर्हतायें रही है, जिनमें वेद को अपौरूषेय तथा ब्राह्मण को देवत्व प्रदत्त माना गया है। इसके विपरीत श्रमण संस्कृति है, इस संस्कृति में कर्मवाद प्रमुख हैं। वेद को प्रमाण न मानकर तथा ब्राम्हण में देवत्व अंश न स्वीकार कर श्रमण संस्कृति ने अपने दर्शन तथा चिन्तन की प्रतिस्थापना की है।

श्रमण संस्कृति ने भारतीय समाज को सदियों से जितना प्रभावित किया है उतना दूसरी किसी चिन्तन धारा ने कभी नहीं किया है। इसके सबसे बड़े ऐतिहासिक उदाहरण, भारत में पाये जाने वाले प्राचीन स्मारक है। प्राचीन स्मारकों में प्राय: तीन चौथाई स्मारकों की संख्या सिर्फ महावीर व बुद्ध से संबंधित है। सारनाथ तथा मथुरा से प्राप्त भगवान बुद्ध की प्रस्तर मूर्तियाँ तथा श्रवण बोल गोला की भगवान महावीर की विशाल प्रतिभा आदि उल्लेखनीय है।

श्रमण संस्कृति में जहां एक ओर जैन धर्म ने कठोर तपस्या और आत्म शुद्धि पर अतिबल दिया है, वहीं दूसरी ओर बुद्ध ने भी स्वचरित्र निर्माण तथा चित्त निरूपण (विपश्यना) पर आधारित मध्यम मार्ग का प्रशस्त आदेश दिया है। इन दोनों धाराओं ने कर्मवाद की पृष्ठभूमि पर मानव को नैतिक मानवीय मान्यताओं से स्वयं परिचित होने के मार्ग का दिग्दर्शन किया है। इन दोनों चिन्तन धाराओं ने, भारत के असंख्य उपेक्षित, प्रताड़ित व्यक्तियों तथा समाज को अपनी ओर आकर्षित किया है।

जैन और बौद्ध धर्म दोनों की दार्शनिक विचारधारा ने अपनी उत्कृष्टता के कारण सदियों से पूर्व स्थापित वेदान्त आदि दर्शनों का दृढ़तापूर्वक सामना करते हुए अपने को आज तक न सिर्फ अक्षुण्य बनाए रखा है – साथ ही उनमें निरन्तर विकास भी किया है।

जैन धर्म के संस्थापक के संदर्भ में चौबीस तीर्थकरों की एक लंबी परम्परा का वर्णन किया जाता है। ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर थे, अन्य तीर्थंकरों के बारे में इतिहास मौन है। सिर्फ चार तीर्थंकर प्रथम ऋषभदेव, बाइसवें नेमीनाथ, तेईसवें पार्श्वनाथ तथा चौबीसवें तीर्थंकर महावीर के संबंध में धर्मग्रंथों तथा इतिहास में उल्लेख है। जर्मन विद्वान हर्मन याकोबी ने जैन ग्रंथों का गंभीर अध्ययन करके, यह निष्कर्ष निकाला और प्रतिपादित किया कि पार्श्वनाथ जैन धर्म के वास्तविक संस्थापक थे। इनका जन्म महावीर से 250 वर्ष पूर्व हुआ था। उनकी मृत्यु 777 ई.पू. हुई थी। कैवल्य ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् इन्होंने सत्रह वर्षो तक श्रमण धर्म का उपदेश दिया। उन्होंने सर्वप्रथम अपने सम्प्रदाय निर्ग्रन्थ के लिए मुख्य चतुर्याम अर्थात् चार व्रतों की व्याख्या की। ये है अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्तवाद (स्याद्वाद) और अस्तेय। पार्श्वनाथ के निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय को ही महावीर स्वामी ने संगठित करते हुए सर्वप्रथम जैन संज्ञा देकर नव संगठित धर्म का स्वरूप प्रदान किया है। पार्श्व के चतुर्याम में महावीर ने ब्रह्मचर्य (तप–संयम) को जैन धर्म के साथ जोड़कर पंचमहाव्रत का नाम दिया। महावीर का जैन धर्म प्रारंभ से ही मूलत: हिन्दू धर्म के यज्ञ, देवता, वर्ण तथा अवतारवाद का विरोधी रहा है। परन्तु वैदिक धर्म के कर्मफल और पुनर्जन्म में इसका विश्वास यथावत रहा है।

जिस समय भारत में जैन धर्म तथा बौद्ध धर्म विकसित हो रहे थे वह ई.पू. छठी शताब्दी का वह स्वर्णिम काल था, जब विश्व पटल पर ताओ धर्म, कनफ्यूसियस धर्म और पारसी धर्म का भी चीन, ईरान तथा भारत में एक ही समय धार्मिक क्रांति के रूप में सूत्रपात हुआ है।

छठी शताब्दी में भारत में महावीर ने एक नव क्रांति का बिगुल बजाकर, तत्कालीन हिन्दू धर्म के कर्मकाण्ड अवतारवाद तथा संकीर्ण ब्रह्मवाद के विरूद्ध जिहाद करते हुए जैन धर्म की स्थापना की थी। जैन धर्म के उदयकाल में भारत में प्राचीन तत्ववाद के प्रति असंतोष फैला हुआ था। देव प्रधान पूजा पद्धति और विचारधारा के कारण समाज में बहुसंख्यक देवता और उपदेवता विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों के रूप में प्रतिष्ठित हो गये थे। धर्म के नाम पर इस अराजकता के विरूद्ध स्वाभाविक रूप से अनीश्वरवादी दृष्टिकोण का उदय होना स्वाभाविक था। इसी संदर्भ में अनीश्वरवादी नैतिक आदर्शो को लेकर, जैन धर्म सामने आया। जैन धर्म ने यज्ञ प्रदान कर्मकाण्ड तथा नाम स्मरण, स्नान ध्यान तथा पूजा पाठ द्वारा मनुष्य की मुक्ति के स्वरूप को स्वर्ग प्राप्त होने के प्रति विद्यमान अंधविश्वास के स्थान पर, आचार व नीति युक्त, जीने की कला का आदर्श दृष्टिकोण जनता के सामने रखा एवं जीवन में आंतरिक शुद्धता और वैचारिक उत्कर्ष को प्रधानता दी। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जैन धर्म ने ईश्वरवाद का खण्डन करते हुए यह प्रतिपादित किया कि कर्म बंधन से मुक्ति पा लेने पर ही जीव स्वत: भी मुक्त अवस्था को प्राप्त कर सकता है। इसके लिये जैन धर्म में कार्य–कारण दृष्टिकोण प्रतिपादित जैन 'कर्मवाद' का सिद्धान्त विकसित हुआ। प्राचीन श्रमण परम्परा से विकसित धर्म होने के कारण जैन धर्म निवृत्ति मूलक और मोक्षमार्गी दृष्टिकोण का पोषक रहा है। कर्म सिद्धांत और पुनर्जन्म के प्रति जैन धर्म के प्रबल विश्वास ने, इसे अनीश्वरवादी दर्शन अर्थात् नास्तिक दर्शन बना दिया है। जबकि यह भी सच है कि सैद्धांतिक रूप में जैन धर्म में यद्यपि ईश्वर का खण्डन हुआ है। तदापि व्यवहारिक धरातल पर, जैन धर्म में तीर्थकरों के रूप में ईश्वर पर विचार किया गया है। ये मुक्त होते है, वेदान्तियों का जीवमुक्त जैनों का सिद्ध जीव या अर्हत् है। जैन धर्म इनकी आराधना करता है, भक्ति का प्रदर्शन करता है, तीर्थंकरों के प्रति पूजा, प्रार्थना, श्रृद्धा, विश्वास और भक्ति में जैनों का अटूट विश्वास है। वे पंच परमेष्टि के रूप में अर्हत्, सिद्ध आचार्य, उपाध्याय और साधु को ईश्वर नहीं मानते हुए भी इन सभी के प्रति समर्पण भाव से जो आराधना जैनी करते है वह ईश्वर पूजा से भी बढ़कर है।

जैन धर्म का विकास प्राचीनकाल से ही भारतीय संस्कृति के विकास के साथ–साथ हिन्दू धर्म की श्रमण शाखा के रूप में हुआ है। भारतीय संस्कृति की प्राचीनता के अनुरूप ही जैन धर्म की प्राचीनता भी सिद्ध है। वेदों की

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

रचना का समय विद्वान 1500 ई.पू. के लगभग मानते है। अतः अनार्य निग्रंथों के काल से प्रारंभ चिन्तन के प्रतिनिधि रूप में ऋग्वेद में वातरसेन मुनियों तथा केशी ऋषभदेव का उल्लेख मिलता है। भारतीय संस्कृति में विशेष रूप में अवतारवाद पर विश्वास है। ऋषभदेव जैन तीर्थंकर थे। उनकी मान्यता व पूज्यता के संबंध में जैन और हिन्दूओं दोनों में मतभेद नहीं है। जैसे वे जैनियों के आदि तीर्थंकर है उसी प्रकार वे हिन्दूओं के लिए विष्णु के अवतार है। शिव पुराण में उन्हें शिव के अट्ठाईस योगावतारों में गिनाया गया है। वे राम और कृष्ण के अवतारों के पूर्व के अवतार है। इससे स्पष्ट है जैन धर्म सीधे वैदिक संस्कृति से अभिन्न है।

भारतीय संस्कृति के दृष्टिकोण, अत्यन्त व्यापक होकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का है। जैन धर्म का दृष्टिकोण भी अत्यन्त व्यापक है। इसने अति उदारता की सीमा को स्पर्श कर लिया है। अन्य धर्मो के साथ जैन धर्म का विरोध व संघर्ष कभी नहीं रहा है। जैनियों की अनेकान्तवाद में आस्था इसका आधार रहा है। धार्मिक लोक मान्यताओं के प्रति उदारता एवं सम्मान का भाव रखते हुए जैन धर्म की सामाजिकता में गणेश, सरस्वती तथा लक्ष्मी को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। राम कृष्ण लक्ष्मण तथा बलदेव आदि के प्रति भारतीय जनता का पूज्य भाव रहा है, इनको अवतार पुरूष माना गया है। जैन धर्म ने इनको अपने 63 शलाका पुरूषों में स्थान देकर अपने धर्म ग्रंथों में इनके जीवन पर लिखा है। जैनियों ने अन्य धर्म यहां तक कि अनार्य जाति के रावण व जरासंघ को भी, इनके गुणों सहित स्मरण किया है। यहां तक कि जैन पुराणों में हनुमान व सुग्रीव को बंदर नहीं मानकी विधाधर वंशी राजा माना गया है। स्पष्ट है जैन किसी की भी भावना को किसी भी रूप में ठेस पहुँचाने को हिंसा मानते रहे है। मन, वचन और काया से जीव अजीव को दुःख व हानि हिंसा है।

भारत में यक्षों और नागो की प्राचीनकाल में पूजा का प्रचलन था। इनको प्राचीन ग्रंथकार अनार्य परम्परा मानते थे। जैनियों ने इनकी हिंसात्मक पूजा पद्धति का विरोध करते हुए भी प्रमुख यक्ष, नाग देवी-देवताओं को अपने तीर्थंकरों के रक्षक व उनकी महिमा में श्रीवृद्धि करने वाले देवताओं के पूज्य रूप में प्रतिष्ठित किया। स्पष्ट है जैन धर्म ने सभी चिन्तन धाराओं की दार्शनिक मान्यताओं को सत्य की अभिव्यक्ति के रूप में अपनी सहमति प्रदान की है।

अतः यह स्पष्ट होता है कि जैन धर्म तथा बौद्ध धर्म ने सिर्फ ई.पू. छठी शताब्दी में, इस बात का विशेष प्रयास किया कि प्राचीन हिन्दू धर्म (सनातन धर्म) में समय व आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन किया जाय। स्पष्ट शब्दों में जैन धर्म का उदय ही वैदिक धर्म में ब्राह्मणों द्वारा समर्थित देववाद, बहुदेववाद, वेदवाद, कर्मकाण्ड, वर्णवाद, शाश्वतवाद, भोगवाद और योगवाद आदि तत्कालीन हिन्दू धर्म के दार्शनिक, सामाजिक और धार्मिक आचारों, अंधविश्वासों और आडम्बरों के विकास के कारण हुआ था। यह भी सच है कि जैन धर्म ने हिन्दू धर्म के प्रचलित पूर्व धर्माचरणों से कुछ लिया भी है तथा कुछ का तीव्र विरोध भी किया है। महावीर का जैन धर्म वस्तुतः एक ऐसा जीने का, नैतिक मूल्यों पर आधारित मार्ग है, जिसमें जीव को स्वयं अपनी साधना द्वारा मुक्त अवस्था पर पहुँचने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। मुक्ति के लिये जीव को किसी अन्य मानवेत्तर देव शक्ति आदि से अनुकृपया या याचना की आवश्यकता भी नहीं है।

भारतीय संस्कृति में उपनिषदों का विशेष महत्व है। उपनिषदों ने न सिर्फ जैन बल्कि बौद्ध धर्म के विचारकों तथा षट्दर्शन के सिद्धांतो को भी जन्म दिया। उपनिषद् ही वे ग्रंथ है जहां से भारत के दार्शनिक चिन्तन का महत्व का सौम्य निर्माण होता है। इसलिये जब लोग वैदिक धर्म के द्वारा फैलाये गये घोर कर्मकाण्ड से त्रस्त होकर नये पथ की तलाश में थे, तब उनको जैन धर्म के वितान तले उपनिषदों पर आधारित चिन्तन से अपार शांति और शरण मिली, क्योंकि जैन धर्म के प्रवर्तकों ने उपनिषद् और अरण्यों को आधार मानकर ही यज्ञ-बलि प्रथा तथा ब्राह्मणवाद के विरूद्ध प्रचार किया था। अतः जैन धर्म की विविध और विपुल उपलब्धियों को जाने बिना भारतीय संस्कृति का ज्ञानपूर्ण नहीं कहा जा सकता। जैन धर्म ने वर्ण, जाति रूप तथा लिंग भेद व मनुष्य मात्र से किसी प्रकार के भेदभाव को स्वीकार नहीं किया है। मनुवादी जाति व्यवस्था से उत्पन्न दलित समस्या का सर्वप्रथम समाधान जैन धर्म है।

जैन दर्शन अत्यधिक सहिष्णु तथा उदार है। जैन दर्शन के मूल सिद्धान्तों पर वैदिक दर्शन की छाप है, परन्तु स्यात्वाद अर्थात् अनेकान्त दर्शन इसका सर्वथा नवीन और मौलिक चिन्तन है। जैन धर्म का उद्भव प्राचीन श्रमण संस्कृति से हुआ है अतः इसमें व्यष्टि की मुक्ति पर विशेष ध्यान केन्द्रित है, वहीं दूसरी तरफ समष्टि के प्राणीमात्र की कल्याण की कामना को लेकर 'जीओ और जीने दो' तद्अनुरूप प्राणीमात्र के प्रति करूणा प्रेषित अहिंसा को धर्म का केन्द्रिय चिन्तन माना गया है। अमृषावाद अर्थात् झूठ न बोलना, आस्तेज अर्थात् चोरी न करना तथा अपरिग्रह अर्थात् अनावश्यक सम्पत्ति का त्याग एवं ब्रह्मचर्य तथा तपस्या के संदर्भ सामाजिक जीवन के नैतिक मूल्यों को जैन धर्म में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। जैन धर्म ने साधना के लिये सिर्फ कठोर तपस्या और आत्म शुद्धि पर अति बल देते हुए भी धर्म को सर्व साधारण के लिए, स्वैच्छिक रूप से सुलभ कर दिया है। निष्कर्ष यह कि भारत में भारतीय संस्कृति परिवेश से उद्भव होने के कारण जैन धर्म के सभी आदर्श और जीवन मूल्य कोई नवीन सिद्धान्त नहीं है। जैन धर्म के कारण सिर्फ विश्व में अहिंसा को व्यापक समर्थन मिला है। वैदिक कर्मकाण्ड और यज्ञों में बलि देना समाप्त करने में सफलता जैन धर्म की बड़ी उपलब्धि है। भारतीय संस्कृति में वेदों की भोगवादी स्थापनाओं को नई दिशा देने में जैन धर्म की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

अतः यह निर्विवाद तथ्य है कि जैन धर्म आंदोलन मूलतः वैदिक धर्म का संस्कार है। इसने हिन्दू धर्म के आडम्बरपूर्ण कर्मकाण्डों और अंधविश्वासों के विरूद्ध समाज को जागृत किया तथा धर्म में दार्शनिक चिन्तन के साथ नैतिक पक्ष को प्रधानता देते हुए संयम, त्याग, तपस्या तथा अहिंसा की महत्ता की स्थापना की है। डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा है महावीर ने किसी नये स्वतंत्र धर्म को प्रारंभ नहीं किया। भारत में जैन धर्म ने सिर्फ उप निषदों में वर्णित नैतिक सिद्धांतों व आदर्श जीवन मूल्य की नवीन व्याख्या करते हुए उन्हें सहज रूप में समाज में प्रचारित किया। वैदिक धर्म के समय की आवश्यकता के अनुरूप मानवीय आदर्शो से श्रृंगार करना ही जैन धर्म का मूल प्रयोजन रहा है। भारतीय संस्कृति और जैन धर्म वस्तुतः अभिन्न है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे डॉ. सत्यनारायण 'शरतेन्दु' - बौद्ध एवं जैन धर्म तथा दर्शन - विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी (2004) पृष्ठ 94-104
2. सिन्हा डॉ. हरेन्द्र प्रसाद - धर्म दर्शन की रूप रेखा - मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली (2009) पृष्ठ 33-49
3. ओझा डॉ. श्रीकृष्ण - प्राचीन भारतीय चिन्तन का इतिहास रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर (2008) पृष्ठ 138-157
4. अरूण - भारत में धर्म का स्वर्ण युग - शलभ पब्लिशिंग हाउस मेरठ (2009) पृष्ठ 83-93

विन्ध्य की राजनीतिक एवं प्रशासनिक संरचनाओं की कार्यप्रणाली व प्रकृति का एक अध्ययन (संवैधानिक एवं परिस्थितिकीय संदर्भ में)

मनोज कुमार रवि * एल. आर. दास **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का उद्देश्य विन्ध्य की राजनीतिक एवं प्रशासनिक संरचनाओं की कार्यप्रणाली को प्रभावित कर रही उन अनछुई वैध व अवैध प्रक्रियाओं व परिस्थितिकीय शक्तियों को उजागर किया गया है, जिनसे इन संरचनाओं का भरण-पोषण होता है, जो इन संरचनाओं को प्रभावित करती है, खुद भी इन संरचनाओं से प्रभावित होती है। विन्ध्य की राजव्यवस्था की कार्यप्रणाली और भारत के महानगरों में कार्यरत ऐसी ही संरचनाओं की कार्यप्रणाली में बेहद अन्तर देखा गया है, जबकि उपरोक्त दोनों की संवैधानिक स्थिति एक-जैसी है। इसलिए यह आवश्यक है कि यहाँ की राजनीतिक-प्रशासनिक संरचनाओं का अध्ययन करते समय केवल उनके औपचारिक पक्षों को ही शामिल नही किया जाना चाहिए, बल्कि संरचनाओं के अतिरिक्त उस परिस्थितिक, सांस्कृतिक और आधुनिक व ऐतिहासिक शक्तियों का भी अध्ययन किया जाए, जो इन संरचनाओं और उसके पर्यावरण (समाज) को भी प्रभावित करती हैं। इन्हीं तथ्यों को इस शोध मे प्रस्तुत किया गया है।

शब्द कुंजी – प्रशासनिक संरचना, कार्यप्रणाली और उसका परिस्थितिक संदर्भ, कारण,निदान।

प्रस्तावना – आज विन्ध्य की राजनीतिक-प्रशासनिक संरचनाएं दबाव और समस्याओं के परिवेश में कार्य कर रही हैं।[1] संपूर्ण भारतीय राजनीतिक एवं प्रशासनिक संरचनाओं के साथ-साथ विन्ध्य की भी संरचनाओं की कार्यप्रणाली में अनेक विकृतियाँ आ गयी हैं।[2] इन समस्याओं से दिन-प्रतिदिन भ्रष्टाचार के नये-नये मामले सामने आते रहते हैं किन्तु इनमें सुधार के लिए किए जा रहे सभी प्रयास विफल हो रहे हैं।[3] इनकी तथा महानगरों की ऐसी ही संस्थाओं की कार्यप्रणाली में बेहद अंतर बढ़ता जा रहा है। इन्हीं सब संस्थाओं द्वारा लगातार नकारात्मक भूमिका अदा करते रहने के कारण आज प्रदेश की गौरवमयी छवि धूमिल होती जा रही है।[4] मूल कारण यह है कि जिस परिवेश में और परिवेसीय शक्तियों के बीच में इन संरचनाओं को अपना काम करना पड़ता है, वह इनके सुचारू रूप संचालन के लिए उपयुक्त नहीं है। अत: यह जरूरी हो गया है कि इन संस्थाओं के औपचारिक पक्षों के अध्ययन के साथ-साथ उसके परिवेसीय संदर्भ का भी अध्ययन किया जाय और उन शक्तियों का पता लगाया जाय, जो पूरी व्यवस्था को अपने नकारात्मक प्रभाव का शिकार बना रही है।

Methodology – प्रस्तुत शोध लेखन हेतु पर्यवेक्षण व अनुभविक प्रविधियों का उपयोग किया गया है। यह शोध प्राथमिक व द्वितीयक आंकड़ो पर आधारित है।

Result and Disscussion -

पारिस्थितिकीय संदर्भ–जब किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के निर्माण में परम्परागत परिस्थितिकीय शक्तियों का अत्यधिक योगदान होता है, तब राजनीतिक व्यवस्था की संरचनाओं को अत्यधिक दबाव में कार्य करना पड़ता है। यही बात विन्ध्य की राजनीतिक व्यवस्था के सम्बन्ध में भी लागू होती है।विन्ध्य की प्राचीन सामाजिक , राजनीतिक व्यवस्था छद्म राष्ट्र प्रेम स्वरूप की रही है ,जिसके केन्द्र में जातीयता ,स्वार्थपरता व भष्ट्राचार आदि तत्व रहें हैं, जिनका प्रभाव राष्ट्रीय आंदोलन मे भी देखा जा सकता है और यही प्रभाव स्वतंत्र भारत की विन्ध्य की राजनीतिक संरचनाओं में भी नजर आता है। विन्ध्य में कार्यरत आज की राजनीतिक संरचनाओ का गठन परम्परागत राजनीतिक संरचनाओं के ही नये रूप में राजव्यवस्था में जन्म और इसमें उनके प्रवेश कर लेने से हुआ है। इसलिए विन्ध्य की दलीय व्यवस्था की कार्यप्रणाली से स्पष्ट होता है कि विन्ध्य के राजनीतिक दल वास्तव में ऐसे विभिन्न सामाजिक वर्गो के प्रतिनिधि होते हैं,[5] जो किसी न किसी प्रकार से जनता का बहुमत प्राप्त करके[6] और अन्य सामाजिक वर्गो से सौदेबाजी करकें राजनीतिक सत्ता का उपयोग निहित स्वार्थो को पूरा करने में करते हैं।[7] विन्ध्य की राजनीतिक प्रकृति को ऐतिहासिक संदर्भ में देखने से पता चलता है कि यहॉ की सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था भष्ट्राचार युक्त है। इन्हीं परम्परागत अवैध कार्यशैली को वर्तमान कार्यरत संरचनाओं में वैधता के नये-नये आधारों पर, अमली जामा पहना दिया गया है। उदाहरण के लिए आज यहाँ की राजनीतिक संस्थाओं द्वारा भष्ट्राचार करने के लिए छल-साधनों का बहुतायत मात्रा प्रयोग किया जाता है[8] और उन्हें कानूनी प्रक्रियाओं का नाम दिया जाता है।

अत: इस कारण से यहां की राजनीतिक व्यवस्था भारी दबाव में है। इसी प्रकार समाज की आर्थिक प्रणाली में परम्परागत संपन्न वर्गो का प्रभुत्व स्थापित होता जा रहा है और यह वर्ग द्वारा ऐसा सब किया जा रहा है-समझी सोची रणनीति के तहत। इसी प्रकार यहां की सूचना की संरचनाओं पर सम्पन्न वर्ग का प्रभुत्व स्थापित हैं। किसी राजनीतिक व्यवस्था का स्वस्थ संचालन वहाँ के स्वस्थ व शिक्षित जनसाधारण के विकास के स्तर पर निर्भर करता हैं। शिक्षा परिवर्तन का ऐसा माध्यम है, जो न केवल अपने समाज, राष्ट्र की दिशा को तय करता है बल्कि गलत दिशा मे गतिशील राजनीतिक व्यवस्था को भी सही दिशा में ला सकता है। इसके लिए सबसे जरूरी तत्व है कि सभी के लिए एक समान क्वालिटी एजुकेशन की व्यवस्था की जाय,[9] जिसकी व्यवस्था खुद राजनीतिक व्यवस्था करे पर चूँकि विन्ध्य की राजनीतिक व्यवस्था के अधिकांश भाग में परम्परागत राजनीतिक संरचनाऍ सम्मिलित है, व कार्यरत है। इसलिए यहॉ की राजनीतिक व्यवस्था की संरचनाओं में पदस्थ अधिकारी-कर्मचारी अपने बच्चों को अंग्रेजी ढंग की उच्च गुणवत्ता वाली स्कूलो में पढ़ाते हैं,और गरीब परिवार के

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

बच्चों के लिए खिचड़ी वाली रसोइयाँ स्कूल स्थापित हैं। इन सब का परिणाम है कि यहां का समाज दो भागों में बट रहा है-शिक्षित और अशिक्षित। इस प्रकार यहाँ के कमजोर वर्गो का अवांछित ,अनैतिक दिशा में विकास हो रहा है और यह सोचनीय पहलू है कि यह समाज राजनीतिक व्यवस्था के सुचारू संचालन में अपना योग देगा या व्यवस्था पर बोझ डालेगा। यही कारण है कि यहाँ की राजनीतिक-प्रशासनिक संरचनाओं के प्रति आम लोगों की धारणा और लगाव इन विरोध मे विकसित होता जा रहा है। इसलिए इन संस्थाओं में काम पड़ने की स्थिति में समाज का कमजोर वर्ग यहाँ की राजनीतिक व्यवस्था द्वारा उत्पन्न व स्थापित दलाल या प्रतिनिधि के पास पहले जाता है [10] और फिर इनके आर्शीवाद के सहारे राजनीतिक- प्रशासनिक संरचनाओं के पास पहुचता है।

Conclusion & suggestion- उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विन्ध्य की राजनीतिक-प्रशासनिक संरचनाओं पर बढ़ रहे बोझ,दबाब,अलगाव को कम करने के लिए जरूरी है कि व्यवस्था मे सभी वर्गो के भागीदारी उनकी जनसंख्या के अनुपात में की जाय, भ्रष्टाचार करने के लिए निर्मित किये गये कानूनी आधारों और प्रक्रियाओं व परम्पराओं को बदला जाना चाहिए। इसी प्रकार आर्थिक-प्रणाली में किसी वर्ग विशेष के प्रभुत्व को समाप्त किया जाय और सबसे जरूरी है कि सभी वर्ग के बच्चों के लिए एक समान क्वालिटी एजुकेशन की व्यवस्था की जाय, न की शिक्षा का व्यवसायीकरण निजीकरण किया जाय। संक्षेप मे, ये सब बातें ही सुशासन के तत्व है,जिन्हें अनदेखी करके न तो कोई प्रदेश महान बन सकता है, न तो राष्ट्र । इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि हम पश्चिमी समाज के ढंग की अधिक से अधिक उपभोग, संग्रह व सत्ता प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धात्मक संघर्ष की प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए क्योंकि ये प्रवृत्तियाँ अपने लिए खुद भी और दूसरो के लिए भी समस्या खडी करने वाली हैं।[11]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पत्रिका, समाचार, पत्र, सतना , दिनांक- 11.06.2014, पृष्ठ-09
2. पत्रिका, समाचार, पत्र, सतना , दिनांक- 18.02.2014, पृष्ठ-03
   - स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-04.05.2013, पृष्ठ-02
   - स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-21.11.2013, पृष्ठ-02
3. पत्रिका, समाचार, पत्र, सतना , दिनांक- 11.06.2014 , पृष्ठ-09
4. जनसत्ता, समाचार पत्र, नई दिल्ली, दिनांक-08.02.2016 पृष्ठ-07
5. स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-21.08.2015 , पृष्ठ-02
   - स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-21.08.2015 , पृष्ठ-03
6. स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-11.02.2016 , पृष्ठ-12
   - स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-21.11.2013 , पृष्ठ- 02
7. स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-29.12.2015, मुख्य पृष्ठ व पृष्ठ-11
8. स्टार समाचार पत्र, सतना , दिनांक-11.2.2016, पृष्ठ-12
9. पत्रिका, समाचार, पत्र, सतना , दिनांक-04.04.2014, (पत्रिका प्लस) मुख्य पृष्ठ
   - जनसंदेश , समाचार पत्र , सतना, दिनांक-17.05.2015, पृष्ठ-03
10. जनसंदेश , समाचार पत्र , सतना, दिनांक- 18.10.2015 , पृष्ठ- 16
11. वर्मा , एस.पी. ,आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत , प्रकाशन वर्ष-2011, प्रकाशक-विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा0 लि0, नोएडा, पृष्ठ- प्राक्कथन-IX , 263, 264, 398

****

भारत में धर्म का स्वर्ण युग - बौद्ध धर्म का उद्‌भव

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना - छठी शताब्दी ई.पू. का काल धर्म के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। जिस समय फारस जरयुस्ट्र यूनानी-पाइथागोरस और चीन-कन्फ्युशियस के संदेशों से निनादित हो रहे थे। उसी समय भारत वर्ष की पुण्य स्थली में भी दो युग पुरूषों के संदेश सुनाई दे रहे थे। ये थे महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी भारत वर्ष की धार्मिक क्रांति के अग्रदूत उसके बौद्धिक आप्लावन के गंभीर स्त्रोत।

यह युग परिवर्तन का सूचक समय रहा है। जब चारों ओर मनुष्य की जिज्ञासा युग-युग के पूंजी भूत विश्वासों के आवरण को चीरकर प्रत्येक वस्तु के अन्त स्तत्व को देखना चाहती थी। मनुष्य की उद्‌भूत तर्कशीलता किसी भी पुरातन मत या विश्वास को स्वीकार करने के पूर्व उसे भांति-भांति परख लेना चाहती थी। उनकी सत्यान्वेषिणी दृष्टि के समक्ष प्राचीनतम अंधविश्वास कांप रहे थे। कर्मकाण्ड की विशाल दिवारें जर्जरित हो रही थी। अन्ध श्रृद्धा के आधार पर संरोपित पुरातन मान्यताऐं दम तोड़ रही थी। इस समय मानवी बुद्धि, तर्क का संबल लेकर इहलोक और परलोक के गहनातिगहन विषयों की समीक्षा कर संतुष्ट होना चाहती थी।

ऐसे समय में भारत में भी बुद्ध का आविर्भाव हुआ। तब देश में कई दार्शनिक चिन्तक भी तत्व शास्त्र की समस्याओं के चिन्तन में निमग्न थे। प्रत्येक विचारक आत्मा जगत और ईश्वर जैसे अमूर्त-मूर्त विषयों के यथार्थ चिन्तन में डूबा हुआ था। जितने विचारक उतने मत फलस्वरूप आम लोगों का नैतिक जीवन निष्प्राण हो रहा था। विचार के क्षेत्र में व्याप्त अराजकता के समान ही नैतिक क्षेत्र में भी आराजकता व्याप्त थी। यह निर्विवाद तथ्य है कि प्राचीन वैदिक धर्म अधिक सरल था। आगे चलकर ब्राह्मणों तथा पुरोहितों ने धर्म को अत्यधिक पेचीदा बना दिया। अनेक देवी-देवताओं की पूजा होने लगी। बाह्याडम्बर बढ़ने लगे और अंधविश्वासों को प्रश्रय मिलने लगा। अंध विश्वासों में ज्योतिष, नक्षण ज्ञान, देव-वाणी, देवी घटनाओं का फलो कथन, अग्नि बलि, विभिन्न देवी देवताओं को बलि मंत्र तंत्र, प्रेत विद्या, भविष्यवाणियाँ, आत्मा का आव्हान कर रहस्योद्घाटन , गुप्त धन खोजने की विद्या, वंशीकरण, इन्द्रजाल आदि विविध विधाऐं द्वारा समाज में अत्याचार व्याप्त होने लगा। स्वाभाविक रूप में धर्म का पाखण्ड के रूप में प्रत्यावर्तन के खिलाफ क्रांति का होना स्वाभाविक था। ऐसे समय में गौतम बुद्ध ने भारत के धार्मिक क्षेत्र में अपूर्व एवं अद्‌भूत क्रांति का सूत्रपात किया था। नैतिक जीवन का समस्याओं के प्रति लोगों को जागरूक करने में, बुद्ध की सफलता के कारण ही बौद्ध धर्म के उद्‌भव को भारत में धर्म का स्वर्ण युग का आगमन कहा गया है।

आश्चर्यजनक सच्चाई यह है कि बुद्ध मूलत: एक समाज सुधारक थे, दार्शनिक नहीं। दार्शनिक उसे कहा जाता है, जो ईश्वर, आत्मा और जगत जैसे विषयों का चिन्तन करता हो। बुद्ध की समस्त शिक्षाओं में आचार शास्त्र, मनोविज्ञान और तर्क शास्त्र आदि है, परन्तु वहां तत्व दर्शन का सर्वथा अभाव है। बुद्ध ने तत्व दर्शन के प्रश्नों पर मौन रहना ही उचित समझा था क्योंकि वे सर्वज्ञानी थे। उन्हें मानव ज्ञान की सीमाऐं विदित थे। उन्होंने देखा कि तत्व ज्ञान के किसी भी प्रश्न पर उलझना व्यर्थ के वाद विवाद को जन्म देता है। सदियों से, इस विषय में किए गये तर्क-वितर्क के बाद भी मानव के लिए विषय चिन्तक की भूमिका ही बने हुए थे।

बुद्ध ने कोई पुस्तक भी नहीं लिखी। उनके उपदेश मौखिक ही होते थे। वे प्राय: तत्वशास्त्रीय प्रश्नों पर मौन रहते थे, क्योंकि इन प्रश्नों का उत्तर व्यवहारिक दृष्टि से निरर्थक है। बुद्ध के अनुसार तो यह संसार दु:खों से परिपूर्ण है। दु:ख के संबंध में जितने प्रश्न है, उनके उत्तर जानने के लिये उन्होंने मानव को प्रेरित किया। बुद्ध का दु:खवाद का संपूर्ण चिन्तन चार आर्य सत्यों में निहित है। 1. संसार दु:खों से परिपूर्ण है। 2. दु:खों का कारण है। 3. दु:खों का अन्त संभव है। 4. दु:खों के अंत का मार्ग है। चार आर्य सत्य बौद्ध धर्म का सार है।

बौद्ध धर्म चिन्तन के संदर्भ में अपने तीन मौलिक सिद्धांतों पर आधारित है। 1. सब कुछ अनित्य है अर्थात् विश्व के सभी पदार्थ स्थायी नहीं है। इस विचार को क्षणिकतावाद कहा जाता है अर्थात् जगत निरन्तर परिवर्तनशील है। 2. समग्र वस्तुऐं आत्मा रहित है। आत्मा या जीव की स्वतंत्रता सत्ता नहीं है। यह सिर्फ मानसिक वृत्तायों का संगठन मात्र है। अत: समस्त संसार आत्म शून्य है। 3. निर्वाण ही शान्त है। संसार दु:ख का साम्राज्य है। इसकी निवृत्ति ही मानव जीवन का लक्ष्य है। दु:ख का उदय काम तथा तृष्णा से होता है। इन क्लेशों का मूल अविधा है। अविधा के विनाश के लिये, प्रज्ञा की आवश्यकता है। प्रज्ञा निर्वाण का साधन है।

यह स्वीकार करना होगा कि बुद्ध के सिद्धान्त अपने समय की कुरीतियों के निवारण की प्रक्रिया थे। उन्होंने सिर्फ एक बौद्धिक धर्म, व्यवहारिक नीति शास्त्र तथा सीधे-सादे मध्यममार्गी जीवन सिद्धान्तों को धर्म का स्वरूप दिया। दु:खों में कैसे व्यक्ति को आत्मा और जगत के मूल तत्वों की खोज में लगाना वे बड़ी भारी मूर्खता मानते थे। अत: उनका व्यवहारिक चिन्तन प्राचीन ऋषियों के उपदेशों से विशेष रूप में भिन्न नहीं है। बुद्ध का कथन सिर्फ धर्म का व्यवहारिक रूप है। वैदिक कर्मकाण्ड से ऊबे, पशु हिंसा से दु:खी, उपनिषदों के यथार्थ ज्ञान से अनभिज्ञ द्विजों के विशेषाधिकार से पीड़ित व्यक्तियों को निर्वाण के लिये सिर्फ त्याग और साधना पर केन्द्रित धर्म सहज ही आकर्षण का केन्द्र बन गया।

भारतीय संस्कृति की दो प्रमुख धाराऐं रही है - ब्राह्मण संस्कृति एवं श्रमण संस्कृति। ब्राह्मण संस्कृति में वेदों को अपौरूषेय तथा ब्राह्मणों को देवत्व प्रदत्त माना गया है। श्रमण संस्कृति के चिन्तन में भगवान, अवतार, बहुदेववाद आदि को अस्वीकार कर कर्मवाद तथा पुनर्जन्म को प्रमुखता दी

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

गई है। बुद्ध ने अनात्मवाद का प्रतिपादन आत्मवाद तथा वैदिक कर्मकाण्ड के प्रति विद्रोह स्वरूप किया है। संपूर्ण बौद्ध साहित्य में वेदों का ऋण स्वीकार नहीं किया गया है। उपनिषदों और अरण्यों के आधार पर यद्यपि पट्दर्शन के सिद्धांतो को जन्म दिया है। यह संस्कृतियों का परस्पर लेन देन है।

अन्य शब्दों में छठी शताब्दी ई.पू. बौद्ध धर्म का भारत में उदय भारतीय संस्कृति के स्वर्ण युग का शुभारम्भ माना गया है। विडम्बना है आज भारत में बौद्ध धर्म का लगभग विलोप हो गया है। बौद्ध धर्म का उदय भारतीय संस्कृति की पुन: उत्थान की क्रांति है। इसका उदय मूलत: ईश्वर, देववाद, बहुदेववाद, वेदवाद, कर्म काण्ड, शाश्वतवाद, भोगवाद, योगवाद जैसे दार्शनिक, सामाजिक और धार्मिक आचारों, अंधविश्वासों और आडम्बरों के कारण हुआ था। बौद्ध धर्म को ब्राम्हण धर्म का विरोधी कहा जाता है, सच तो यह है कि बौद्ध धर्म हिन्दू धर्म की ही एक मुख्य शाखा है। जिसने भारतीय धर्माचरणों से कुछ लिया तो कुछ का विरोध भी किया। कुछ नये अपूर्व मतो का प्रतिपादन भी किया। यह एक ऐसा धार्मिक स्वरूप था जिसमें तब की स्थिति में जनता का आकर्षण विद्यमान था। इसमें सब के कल्याण की भावना के साथ-साथ हिन्दू धर्म तथा भारतीय संस्कृति को संस्कारित करने की क्षमता थी। इसने हिन्दू धर्म के आदेशों को प्रभावित किया। वास्तविकता यह है कि बौद्ध धर्म ने भारतीय समाज के आचार-विचार और चिन्तन को जितना प्रभावित किया है, उतना दूसरी किसी चिन्तन धारा ने कदापि नहीं किया है। इस काल में जैन धर्म ने अतिकठोर तपस्या और आत्म शुद्धि पर अति बल दिया, वहीं दूसरी ओर बुद्ध ने स्वचरित्र निर्माण तथा चित्त निरूपण (विपश्यता) पर आधारित मध्यम मार्ग का उपदेश दिया। बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म दोनों ने कर्मवाद की पृष्ठभूमि पर मानव को मानवीय मान्यताओं (मानव अधिकार व कर्तव्य) से स्वयं परिचित कराने का मार्ग प्रशस्त किया।

बौद्ध धर्म ने भारत के असंख्य उपेक्षित, प्रताड़ित समाज को अपनी ओर आकर्षित किया। इसकी अकाट्य दार्शनिक विचारधारा ने अपनी उत्कृष्टता सरलता व उदारता के कारण सदियों तक पूर्व स्थापित वेदान्त आदि दर्शनों से दृढ़तापूर्वक सामना कर अपने को अक्षुण्य ही नहीं बनाए रखा है, अपितु उसमें निरन्तर विकास करते हुए वैश्विक स्तर पर भी अपनी पताका फहराई है। दु:खद सत्य यह है कि दसवीं सदी में जब तुर्को का भारत पर आक्रमण हुआ था उसमें श्रमण संस्कृति की मुख्य धारा बौद्ध धर्म को सामूहिक रूप से विनष्ट कर दिया। नालन्दा के बौद्ध धर्म ग्रंथालयों में महिनों तक धर्मग्रंथों की होली जलती रही। आक्रमणकारियों ने बौद्ध विद्धानों को नष्ट करते हुए भिक्षुओं को तलवार से मौत के उतार दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओझा डॉ. श्रीकृष्ण - प्राचीन भारतीय चिन्तन का इतिहास - रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर (2008) पृष्ठ-113-157
2. अरूण - भारत में धर्म का स्वर्ण युग - शलभ पब्लिशिंग हाउस - मेरठ (2009) पृष्ठ 192-199, 447-448
3. सिन्हा डॉ. हरेन्द्र प्रसाद - धर्म-दर्शन की रूपरेखा - मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली (2009) द्वितीय खण्ड पृष्ठ 1-32.
4. दुबे डॉ. सत्यनारायण 'शरतेन्दु' - बौद्ध एवं जैन धर्म तथा दर्शन विश्वविद्यालय प्रकाशन - वाराणसी (2004) पृष्ठ 5-15, 49-54, 74-91

****

Newspapers And Magazines In Madhya Pradesh As A Historical Source

Dr. Aditi Pitaniya *

Abstract - Newspapers and Magazines are like a mirror of human life. Regional history has its own importance and relevance in Indian history. The current political and social life of any area has a deep impact on its history. During the British period, the State of Madhya Pradesh and its surrounding region was known as Central Provinces. Many states, such as, Indore, Dhar, Barwani, Ujjain, Gwalior, Sitamau etc. were a part of this province. There are so many facts and findings which are still unknown to a common man in India. One should be able to identify the valuable information given in these sources, in order to understand the relevance of the Newspapers and magazines which were published from Madhya Pradesh.
Key Words - Madhya Pradesh, Newspapers, Magazines, Malwa Akhbar, Jayaji Pratap, Vidhya, Veena, Karmaveer, Vrittadhara.

Introduction - Madhya Pradesh, the heart of India, has a vast and interesting history of the gone by era which is reflected in its contemporary journalism. The role of journals and magazines was most evident during the Twentieth Century when Indians experienced strong mass movement for freedom of the nation. Since the beginning of the Twentieth Century, the Newspapers and Magazines of Madhya Pradesh not only created national consciousness, but also maintained peace among the masses in the period of repression, exploitation and war. The journalism in Madhya Pradesh showcased each aspect of society, literature, culture, politics and economy along with the national and international problems.

Different towns of the states published newspapers like Karmaveer, Prakash, Jayaji Pratap, Vrittadhara, Holkar State Sentinel, Hitavada, Nai Dunia, Bhaskar, Yugdharma etc. Many well-know magazines were also published during 1900-1964, for example, Chhattisgarh Mitra, Shri Sharda, Veena, Vidhya, Utthan, Lokvarta, Madhukar, Prabha, Kalpa-vriksha etc. They collectively began a new era for the informative journalism in Madhya Pradesh.

How did the journalism in Madhya Pradesh progress and succeed in creating awareness whether social, economic, political, cultural or literary, especially during 1900s was a matter mostly unknown to the local population and requires extensive research. This period was the period of constant change and opportunities both; for the people who were or were to come in contact with the field of journalism in Madhya Pradesh. The term 'free India' affected each strata of the Indian society and opened many doors for those who wanted to make a change through their pen. How the journals and magazines flourished in the new state of Madhya Pradesh in independent India is mentioned here.

Object :

(i) To study the contribution of newspapers and magazines in Madhya Pradesh as a catalyst during National Movement and post-1947.

(ii) To establish the identity of newspapers and magazines as a great historical source.

Research methodology - The process involves the techniques and guidelines by which historians use primary sources and other evidence to research and then to write histories in the form of accounts of the past. It usually involves investigation of the targeted data, followed by its analysis and then interpreting the events of the past for the purpose of developing generalizations that are helpful in understanding the past and the present.

Description - The importance of News and Press could be better understood in a democratic country likes ours where a long battle was fought for its independence. The Press was a powerful factor in building and developing Indian nationalism and the nationalist movement. The Press was a weapon in the hands of the nationalist groups to popularize among the people their respective political programs, policies and methods of struggle and to form organizations with a broad popular basis. Similarly, news had its own importance in the lives of subjugated Indians. The establishment and extension of the Press in India brought about a closer social and intellectual contact between provincial populations. It also helped the growth of provincial literatures and cultures, which were provincial in form and national in contents. In the absence of newspapers and magazines, people used to

* **Research Scholar, Center For Excellence, Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak (M.P.) INDIA**

discuss only household or religious matters. With their advent and further growth, these topics of discussions were gradually replaced by national and international events.

'**Malwa Akhbar**' was published on March 6, 1849 as the first Hindi-Urdu bilingual weekly of Madhya Pradesh. One of its issues informs us about the Report on the Revolt of 1857 by Mr. Leads according to whom atrocities were inflicted upon many innocent Indians by the British[1].

Another journal **Jayaji Pratap** evolved from Akhbar Gwalior (Gwalior Gazette) in January 1905. It gave space to regional news along with valuable articles on history, literature, astrology etc. News from abroad, British India and Native States were printed under the section 'Saptah ki Diary'. Although, Jayaji had refrained from any political news since the time it was conceived, it did published the unfortunate hangings of our legendry revolutionaries Bhagat Singh, Rajguru and Sukhdev on 23 March 1931 followed by strikes and mourning all-over India[2].

One of its issue also exerted upon Indianisation of the Indian British Army in its editorial; 'Sena Aur Swadeshi' which was of the view that the salary of the Indian soldiers shall be made equal to that of the British soldiers[3]. After the reorganization of the present state on 1 November 1956, it was named **Madhya Pradesh Sandesh**. It is now regularly published as fortnightly news-cum-views forum of the State. Jayaji Pratap has the longest life-span of about 110 years which is a rare case for any active journal in the history of Madhya Pradesh.

The gifted journalist Madhav Rao Sapre published the most popular journal of Madhya Pradesh i.e. **Karmaveer** on January 11, 1920 from Jabalpur. The editors of Karmaveer were inspired by Gandhiji, hence, they named it after him as he was fondly called 'Karmaveer' Mohandas Karamchand Gandhi. It was begun so as to incorporate the ideals of this popular social hero in the day-to-day life of the masses of Madhya Pradesh which was a commendable job in the terrible period of Rowlett Act[4].

Shri Sharda, an illustrated monthly magazine was started on March 21, 1920 from Rashtriya Hindi Mandir, Jabalpur. Shri Makhanlal Chaturvedi was its proprietor while Narmada Prasad Mishra was its editor who was later replaced by Dwarka Prasad Mishra. Although this magazine was chiefly literary in nature, it immensely contributed for spreading national resurgence. It had humorous and pin-point comments on contemporary political events due to which it had a major presence among the contemporary magazines. Its contribution to the Non-cooperation movement and national awareness is exceptional. Shri-sharda was known for publishing nationalist poems and funny yet meaningful cartoons. One of such cartoon was published in its issue of May 1921, under the title "Rai Sahib Ka Public Aur Private Jivan" where Rai Sahib is shown fearless in public but eventually shivers in front of his British master[5].

Shri-Sharda considered the heinous act of Jallianwala by General Dyer under the category of 'new crime' in USA where criminal were found not guilty if they were proved mentally challenged[6].

Another monthly magazine; **Vidhya** was started in April 1926 (Samvat 1983) from Rau, near Indore. Sri Gopivallah Upadhyaya was its editor while B.R.Rawal published it from Malav Vidhyapeeth (Rau), Indore. This magazine played an eminent role in Malwa region of Madhya Pradesh for the upliftment of society and culture.

A notable hindi monthly, **Veena,** is the only literary magazine of Madhya Pradesh which comes next to the famous literary magazine in Hindi; 'Saraswati' and still maintains its incessant flow. It thus, is nearing almost 79 years. Veena had written about occurrence of the World War for the second time in one of its issues due to the prevailing adverse conditions in Europe as every nation and its political leaders believed that soon a world war shall begin[7].

It made its first appearance in September 1927 (Ashwin Samvat 1984). It was published by the Madhya Bharat Hindi Sahitya Samiti, Indore and still published regularly since the time of its inception. Till now its 1006 issues has been published[8].

Another weekly journal which was published in June, 1940 from Dhar was **Vrittadhara**. It marked its presence especially during the period of the Second World War due to the presence of vital news from abroad under the headings like 'Yuddha chakra', 'Moscow ke Morchey se' etc[9].

The issue of 7 January 1943 had following news-continuous Japanese attack on Calcutta, ambush in Burma, Hitler declared that this War shall decide the fate of Germany, about one thousand aircraft were destroyed in air battles or raids in 1942, Germans had killed about 20 lakh people in Ukraine etc.

There were many more admired or less popular newspapers and magazines of Madhya Pradesh which equally contributed towards enlightening the masses but couldn't make a niche in Indian history.

Conclusion - This may be the age of internet where each kind of news is available online. But the old journals and magazines that chronicle the ethos of a time gone by are irreplaceable. Simply by reading a single issue of any popular journal or magazine, one can generalize the situation and reach to the conclusion what was. Therefore, in order to get acquainted with the prevailing conditions in Madhya Pradesh during the national movement and after independence, when the integration of native states (or riyasats) became a major issue; I chose the contemporary journals and magazines of Madhya Pradesh as a great historical source simply because they provided first-hand accounts on each important event in the history of Madhya Pradesh and India as well.

Although the contemporary newspapers and magazines of Madhya Pradesh were dissimilar in their nature, content and circulation, these were published with the same dedication, oneness of purpose and patriotism as their highest priority. The socio-political set up of a country determines its press system. Therefore, these can provide significant information about the political set-up and socio-economic condition in the Riyasatsor Princely States till

1956. People living in the Princely States faced more pressure than those living in British India as the native rulers were adamant to show their loyalty and could not risk their privileges at the cost of criticism of the British Crown through any journal or magazine published from their state. It gives an idea about the contemporary atmosphere in which the newspapers and magazines of Madhya Pradesh were published.

To say the least, it was not an easy task. The journey which began as a hard walk from 'Malwa Akhbar' (1849, Indore) and flourished to the contemporary age is worth consider. These directly or indirectly raised their voice against the British government and advocated freedom of our country. This work became difficult day by day, as the persons associated with the publication of any journal or magazine were constantly under the watch of either the British government or their respective native ruler. It was more like a mission or sacrifice made for a noble cause, that is, freedom.

The ideas of freedom, nationalism and sacrifice were expressed openly through these newspapers and magazines during the Indian National Movement. Thus, one could easily associate with various movements and activities of courageous freedom fighters in the state. Their immense contribution is matchless in that sense. Hence, we can say that, their significant role as a historical source in exhibiting the all-round development of Madhya Pradesh is a milestone.

References :-

1. Malwa Akhbar, 6 March 1849
2. Jayaji Pratap, 26 March 1931
3. Jayaji Pratap, 28 July 1938, P-5
4. 'Barua', Gemini Kaushik. Makhanlal Chaturvedi: Jivani, Part-I. Kashi: Bhartiya Jnanpeeth. 1960, P-353
5. Shri Sharda , May 1921, p-135
6. Shri-Sharda, 'Naya Apradh', 4 August 1921, P-299
7. Veena, June 1935
8. Naidunia, Indore edition"14 September 2011,Hindi Diwas Special,p-15
9. Vrittadhara, 10 December 1942 P-1, 2

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

आधुनिक पश्चिमी मालवा का ऐतिहासिक परिचय

ईश्वर लाल ओसारी *

शोध सारांश – भारत के मध्य में अवस्थित मालवा का शस्य-श्यामल अंचल प्राचीन काल से आज तक अत्यन्त उर्वर एवं धन-धान्य सम्पन्न रहा है। उत्तर व दक्षिण भारत में अवस्थित यह अंचल अनेक राजनैतिक व सामाजिक उच्चावचनों के मध्य अपनी सांस्कृतिक एवं लोक परख मौलिकता रखता रहा है। प्रसिद्ध इतिहासकार **विसेन्ट स्मिथ** ने लिखा है – 'मध्य भारत की ऐजेंसिस के सम्पूर्ण भू-भाग के साथ मालवा का क्षेत्र-विस्तार दक्षिण में नर्मदा नदी उत्तर व पश्चिम में चंबल नदी एवं पूर्व में बुदेलखण्ड तक है।' इनसाईक्लोपिडिया ब्रिटेनिका में मालवा में जो सीमा रेखा प्रस्तुत कि गई है। वह विन्सेट स्मिथ द्वारा निर्देशित उक्त सीमा रेखा से ज्यादा व्यापक है। इसी में चंबल और विध्य पर्वत श्रेणियों के मध्य स्थित भू-भाग सुदुर दक्षिण तक फैली उपत्यका का भी समावेश कर लिया गया है। इस तरह यहाँ मालवा की भौगोलिक सीमाए नर्मदा नदी को लांगकर उसे दक्षिण में बसे निमाड़ तक पहुचा देती है। निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है। कि यद्यपि मालवा के नाम से लोकप्रिय रूप में नर्मदा, बेतवा व चंबल द्वारा घिरा हुआ पठारी भू-भाग जाना जाता है। किन्तु ऐतिहासिक क्रम मालवा का सांस्किृतिक विस्तार इससे भी आगे रहा है। निमाड क्षेत्र नर्मदा के दक्षिण में होने पर भी मालवा का ही एक अंचल माना गया है।इसी प्रकार चंबल के उस पार उत्तर -पश्चिम क्षेत्र राजस्थान का झालावाड़ क्षेत्र तथा मध्यप्रदेश का उत्तर पश्चिचमी सीमान्त क्षेत्र निश्चित रूप से मालवा का अभिन्न अंग माना जाता रहा है। परमार काल में झालावाड़ जिले में स्थित झालरा-पाटन मानक नगर मालवा का एक अभिन्न भाग तथा परमारों का एक महत्वपूर्ण व्यापारी, सांस्किृतिक एवं प्रशासकिय केन्द्र रहा था। गुप्त काल मे दशपूर के औलिकरा झालरा-पाठन प्रशासकिय दृष्टि से राजस्थान में सिथत है। यह निर्विवाद सत्य है कि सांस्कृतिक एवं भाषायिक दृष्टि से यह आज भी मालवा अंचल के ही क्षेत्र है। इस प्रकार मालवा अंचल का समय-समय पर सांस्कृतिक विस्तार एवं आकुंचन होता रहा है। किन्तु भारत के ह्रदय स्थल में वह स्थल आज द्रढ़ता पूर्वक मालवा कहलाने के गौरव का पात्र है।

प्रस्तावना – पश्चिमी मालवा एक दृष्टि में – विषयानुक्रमिका की प्रस्तुति के पूर्व संक्षेप में मालवांचल की भौगोलिक व राजनैतिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करना आवश्यक है।

भौगोलिक पृष्ठभूमि – विंध्य पर्वत के उत्तरी भाग में जो पठारी भु-खण्ड मध्य भारत क्षेत्र में बसा है, वह मालवा है। साधारणतया इसकी ऊँचाई समुद्र तल से लगभग 450 है। भौगोलिक दृष्टि इस अंचल के 230-30' से 240-30' अक्षांश उत्तर एवं 740-23' से 780-25' पूर्व देशान्तर के मध्य स्थित है, जो सतपुड़ा के उत्तर में स्थित होकर विंध्य और अरावली पर्वत को समेटे हूए है। तथा जिसकी शस्य- शामल माटी नर्मदा, चंबल, पार्वति, बेतवा, नेवज, बडी कालीसिंधी, छोटी कालीसिंध, क्षिप्रा तथा गंभीर ,चामला, षिवना, रतम, माही आदि सरिताओं द्वारा सिंचित है। इस क्षेत्र को अनेक सांस्कृतिक उपांचलों में विभाजित किया जाता रहा है। ऐसे अंचल है-गोंडवाना, उमठवाड, सोण्डवाड, सतमेला, रजवाड, कांठल आदि। पर्वत श्रेणीयों पर जो अनेक शैलाश्रय सघन वनों के मध्य विध्यमान रहें है। वहा मालवा के आदिम कबिले पनपे और अपने सौन्दर्य -बोध को भिमबेटका सीताखर्डी चतुर्भुज नाला चिब्बड़नाला, आदि स्थानों द्वारा अभिव्यक्त कर गये। यह सिलसिला सभ्यता के चरमोत्कर्स के समय भी जारी रहा , जबकि चित्रकला में अभिजात्य , धार्मिक एवं शास्त्रीय रूप धारण किया।

राजनैतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि –प्राचीन काल में मालवान्चल अवन्ती जनपद के नाम से पुकारा जाता था। कुछ शताब्दियों का विभाजन अवन्ती आकार एवं अनूप अंचलो के रूप में हो गया। चूंकि इस क्षेत्र में पंजाब से राजस्थान होती हुई मालन जन की गर्दभिल्ल, मौखरी, अवलिकर, जैसे शाखाएं आ बसी इस कारण 5 वी सदी के आस पास इसका नामकरण में क्रमश: प्रद्यौत, मौर्य , शुंग, व कण्व, नाग, गर्दभिल्ल औलिकर ,गुप्त, उत्तर गुप्त , मौखरी , प्रतिहार, राष्ट्रकुट , परमार आदि शक्तियों का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष्य वर्चस्व रहा। जबकि मध्यकाल में क्रमश: दिल्ली के सुल्तानो धार माण्डु के गौरी, खिलजी, गुजरात के सुलतानों व अफगानों का क्रमश: शासन रहा अत: मालवा मुगलों के अधिकार में आ गया। उज्जैन उनकी प्रांतीय राजधानी बनाई गई।

मालवा भी पतनोन्मुखी मुगल सता के बाद आया। मराठा कालीन मालवा पर एक दृष्टि डालना आवश्यक है । मुगलों को मराठों की चुनौती औरंगजेब के समय से ही दी जाने लगी थी। शिवाजी के नेतृत्व में जिस मराठा शक्ति का अभ्युदय हुआ था। उसने कालान्तर में भी अपना आक्रमक स्वरूप कायम रखा। इस स्वरूप को मालवा को पहला परिचय तब मिला जब सन् 1699 ई.में कृष्णा जी सावंत के नेतृत्व में पन्द्रह हजार मराठ अश्वरोहियों ने लूटमार के उद्देश्य से मालवा पर आक्रमण किया। जनवरी 1703 ई. में मराठों ने पुन: उज्जैन तक आक्रमण किया । इसी वर्ष उनका दूसरा आक्रमण निमाड़ पर हुआ। वर्ष के अंतिम महिनो में नेमा सिंधिया के नेतृत्व में पचास हजार मराठा घुडसवार पुन: मालवा में घुस आये। औरंगजेब ने स्थिति को संभालने के लिए अपने पोते शहजादा बिदारबख्त को मालवा का सूबेदार नियुक्त किया। उसने तथा मुगल सेनापति फिरोज जंग ने मिलकर मालवा पर होने वाली मराठा आक्रमणो पर बहुत कुछ काबू पा लिया । उसके बाद मुगल ओर मराठा सैनिक टुकडियों की झड़पे होती रही। इसका दुष्परिणाम मालवा के आर्थिक व सामाजिक जीवन पर बहुत गहराई से पड़ा। सहारा सूबा लगभग वीराना सा हो गया।

सन् 1707 ई.में औरंगजेब की मृत्यु होने से मुगलों का ध्यान उत्तराधिकार के प्रश्न की ओर चला गया। औरंगजेब के संभावित उत्तराधिकारी बहादुरशाह ने बड़ी चालाकी सें सम्भाजी के पूत्र शाहू को बन्दीगृह से मुक्त कर

* शोधार्थी, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

दिया। उसने खानदेश लौटने पर छत्रपति पद हेतु अपना दावा प्रस्तुत किया। इस कारण मराठा शक्ति आंतरिक कलह से ग्रस्त हो गई। जिससे कुछ समय के लिए मालवा सुरक्षित हो गया। इस बीच मालवा की सूबेदारी के प्रश्न को लेकर मुगल खेमे में भी काफी उतार चढाव आये। इस स्थिति का लाभ लेने मराठे पुन: मालवा की ओर बढ़े। इस बार उनके नेता थे कानोजी भौसले, खाण्डेराव दाभाडे, देवलजी सोनवंशी, संताजी भोसले आदि। स्थिति यहाॅ तक डांवाडोल हुई कि एक मुगल सामंत नंदलाल मण्डलोई ने मराठों को मालवा अधिकृत करने का खुला आमंत्रण दिया। यह वह समय था, जब छत्रपति शाहू सतारा में भली प्रकार प्रतिष्ठित हो चुका था। और पेशवा मराठा शक्ति में निर्णायक बन चुके थे। सन् 1720 ई. में प्रथम पेशवा बालाजी विश्वनाथ की मृत्यु हो गई। उसका पुत्र बाजीराव प्रथम शाहू के अधीन दूसरा पेशवा बना। बाजीराव प्रथम नें मराठा साम्राज्यवाद की नींव डाली। परिणाम स्वरूप उसके सेनापतियो, यथा उदाजी पवांर, मल्हारराव होलकर, राणोजी सिंधिया आदि ने मालवा पर आक्रमण करना प्रारंभ किया। ये आक्रमण अठारहवीं सदी की तीसरे दशक के प्रारंभिक वर्ष में हुए थे। अंत में निर्णायक क्षण आ गया। बाजीराव के अनुज चिमनाजी अप्पा के नेतृत्व में एक शक्तिशाली मराठा सेना ने 29 नवंबर 1728 ई. को अमझेरा के युद्ध में मालवा के मुगल सुबेदार गिरधर बहादुर और उसके अनुज दयाबहादुर को मार डाला मराठा सेनाएॅ मालवा के चारो और फेल गयी। और वहाॅ से कॉफी धन वसूल किया। इस घटना के बाद मुगल प्रशासन मालवा में लगभग अस्तित्वहिन हो गया। मालवा का सुयोग्य मुगल सुबेदार सवाई जयसिह भी निरीह हो गया। परिणामस्वरूप उसके द्वारा मराठों और मुगल सम्राट के मध्य तालमेल बिठाने का प्रयास किया गया। सवाई जससिह की समझौतावादी नीति न तो मुगल दरबार और नहीं मराठों को रूचिकर लगी। परिणामस्वरूप मल्हारराव होलकर ने मंदसौर में उसे चारो और से घेर कर 6 लाख रूपया नगद और बकाया राशि का वायदा प्राप्त किया।

21 जुलाई 1732 ई. तक मराठों का मालवा पर पर्याप्त प्रभुत्व जम गया था। सिंधिया होलकर एवं पवांर घरानों ने पेशवा को मालवा जीतने में अत्यधिक सहयोग दिया था। अत: सुशासन की दृष्टि से इस प्रदेश का निम्न प्रकार से विभाजन कर दिया गया। 21.75 प्रतिशत सिंधिया, 21.75 प्रतिशत होलकर, 16 प्रतिशत धार के पवांर 2.75 प्रतिशत देवास बड़ी पाती के पवांर, 2.75 प्रतिशत देवास छोटी पाती के पवांर तथा शेष 35 प्रतिशत पेशवाओं के पास रहा। कालांतर में पेशवा ने इस विभाजन में कुछ और परिवर्तन किये। यहाॅ यह स्मरण रखना आवश्यक है कि सन् 1818 ई. में जब पेशवा पद समाप्त कर दिया गया, तो मालवा में मराठा राज्य मराठों संघ से पूर्ण रूपेण कट गये। और अंग्रेजों के अधिनस्त बन गये। अठारहवीं सदी के चौथे दशक में मराठे मालवा में निर्णायक हो चुके थे और उन्नीसवीं सदी के दूसरे दशक में कम्पनी मालवा के राज्यो के सम्प्रभु में हो चुकी थी। फिर भी बहुत से वे राज्य जो मुगल काल की देन थे। अभी भी अपना अस्तित्व प्रदर्शित कर रहे थे। इन राज्यो में कुछ तो राजपूत राज्य थे तो कुछ मुस्लिम राजपूत राज्यो में बड़वानी,झाबुआ,मथवाडा,कट्ठिवाड, रतलाम, सैलाना, सीतामऊ, जोबट, नरसिंहगढ, खिलचीपुर, राजगढ, अलीराजपुर, पिपलोदा आदि थे, जबकि मुस्लिम राज्यो में भोपाल, कुरवई, मोहम्दगढ, पठारी तथा जावरा राज्य थे।

जहाॅ तक सिंधिया राजवंश का प्रश्न है। राणोजी सिंधिया को मालवा में सिंधिया शासन की स्थापना का श्रेय जाता है। उसने पेशवा के सहयोगी के रूप में अपना क्षेत्र प्राप्त किया था। राणोजी की मृत्यु के उपरांत जयप्पा उतराधिकारी हुए, जिन्होंने राणोजी की ही भाँति अपने शौर्य की धाक चारो ओर स्थापित की। जयप्पा के बाद क्रमश: दत्ताजी और जनकूजी सिंधिया शासक बने। सन् 1761 ई. के पानीपत के ततृीय युद्ध में महादजी सिंधिया को छोड़कर सारे सिंधिया वंश का सफाया हो गया। महादजी जैसे-तैसे घायल अवस्था में राजधानी उज्जैन लौटा। महादजी शिन्दे वंश का अत्यंत सुयोग्य व प्रतापी शासक सिद्ध हुआ। उसने उत्तर भारत में अंग्रेजो के विरूद्ध असफल होने के उपरांत भी मराठा प्रतिष्ठा को काफी ऊँचाई तक पहुॅचा दिया। उसकी प्रशासकीय व सैनिक क्षमता का लोहा सर्वत्र माना जाता था। सन् 1794 ई. में महादजी नि:संतान मरा। परिणामस्वरूप जनकूजी के पौत्र दौलतराव को शासक बनाया गया। दौलतराव के समय सिंधिया की प्रतिष्ठा को अनेक धब्बे लगे। अंग्रेजों ने सिंधिया का मान-मर्दन किया, होलकर और सिंधिया के मध्य हिसंक स्पर्धा हुई और सिंधिया को अपनी राजधानी ग्वालियर ले जाना पडी। सन् 1827 ई. में दौलतराव की मृत्यु के उपरांत क्रमश: जनकोजीराव, जीवाजीराव, जयाजीराव, माधवराव आदि शासक बने। माधवराव उन्नीसवीं सदी के महत्त्वपूर्ण सिंधिया शासक थे। इन्होने ग्वालियर राज्य में अनेक सुधार किये। उनके पुत्र जियाजीराव सिंधिया 1925 ई.सें 1931 ई. तक शासक रहे। पश्चात् उनके उत्तराधिकारी जीवाजीराव हुए। सन् 1948 ई. में भारत स्वतंत्र होने पर जब ग्वालियर राज्य नये मध्यभारत राज्य में विलीन हुआ, तो जीवाजीराव शिन्दे को राजप्रमुख बनाया गया था। होलकर राज्य के संस्थापक मल्हारराव होलकर थे। मल्हारराव को पेशवा की और से मालवा में संरजामी मिली थी। संरजामी के इस क्षेत्र में मल्हारराव ने होलकर राज्य राज्य की नीव डाली। यह राज्य कालांतर में इन्दौर राज्य कहलाया। मल्हारराव एक अत्यंत वीर एवं विजेता व्यक्ति था।

सन् 1766 ई. में इसकी मृत्यु हुई। इस घटना के पूर्व ही उसका एकमात्र पुत्र खण्डेराव सन् 1754 ई. में भरतपुर क्षेत्र में मारा गया था। इस कारण मल्हारराव का पोता भालेराव उत्तराधिकारी बना। इस दुर्गुणी अल्पव्यस्क शासक की भी सन् 1766 ई.मे मृत्यु हो गई। बाध्य होकर मल्हारराव की पुत्रवधू अहिल्याबाई को होलकर शासक बनना पडा। अहिल्याबाई एक महान् शासिका सिद्ध हुई। वही बडी दूरदर्शी, कुटनीतिज्ञ एवं धर्मपरायण महिला थी। उसने अपने समकालीन राजनीतिक एवं सैनिक परिस्थितियों का दृढतापूर्वक सामना किया तथा उन्हें प्राप्त दौलत से न केवल अपने राज्य, अपितु भारत के प्रत्येक तीर्थस्थल पर मंदिरो, अन्नक्षेत्रो, गौशालाओं एवं धर्मशालाओं का निर्माण करवाया। सन् 1795 ई. में अहिल्याबाई के निधन के उपरांत होलकरो के सेनापति तुकोजीराव प्रथम शासक बना। सन् 1797 ई. में उसकी मृत्यु के बाद उसके पुत्रो में पारस्परिक संघर्ष हुआ। इस संघर्ष में यशवंतराव सफल रहा। यशवन्तराव अंग्रेजों के विरूद्ध अनवरत संघर्ष करने का श्रेय जाता है। उसकी मुत्यु के उपरान्त 1818 ई. में अंग्रेजो के विरूध्द होलकरों की निर्णायक पराजय हो गई परिणाम स्वरूप अल्पवयस्क मल्हारराव द्वितीय को सहायक संधि करनी पड़ी। मल्हार रॉव के उपरान्त होलकर सिंहासन पर अनेक शासक बैठे जिनके नाम क्रमश: हरीरॉव, खण्डेरॉव ,तुकोजीरॉव द्वितिय, शिवाजीरॉव, तुकोजीरॉव तृतीय और यशवन्त राव द्वितीय थे। इस अन्तिम शासक के समय भारत स्वतंत्र हो गया और इन्दौर राज्य मध्य भारत में विलिन हो गया। यह स्थिति मालवा के अन्य देशी राज्यों तथा देवास सीनियर, एवं जुनियर धार, झाबुआ, बडवानी, रतलाम, सेलाना, सीतामोह, राजगड, नरसिंहगड, खिलचीपूर, भोपाल, जावरा, आदि राज्यों की भी हुई।

सन् 1956 ई. में मध्य भारत भी नव निर्मित मध्य प्रदेश में विलिन हो गया। और मालवा के इतिहास में एक नवीन अध्याय जुड गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. ऐचिसन, एच.ई. 'कलेक्शन आफ टिट्रीज इंगेजमेन्ट्स एण्ड सनद्' कलकत्ता, 1939
2. भाटी नारायणसिंह, 'सोर्सेस आफ सोशियो-इकानामिक हिस्ट्री आफ राजस्थान एण्ड मालवा', जयपुर 1989
3. डेयू एन,'मिडिएचल मालवा', नई दिल्ली,1965
4. फारेस्ट, जी,डब्ल्यू 'ए हिस्ट्री आफ दी इण्डियन म्यूटिनी', वोल्युम 3, 1912
5. जैन के.सी. मालवा थ्रू दी एजेस, नई दिल्ली ,1972
6. काये एण्ड मेलेसन, 'हिस्ट्री आफ दी इण्डियन म्यूटिनी आफ 1857-58' वोल्युम,1906-08
7. लूणिया, बी.एल. 'फेजेज आफ फ्रीडम स्ट्रगल इन मध्य भारत इन 1857' भोपाल 1957
8. परमार, श्याम, 'फोक लोर आफ मध्यप्रदेश' नई दिल्ली, 1981
9. रघुवीरसिंह, 'मालवा इन ट्रांजिशन' बम्बई,1936
10. सदरलेण्ड, जे.पी., 'एकेचेस आफ दी रिलेशन्स सबसिंस्टिग बिटवीन दी ब्रिटिश गवर्नमेन्ट एण्ड इण्डिया एण्ड दी डिफरेन्स नेटिव स्टेट्स कलकता', 1837

****

उज्जैन जिले का पोषण स्तर का स्वास्थ्य पर प्रभाव

देवराज नामदेव *

प्रस्तावना – मानव को अपना जीवन चलाने के लिए पोषण की आवश्यकता होती है। वह किसी भी धर्म, जाति या स्तर का क्यों न हो, भोजन उसके स्वास्थ्य का मूल आधार है, जिसकी प्राप्ति हेतु वह अथक प्रयास करता है। पौष्टिक भोजन मानव के जीवन की नींव है, जिस प्रकार किसी भवन की नींव जितनी मजबूत होगी, भवन उतना ही स्थायी एवं लम्बे समय तक अस्तित्व बनाये रखता है। उसी प्रकार अधिक पुष्ट भोजन शरीर को सुदृढ़ एवं स्थायित्व को प्राप्त कराता है। क्योंकि पौष्टिक भोजन के द्वारा व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, मनौवैज्ञानिक और नैतिक बल प्राप्त करता है।

'चिकित्सा विज्ञान की वह शाखा है, जो हमें उन सभी प्रति-क्रियाओं का बोध कराये जिनसे प्राणी अपने आहार से पोषक तत्व प्राप्त करने, पाचन द्वारा उन्हें सूक्ष्मतम अंतिम अंशो में विभक्त करने, अवशोषण द्वारा रक्त व सलीकावाहक नलिकाओं में शोषित करने और अंग-प्रत्यंगों में उनका यथावत उपयोग करने में सक्षम और क्षतिग्रस्त अवयवों व उनकी कोशिकाओं की क्षति पूर्ति होती है और ऊर्जा व उष्मा पैदा होती है, उसे पोषण या पोषाहार कहते है।'

आय के अनुसार पोषण की वास्तविक स्थिति – मनुष्य की अर्थिक स्थिति उसके द्वारा खरीदी गई वस्तु/खाद्य सामग्री से ही ज्ञात हो जाती है। उदाहरण के लिए एक आर्थिक रूप से संपन्न व्यक्ति 10 रूपये किलों का गेहूँ भी क्रय कर सकता है, परन्तु इसके विपरीत एक गरीब या निर्धन व्यक्ति जो आर्थिक रूप से कमजोर है वह गेहूँ की अपेक्षा ज्वार या बाजरा या फिर मक्का क्रय करेगा।

एक न्यून आय पाने वाला व्यक्ति अपने भोजन में प्रतिदिन दूध, मक्खन, दालें व हरी पत्तेदार सब्जियाँ आदि उपलब्ध नहीं कर पायेगा। अध्ययन क्षेत्र में आर्थिक स्तर के आधार पर लोगों को कई भागों में विभाजित किया जा सकता है। क्योंकि अधिक आय वाले व न्यून आय वाले व्यक्ति में बहुत अंतर है। जिले के 70 प्रतिशत से अधिक परिवार गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे है।

तालिका क्रमांक 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट होता है कि 0-1000 व 1000-3000 आय वर्ग के लोगों को पूर्ण रूप से संतुलित आहार प्राप्त नहीं होता है। 3000-5000 आय वर्ग के लोगों को संतुलित आहार के समकक्ष ही आहार प्रदाय होता है। 5000 आय वर्ग के लोगों को पूर्ण रूप से संतुलित आहार प्राप्त होता है। निम्न आय वर्ग के लोगों को पूर्ण रूप से संतुलित आहार प्राप्त नहीं होता है। इसलिए अनेक अभावात्मक रोगों का विकास होता है।

प्रति व्यक्ति उपयोग – प्रति व्यक्ति उपयोग से तात्पर्य प्रत्येक व्यक्ति द्वारा ग्रहण किया गया भोजन से है। यह उपयोग वस्तु की उपयोगिता पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिये विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति उपलब्धता 3090 कैलोरी प्रतिदिन है, जबकि दैनिक उपयोग 2590 कैलोरी है। इसी प्रकार विकसित देशों में कहीं कम तो कही अधिक है जिसे व्यापार द्वारा एक-दूसरे की भरपायी/पूर्ति की जाती है।

अत: स्पष्ट होता है कि जिले में गेहूँ का उत्पादन 150445 है, जिसमें प्रति व्यक्ति उपयोग 0.075 करता है। मक्का का उत्पादन 5848 है और प्रति व्यक्ति उपयोग 0.00294 करता है। ज्वार का उत्पादन 2162 है, जिसमें प्रति व्यक्ति उपयोग 0.00109 करता है। चना का उत्पादन 197012 है, जिसमें प्रति व्यक्ति उपयोग 0.099 करता है। तुवर दाल का उत्पादन 1428 है, जिसमें प्रति व्यक्ति उपयोग 0.0002 करता है। उड़द का उत्पादन 2086 है, जिसमें प्रति व्यक्ति उपयोग 0.0010 करता है। सबसे अधिक उत्पादन गेंहू चना एवं सोयाबिन का किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में शाकाहारी एवं मॉसाहरी दोनों का सेवन किया जाता है। सभी तहसीलों में प्रति व्यक्ति उपयोग में भिन्नता है।

पोषण स्तर का स्वास्थ्य पर प्रभाव – उचित पोषण से तात्पर्य यह है कि शरीर को सही मात्रा में आहार प्राप्त हो रहा है और शरीर उसका उपयोग कर रहा है। हम जो आहार लेते है, वह उपलब्धता पर्वो पर प्रचलन के आधार पर तथा अपनी पसंद के अनुसार करते है। उन्हें पोषकता के आधार पर नहीं छॉटतें है। तथापि प्रचलन में आई खाने की वस्तुएॅ अच्छी होती है किन्तु ऐसे अनेक भोजन खासकर जो शिशुओं, छोटे बच्चों को दूध पिलाने वाली माताओं को , गर्भवती महिलाओं को दिये जाते है वे उनकी आवश्यकता के अनुसार नहीं होते है। फलस्वरूप शरीर निर्बल एवं अनेक प्रकार के रोग जैसे बच्चों में सूखा रोग (मरारमस), खून की कमी, नेत्र की ज्योति का कम होना आदि बीमारियॉ होती है।

उचित पोषण के अभाव के कारण बहुत सी शारीरिक रूप से कमजोर महिलाओं की बच्चे को जन्म देते समय मृत्यु हो जाती है। कभी-कभी दूध पिलानें वाली माताओं के स्तनों में दूध नहीं बनता जिनमें वे पोषण गुण होते है, जो बच्चों के उचित वृद्धि विकास में सहायक होते हैं।

पोषण की कमी से होने वाले विभिन्न रोग (कुपोषण) – मनुष्य अपनी आदत या इच्छा के अनुसार या फिर स्वयं की पसंद के अनुरूप भोजन ग्रहण करता है। वह केवल स्वादिष्ट भोजन को ही प्राथमिकता देता है। किन्तु उस भोजन में कुछ पोषक तत्वों की कमी रह जाती है। जब शरीर को पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक भोजन प्राप्त नहीं होता है तो कुपोषण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। समुचित पोषण वह है, जो मनुष्य के शारीरिक विकास अंगो को सुगठित शारीरिक वजन को ऊंचाई के अनुपात में यथार्थ बनाने, उचित ऊर्जा शक्ति उत्पन्न करने, शरीर को चुस्त व फुर्तिला बनाये रखने या पोषण के अभाव में रोगों से पीड़ित न हो।

*शोधार्थी (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

'शरीर में एक या एक से अधिक पोषक तत्वों के अभाव का प्रभाव कुपोषण है।' इसमें पोषक तत्वों की निर्धारित आवश्यक मात्रा में कमी या अधिकता होती है तथा कभी-कभी प्राप्त मात्रा में असन्तुलन हो जाता है, जिस भोजन या पोषण में शरीर की आवश्यकता के अनुपात में पोषण की मात्रा या भोज्य पदार्थ के गुण प्राप्त नहीं होते उसे अपर्याप्त पोषण या कुपोषण कहते है।

कुपोषण उन व्यक्तियों में भी हो सकता है, जिनका शरीर पौष्टिक तत्वों को पचा नहीं पाता है। जैसे कि अतिसार और चयापचय विकारों में होता है। सामाजिक वातावरण संबंधी परिस्थितियाँ भी कुपोषण को बढ़ाती है। सूखा, बाढ़, महामारी, बड़े पैमाने पर बेरोजगारी जैसी विकट विपत्तियों के पश्चात समाज में बड़ी संख्या में कुपोषण से प्रभावित व्यक्ति देखे जाते है।

तालिका क्रमांक 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उज्जैन जिला एक कृषि प्रधान क्षेत्र है। यहॉ पर सभी प्रकार की खाद्य वस्तुऐं समान रूप से उत्पादित नहीं होती है। इस प्रकार खाद्य वस्तुऐं समान रूप से उत्पादित नहीं होती है। इस प्रकार खाद्य उत्पादन में कमी के परिणामस्वरूप कुपोषण की स्थिति उत्पन्न होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Akhtar, Rais (1983) Scope of Health and Geographical Researches in India.
2. Ali, M., Food & Nutrition in India, K.B. Publication, New Delhi. 1977
3. Mohammad, Ali, Food and Nutrition in India, K.B. Publication, New Delhi, 1979
4. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, उज्जैन 2011
5. चौहान, धर्मेन्द्र सिंह एवं मुकेश शर्मा, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य भूगोल, साहित्यागार, जयपुर, 2011

तालिका क्रमांक 1
उज्जैन जिला - पोषण स्तर की स्थिति

पोषक तत्व	मात्रा	आय वर्ग 0-1000	आय वर्ग 1000-3000	आय वर्ग 3000-5000	आय वर्ग 5000 से अधिक
कैलोरी	2400	2100	2200	2400	2500
प्रोटीन	65	50.10	60	64	65
वसा	60	48	55	58	60
कार्बोहाइड्रेट	600	455	500	540	580
कैल्सियम	1000	650	160	500	900
आयरन	25	16	15	26	24
विटामिन ए	5000	2500	3200	4500	5100
विटामिन बी	1.5	1	1.2	1.3	1.6
विटामिन बी2	2.5	1	1.3	2.4	2.5

स्त्रोत - जिला चिकित्सालय कार्यालय उज्जैन।

तालिका क्रमांक 3
प्रमुख खनिज लवण संतुलित आहार के अंग

लवण	स्रोत	कार्य	कमी के रोग
1. लोहा	बाजरा, चना, उड़द की दाल, पालक, मैथी, तिल	1. लाल रक्तकणिकाओं के निर्माण में	1. एनीमिया रोग
2. कैल्शियम	दूध, तिल, छोटी मछली, हरी सब्जियॉ	1. हड्डियों को मजबुत 2. हृदय की धड़कन को नियंत्रित करना 3. रक्त के स्त्राव में सहायक	1. मृदलास्थि रोग2. अंद्धढ कमजोर हो जाती है।
3. आयोडीन	समुद्री मछली, समुद्री नमक, जल, मांस, दूध, अण्डे, पालक, सेब	1. क्षय रोग व हार्मोन का निर्माण 2. उपापचय का नियंत्रण	1. घेंघा रोग
4. अन्य खनिज अस्थरित, पोटेशियम आदि	हरी पत्तेदार सब्जियों में पाये जाते है।	1. जैविक क्रियाओं के नियंत्रण में	1. उच्च जैविक क्रियायें प्रभावित होती है।

स्त्रोत - आई.सी.एम.आर. नई दिल्ली।

तालिका क्रमांक 2

विभिन्न विटामिन के स्रोत एवं कार्य व कमी से रोग

विटामिन	स्रोत	कार्य	कमी से रोग
1. विटामीन ए	पशु यकृत अण्ड़ा, घी, चौलाई, आम, पपीता, गाजर, पालक	1. ऑखों के लिए स्वास्थ्य हेतु 2. शारीरिक दृष्टि 3. कोशिकाओं का निर्माण 4. त्वचा में चमक	1. रतौंधी 2. त्वचारोग 3. जलोदर 4. अतिसर 5. अन्य नेत्र रोग
2. विटामिन बी1 थायमिन	गेहूँ का आटा, दालें , चावल, दुध, काजू, किसमिस, अण्ड़ा, मछली, पनीर	1. एंजाइम को प्रेरित करना 2. पाचनतंत्र की क्रिया 3. मानसिक संतुलन	1. बेरी बेरी रोग
3. बी 3 रिवोफलाविन	दुध, अंकुरित अनाज, दालें, यकृत तेल युक्त बीज, हरे पत्तेदार सब्जियॉ	1. कोशीय भरण पोषण 2. त्वचा की रक्षा 3. चयापचय में सहायक 4. लाल रक्त कण का निर्माण	1. पेट में घाव 2. यकृत की बीमारी 3. मुहँ में छाले
4. नायसिन	गेहूँ, चावल, मूंगफली, केला, मांस, मछली	1. वसा से संश्लेषण में 2. त्वचा, पान, नाडी, संस्थान में सहायक 3. मानसिक विकारों से मुक्ति	1. एनिमिया रोग 2. जीभ में छाले 3. हाथ पैर सुन्न
5. विटामिन सी	खट्टे फल, हरे पत्तेदार सब्जियॉ, ऑवला	1. श्वसन क्रिया हेतु 2. दंत एवं मसूड़ों हेतू 3. आंतरिक रक्त स्तव में कमी 4. तंतुओं कोशों के मध्य संयोजन	1. स्कर्बी 2. जिनजिवाइटिस 3. चिडचिढापन 4. हाथ पैर सुन्न
6. डी	मछली का तेल, मक्खन, दुध, सुर्य की किरणें	1. अस्थि निर्माण 2. दंत एवं मसुडों हेतु 3. आंतरिक रक्त स्त्राव में कमी 4. तंतुओं कोशों के मध्य संयोजन	1. रिकेटस 2. शारीरिक वृद्धि रूक जाती है।
7. ई	सेयाबीन, गेहूँ, मक्खन, केला, मछली, अण्डा	1. ऑतों में आक्सीजन को रोकना 2. रक्तल्पता में कमी 3. विटामिन ए की रक्षक 4. गर्भपात रोकने में सहायक	1. नपुसंकता
8. के	फूल गोभी, बंद गोभी, पालक, आलू, टमाटर	1. रक्त जमने में सहायक 2. रक्तस्त्राव को रोकने 3. प्रजनन क्रिया तेज करना	1. हिमाफीलिया रोग हो जाता है।

स्त्रोत – आई.सी.एम.आर. नई दिल्ली।

****

ग्रामीण संसाधन एवं बाजार तंत्र के मध्य सेतु

डॉ. एस. एस. बघेल *

प्रस्तावना – भारत एक ग्रामीण प्रधान देश है, यहाँ कि 72 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है, अत: गांवों के विकास के बिना देश के विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। महात्मा गांधी ने कहा है कि– '**भारत का विकास गांवों के विकास पर निर्भर करता है, जब गांवों का विकास होगा, तब देश का समग्र विकास होगा।**'

ग्रामीण संसाधन एवं बाजार तंत्र की अर्थव्यवस्था को देखे तो आज की भारतीय अर्थव्यवस्था पर जैसे बादल मंडरा रहे है, इन्होंने भारत के उद्योग जगत को ग्रामीण बाजारो को गंभीरता से लेने को मजबूर कर दिया है। औद्योगिक कम्पनियों तथा ऑटोमोबाईल को अब समझ में आ गया है कि ग्रामीण बाजारो की संजीदगी देखने का यही सही वक्त है। वर्तमान समय में कई वर्षो में देश में प्रतिदिन इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं में से 70 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण भारत से मिलेगा। एफएमसीजी के लिए ग्रामीण बाजारों में उपभोक्ता खर्च में 21 प्रतिशत की वृद्धि हो गई है, जो कि शहरों के लिए 20 प्रतिशत है। सन् 2014–15 की अवधि में टूथपेस्ट, चाकलेट, हेल्थक्रीम, आईल, बालों का तेल आदि के उत्पादों की श्रेणियों व मूल्यों के लिहाज से शहरी बाजारों के मुकाबले गांवों में ज्यादा रही है, साथ ही ऑटो सेक्टर, ट्रेक्टर, मारूति, सुजुकी मोटर्स, कम्पनियां खासकर अपने ग्रामीण परिचालन के लिए अपनी रणनीति को दोबारा बना रही है, उनका मुनाफा गांवों में होने वाली ब्रिकी पर निर्भर कर रहा है। ग्रामीण उपभोक्ता का योगदान करीब 40–50 फीसदी है। एनएसईआई के कार्यकारी अधिकारी, मार्केटिंग एण्ड सेल्फ प्रसारित करते है। आज ग्रामीण 70 प्रतिशत आबादी गांवों में निवास करती है सरकार द्वारा ग्रामीण विकास पर कार्य किए जा रहे है, योजनाओं का निर्माण किया जा रहा है।

सरकार द्वारा 46 प्रतिशत उपभोग को बढ़ाकर वस्तुओं की मांग में वृद्धि कर दी है वर्ष 2013–14 में इस बाजार में कृषि के लिए ऋण में पिछले वर्ष की तुलना में 22 प्रतिशत वृद्धि हुई है इस 22 प्रतिशत की वृद्धि से कृषि में सुधार आएगा। कृषि उपज व उत्पादन बढ़ेगा जिसके परिणाम कृषकों की क्रय वृद्धि बढ़ेगी उपभोग में मदद करेगी।

इस प्रकार सरकार द्वारा कई विभिन्न योजनाओं के माध्यम से ग्रामीणों की क्रयशक्ति में वृद्धि हो रही है, ताकि शहरी अर्थव्यवस्था, उपभोग की कमी को पूरा किया जा सके।

भारत में कृषि विपणन व्यवस्था – भारत में कृषक अपनी उपज का एक बड़ा भाग गांव में ही महाजनों एवं व्यापारियों को बेच देता है, प्राय: कृषक गांव के महाजनों एवं व्यापारियों से ऋण लेते है। इस स्थिति का यह वर्ग लाभ उठाता है और कृषकों से कम मूल्य पर अनाज खरीद लेता है ऋण ग्रस्तता के कारण कृषक भी उन्हें उपज बेचने के लिए बाध्य होता है। फलत: कृषकों को अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता है महाजन एवं व्यापारी उनकी उपज को कम मूल्य में खरीदकर उनका शोषण करते है।

वर्तमान में कृषि फसलों के लिए सरकार में नियमित कृषि उपज मण्डियों की स्थापना की है, इन मण्डियों का संचालन एक समिति द्वारा किया जाता है। इस समिति में कृषकों एवं व्यापारियों के चूने हुए सदस्य होते है, इन मण्डियों में थोक व्यापारी एवं अढ़ाती होते है जो दलालो के माध्यमों में खुली बोली लगाकर किसानों से कृषि उत्पाद क्रय करते है। धान, कपास, तिलहन एवं गन्ना जैसी फसलों को विधयन किया के लिए मिलाकर भी बेचा जाता है। इन नियमित मण्डियों से सरकार एवं संचालन समिति का हस्तक्षेप रहता है। जिससे कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है। कृषकों को मध्यस्थों के कपटपूर्ण व्यवहार से छुटकारा दिलाने एवं उनकी उपज मूल्य प्रदान करने के उद्धेश्य से सम्पूर्ण देश में सहकारी विपणन व्यवस्था भी है। सहकारी समितियां अपने सदस्यों को थोड़े–थोड़े विपणन आधिक्य को एकत्रित करके नियमित कृषि उपज मण्डियों में थोक व्यापारियों को प्रतियोगी मूल्य पर बेचती है, इससे कृषकों को अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो जाता है। सहकारी समितियां उपज के विपणन के साथ–साथ कृषकों को अन्य सेवाऐं जैसे बीज, उर्वरक, कीटनाशक एवं ऋण भी प्रदान करती है।

सरकार द्वारा खरीदी भारतीय खाद्य निगम भी सरकार द्वारा घोषित समर्थन मूल्य पर कृषकों से सीधे खरीदी करता है, इससे मण्डियों के भाव निर्धारित समर्थन मूल्य से नीचे नही पहुँच पाते और कृषकों को उचित मूल्य भी प्राप्त हो जाता है। भारतीय खाद्य निगम सामान्यत: उन राज्यों में जहां विपणन आधिक्य अधिक होता है।

कृषि विपणन व्यवस्था के दोष– वर्तमान समय में कृषि विपरण व्यवस्था एवं उत्पादन कृषकों को उपभोक्ता द्वारा दी गयी कृषि वस्तुओं के मूल्य में से बहुत कम अंश प्राप्त होता है, उपभोक्ता द्वारा दी गई कीमत में से अधिकांश अंश विपणन मध्यस्थों को प्राप्त होता है। सब्जी, फल, फूल, दूध, अण्डे आदि शीघ्र नाशी वस्तुओं में उत्पादक कृषकों को उपभोक्ता द्वारा दी गई कीमत में से आधे से कम भाग पर प्राप्त होता है उत्पादक कृषकों को उपभोक्ता के रूपये में से कम भाग प्राप्त होने का प्रमुख कारण वर्तमान विपणन व्यवस्था का दोषयुक्त होना है।

कृषकों की उत्पादित कृषि वस्तुओं की अधिकांश मात्रा का विक्रय साहूकार व्यापारियों एवं उपभोक्ताओं को गांव में ही करते है, इसके कारण कृषकों को उत्पादन के विक्रय से उचित कीमत प्राप्त नहीं होती है।

1. गांवों से शहर की मण्डियों तक कृषि वस्तुओं को जाने के लिए सड़कों एवं पर्याप्त परिवहन सुविधाओं का न होना।
2. कृषक गांव के साहूकारों के ऋणी होते है, जिसके कारण वे साहूकारों के माध्यम से खाद्यान्न विक्रय करने के लिए पाबंद होते है।
3. मण्डियों में प्रचलित कीमतों की सूचना कृषकों को समय पर प्राप्त नहीं होती है, मण्डियों में प्रचलित कीमतों से अनभिज्ञ होने के कारण वे खाद्यान्न गांव में ही कम कीमत पर विक्रय कर देते है।

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

4. छोटी जोतो के कृषकों के पास विक्रय अधिशेष बहुत कम होता है, जिससे मण्डियों में बेचना उन्हें मंहगा पड़ता है।
5. मण्डियों में ठहरने की असुविधा, विपणन कुरीतियों के होने एवं जोखिम आदि से बचने के लिए कृषक अपनी उपज को मण्डियों में नहीं बेचते।

राज्य एवं केन्द्र सरकार द्वारा विपणन व्यवस्था के सुधार हेतु सरकार द्वारा उठाए गये कदम – कृषि वस्तुओं की विपणन व्यवस्था में पाए जाने वाले उपर्युक्त दोषों के कारण कृषकों को खाद्यान्न की उचित कीमत प्राप्त नहीं होती है, जिससे उनमें उत्पादन वृद्धि की प्रेरणा का ह्रास होता है साथ ही कृषि आधारित उद्योगों को आवश्यकता मात्र में कच्चामाल प्राप्त नहीं हो पाता। अत: कृषि एवं उस पर आधारित उद्योगों के विकास के लिए विपणन व्यवस्था के दोषों का निवारण आवश्यक है। परिवहन के साधनों का महत्वपूर्ण स्थान रहता है। जिससे गांव और शहर को जोडने वाली प्रधानमंत्री सड़क, विपणन व्यवस्था में पाए जाने वाले अनावश्यक मध्यस्थों विपणन प्रथा में पायी जाने वाली कुरीतियों एवं विपणन लागत की अधिकता आदि दोषों को दूर करने के लिए कृषि उपज विपणन अधिनियम के अन्तर्गत नियंत्रित मण्डियों की स्थापना करके दूर किया जा रहा है। नियंत्रित मण्डियों के संचालन कृषि उपज मण्डियों समिति द्वारा होता है, जिससे कृषकों व्यापारियों, सरकारी बैंक संस्थानों के प्रतिनिधि होते है मण्डी समितियों विभिन्न वस्तुओं के विक्रय के लिए विभिन्न क्रयों की विपणन लागत की दर निर्धारित करती है। आयात व निर्यात के लिए बन्दरगाह एवं बढ़े शहरों तथा उच्च शिक्षा, चिकित्सा, दूरसंचार, होटलों, पार्किग व्यवस्था आदि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. एम.एस. सिसोदिया, आर्थिक भूगोल पृ.क्र. 167
2. डॉ. अर्चना भार्गव, आर्थिक भूगोल पृ. क्र. 108
3. डॉ. चतुर्भुज मामोरिया, भूगोल पृ.क्र. 121
4. डॉ. एस.डी. कौशिक, संसाधन भूगोल पृ.क्र. 122, 125
5. मध्यप्रदेश का भूगोल, डॉ. श्री कमल शर्मा, म.प्र. हिन्दी ग्रथ अकादमी, भोपाल।
6. भारत का भूगोल, डॉ. सुरेश चन्द्र बंसल, मीनाक्षी प्रकायशन मेरठ, उ.प्र.।

****

महिलाओं के अधिकार एवं विकास में परिवर्तन के वर्तमान संदर्भ

कलावती गाडरिया *

प्रस्तावना – महिलाओं के अधिकार क्या हैं और कौन-कौन से हैं। किसी विशिष्ट दायरे में परिभाषित नहीं किये जा सकते। हर वो अधिकार जो आम नागरिक के हैं, वे महिलाओं के भी हैं। सामान्यत: महिलाओं को पुरुषों के समान ही सारे अधिकार स्वत: प्राप्त हैं। खाना-पीना, अच्छा रहना, पढ़ना-लिखना आदि। किन्तु प्राय: देखा गया है कि जन्मजात नैसर्गिक अधिकार जो महिलाओं को पुरुषों के समान मिलने चाहिये, वे उसे नहीं मिल पाते। जन्म से लड़की-लड़के के भेदभाव की वजह से नारी को उसके स्वाभाविक एवं नैसर्गिक अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है। पुरुष प्रधान समाज की संरचना में नारी पुरुष में भेदभाव ज्यादा ही उजागर रहते हैं। इसके अलावा हमारी गुलाम संकीर्ण मानसिकता भी नारी को पुरुष के समकक्ष मानने एवं उसके बराबरी के अधिकार देने में आड़े आती है। अशिक्षा इस भेदभाव को और अधिक बढ़ाती है। क्योंकि अनपढ़ व्यक्ति अधिकार और कर्तव्य में भेद नहीं कर सकता। शिक्षा हमारे मस्तिष्क को विकसित करती है। कारण जो भी हो, प्राचीन काल से आज तक नारी के मानवीय अधिकारों का हनन जारी है और आज के आधुनिक युग में भी हो रहा है। जबकि हमारा संविधान महिला और पुरुष को समान अधिकार देने को कृत संकल्प है। यही नहीं, हमारा कानून भी महिलाओं से पक्षपात को अपराध मानता है।

उद्देश्य –

- महिलाओं की संवैधानिक स्थिति तथा स्वतंत्रता के पश्चात् महिलाओं की स्थिति में होने वाले परिवर्तन को जानने का प्रयास करना।
- विकास की मुख्य धारा में महिलाओ की गरिमापूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना।
- महिलाओं की समग्र क्षमताओं का विकास करना।
- जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चत करना।
- महिला कानूनों के प्रभाव से महिलाओं की पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक , तथा राजनीतिक स्थिति में होने वाले परिवर्तनों का अवलोकन करना।
- महिला अधिकारों से महिलाओं की स्थिति में होने वाले सुधारो को रेखांकित करना।

(क) महिलाओं के अधिकार – ईश्वरीय शक्ति होने के बाद भी दुर्गा एवं सरस्वती स्वरूपा महिला निर्बल समझी जाती है। क्योंकि पुरुष प्रधान समाज द्वारा उस पर अत्याचार किये जाते हैं। महिलाएँ हिंसा, शोषण, अत्याचार, अवमानना और यातना का शिकार होती हैं। महिलाओं को इन दशाओं से निजात दिलाने की दिशा में सन् अस्सी के दशक में उच्च स्तर पर प्रयास किये जाने लगे। यह प्रयास महिलाओं के विश्व महिला सम्मेलनों के रूप में सामने आया। विश्व स्तर पर महिला सम्मेलन शुरू करने का श्रेय संयुक्त राष्ट्र संघ को जाता है।

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संविधान में महिलाओं के अधिकार – भारतीय संविधान और कानून में महिलाओं को अनेकों अधिकार दिये गये हैं। महिलाओं को दिये जाने वाले अधिकार निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत हैं। (विवाहित महिला सम्पत्ति नियम 1874)

1. संविधान के अन्तर्गत अधिकार
2. भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत अधिकार
3. अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956
4. गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971
5. गर्भवती महिलाओं के अधिकार:
6. प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961

भारतीय संविधान में महिलाओं को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं –

- संविधान के अनु. 14 में सभी व्यक्तियों को समान अधिकार प्राप्त हैं।
- संविधान के अनु. 15 में लिंग के आधार पर भेदभाव प्रतिबन्धित है।
- संविधान के अनु. 16 में सभी को समान रोजगार का अवसर दिया गया है।
- संविधान के अनु. 39 (स) के अन्तर्गत राज्य का यह कर्त्तव्य है, कि पुरुष और महिला को पर्याप्त एवं एक समान रहने के अवसर प्रदान करे।
- संविधान के अनु. 39 (डी) में प्रावधान है, कि सरकार महिला तथा पुरुष को एक से काम के लिए समान वेतन प्रदान करे।
- संविधान का अनु. 23 मनुष्य के व्यापार का निषेध करता है। 9 मई, 1950 को भारत ने महिलाओं और बालिकाओं के अनैतिक व्यापार का प्रतिषेध करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय अधिनियम की पुष्टि कर दी। अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1950 उसी को कार्यरूप देता है। स्त्री अशिष्ट (प्रतिरोध) अधिनियम 1986 विज्ञापन के माध्यम से या प्रकाशनों, लेखन, चित्रों, आकृतियों या अन्य प्रकार से स्त्रियों के अश्लील चित्रण निषिद्ध करता है।
- **भारत में महिला मानवअधिकार –** यह एक प्रामाणिक तथ्य है, कि दुनिया में सबसे अधिक अपराध और अत्याचार महिलाओं के खिलाफ ही होते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में महिलाओं के मानवाधिकार काफी महत्वपूर्ण हो जाते हैं। विश्व के लगभग सभी देशों में महिलाओं को विशेष अधिकार दिये गए हैं। ताकि वे सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें। मानवाधिकार के नजरिए से महिलाओं को विशेष रूप से व्यवहार करने योग्य माना जाता है। महिला आन्दोलन के इस दौर में एक ओर जहाँ महिलाओं को अधिकाधिक अधिकार दिये जाने की कवायद चल रही है, वहीं दूसरी ओर महिलाओं के बीच भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है। महिलाओं के अधिकारों का

* C/o 81, भगवानदास मालवीय, त्रिमुर्ति नगर, धार (म.प्र.) भारत

हनन मात्र अपराधी ही नहीं करते हैं अपितु पुलिस व सुरक्षाबल भी इस मामले में ज्यादा पीछे नहीं हैं। महिलाओं को आमतौर पर अपराध की दृष्टि से बेहद आसान लक्ष्य माना जाता है। इसलिए महिलाओं के विरुद्ध दुनियाभर में अपराध बढ़ रहे हैं। चाहे घर हो या बाहर, स्कूल हो या कार्यस्थल, महिलाओं को हर जगह विभिन्न प्रकार के अपराधों का सामना करना पड़ता है। महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी समय-समय पर काफी प्रयास किए हैं। संयुक्त राष्ट्र चार्टर की प्रस्तावना में कहा गया है। कि 'हम संयुक्त राष्ट्रों के लोग मूलभूत मानवाधिकारों में मानव व्यक्ति की गरिमा व मूल्य में तथा पुरुष व स्त्री के समान अधिकारों में आस्था व्यक्त करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि संयुक्त राष्ट्र चार्टर में महिलाओं की समानता के अधिकारों की घोषणा की गयी है। इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा-पत्र में भी महिलाओं को बिना भेदभाव के अधिकारों की प्राप्ति का अधिकार माना गया है।

भाग-2 – अनुच्छेद 9 पक्षकार राज्य महिलाओं के विरुद्ध विभेद को मिटाने के निमित्त सभी उपयुक्त उपाय करेंगे, ताकि शिक्षा के क्षेत्र में उनके लिए पुरुषों की बराबरी के अधिकार और पुरुषों तथा महिलाओं की समानता के आधार पर निम्नलिखित स्थितियाँ सुनिश्चित हो सकें –

(क) शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन वृत्ति और व्यावसायिक मार्गदर्शन के प्रमाण-पत्रों की प्राप्ति के लिए समान स्थितियाँ। यह समानता प्राथमिक विद्यालय सामान्य तकनीक व्यावसायिक और उच्चतर शिक्षा के मामलों में और साथ ही सभी प्रकार के व्यावसायिक प्रशिक्षण के संबंध में सुनिश्चित की जाएगी।

(ख) समान पाठ्यचर्या, समान परीक्षा, समान स्तर की योग्यताओं वाले शिक्षक समूह और समान स्तर के स्कूली परिसरों और उपकरणों की सुलभता।

(ग) सह-शिक्षा और शिक्षा के क्षेत्र में स्त्री-पुरुष समानता के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक अन्य प्रकार की शिक्षा को प्रोत्साहन देकर और विशेष रूप से पाठ्य पुस्तकों और स्कूली कार्यक्रमों में संशोधन और शिक्षा के तरीकों में अनुकूलन करके सभी स्तरों और सभी रूपों की शिक्षा में महिलाओं और पुरुषों की भूमिकाओं की हर रूढ़िवादी अवधारणा की समाप्ति।

(घ) छात्रवृत्तियाँ तथा अन्य अध्ययन अनुदानों से लाभ उठाने के समान अवसर। कम से कम समय में स्त्रियों और पुरुषों की शिक्षा के बीच की हर प्रकार की असमानता को दूर करना है।

(च) छात्राओं द्वारा बीच में ही शिक्षा अधूरी छोड़ देने की दर को कम करना और जिन लड़कियों और महिलाओं ने समय से पूर्व ही शिक्षा लेना छोड़ दिया है, उनके लिए कार्यक्रमों का संयोजन।

अनुच्छेद 10 – इस अधिनियम के पक्षकार राज्य रोजगार के क्षेत्र में महिलाओं के विरुद्ध विभेद को मिटाने के लिए सभी उपयुक्त उपाय करेंगे, ताकि महिलाओं और पुरुषों की समानता के आधार पर विशेष रूप से निम्नलिखित समान अधिकार सुनिश्चित किए जा सकें –

(क) सभी मनुष्य के अधिकार के रूप में काम करने का अधिकार।

(ख) रोजगार के समान अवसरों का अधिकार, जिसमें रोजगार के लिए चयन के मामलों के समान मापदण्ड लागू किया जाना होगा।

(ग) पेशों और नौकरी के स्वतंत्र चुनाव का अधिकार। तरक्की, नौकरी की सुरक्षा और सेवा के सभी लाभों तथा शर्तों का अधिकार और व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा पुन: प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार, जिसमें अप्रेंटिसशिप उन्नत व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार भी शामिल है।

(घ) समान मूल्यों के कार्य के लिए अन्य लोगों के साथ समान पारिश्रमिक और समान व्यवहार का अधिकार एवं कार्य की गुणवत्ता के मूल्यांकन में समान व्यवहार का अधिकार।

(ढ) विवाह या मातृत्व के आधार पर महिलाओं के विरुद्ध विभेद को रोकने के लिए तथा उनके काम करने के कारगर अधिकार सुनिश्चित करने के लिए इस अधिनियम के पक्षकार राज्य निम्नलिखित के लिए उपयुक्त उपाय करेंगे –

(1) जहाँ दण्ड के तौर पर बर्खास्तगी आवश्यक हो, उस स्थिति को छोड़कर गर्भावस्था या प्रसूति अवकाश के आधार पर बर्खास्तगी के निषेध और वैवाहिक स्थिति के आधार पर बर्खास्तगी में विभेद के निषेध के लिए।

(2) नौकरी छूटने या वरीयता अथवा सामाजिक भत्ते खोने के किसी खतरे के बिना, वेतन के साथ तुल्य सामाजिक लाभों के साथ प्रसूति अवकाश की व्यवस्था आरंभ करने के लिए।

(3) माता-पिता अपने कार्य के दायित्वों के साथ ही परिवार के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह कर सकें और सार्वजनिक जीवन में भाग ले सकें। उस दृष्टि से आवश्यक अवलंबनदायी सामाजिक सेवाओं की व्यवस्था को खास तौर से बाल सुश्रूषा सेवाओं के तंत्र की स्थापना और विकास को बढ़ावा देकर ऐसी सेवाओं की व्यवस्था को प्रोत्साहन देने के लिए।

अनुच्छेद 11 –

(1) इस अधिनियम के पक्षकार राज्य स्वास्थ्य संरक्षण के क्षेत्र में महिलाओं के विरुद्ध विभेद को मिटाने के लिए सभी उपयुक्त उपाय करेंगे, ताकि पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के आधार पर स्वास्थ्य संरक्षण सेवाओं की, जिनमें परिवार नियोजन से संबंधित सेवाएँ भी समाविष्ट हैं की सुलभता सुनिश्चित हो सके।

(2) इस अधिनियम के पक्षकार राज्य महिलाओं के लिए गर्भावस्था, प्रसूति और प्रसूत्योत्तर अवधि के संबंध में उपयुक्त सेवाएं सुनिश्चित करेंगे, और जहाँ जरूरी होगा, वहाँ निशुल्क सेवाएं सुलभ करेंगे, तथा गर्भावस्था और स्तन्यकाल में उनके लिए पर्याप्त पोषण की व्यवस्था करेंगे।

अनुच्छेद 12 –

(1) इस अधिनियम के पक्षकार राज्य ग्रामीण महिलाओं के सामने आने वाली विशिष्ट समस्याओं को हल करने हेतु महत्वपूर्ण भूमिकाएँ, जिनमें अर्थव्यवस्था के अमुद्रीकृत क्षेत्र में उनके द्वारा किया जाने वाला कार्य भी शामिल है, निभाती हैं। उनका ख्याल रखेंगे। ग्रामीण महिलाओं पर वर्तमान अधिनियम की व्यवस्थाओं को लागू करने के लिए सभी उपयुक्त उपाय करेंगे।

(2) ग्रामीण महिलाएँ पुरुषों और महिलाओं की समानता के आधार पर ग्रामीण विकास में भाग लें और उनसे लाभ उठाएँ, यह सुनिश्चित करने के लिए इस अधिनियम के पक्षकार राज्य ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के विरुद्ध विभेद को मिटाने के लिए सभी उपयुक्त उपाय करेंगे और खास तौर से ऐसी स्त्रियों के लिए निम्नलिखित अधिकार सुनिश्चित करेंगे –

(क) विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में सभी स्तरों पर भाग लेने का

अधिकार।

(ख) पर्याप्त स्वास्थ्य रक्षा, सुरक्षा सुविधाओं की, जिनमें परिवार नियोजन के क्षेत्र में सूचना परामर्श और सेवाओं का भी समावेश है।

(ग) सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों से लाभ उठाने का अधिकार।

(घ) सभी प्रकार का औपचारिक और अनौपचारिक प्रशिक्षण और शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार, जिसमें कार्यात्मक साक्षरता से संबंधित प्रशिक्षण और शिक्षा तथा साथ ही उनकी तकनीकी कुशलता बढ़ाने के लिए सामुदायिक और विस्तार सेवाओं के लाभों का भी समावेश है।

(ड.) रोजगार या स्वरोजगार के माध्यम से आर्थिक अवसरों की समान सुलभता प्राप्त करने के लिए स्वयं सहायता समूहों और सहकारी समितियों का संगठन करने का अधिकार।

(च) सभी सामुदायिक कार्यकलापों में भाग लेने का अधिकार।

अनुच्छेद 13 – इस अधिनियम के पक्षकार राज्य कानून के समक्ष महिलाओं को पुरुषों की तुलना में समानता प्रदान करेंगे।

अनुच्छेद 14 – इस अधिनियम के पक्षकार राज्य विवाह और पारिवारिक रिश्तों से संबंधित सभी मामलों में महिलाओं के विरुद्ध विभेद मिटाने के लिए उपयुक्त उपाय करेंगे। खास तौर से पुरुषों और महिलाओं की समानता के आधार पर निम्नलिखित समान अधिकार सुनिश्चित करेंगे

(क) विवाह करने के बारे में समान अधिकार।

(ख) स्वतंत्र रूप से अपना जीवनसाथी चुनने और दोनों की स्वतंत्रता और पूर्ण सहमति से विवाह संबंध स्थापित करने के बारे में समान अधिकार।

(ग) विवाह के दौरान और विवाह भंग होने पर समान अधिकार और दायित्व।

(घ) यहाँ उल्लेखित सभी मामलों में बच्चों के हितों को सर्वोपरि रखते हुए, बच्चों से संबंधित मामलों में माता-पिता के रूप में, चाहे उनके विवाह की वर्तमान स्थिति कुछ भी हो, समान अधिकार और दायित्व।

निष्कर्ष – भारतीय संदर्भ में महिलाओं कि स्थिति सुदृढ़ होते हुए भी कमजोर है, इसी बात को ध्यान में रखते हुए। सरकार ने भी महिलाओं के चहुमुखी विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलायें, जिससे महिलाऐं आधुनिक जीवन शैली के साथ जुडते हुए, देश के विकास में अपना योगदान दे सके। नारी के स्तर को सुधारने के लिए 'महिला आयोग' बहुत सी योजना बना रहा है। जिससे उसे रोजगार में समानता का अवसर, शिक्षा , स्वास्थ्य आदि का उत्तम प्रबंध किया गया है।

सुझाव –

- प्रत्येक महिला को ऊपर उठकर आना होगा । जिससे वह अपना अधिकार खुद मांग सकें।
- महिलाओं को उत्पादन स्त्रोतों शिक्षा, स्वस्थ्य, सम्पत्ति, सूचना एवं प्रौद्योगिकी में बराबरी का अधिकार दिया जाए ।
- प्रत्येक परिवार की यह जिम्मेदारी है कि बालिकाओं को समुचित शिक्षा, पोषण तथा अन्य गतिविधियों का ध्यान रखें।

सदंर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सरिता वशिष्ठ – महिला सशक्तिकरण कल्पना प्रकाशन नई दिल्ली 2010
2. आशारानी व्होरा – 'औरत कल आज और कल' कल्याणी शिक्षा परिषद नई दिल्ली 2005
3. प्रज्ञा शर्मा – 'महिला विकास और सशक्तिकरण' अविष्कार पब्लिर्शस डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर 2001
4. रेखा कस्तावर – 'स्त्री चिंतन की चुनौतियां' राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली 2006
5. मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल जुलाई 2003
6. डॉ. सुषमा पेढारकर, 'मध्यप्रदेश में महिला विकास की चुनौतियॉ' क्षेत्रीय विषमता और सामाजिक आर्थिक विकास मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2001
7. नेत्रा रावणकर – 'भारत में नारी सशक्तिकरण एवं महिला आरक्षण' मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन , मार्च 2011

****

खत्म हुआ इंतजार - मिला सबको सूचना का अधिकार

डॉ. मनीषा शर्मा * अनिल किशोर वर्मा **

प्रस्तावना – सूचना का अधिकार 21वीं सदी के प्रारंभ में जनसाधारण का एक अमूल्य उपहार है। लोकतंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को यह जानने का हक है कि सरकार अपने अधिकार का किस तरह इस्तेमाल कर रही है, जहां अभिव्यक्ति की आजादी का अधिकार नहीं होगा, वहां लोकतंत्र का कोई मतलब नहीं रह जाएगा। जब से संविधान के अनुच्छेद 21 तथा 19 (1)(क) अन्तर्गत प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता तथा वाक एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल अधिकार का उद्घोष किया गया है तब से 'सूचना के अधिकार' को अपरिहार्य माना जाने लगा है, क्योंकि इस अधिकार के बिना उपरोक्त दोनों स्वतंत्रताएं अपूर्ण लगती है। देश के विकास के लिए पारदर्शिता जवाबदेयता, संवेदनशीलता एवं उत्तरदायित्व ऐसे घटक है, जो आदर्श प्रतिमान स्थापित करते हैं। झूठ, चोरी, बेईमानी, भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार एवं घूसखोरी जैसे अनैतिक कार्यों को उजागर करने एवं काले कारनामें करने वाले लोगों, जिनमें जनप्रतिनिधि और प्रशासनिक पदों पर आसीन अधिकारियों का नकाब उतारने के लिए सूचना का अधिकार की आवश्यकता हुई।

सूचना का अधिकार - इतिहास –यह माना जाता है कि नागरिकों के अधिकार की विचारधारा पाश्चात्य देशों से आई है। स्वीडन विश्व का पहला देश है, स्वीडन की सरकार ने सन् 1766 में ही सूचना का अधिकार सर्वप्रथम लागू किया गया। वर्ष 1766 में 'फ्रीडम ऑफ प्रेस एक्ट' पारित हुआ, जिसमें लोक दस्तावेजों तक पहुंचने का अधिकार दिया गया। इसके पश्चात् 1949 में फ्रीडम ऑफ द प्रेस एक्ट 1949 के रूप में लागू किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1948 में घोषणा की जानकारी प्राप्त करने की इच्छा रखना, उसे प्राप्त करना तथा किसी व्यक्ति द्वारा जानकारी एवं विचारों का प्रसार करना मनुष्य का मौलिक अधिकार है। अमेरिका में प्रशासनिक प्रणाली अधिनियम, 1946 की धारा तीन में संशोधन के रूप में सूचना की स्वतंत्रता (Freedom of Information Act 1966) राष्ट्रपति लिल्वौन बी. जानसन द्वारा 4 जुलाई, 1966 को लागू किया। न्यूजीलैंड सरकार के द्वारा official Information Act 1982 एवं Privacy Act 1993 प्रभावीशील किए गए हैं। जनतंत्र प्रशासनिक व्यवस्था का जनक ग्रेट ब्रिटेन में सूचना की स्वतंत्रता का अधिनियम (Freedom of Information Act) नवंबर 2000 से प्रभावशील हुआ। कॉमन वेल्थ तथा कौंसिल ऑफ यूरो के द्वारा भी सूचना की स्वतंत्रता के अधिकार को महत्वपूर्ण मानव अधिकार माना गया है। अनेक देशों में इसे प्रभावशील किया गया है। विश्व के अधिकांश देश सूचना की स्वतंत्रता के अधिकार से संबंधित अधिनियम प्रभावशील कर चुके हैं। शासकीय तंत्र से संबंधित सूचनाएं प्राप्त करने की विचारधारा विश्वव्यापक हो चुकी है। जनतंत्रात्मक व्यवस्था में इसे नागरिकों के मौलिक अधिकार से संबंधित माना जाता है।

विश्व के प्रमुख देशों में सूचना का अधिकार

क्र.	राष्ट्र/देश	लागू वर्ष
01	स्वीडन	1766
02	फिनलैंड	1951
03	अमेरिका	1966
04	डेनमार्क	1970
05	नार्वे	1970
06	कनाडा	1978
07	फ्रांस	1978
08	नीदरलैंड	1978
09	आस्ट्रेलिया	1982
10	न्यूजीलैंड	1982
11	इटली	1990
12	थाइलैंड	1997
13	आयरलैंड	1998
14	ब्रिटेन	2000
15	दक्षिण अफ्रीका	2000
16	जापान	2001
17	पोलैंड	2002
18	जिम्बाब्वे	2002
19	पाकिस्तान	2002
20	जर्मनी	2005
21	भारत	2005
22	चीन	2008

भारत में सूचना का अधिकार – भारत में स्वतंत्रता पूर्व अंग्रेजी शासन में सरकारी गोपनीयता की आड़ में भारतीय नागरिकों को सरकारी जानकारी से वंचित रखा गया। आजादी के बाद भारत में नौकरशाही संस्कृति की वजह से गोपनीयता की चादर फैली हुई है। ये कुलीन लोग जनता से दूरी बनाए हुए है और एक कृत्रिम आवरण ने सच्चाई पर पर्दा डाल रखा है। सरकारी गोपनीयता कानून 1923 का हवाला देकर अब भी औपनिवेशक काल के कानून को वैधानिक बनाए रखा गया और देखा जाए तो यही गोपनीयता कानून सूचना के अधिकार के रास्ते का सबसे बड़ा रोड़ा था। आज से 93 वर्ष पहले 1923 में बना सरकारी गोपनीयता कानून 'ऑफिसियल सीक्रटस एक्ट की धाराएं 5 और 6 का फायदा उठाकर ही अभी तक सरकारी अधिकारी सूचनाओं को गोपनीय बनाए रखते थे, लेकिन सन् 1923 के अधिकार संबंधी विधेयक में धारा 5 और 6 गोपनीयता कानून (1923) संशोधित कर दिया गया है।

* प्राध्यापक, डॉ.राधा बाई, शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय, दूधाधारी मठ, रायपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी, पण्डित रविशंकर शुक्ला यूनिवर्सिटी, रायपुर (छ.ग.) भारत

भारत में सूचना का अधिकार अधिनियम संसद में जुलाई, 2000 में पेश किया गया। मार्च 2005 में इसे पुन: संसद के समक्ष पेश किया गया और 11 मई 2005 को लोकसभा में तथा 12 मई, 2005 को राज्यसभा में पारित कर दिया गया और 12 जून, 2005 को राष्ट्रपति ने अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी। इस प्रकार 12 अक्टूबर, 2005 से पूरे देश में (जम्मू कश्मीर को छोड़कर) सूचना का अधिकार कानून भारतीय नागरिकों को उपलब्ध है। भारतीय संसद द्धारा पारित सूचना के अधिकार से पहले कुछ भारतीय राज्यों द्धारा सूचना का अधिकार लागू कर दिया, इसमें तमिलनाडू देश का प्रथम राज्य है, जिसे सूचना का अधिकार अधिनियम बनाने और लागू करने का श्रेय जाता है। तमिलनाडू सरकार ने 17 अप्रैल, 1997 को विधेयक पेश किया और पारित कर दिया गया।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 देश में लागू होने से पूर्व ही देश के 9 राज्यों में सूचना का अधिकार कानून लागू हो चुका था।

क्र.	**प्रदेश**	**लागू होने का वर्ष**
01	तमिलनाडू	1997
02	गोवा	1997
03	राजस्थान	2000
04	कर्नाटक	2000
05	दिल्ली	2001
06	असम	2002
07	मध्यप्रदेश	2002
08	महाराष्ट्र	2002
09	जम्मू-कश्मीर	2004

भारतीय संविधान हर नागरिक को सामाजिक न्याय, समता और प्रतिष्ठा, बिना किसी भेदभाव के प्रदान करता है। भारत का संविधान लोकतंत्र पर आधारित संविधान है और लोकतांत्रिक संविधान का संरक्षण केवल जनता ही कर सकती है। इसके लिए जरूरी है कि जनता को शासन और प्रशासन की सम्पूर्ण जानकारी हो जो सूचना के अधिकार के माध्यम से प्राप्त कर सकता है। नि:संदेह सूचना का अधिकार एक ऐसा साधन है, जिसे भ्रष्टाचार जैसी लाईलाज हो गई बीमारी के ईलाज के लिए रामबाण कहां जा सकता है। यह अधिकार प्रशासन की पारदर्शिता उत्तरदायित्व और जवाबदेहित की दिशाओं में महत्वपूर्ण कदम है। सूचना का अधिकार प्रत्येक भारतीय नागरिक के लिए ऐसा कारगर अस्त्र है, जिससे वे शासन में न केवल अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकते हैं बल्कि शासन में पारदर्शिता को साकार कर इसका अधिकाधिक उपयोग ही भारत में भ्रष्टाचार मिटा सकता है। भ्रष्टाचार मिटते ही यह देश महान बन जाएगा और बस सबके लिए सूचना का अधिकार विधेयक के बारे में उसके उपयोग के बारे में और उसके महत्व के बारे में अधिकाधिक जागरूकता फैलाने की जरूरत है।

सूचना के अधिकार का कानून हाल वर्षो में बने सबसे चर्चित कानूनों में रहा है। इससे अनेक तरह के भ्रष्टाचार व घोटालों का पर्दाफाश करने में सहायता मिली है। इसके अतिरिक्त बहुत से नागरिकों को अपनी शिकायतों व समस्याओं के समाधान में भी सूचना का अधिकार के उपयोग से मदद मिली। इस सफलता के बावजूद सूचना के अधिकार के उपयोग में अनेक समस्याएं सामने आ रही है और कुछ समस्याएं अत्यधिक जटिल हो गई है। इन सब समस्याओं को दूर करने के लिए विभिन्न सुझाव पर विचार करना जरूरी है, जिससे सूचना का अधिकार एक मजबूत कड़ी के रूप में देश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

सुझाव -

1. सूचना के अधिकार की जानकारी का अधिकाधिक प्रसार।
2. सूचना के अधिकार की जानकारी विशेषकर महिलाओं तथा गांववासियों तक पहुंचाने पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।
3. सूचना के अधिकार की पहली अपील पर ध्यान नहीं दिया जाता है। इस स्थिति को सुधारने के लिए प्रयास करना चाहिए और साथ ही अपील पर ध्यान नहीं देने पर कठोरता से कार्यवाही करना चाहिए।
4. जानकारी प्राप्त करने वाले अनेक नागरिकों को डराया-धमकाया जाता है और कई बार उन पर जानलेवा हमले भी किए जाते हैं। उस पर कड़ी कार्रवाई की जानी चाहिए।
5. विभिन्न स्तरों पर जानकारी आनलाइन उपलब्ध कराना चाहिए।
6. सूचना न मिलने पर सूचना आयोगों में जो दूसरी अपील की जाती है, उसे कितने समय में निबटाना है, इसकी कोई कानूनी सीमा तय नहीं है।
7. कई बार सूचना आयोग के आदेशों की उपेक्षा होती है, वो नहीं होनी चाहिए। इसके लिए सूचना आयोग को उन विभागों पर अनुशासनहीनता की कार्यवाही करते हुए दंड का प्रावधान करना चाहिए।
8. क्या सरकारें वास्तव में सूचना के अधिकार को सशक्त करना चाहती है या नहीं।
9. सूचना के अधिकार को मजबूत करने के लिए और सूचना के अधिकार के कानून की रक्षा के लिए जन संगठन अपनी सक्रियता बनाए रखें।
10. राजनीतिक दलों पर सूचना के अधिकार को लागू करना चाहिए।

वर्तमान समय में आम जनमानस के लिए सूचना का अधिकार एक शक्तिरूपी हथियार है जो इस लोकतांत्रिक समाज के हित में सभी सूचनाएं प्राप्त करने, उसे जानने-समझने का अधिकार रखता है तथा सरकार चलाने वाले पर एक मजबूत शिकंजा बनाएं रखता है। ऐसी स्थिति में हम अपने अधिकारों का प्रयोग कर समाज को एक नई दिशा एवं दशाा दे सकते हैं, जो सूचना के अधिकार अधिनियम से संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बी. डोगरा - नई सदी, वर्ष 2015, अंक-2, पेज 57,58
2. डॉ. बसंतीलाल बाबेल - सूचना का अधिकार अधिनियम वर्ष 2007 पेज (V)
3. एस.पी त्रिवेदी - सूचना का अधिकार अधिनियम 2005, वर्ष 2008 पेज 19
4. डॉ. जनक सिंह मीणा - सूचना का अधिकार वर्ष 2015, पेज 13 से 16

****

महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूह की भूमिका

कृष्ण कुमार साकेत *

प्रस्तावना – 21वीं सदी में महिलाओं में नई चेतना व जागृति आई है। महिलाएं पुरूषों के कदम से कदम मिलाते हुए विकास के नए कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं। समाज का आज ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है , जहाँ महिलाओं ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज नहीं कराई हो। यह सत्य है कि आज नारी जीवन के हर मोड़ पर और समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अदम्य क्षमता एवं मानसिक परिपक्वता का परिचय दे रही है। आज महिलाओं की सोच और उनके विचारों में इतना गहरा परिवर्तन आया है कि वह घर की चार दिवारी को तोड़कर एवं उसकी चुनौती को सहजता से स्वीकार करके आगे बढ़ती जा रही है।

ग्रामीण महिलाओं को स्वाबलम्बी और आत्मनिर्भर बनाने में स्वयं सहायता समूह अहम भूमिका निभा रहे हैं। ग्रामीण महिलाएं इन समूहों से जुड़कर न केवल आर्थिक रूप से सशक्त हो रही है बल्कि इससे उनमे स्वाबलम्बन की प्रकृति भी बढ़ी है।निसंदेह रूपसे स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग बनकर ग्रामीण महिलाओं के लिए वरदान साबित हो रहा है।इस कार्यक्रम की वजह से महिलाओ की स्थिति में सामाजिक ,आर्थिक ,एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है। स्वयं सहायता समूहों के जरिये लघु वित्त प्राप्त करके महिलाएं गरीबी , बेरोजगारी एवं निरक्षरता के चक्रव्यह से निकलकर महिला सशक्तिकरण की दशा में कदम बढ़ रही है।

देशभर मे उभरे स्वयंसहायता समूहों के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण महिलाओं मे बचत को बढावा मिला है जिसके चलते उन्हें सूदखोरों से छुटकारा मिला है ।यही नहीं इन समूहों के जरिए जरूरत के समय उन्हें आसानी से ऋण मिल जाता है। दक्षिण भारत में आध्र प्रदेश, तामिलनाडू ,केरल आदि राज्यों मे लोग सरकार और गैर सरकारी संगठनों के सच्चे उत्साह और रूचि से आगे आने से स्वयंसहायता समूह की अवधारणा बेहद सफल हुई है।

महिलाओं को आर्थिक दृष्टिकोण से सबल बनाने के लिए केन्द एवं राज्य सरकार द्वारा निरतंर प्रयास किया जा रहा है। केन्द सरकार ने स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना के अलावा उग्रवाद प्रभावित जिलों में एक अतिरिक्त योजना स्वयं सहायता समूह सह बैंक सहबद्धता कार्यक्रम की शुरूआत की है। उग्रवाद प्रभावित जिलों में गरीबी उन्मूलन के लिए शुरू किए गए, इस विशेष डब्ल्यूएसएचजी कार्यक्रम के तहत अब तक छह हजार से ज्यादा स्वयं सहयता समूह का गठन किया जा चुका है। जबकि एसजीएसवाई के तहत पहले ही 29हजार से अधिक समूहों का गठन किया जा चुका है। समूह के माध्यम से महिलाओं का आर्थिक एवं सामाजिक दोनो तरह से विकास हो रहा है।इसी प्रकार अजीविका मिशन को अपनाकर कई राज्यों ने सावित किया है कि महिला स्वयं सहायता समूह के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक एवं सामाजिक बदलाव लाया जा सकता है। इस सफलता को देखते हुए अब ऐसा लगता है कि आजीविका मिशन को पूरे देश में तेजी से लागू किया जाना चहिए।

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने जून 2011 मे आजीविका मिशन कार्यक्रम शुरू किया है ।इसके तहत देश के छह लाख गांव ,2.5 लाख पंचायतों 6000ब्लाको एवं 600जिलों मे स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से 7करोड़ बीपीएल परिवारों को इसके दायरे में लाया गया, यह भी कहा गया है कि दुनिया में कोई दूसरा देश नहीं है जहां महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए ऐसी महत्वाकांक्षी और बडी योजना चलाई जा रही है।स्वयं सहायता समूहों के संवर्धन के लिए गैर सरकारी संगठनो को ब्याजमुक्त ऋण के रूप में वित्तीय सहयता उपलब्ध कराई जाती है। 1000सदस्यों के 50 स्वयं सहायता समूहों के संवर्धन के लिए अधिकतम 2.15लाख का ऋण उपलब्ध कराया जाता है। स्वयं सहायता समूहों द्वारा लिए गए ऋण का 25 प्रतिशत व उनकी बचत का 5प्रतिशत अनुदान के रूप दिया जाता है।

इन समूहों ने भारत सहित विश्व के विकासशील देशों में लाखों महिलाओं को ऐसा आत्मनिर्भर व्यवसायी बनाया है, जिनका अपने जीवन और भविष्य पर अधिक नियंत्रण है। स्वयं सहायता समूहों मे संगठित महिलाएं ऐसे कार्यो के लिए ऋण लेती है, जिनके द्वारा वे या तो अकेले आय अर्जित करती है या फिर इस कार्य के द्वारा अपने परिवार की आय को बढाती है ऐसी महिलाओं में विधवाएं , अकेली महिलाएं या बेरोजगार और बीमार पति की देखरेख करने वाली महिलाएं शामिल है स्वयं सहायता समूह महिलाओं का आय अर्जन करने वाली उद्यमी बनाने में मदद करती है ,बल्कि भविष्य के लिए कुछ पैसा बचाकर भी रखती है। कई मामले में इन समूहों ने घरेलू हिंसा और शोषण पर प्रभावकारी ढंग से रोक लगाई है।

रोहणी स्वयं सहायता समूह की सफलता को जिला पंचायत बालाघाट ने प्रदेश स्तर पर एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करने के लिए भोपल हाट में अपने उत्पाद के साथ भोपाल भेजा। यह समूह 250000/– का ऋण लेकर 125000/– अनुदान प्राप्त कर विकास की मुख्य धारा में शामिल हुआ। इसी प्रकार इन्दौर शहर के बलाई मोहल्ले की महिलाओं ने समूह के माध्यम से ऋण प्राप्त कर कई तरह के व्यवसाय चला रही है ।स्वयं सहायता समूहों से जुडकर महिलाएं शिक्षा ,स्वरोजगार ,कानूनी अधिकार, सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं ,स्वास्थ्य एवं पोषण के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर रही है।

निष्कर्ष रूप अगर कहा जाएं कि स्वयं सहायता समूह के निर्माण की योजना ने आर्थिक सशक्तिकरण के साथ ही ग्रामीण भारत की तस्वीर ही

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

बदल दी है तो अतिश्योक्ति नही होगी ।इनके जरिए आज न सिर्फ लोगो को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है बल्कि ये समूह सामाजिक कुरीतियों,नारी उत्पीडन तथा उंचनीच भावना को मिटाने मे भी कारगर भूमिका निभा रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एस अखिलेश(2012),भारतीय नारी कल और आज, गायत्री पब्लिकेशन रघवंश सदन शान्ति कुन्ज बिछिया ,रीवा (म.प्र), पेज न. 357,543
2. यादव चन्द्रभान(जुलाई 2013) ,कुरूक्षेत्र,पत्रिका ग्रामीण विकास मंत्रालय ,नई दिल्ली ,पेज न.10,11
3. जायसवाल तारा (मार्च 2007),स्व सहायता समूह मार्गदर्शिका,राज्य संसाधन केन्द प्रौढ शिक्षा भारतीय ग्रामीण महिला संघ इंदौर (म.प्र), पेज न. 21
4. सिन्हा आर. के. (2006),स्व सहायता समूह मार्गदर्शिका ,उद्यमिता विकास केन्द मघ्यप्रदेश (सेडमैप)भोपल (म.प्र),पेज न. 48

****

Role of Education in Empowering the Indian Women

Dr. Bharti Joshi *

Introduction - Women in India have always been topics of concern since ancient times. The family as well as the society at large considers them as second-class citizens. Though in one hand, the society talks about the respect of women and preach them in the name of Goddess Durga, Goddess Sarsvati, Goddess Parvati and Goddess Kali, on the other hand the society also abuse the women in the form of several evils like child marriage, female infanticide, Sati, sexual harassment and many more. Ramayana teaches that because Ravana abused Sita his entire empire was wiped out. Further, Mahabharata also teaches that the Kauravas were killed because they dishonored Draupadi in public. Women in ancient India enjoyed equivalent status and rights with men in all spheres of life. Women were properly educated in the early vedic period. References can be found in the works of Grammarians such as 'Patanjali' and 'Katyayana'. Women got married at a grown-up age and also had the liberty to select their husbands. Popular scriptures like Rig Veda and Upanishad mention about several women sides and seers. There are some kingdoms in ancient India, which had the customs such as 'nagarvadhu' that is the bride of the city. According to this tradition, women of a city competed to win the impressive title of 'nagarvadhu'. Amrapali is the most well known 'nagarvadhu'. Women in fact had superior position than male counterparts. It is also said that in this period women were really treated as Durga and Parvati. There was a particular thread ceremony in which girls were tied threads of honor-based on merit. Later this ceremony was replaced by 'child-marriage'. Child marriage by this time was started on a large scale. Girls were not permitted to gain education.

Modern India witnessed some developments in the status of women. There were many women reformers in India who worked for the betterment and upliftment of their other female counterparts. The begum of Bhopal discarded the 'Pardha' and fought in the revolt of 1957. Many reformers like Ishwar Chandra Vidyasagar, Jyotiba Phule with his wife Savitribai Phule undertook various measures to eradicate social stigmas from the society. Sir Sayyid Ahmad Khan established the Aligarh Muslim University for the spread of education among the Muslims. He also abolished the purdha system among Muslim women. Many Acts were passed for the upliftment of women among those Widow Remarriage Act of 1856 was important. In the modern times, women in India are given freedom and rights such as freedom of expression and equality, as well as right to get education. But still problems like dowry, female infanticide, sex selective abortions, health, domestic violence, are prevalent in the society.

History of Women's Education in India - Although in the Vedic period women had access to education in India, they had gradually lost this right. However, in the British period there was revival of interest in women's education in India. During this period, various socio religious movements led by eminent persons like Raja Ram Mohan Roy, Iswar Chandra Vidyasagar emphasized on women's education in India. Mahatma Jyotiba Phule, Periyar and Baba Saheb Ambedkar were leaders of the lower castes in India who took various initiatives to make education available to the women of India. However women's education got a fillip after the country got independence in 1947 and the government has taken various measures to provide education to all Indian women. As a result women's literacy rate has grown over the three decades and the growth of female literacy has in fact been higher than that of male literacy rate. While in 1971 only 22% of Indian women were literate, by the end of 2011 , 65.46% female were literate.

Major role of Education in Empowering the Indian Women - Women constitute almost half of the population in the world. But the hegemonic masculine ideology made them suffer a lot as they were denied equal opportunities in different parts of the world. The rise of feminist ideas has, however, led to the tremendous improvement of women's condition throughout the world in recent times. Access to education has been one of the most pressing demands of theses women's rights movements. Women's education in India has also been a major preoccupation of both the government and civil society as educated women can play a very important role in the development of the country.

Importance of Women's Education in India - Women's education in India plays a very important role in the overall development of the country. It not only helps in the development of half of the human resources, but in improving the quality of life at home and outside. Educated women not

* Head & Associate Professor (Department of Lifelong Learning) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA

only tend to promote education of their girl children, but also can provide better guidance to all their children. Moreover educated women can also help in the reduction of infant mortality rate and growth of the population. Gender discrimination still persists in India and lot more needs to be done in the field of women's education in India. The gap in the male-female literacy rate is just a simple indicator. While the male literary rate is more than 82.14% according to the 2011 census, the female literacy rate is just 65.46% Prevailing prejudices, low enrolment of girl child in the schools, engagements of girl children in domestic works and high dropout rate are major obstacles in the path of making all Indian women educated.

Education in India has a history stretching back to the ancient urban centres of learning at Tashkshila and Nalanda. Western education became ingrained into Indian society with the establishment of the British Raj. India has made a huge progress in terms of increasing primary education attendance rate and expanding literacy to approximately two thirds of the population. India's improved education system is often cited as one of the main contributors to the economic rise of India. Much of the progress in education has been credited to various private institutions. The private education market in India is estimated to be worth $40 billion in 2008 and will increase to $68 billion by 2012. However, India continues to face challenges. Despite growing investment in education, 40% of the population is illiterate and only 15% of the students reach high school. As of 2008, India's post-secondary high schools offer only enough seats for 7% of India's college-age population, 25% of teaching positions nationwide are vacant, and 57% of college professors lack either a master's or PhD degree. As of 2007,there are 1522 degree-granting engineering colleges in India with an annual student intake of 582,000,, plus 1,244 polytechnics with an annual intake of 265,000. However, these institutions face shortage of faculty and concerns have been raised over the quality of education.

Suggestions and Recommendations - Education in India falls under the control of both the Union Government and the states, with some responsibilities lying with the Union and the states having autonomy for others. The various articles of the Indian constitution provide for education as a fundamental right. Most universities in India are Union or State Government controlled.

1. Equal access to education for women and girls should be made mandatory. Special measures should be taken to eliminate discrimination, universalize education, eradicate illiteracy, create a gender-sensitive educational system, increase enrolment and retention rates of girls and improve the quality of education to facilitate life-long learning as well as development of occupation/ vocation/technical skills by women.
2. Government and NGO sector, organisations and individuals should come forward to provide free education for poor girls and provide free or low cost hostel facilities for girls studying in schools and colleges in every state of India. This will certainly encourage children of poor families to pursue good and higher education without much problems.
3. The departments of Lifelong Learning, schools of social work, departments of women studies, Women Universities and other educational institutions in hand with NGOs and social service organisations which support women upliftment and development such as Rotary Clubs , Lions Clubs , women lib organisations associations etc. can work together to improve the educational status of the womenfolk in India on mutual respect and understanding.
4. Government of India, NGOs and social service organisations should support the parents of children belonging to poor, underprivileged families to help them to understand the significance of education for their girl children as foundation for empowerment.
5. Government of India along with other supporting NGO's should make the enrolment mandatory for every girl in the realm of compulsory education.
6. The Ministry of Education both at Centre and State level should work out strategic steps to promote girls especially in rural, tribal and slums areas with the serious involvement of voluntary organisations in every locality to realize education with vocational skills among girls for her educational and economic empowerment.
7. Government has made appreciable efforts and has taken steps in reducing the gender gap in secondary and higher education. Sectoral time targets in existing policies will be achieved, with a special focus on girls and women,
8. particularly those belonging to weaker sections including the Scheduled Castes / Scheduled Tribes /Other Backward classes/Minorities.
9. Gender sensitive curricula will be developed at all levels of educational system in order to address sex stereotyping as one of the causes of gender discrimination.
10. Programmes needs to be initiated and promoted to bring about a greater involvement of women in science and technology. These will include measures to motivate girls to take up science and technology for higher education and also ensure that development projects with scientific and technical inputs involve women fully.

Special measures would be taken for their training in areas where women have special skills like communication and information technology. Efforts to develop appropriate technologies suited to women's needs as well as to reduce their bad condition.

The study concludes that women's empowerment in India is a process. It is the process by which women become social agents, defining and accomplishing their goals. It requires strong determination and a willingness to take proactive steps to achieve those goals. And it also requires institutional support from both women's organizations and the micro financial institutions that are in the best position to grant women the benefit of access to a physical resource and enable them to use it in a way that benefits their well-being, the well-being of their families, and the well-being of their community. Many national and international development organizations should take initiatives to this concept of accessibility.

It is important to educate and raise awareness of harmful traditional practices at all levels in society and modify the social and cultural attitudes of both men and women, with a view to eliminate customary practices based on the idea of the inferiority or superiority of either sex or on stereotyped roles of gender.

Empowerment is a moving state; it is a continuum that varies in degree of power. It is relative... One can move from an extreme state of absolute lack of power to the other extreme of having absolute power.

It is stated “it is a process in which women gain control over their own lives by knowing and claiming their rights at all levels of society at the international, local, and household levels. Self-empowerment means that women gain autonomy, are able to set their own agenda and are fully involved in the economic, political and social decision-making process “. Women empowerment can be achieved and established by proper education to women, her earning status that will contribute to her personal, family and society goals and also her emotional stability that will make her stand in all times of adversities and advancements. Women has the capacity to establish herself as an icon, which she has been proving since time of our ancestors till today’s modern time of social and technological development.

References :-

1. **Albertini,Velmarie L.**(2009): Social Networks and Community Support: Sustaining Women in need of community based Adult Education Programs, Journal articles; Report-New Directions for Adult and Continuing education n. 122,p 23-32,sum 2009
2. **Bryld, E. (2001):** Democratization, Volume 8, Issue 3 Autumn 2001 , pages 149 – 172
3. **DFID (2007):** Gender Equality Action Plan 2007-2009 making faster Progress to Gender Equality. A DFID Practice Paper, UK.
4. **Klasen, S. (2006):** UNDP’s Gender-related Measures: Some Conceptual Problems and Possible Solutions, Journal of Human Development, 7 (2), 243-274.
5. **Marcelle, G. (2002)**:Information and Communication Technologies (ICT) and their Impact on and use as an Instrument for the Advancement and Empowerment of Women.
6. **National Commission for Women, New Delhi. (1998):** Report on scheduled caste women in agriculture. New Delhi : NCW. 110 p.
7. **Nayak, Purusottam and Mahanta, Bidisha(2008):** Women Empowerment in India (December, 24, 2008). Available at SSRN: http:/ssrn.com
8. **Women in India(2010):** Informative & Research article on Women in India, free e- magazine, www.indianwomen .com
9. **World Bank. (2001):** Engendering Development: Through Gender Equality in Rights, Resources and Voice—Summary. Washington: World Bank. Retrieved 16 February 2004 from www.worldbank.org/gender/prr/ engendersummary.pdf
10. **World Bank Institute (2007)**: Empowerment in Practice: Analysis and Implementation – A World Bank Learning Module.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Some Classroom Activities to Improve Spoken English

Mohan Lal Kalal * Prof. G. S. Rathore **

Abstract - English is now a global language. Developing English speaking skills among the learners can really give them opportunity to share their ideas with the world. Spoken English has become the gateway through which one can make one's career. So, teaching speaking is a very important part of second language learning. The ability to communicate in a second language clearly and efficiently contributes to the success of the learner in school as well as later in several phases of life. Therefore, it is essential that language teachers pay great attention to teaching speaking. Some classroom activities like Phonetic Technique, Imitation Technique, Discussions, Role-play, etc. can be performed to improve English speaking. These activities make students more active in the learning process and at the same time make their learning more meaningful by adding fun.
Key Words - phonetics, phonology, intonation, lingua phone, intelligible ,brainstorming, R.P.

Introduction - Communication has always been an effective way of bringing people of different countries, nationalities and cultures together. Developing English language communication skills among the learners really may give them opportunity to share their ideas with the world. It is natural that some language obstacles always appear in communication which even hinders the improvement of the relationship between the aliens. English for the historical reasons has already been widely used throughout the world for many years. Apart from that, oral English helps a country to set up strong diplomatic relations with others. Numerous attempts have been made to classify the functions of speaking in human interaction. Brown and Yule (1983) made a useful distinction between the interactional functions of speaking (in which it serves to establish and maintain social relations), and the transactional functions (which focus on the exchange of information)[1]. Therefore, it can be rightly said that knowledge in Spoken English is in high demand and it is bound to grow in future.

Need of Spoken English - Speaking is "the process of building and sharing meaning through the use of verbal and non-verbal symbols, in a variety of contexts".[2] Speaking is a crucial part of second language teaching/learning. Despite its importance, for many years, teaching speaking has been undervalued and English language teachers have continued to teach speaking just as a repetition of drills or memorization of dialogues. However, today's world requires that the goal of teaching speaking should improve students' communicative skills, because, only in that way, can students express themselves and learn how to follow the social and cultural rules appropriate in different communicative situations. Access to spoken English enables us to express our ideas, views, thoughts and emotions to others, to obtain information, to solve problems, etc. Spoken English has become the gateway through which one can make one's career. In metropolitan cities like Delhi, Mumbai, Kolkata, Chennai, Hyderabad etc., the demand for the spoken English is high. Institutes of spoken English are growing like mushrooms. Their growth is an evidence of how much demand for spoken English is there in the country. Keeping in mind the demand for spoken English in the market many state governments have come up with some remedial courses for developing the basis communication skills in English. Even at the university level of education some crash courses of proficiency courses in English are offered. In many countries where English is not the native language, one is considered highly educated if one can speak the language properly. The ability to speak English appropriately and fluently is seen as an essential requirement in academic and professional fields. Opportunities are limitless for those who can speak English.

Teaching of Speaking - The mastery of speaking skills in English is a priority for many second or foreign language learners. Consequently learners often evaluate their success in language learning as well as the effectiveness of their English course on the basis of how well they feel they have improved in their spoken language proficiency. Oral skills have gained momentum in EFL/ESL courses (we can witness a huge number of conversation and other speaking course books in the market) though how best to approach the teaching of oral skills has long been the focus of methodological debate. Teachers and textbooks make use of a variety of approaches, ranging from direct approaches focusing on specific features of oral interaction (e.g. turn-taking, topic management, questioning strategies) to indirect approaches which create conditions for oral interaction

* Research Scholar (English) Pacific University, Udaipur (Raj) INDIA
** Formerly Professor (English) College of Arts & Science, Omar Al-Mukhtar University, Tobruk (Libya)

through group work, task work and other strategies.[3]

Teaching speaking is to teach ESL learners to -

- Produce English speech sounds and sound patterns
- Use word and sentence stress, intonation patterns and the rhythm of the second language.
- Select appropriate words and sentences according to the proper social setting, audience, situation and subject matter.
- Organize their thoughts in a meaningful and logical sequence.
- Use language as a means of expressing values and judgments.
- Use the language quickly and confidently with few unnatural pauses, which is called fluency.[4]

Therefore, it is necessary for the teacher to create an atmosphere of English by talking and teaching in English. But this is not all. There are some other things like ample vocabulary, knowledge of English idioms, correct pronunciation, the company of an English-speaking person(s). Use of radio, lingua phone and other audio-visual aids in teaching English also help in acquiring fluency in speaking English.

Some Activities to Improve English Speaking - Here are a few useful classroom activities suggested -

(i) Phonetic Technique - The alphabet which we use to write English has 26 letters but English has 44 sounds. Inevitably, English spelling is not a reliable guide to pronunciation because:

- Some letters have more than one sound.
- Sometimes letters are not pronounced at all.
- The same sound may be represented by different letters.
- Sometimes syllables indicated by the spelling are not pronounced at all.

The letters of the alphabet can be a poor guide to pronunciation. In contrast, phonetic symbols are a totally reliable guide. Each symbol represents one sound consistently. Using this technique, the students can be taught pronunciation by giving them knowledge of English phonology. They should be taught the forty-four sounds of English with their phonemic symbols and how these sounds are produced by different speech organs. The teacher should explain the ways/rules of producing sounds. He should give them practice of different vowel and consonant sounds using certain sets to be practised.

This technique is based on scientific principles. Therefore there are no chances of distorted pronunciation. It develops a feeling of self-dependency among students. The learner can himself evaluate the correctness of his pronunciation. Students can become independent learners. They can see that two words differ, or are the same, in pronunciation. For example they can see that 'son' and 'sun' must be pronounced the same way because the phonemic symbols are the same. They can use dictionaries and can get the maximum information.

(ii) Imitation Technique - The teacher should write the word, sentence and then dialogue on the blackboard and give a model pronunciation. Students perceive the pronunciation and try to pronounce the word or sentence exactly as the teacher has pronounced. If the teacher finds the pronunciation incorrect, he should give them feedback. Then he should give them enough drill, individually as well as in group. His first duty is to teach the students to speak English and the aim in this respect is to teach them to speak approximately like the English. It is his duty to see them pronounce English words and sentences correctly. Then each successive day of study he should implant deeper habits of pronunciation. It should be his aim from the very first to get the pupils' pronunciation of English absolutely correct. The teacher knows that Indians cannot speak English like Englishmen. Hence, his aim should be to teach an intelligible rather than the R.P. pronunciation. In other words, he should aim at teaching near pronunciation. If we achieve this aim, our pupils will make themselves readily understood by their listeners.

This technique is very natural because it is based on psychological principles. It takes less time. It emphasizes on exercise. Every child whether normal or retarded can be benefited by this technique.

(iii) Discussions - After a content-based lesson, a discussion can be held for various reasons. The students may aim to arrive at a conclusion, share ideas about an event, or find solutions in their discussion groups. Before the discussion, it is essential that the purpose of the discussion activity is set by the teacher. In this way, the discussion points are relevant to this purpose, so that students do not spend their time chatting with each other about irrelevant things. For example, students can become involved in agree/disagree discussions. In this type of discussions, the teacher can form groups of students, preferably 4 or 5 in each group, and provide controversial sentences like "People learn best when they read" versus "People learn best when they travel". Then each group works on the topic for a given time period, and presents their opinions to the class. It is essential that the speaking should be equally divided among group members. At the end, the class decides on the winning group who defended the idea in the best way. This activity fosters critical thinking and quick decision making, and students learn how to express and justify themselves in polite ways while disagreeing with others. For efficient group discussions, it is always better not to form large groups, because quiet students may avoid contributing in large groups. The group members can be either assigned by the teacher or the students may determine it for themselves, but groups should be rearranged in every discussion activity so that students can work with various types/levels of students and learn to be open to different ideas. Lastly, in class or group discussions, whatever the aim is, the students should always be encouraged to ask questions, paraphrase ideas, express support, ask for clarification, and so on.

(iv) Role-play - One other way of getting students to speak is role-playing. Students pretend they are in various social contexts and have a variety of social roles. In role-play activities, the teacher gives information to the learners such as who they are and what they think or feel. Thus, the teacher can tell a student, "You are David. You go to the doctor and tell him what happened last night, and…"[5]

(v) Storytelling - Students can briefly summarize a tale or story they heard from somebody beforehand, or they may create their own stories to tell their classmates. Story telling fosters creative thinking. It also helps students express ideas in the format of a beginning, development, and an end, including the characters and the setting a story has to have. Students also can tell riddles or jokes. For instance, at the very beginning of each class session, the teacher may call a few students to tell short riddles or jokes as an opening. In this way, not only will the teacher address students' speaking ability, but also get the attention of the class.

(vi) Interviews - Students can conduct interviews on selected topics with various people. It is a good idea that the teacher provides a rubric to students so that they know what type of questions they can ask or what path to follow, but students should prepare their own interview questions. Conducting interviews with people gives students a chance to practise their speaking ability not only in the class but also outside and helps them become socialized. After interviews, each student can present his/her information about the interviewee to the class. Moreover, students can interview each other and "introduce" his/her partner to the class.

(vii) Story Completion - This is a very enjoyable, whole-class, free-speaking activity for which students sit in a circle. For this activity, a teacher starts to tell a story, but after a few sentences he/she stops narrating. Then, each student starts to narrate further from the point where the previous one stopped. Each student is supposed to add from four to ten sentences. Students can add new characters, events, descriptions, and so on.

(viii) Picture Describing - Another way to make use of pictures in a speaking activity is to give students just one picture and having them describe what it is in the picture. For this activity students can form groups and each group is given a different picture. Students discuss the picture with their groups, then a spokesperson for each group describes the picture to the whole class. This activity fosters the creativity and imagination of the learners as well as their public speaking skills.

(ix) Find the Difference - For this activity students can work in pairs and each couple is given two different pictures, for example, a picture of boys playing football and another picture of girls playing tennis. Students in pairs discuss the similarities and/or differences in the pictures.

(x) Brainstorming - On a given topic, students can produce ideas in a limited time. Depending on the context, either individual or group brainstorming is effective and learners generate ideas quickly and freely. The good characteristics of brainstorming is that the students are not criticized for their ideas so that they will be open to sharing new ideas.

Conclusion - Teaching speaking is a very important aspect of second language learning. The ability to communicate in a second language clearly and efficiently contributes to the success of the learner in school and also later in several phases of life. Therefore, it is essential that language teachers pay greater attention to teaching speaking. Rather than leading students to pure memorization, providing a rich environment where meaningful communication takes place is desired. With this aim, various speaking activities such as those listed above can contribute a great deal in developing students' basic interactive skills necessary for life. These activities make students more active in the learning process and at the same time make their learning more meaningful and enjoyable.

References :-

1. Gillian Brown and George Yule, Teaching the Spoken Language (Cambridge: Cambridge University Press, 1983).
2. A. L. Chaney and T. L. Burk, Teaching Oral Communication in Grades K-8, Boston: Allyn & Bacon, 1998.
3. Jack C. Richards, "Conversationally Speaking : Approaches to the Teaching of Conversation", in Jack C Richards, The Language Teaching Matrix (New York : Cambridge University Press, 1990) 67-85.
4. D. Nunan, Practical English Language Teaching, (NY : McGraw-Hill, 2003).
5. J. Harmer, The Practice of English Language Teaching, (London : Longman, 1984).

****

Folk Litearture : Meaning, Concept And Characterstics

Dr. Mahipal Singh Rao * Lokesh Bhat **

Introduction - Folk literature includes all the myths, legends, epics, fables, and folktales passed down by word of mouth through the generations. The authors of traditional **literature** are usually unknown or unidentifiable.

Folk culture refers to the unifying expressive components of everyday life as enacted by localized, tradition-bound groups.[2] Earlier conceptualizations of folk culture focused primarily on traditions practiced by small foot, homogeneous, rural groups living in relative isolation from other groups.[3] Today, however, folk culture is more inclusively recognized as a dynamic representation of both modern and rural constituents.[4] Historically, handed down through oral tradition and now increasingly through dynamic computer-mediated communication, it relates to the cultivation of community and group identity. Folk culture is quite often imbued with a sense of place. If elements of a folk culture are copied by, or moved to, a foreign locale, they will still carry strong connotations of their original place of creation.

The above-mentioned have entered mainstream consciousness to varying degrees, but none have been so distorted from their original form as to have lost their culturally specific sense of place. In contrast, blue jeans and McDonald's are cultural icons which have been made so internationalized they have lost their original sense of place, and they are no longer part of folk culture. Similarly, Federalist architecture *was* created in the United States, but in a style influenced by, and meant to appeal to, outside interests.

Folk culture has always informed pop culture and even high culture. The minuet dance of European court society was based on the dance of peasants. More recently, the archetypal costume of the cowboy has been reinvented in gleaming silver by disco dancers and strippers, and the consciously ascetic culture of the Amish has been portrayed for comic value in Hollywood films and reality shows.

It is the emphasis on looking inward without reference to the outside that separates folk culture from pop culture.

The **folklore of India** compasses the folklore of the nation of India and the Indian subcontinent. The subcontinent of India contains a wide diversity of ethnic, linguistic, and religious groups. Given this diversity, it is difficult to generalize widely about the folklore of India as a unit.

Hinduism, the religion of the majority of the citizens of India, is a heterogeneous faith whose local manifestations are diverse. Folk religion in Hinduism may explain the rationale behind local religious practices, and contain local myths that explain the existence of local religious customs or the location of temples. These sorts of local variation have a higher status in Hinduism than comparable customs would have in religions such as Christianity or Islam. However, folklore as currently understood goes beyond religious or supernatural beliefs and practices, and compasses the entire body of social tradition whose chief vehicle of transmission is oral or outside institutional channels.

What is a folk tradition?

Folk culture refers to the unifying expressive components of everyday life as enacted by localized, **tradition**-bound groups. Earlier conceptualizations of **folk** culture focused primarily on **traditions** practiced by small foot, homogeneous, rural groups living in relative isolation from other groups.

Folk art of India - The folk and tribal arts of India speak volumes about the country's rich heritage.[1] Art forms in India have been exquisite and explicit. Folk art forms include various schools of art like the Mughal school, Rajsthani school, etc. Each school has its distinct style of color combinations or figures and its features. Other popular folk art forms include madhubani paintings from bihar and warli paintings from Maharashtra. Tanjore paintings from southern India incorporate real gold into their paintings.

The culture of India has been broken down into five main geographical regions

Some famous folk and tribal arts of India include:

1. Tanjore Art
2. Madhubani Painting
3. Warli Folk Painting
4. Pattachitra Painting
5. Rajasthani Miniature Painting
6. Kalamezhuthu

Folktales of India - See also: Birbal, Bidpai, and List of Folktales of Chhattisgarh.

India possesses a large body of heroic ballads and epic poetry preserved in oral tradition, both in Sanskrit and the various vernacular languages of India. One such oral epic,

* Lecturer, Guru Govind Govt College, Banswara (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

telling the story of Pabuji, has been collected by Dr. John Smith from Rajasthan; it is a long poem in the Rajasthani language, traditionally told by professional story tellers, known as Bhopas, who deliver it in front of a tapestry that depicts the characters of the story, and functions as a portable temple, accompanied by a *ravanhattho* fiddle. The title character was a historical figure, a Rajput prince, who has been deified in Rajasthan. [1]

Other noteworthy collections of Indian traditional stories include the *Panchatantra*, a collection of traditional narratives made by Vishnu Sarma in the second century BC. The *Hitopadesha* of Narayana is a collection of anthropomorphic fabliaux, animal fables, in Sanskrit, compiled in the ninth century. Indian folklorists during the last thirty years have substantially contributed to the study of folklore. Devendra Satyarthi, Krishna Dev Upadyhayaya, Prafulla Dutta Goswami, Kunja Bihari Dash, Ashutosh Bhatacharya and many more senior folklorists have contributed for the study of folklore. But it is during the 1970s that some folklorists studied in US universities and trained up themselves with the modern theories and methods of folklore research and set a new trend of folklore study in India. Especially, south Indian universities advocated for folklore as a discipline in the universities and hundreds of scholars trained up on folklore. AK Ramanjuan was the noted folklorist to analyse folklore from Indian context.

Study of folklore was strengthened by two stremas (sicsic); one is Finnish folklorist Lauri Honko and another is Peter J. Claus of American folklore. These two folklorists conducted their field work on Epic of Siri and led the Indian folklorists to the new folklore study. The Central Institute of Indian Languages has played a major role in promoting folklore studies in India to explore another reality of Indian culture.

Recently scholars such as Chitrasen Pasayat, M. D. Muthukumaraswamy, Vivek Rai, Jawaharlal Handoo, Birendranath Dutta, P. C. Pattanaik, B. Reddy, Sadhana Naithani, P. Subachary, Molly Kaushal, Shyam Sundar Mahapatra, Bhabagrahi Mishra and many new folklorists have contributed in their respective field for shaping folklore study as a strong discipline in representing the people's memory and people's voice. Recently the National Folklore Support Center in Chennai has taken the initiative to promote folklore in public domain and bridging the gap of academic domain and community domain.

Indian folk heroes, villains, and tricksters - Indian folk heroes in Sanskrit epics and history and also in freedom movement are well known to every one. They have found a place in written literature. But in Indian cultural sub-system, Indian folk heroes are most popular. The castes and tribes of India have maintained their diversities of culture through their language and religion and customs. So in addition to national heroes, regional heroes and local folk and tribal heroes are alive in the collective memory of the people. Let's take examples of the Santals or the Gonds. The Santals have their culture hero "Beer Kherwal" and "Bidu Chandan". Gonds have their folk hero "Chital Singh Chatri". Banjara folk hero is "Lakha Banjara" or "Raja Isalu".

But not only heroes, the heroines of Indian folklore have also significant contribution in shaping the culture of India. Banjara epics are heroine-centric. These epics reflect the "sati" cult.

Oral epics with heroic actions of heroes and heroines produce a "counter text", as opposed to the written texts. Therefore, the younger brother becomes hero and kill his elder brother in an oral epic, which is forbidden in classical epics. Folk heroes are some times deified and are worshipped in the village. There is a thin difference of a mythic hero and romantic hero in Indian folklore. In Kalahandi, oral epics are available among the ethnic singers, performed in ritual context and social context. Dr Mahendra Mishra, a folklorist, has conducted research on oral epics in Kalahandi, taking seven ethnic groups. Dr. Chitrasen Pasayat has made an extensive study of different folk and tribal forms of Yatra, like Dhanu yatra, Kandhen-budhi yatra, Chuda-khai yatra, Sulia yatra, Patkhanda yatra, Budha-dangar yatra, Khandabasa yatra, Chhatar yatra, Sital-sasthi yatra and examined the 'hero characters' of the local deities.

Indian oral epics are found abundantly everywhere there are caste based culture. Prof. Lauri Honko from Turku, Finland with Prof. Vivek Rai and Dr K Chinnapa Gawda have conducted extensive field work and research on Siri Epic and have come out with three volumes on Siri epics. Similarly Prof. Peter J Claus has done intensive work on Tulu epics. Aditya Mallick on Devnarayan epic, Pulikonda Subbachary on Jambupurana, Dr JD Smith on Pabuji epic are some of the commendable work that have been drawn attention of the wider readership.

Characterstics Of Folktales - Folktales employ certain characteristics or conventions common to virtually all tales. The most familiar involve the setting, character, plot, theme and conflict, and style.

A. Setting

1. Most folktale settings **remove the tale from the real world**, taking us to a time and place where animals talk, witches and wizards roam, and magic spells are commonplace.
2. The settings are usually **unimportant** and **described and referred to in vague terms** (e.g., "Long ago in a land far away…" and "Once upon a time in a dark forest…").
3. Some settings reflect the typical landscape of **the tale's culture**, for example, medieval Europe with its forests, castles, and cottages, Africa with its jungles, India and China with its splendid palaces.

B. Character

1. The characters in folk literature are usually **flat**, **simple**, and **straightforward**. They are typically either completely good or entirely evil and easy to identify. They do not internalize their feelings and seldom are plagued by mental torment.
2. **Motivation** in folktale characters tends to be **singular**; that is, the characters are motivated by one overriding desire such as greed, love, fear, hatred, and jealousy.

3. The characters are usually **stereotypical**, for example, wicked stepmothers, weak-willed fathers, jealous siblings, faithful friends. Physical appearance often readily defines the characters, but disguises are common.
4. The **hero** or **heroine** is often **isolated** and is usually **cast out** into the open world or is apparently without any human friends. Evil, on the other hand, seems overwhelming. Therefore, the hero/heroine must be **aided by supernatural forces**, such as a magical object or an enchanted creature, to fight against evil forces.

C. Plot

1. Plots are generally **shorter** and **simpler** than in other genres of literature.
2. The action tends to be **formulaic**. A **journey** is common (and is usually symbolic of the protagonist's journey to self-discovery). **Repetitious patterns** are found, suggesting the **ritual nature** of folktales and perhaps to aid the storyteller in memorization; for example, events often occur in sets of **three** (e.g., three pigs, three bears, three sisters, three wishes),
3. The action is **concentrated**, no lengthy explanations and descriptions. Conflicts are quickly established and **events move swiftly to their conclusion**. The action never slows down. **Endings are almost always happy** ("They lived happily ever after").

D. Theme and Conflict

1. Themes in folk literature are usually quite **simple**, but **serious** and **powerful**. Folktale themes espouse **the virtues of compassion, generosity,** and **humility** over the vices of greed, selfishness, and excessive pride.
2. Common folktale themes include the following (pp. 160-161):

a. The struggle to achieve autonomy or to break away from parents ("Beauty and the Beast")
b. The undertaking of a rite of passage ("Rapunzel")
c. The discovery of loneliness on a journey to maturity ("Hansel and Gretel")
d. The anxiety over the failure to meet a parent's expectations ("Jack and the Beanstalk")
e. The anxiety over one's displacement by another – the "new arrival" ("Cinderella")

3. These themes are **at the very heart of growing up.** Also, they are similar to the themes of Greek tragedy: **Wisdom comes through suffering**. For every benefit there is a condition; nothing in life comes without strings attached, responsibilities to be met, and bargains to be kept.

E. Style

1. The language is typically **economical**, with a minimal amount of description and a heavy reliance on **formulaic patterns**, e.g., conventional openings and closings.
2. **Repetitious phrases** are common; they supply a **rhythmical quality** desirable in oral tales and perhaps aided in memorization the stories.
3. **Dialogue** is frequently used; it captures the nature of the character speaking.
4. Folktales often use a technique – **stylized intensification**, which occurs when, with each repetition, an element is further exaggerated or intensified. This has the effect of increasing the drama.
5. Folktale **motifs** (i.e., recurring thematic elements) are quite **prevalent**; they may have served as **mnemonic devices** when the tales were still passed on orally. Examples of common motifs include journeys through dark forests, enchanted transformations, magical cures or other spells, encounters with helpful animals or mysterious creatures, foolish bargains, impossible tasks, clever deceptions, and so on.
6. Some folktales have **powerful visual images** that we can readily identify, such as a glass slipper, a bean stalk, a spinning wheel, a poisoned apple, a red riding hood, a magic lamp, and a blue bird. These **stark visual elements** give the tales their **enduring strength**.
7. Many folktale **motifs** (i.e., recurring thematic elements) are examples of **magic:** helpful animals, enchanted transformations, granted wishes, etc. The magic, when it appears, is always greeted by the characters with **matter-of-factness**. Characters acknowledge magic as a normal part of life without surprise or disbelief. This stylistic feature distances the folktale from reality, and it provides **an important distinction between folk literature and literary/modern fantasy**.
8. Folktales often lift their heroes and heroines to **higher and more refined levels** where they remain beautiful, noble, and pure through **the process of sublimation**.

References :-

1. Indian Folk Epics: Kannada Dr. C.N. Ramachandran. Retrieved September 15, 2008.
2. Visnu Sarma, The Panachatantra, translated from the Sanskrit by Chandra Rajan, (London: Penguin Books, 1993). (This translation is from the Jain monk Purnabhadra's 1199 C.E. so-called North Western Family Sanskrit text that blends and rearranges at least three earlier versions.)
3. Panachatantra translated from the Sanskrit by Arthur W Ryder, (Bombay: Jaico Publishing House, 1949) (from Ryder's esteemed original 1924 translation, also from the 1199 C.E. North Western Family text.)
4. The Panachatantra, The Book of India's Folk Wisdom, translated from the Sanskrit by Patrick Olivelle, (Oxford, UK: Oxford University Press, 1997) (This translation is from the so-called Southern Family Sanskrit text, as is Franklin Edgerton's equally esteemed 1924 version [see Note 21 below].)
5. Krishna Dharma. Panchatantra - A vivid retelling of India's most famous collection of fables. (Badger CA: Torchlight Publishing, 2004). (Accessible popular compilation derived from a Sanskrit text with reference to the aforementioned translations by Chandra Rajan and Patrick Olivelle.)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Robert Browning's Monologue 'Rabbi Ben Ezra'- A lucid Expression

Dr. Anamika Sharma *

Abstract - Robert Browing was a robust optimist and he always looked at the future with hope and joy. His dramatic monologue strikes lyrical quality which consists of individual emotions and sweet rythmatic music. The present study is an attempt to reveal the lucid and clear expressions of the poet in his dramatic monologue Rabbi Ben Ezra, which may be a little difficult but there is certainly no obscurity in it.

Rabbi Ben Ezra - A Lucid expression of experience - Robert Browning's optimism is really highly admirable because he retained his faith and courage in a world of doubt and timidity. His energy, his cheerfulness, his faith and courage in life awaits us beyond the portal of death. Robert Browning made his monologues to reveal the psychological state of characteristic mind. The dramatic monologue is his characteristic art form.

In the context of the "Rabbi Ben Ezra" a great cration with the four important aspects of Browning's philosophy i.e., faith in the organic wholesome of human life, the value of struggle, faith in death and faith in god and immortality. All these four aspects are revealed very clearly in the dramatic monologue "Rabbi Ben Ezra".

Rabbi is a speaker in this monologue. But as a matter of fact, he is the mouthpiece of Browning. An old man advises aging people not to be afraid of their approaching old age. They should live the life of old age according to his point of view. They should consider old age as the best part of their life. It is the matures phase of life which begun in youth. In the scriptures God says that he has planned man's life as one whole. So youth reflects only half of its nature. Man should therefore trust God and welcome age without any fear.

"……..A whole planned, youth shows but half;
trust God; see all, nor be afraid."

Robert Browing very clearly depicted his own experiences certainly without any obscurity in it. Youth is a period of wild desires, indecisions, romantic imagination deluding hopes and fears as well. But Rabbi Ben Ezra does not slight youth an account of these things. He rather regards them as the attributes of the human soul, which distinguishes man from low creatures. If man were born only to feed himself on food and joy, he would be akin to animals, not superior to them. By virtue of our soul we are related to God. So we should rejoice at having divine soul in us.

Browning was an optimist but his optimism is not blind. He does not shut his eyes to the sufferings and evil of life. It is not a cheap optimism while it is the reality of life. That's why in a very lucid manner, he told in his wonderful monologue Rabbi Ben Ezra that the God is giver and man is receiver. Happiness or sorrow, fortune or mistortune every things comes from God. We should welcome therefore each rebuff or each misfortune, which disturbs our calm and makes the course of our life rough. We should greet the sting of each hardship which commands us but go ahead, and not to sit or rest. Even if a joy is available in the one third part of sorrow, we should struggle and make great efforts to buy it and consider the bargain cheap.

Rabbi Ben Ezra thanks to God for all the knowledge and experiences gained in the youth period. This opportunity leads him to his wisdom of old age. Now he believes that the youth is period of struggle and efforts. Old age here is being compared with pure gold and youth with impure gold. In old age the impurities of gold is estimated old age is the period to distinguish between good and evil, noble and petty.

Robert browning's philosophy of life depicts here the sole aim of life for the perfection to get the noble knowledge and sublime thoughts He considers the God as eternal potter and time his revolving wheel and soul is the clay. Very rythmatically and philosophically he says the wheel of time spins fast and soul lies passively on the wheel. So we should surrender ourselves in the hands of God…..We must pray to God to make us defectless for the purpose of next life.

Conclusion - The above study concludes that the "Rabbi Ben Ezra" is the piece of great reflective poetry. On the whole it is the greatest poem of Victorian age. The poets optimism arises from his deep faith in God. His lucid and clear expressions reveals his belief in immortality and divine providence.

References :-

1. Browning, Poet and man, by E.L. Cary (New York, 1899)
2. Browning studies, By Edward Berode (London. 1895)
3. The Poetry of Robert Browning, by stopford Brooke (New York, 1902)
4. Browning's Message to his times, by Edward Berode (London, 1897).

* 268/1, Desai Nagar, Ujjain (M.P.) INDIA

अलका सरावगी के उपन्यासों में कथानक का संक्षिप्त स्वरूप

रेबेक्का जिरसांगकिमी *

प्रस्तावना – कथानक एक ऐसा निश्चित अनिवार्य साहित्यिक परिभाषिक शब्द है, जो कथा साहित्य की सभी विधाओं में व्यवहार्य है। कथानक उपन्यास का मूलभूत अंग है। उपन्यास की रीढ़ कथानक है, जिसके सहारे उसका मूल ढाँचा स्थिर रह सकता है। एकसूत्रता कथानक की प्रारंभिक एवं मूल विशेषता है। दूसरे शब्दों में कथानक घटनाओं का वह संगठनात्मक स्वरूप है जिसके सहारे उपन्यास का सृजन होता है। अल्का सरावगी का उपन्यासों का कथा लेखन सामाजिक, सांस्कृतिक का आदर्श प्रस्तुत करता है और अपने कथा साहित्य में जीवन के उन पक्षों को उद्घाटित करने का प्रयास किया है जो व्यक्ति की जिंदगी में हर पल घटित होते हैं। साथ में महानगरीय जीवन की त्रासदी का कलेवर खोलता है। भारतीय समाज के लोग देहातों से कस्बों से नगरों से महानगरों में बसते गए हैं। जैसे-जैसे लोगों की जीवन शैली में अंतर आया, वैसे-वैसे उनके जीवन के संघर्ष और भी बढ़ते गए। बदलते परिवेश के कारण पारिवारिक जीवन के भावुकता के ताने बाने खो गए हैं। अल्का सरावगी ने अपने उपन्यासों में जिंदगी को भिन्न-भिन्न तरीके से लेखन का आधार बनाया है। कथाकार यथार्थ का जितना अधिक साक्षात् करता है उसका लेखन उतना ही प्रभावशाली होता है। अल्का सरावगी के कथा वस्तु की नवीनता का कारण यह है कि इन्होंने प्रत्येक रचना में मुख्य कथा के साथ-साथ गौण कथाओं को भी अहमियत दी है।

कलि-कथा - वाया बाइपास-'कलि-कथा - वाया बाइपास' किशोर बाबू की कहानी है। दिल के बाइपास ऑपरेशन के बाद वह अपनी बीती जिंदगी की दुनिया में चले जाते हैं और अपनी उलझनों से जूझते कलकत्ता शहर के पैदल चक्कर लगाने लगते हैं। किशोर बाबू की यह बीती जिंदगी उन्हें अपने पूर्वजों की दुनिया में ले जाती है, जिसमें ग्रेट ग्रैंड फादर रामविलास बाबू की दुनिया है। बाइपास सर्जरी से किशोर बाबू के दिल की बीमारी तो ठीक हो जाते हैं परन्तु सिर की गुठली में अक्सर दर्द बना रहता है। बाइपास सर्जरी के पश्चात् किशोर बाबू के जीवन में एक नया परिवर्तन आता है। वह शाम को चार बजते ही सड़कों पर घूमने निकल जाते हैं और घण्टों अकेले सड़क पर घूमा करते हैं। 'किशोर बाबू के परिवार के लिए उनकी अब तक इस तरह एक 'सड़क माप' व्यक्ति जिसे अंग्रेजी में 'डैप' और बांगला में भवधूरे कहते हैं। किस तरह घूने की आदत ने अनेक परिवार के इतिहास को लेकर कुछ असुविधाजनक सवाल उठा दिए।'[2] कई बार यात्रा से लौटने के बाद जब किशोर बाबू की नींद रात में खुलती तो उन्हें लगता है कि वह उसी कमरे में है जिसमें वह यात्रा के दौरान रहे। 'अब यह कथा किशोर बाबू की जिद पर और पीछे चली जाती है किशोर बाबू अपने ग्रेट ग्रैंड फादर रामविलास बाबू उर्फ बड़े बाबू (1860-1926) की डायरी के आधार पर एक विगत कथा लिखवाने लगते हैं।'[3]

रामविलास जब तीन साल का था, वो उसके पिता हैमिल्टन साहब के बुलाने पर कलकत्ता चले गए थे। हैमिल्टन ने रामविलास के पिता की नौकरी कलकत्ता में लगवा दी थी। भिवानी वापस लौटने के बाद रामविलास के पिता का सारा जीवन भिवानी में व्यतीत हुआ था।

रामविलास के पिता का सपना था, भिवानी में बड़ी हवेली बनवाने का, वह समय के साथ दफन हो गया लेकिन कुछ समय बाद 'खुद रामविलास के हृदय में बरसों पहले दफना हुआ पिता का सपना एक बड़ी हवेली के निर्माण का सपना बाहर निकलकर प्राणवान हो उठा था। लेकिन कैसे जाएगा वह पत्नी, दस साल के इकलौते पुत्र, बाल विधवा बहन चुनिया और इस देश की मिट्टी को छोड़कर?'[4] रामविलास की पत्नी उसे इस बात के लिए ताना भी देती थी। 'तुम्हें तुम्हारी माँ ने अपने जैसा ही कमजोर दिल बनाकर रख दिया है। कहा ही गया है कि आदमी की उन्नति में छह बातें बाधक हैं-आलस, पत्नी-प्रेम, बीमारी, जन्मभूमि से लगाव, संतोष और कायरता। तुम में तो ये छहों गुण भरे हुए हैं।'[5] रामविलास के पिता जी यह जानते थे कि उनकी बहू अपने पति को कमाने के लिए बाहर भेजना चाहती है, इसलिए उन्होंने कहा था कि बेटा यदि बाहर जाना तो कलकत्ता ही जाना। रामविलास ने तयकर लिया यदि अपना देश छोड़ना ही है, तो वह कलकत्ता ही जाएगा।

रामविलास का बेटा केदार अपने पिता से सहमत नहीं होता है, उसे अपने पिता की हैमिल्टन से दोस्ती पसंद नहीं थी और केदार अपने पिता से दूर होता चला जाता है। केदार की माँ की मृत्यु के बाद रामविलास के व्यापार में घाटा शुरू हो जाता है और केदार की मृत्यु के पश्चात्। 'अचानक रामविलास का हृदय साहबों के प्रति उदासीन हो गया था। न जाने उसने कैसे और कब इन लोगों के साथ एक तरह का अपनापन महसूस किया था कि ये लोग भी उसी की तरह प्रवासी हैं। वह भी उतने ही दूर देश के।'[6] रामविलास आत्मग्लानि की वजह से केदार की आत्मा को कष्ट नहीं देगा और किसी भी अंग्रेज साहब के दरवाजे नाक रगड़ने नहीं जाने का संकल्प करता है। 'किशोर बाबू के पास आज यानी रामविलास परदादा जी के मरने के इकहत्तार साल बाद उनके इन प्रश्नों का जबाव है कि बारह साल की उम्र में किशोर बाबू के दादा केदारनाथ जी के कलेजे पर कैसा घाव लगा था कि उन्होंने अपने जीवन की डगर अपने पिता जी से बिल्कुल हटकर चुनी।'[7] किशोर बाबू की पत्नी उनके सड़कों पर भटकने से ज्यादा अब दादा परदादा की डायरियों में अपने पूर्वजों को खोजने से परेशान थी। 'अब दादा परदादा से जी भर गया तो और तो और अपनी भाभी की पुरानी चिट्ठियाँ कागजात किताबें निकालकर पढ़ रहे हैं।'[8] किशोर बाबू ने एक जिंदगी में तीन जिंदगियाँ जी थी। देश की आजादी यानी बाइस साल की उम्र तक एक जिंदगी थी। दूसरी जिंदगी पूरे पचास साल की जिंदगी और तीसरी जिन्दगी बाइपास आपरेशन के बाद की थी। 'इस दूसरी जिंदगी में पहली जिंदगी की कोई छाया तक नहीं थी। इसलिए किशोर बाबू उसे एक नए जन्म की तरह ही अब देख पाते हैं।'[9] अब किशोर बाबू अपने दोस्त अमोलक और शांतनु से किए गए कौल का स्मरण कर वादे के अनुसार उनसे

* शोधार्थी (हिन्दी) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

मिलने के निर्धारित स्थान पर पहुँच जाते हैं। 'किशोर बाबू को वहाँ खड़े हुए अभी पाँच मिनट भी नहीं हुए थे कि उन्हें वो घोड़ों की एक फिटन उत्तर कलकत्ता की तरफ से आती दिखाई पड़ी। किशोर बाबू का दिल धड़कने लगा। जैस-जैसे फिटन पास आती गई, किशोर बाबू की आँखें आश्चर्य से फैलती गई। शांतनु अपनी पुरानी बग्घी से नीचे उतरकर उनके गले से लग गया।'[10] तभी अमोलक भी वहाँ आ जाता है और अमोलक को देखकर किशोर और शांतनु भौचक्के हुए कि अमोलक कैसे जिन्दा हो गया? 'लेकिन तुम तो बाबरी मस्जिद काण्ड में मर चुके थे ना।'[11] नहीं, मैं नहीं मारा था, जो मरा वह मेरा हमशक्ल(डुप्लीकेट) था। शांतनु और अमोलक इस बात पर हँस पड़े पर किशोर बाबू की हंसी गायब थी। उन्हें यह समझना पड़ रहा था कि ये सब सच हैं या कोई फिल्म देख रहे हैं।

शेष कादम्बरी – अलका सरावगी का 'शेष कादम्बरी' उपन्यास स्त्री मन के द्वंद्व और असहाय अकेले जीवन का आख्यान है। शेष कादम्बरी में भी अल्का सरावगी ने काल-कथा प्रस्तुत की है, देवीदत्ता मामा के जन्म वर्ष 1900 ई. से लेकर अटल बिहारी वाजपेयी की दिल्ली और कारगिल युद्ध के प्रसंग तक अर्थात् आज तक की कथा, बीसवीं सदी के शुरू में जन्मी रूबी दी और बिल्कुल वर्तमान में उपस्थित उनकी नातिन कादम्बरी तक की कथा बीच में आई कादम्बरी की माँ गौरी समेत तीन पीढ़ियों की कथा।

उपन्यास की शुरूआत रूबी गुप्ता की 'परामर्श' संस्था से होती है। 'परामर्श' संस्था के द्वारा रूबी गुप्ता 'सोशल वर्क' का कार्य करती है और उनकी मुलाकात सविता नाम की एक स्त्री से होती है। 'क्या बात है तुम आई नहीं कई दिनों से? जबाव में सविता कुर्सी पर बैठ अपनी हस्त रेखाएँ देखती रही। क्या देखती रहती हो अपने हाथों में? ज्योतिष वगैरह कुछ जानती हो क्या? रूबी दी से आज रहा नहीं गया। यह लड़की अनजाने उन्हें इतना परेशान कर रही है, उनका हक बनता है कि इससे खुलकर दो-चार बातें करें।'[12]

रूबी दी ने सविता से बातचीत के दौरान अपने जीवन के पन्ने उलटने लगती है, क्यों कि सविता की तरह ही उनका भी कोई अपना नहीं था जिससे वह अपने मन की तकलीफ बया कर सकें। अपने जीवन की वीरानियों से जूझती और अपने होने के वजूद से लड़ती रूबी दी ढलती उम्र के उस अकेलेपन को नहीं समझ पाई थी। एकदम तभी उन्हें अपने जीवन का विराट सूनापन दिखाई पड़ा। पच्चीस सालों में न जाने कितनी बार रातों को उठकर उन्होंने अपने से पूछा है कि वे किसके लिए जी रही है। उन्होंने अपने से पूछा है कि वे किसके लिए जी रही है ? इस संस्था का काम था और भी दूसरे काम उस शून्य को नहीं भरते जो उनके साथ हर वक्त चिपका रहता है।'

बचपन की स्मृतियों में रूबी गुप्ता का जीवन बहुत ही शान-शौकत से बीतता है। रूबी का पालन-पोषण जिस परिवार और जिन दो व्यक्तियों द्वारा किया गया था, वह रूबी के अपने माता-पिता नहीं थे। रूबी को इस बात का पता ग्यारह वर्ष की आयु में चलता हूँ। जब उसकी मामी उसकी माँ से झगड़ा करते हुए कहती है-'बाई, आपके तो बच्चे हुए नहीं। आपने पैदा नहीं किए न, इसीलिए आपको मालूम नहीं कि थप्पड़ मारकर भूखे बच्चे के सोने पर माँ को कितनी तकलीफ होती है। क्या कह रही है मामी जी! पैदा नहीं किए माँ ने? तो वह क्या आसमान से टपक पड़ी थी।'[13] रूबी को पढ़ाने के लिए मिस्टर वियेना आते हैं। वह अपने हर प्रश्न का उत्तर मिस्टर वियेना से चाहती है। ऐसे प्रश्न भी जिन्हें वह शायद कभी किसी से नहीं पूछ पायी, यहाँ तक कि उसके आलीशान मकान में एक कमरा हमेशा क्यों बंद रहता है? मिस्टर वियेना उसके हर प्रश्न का उत्तर बिना किसी प्रश्न के देते हैं। 'तुम्हारे पिता की बहन यानी तुम्हारी बुआ ने एक अंग्रेज के प्रेम में पड़कर उस कमरे में अपने को जला डाला था।'[14] मिस्टर वियेना की मृत्यु के पश्चात् 'उन्हीं फुसफसाहटों से जब रूबी को यह पता चला कि नीचे के कमरे में जल मरने वाली बुआ का अंग्रेज प्रेमी कोई और नहीं खुद मिस्टर वियेना थे, तो वह हतप्रथ रह गई थी। आज तक रूबी गुप्ता इस उलझन को सुलझा नहीं पाई कि मिस्टर वियेना को तूफान ने डुबोया या उन्होंने खुद अपनी स्मृतियों को कीड़ा से मुक्ति पाने के लिए जल समाधि ली थी।'[15]

'परामर्श' संस्था जो कि थिएटर रोड पर एक ऐसे मकान में थी, जो आगे की तरफ झुका हुआ था। इस संस्था में रूबी की मुलाकात कई स्त्रियों और लड़कियों से होती है जो पुरूषों द्वारा उस व्यवहार का शिकार होती है, जिसे प्रताड़ना, अत्याचार और शोषण कहते हैं। शायरा, सविता, आभा जैन, माया बोस, कल्याणी हालदार की माँ और फरहा आदि के जीवन के पने उलटने के बाद रूबी गुप्ता का इन सभी से आत्मिक लगाव हो जाता है।

कथा की दूसरी तस्वीर में रूबी गुप्ता की अपनी नातिन कादम्बरी से बातचीत का सिलसिला है। एस.टी.डी. काल के द्वारा की गई बातों में कादम्बरी और रूबी दी के बीच हास्य विनोद और कादम्बरी के जीवन की अपनी बातें होती है। कादम्बरी रूबी दी से आत्मकथा लिखने का अनुरोध करती है और अपनी आत्मकथा लिखने के दौरान रूबी गुप्ता अपनी वसीयत बनाती है, जिसमें वह अपना सब कुछ कादम्बरी को सौंप देती है लेकिन सम्पत्ति का कुछ हिस्सा यानी 25 हजार रूपये सायरा को देती है और सविता के लिए कादम्बरी से अनुरोध करती है कि वह खुद को मिलने वाले रूपयों से कुछ मदद सविता की करें. जिससे वह आत्मनिर्भर जीवन जी सके। अंत में अपनी आत्मकथा में जो शेष रह गया है, उसे कादम्बरी से पूरा करने का भी अनुरोध करती है।

कोई बात नहीं – अल्का सरावगी का यह उपन्यास शारीरिक रूप से अपंग एक ऐसे बच्चे के जीवन का सारांश है, जो कि जिंदगी के संघर्षों को झेलता हुआ अपने दुनिया में होने का अश्क खोजता है और उसके इस संघर्ष में उसकी ऊर्जा, शक्ति और हिम्मत बनती है, उसकी माँ जो उसके जीवन का आधार भी है।

उपन्यास का आरंभ उस दृश्य से होता है, जब गंगा के तट पर निर्मल धारा के बीच उड़ते कबूतरों को देखने के लिए सुच्चा बाबा उर्फ सत्य प्रकाश शशांक को बूढ़ी दादी के साथ बैठा होता है और शशांक उनसे मिलने अपनी आरती मौसी के साथ गंगा के तट पर पहुँच जाता है। आरती मौसी कहानियाँ लिखती हैं ऐसी कहानियों जो शशांक को हमेशा अधूरी लगती हैं। 'मौसी की कहानियाँ चलते-चलते अचानक जब मन में आए खत्म हो जाती हैं और शशांक हर बार यही सोचता हुआ पढ़ना बंद कर देता कि ऐसा ठीक यही क्यों हुआ। शायद यही कारण है कि मौसी की कहानियाँ कहीं छपती नहीं, प्राय वापस लौट आती हैं।'[16] शशांक के अपनो में मौसी के अतिरिक्त माँ, दादी, बहन, अदिति, पिता, चाचा-चाची, चाचा का बेटा अनंत, शशांक का दोस्त आर्यर, जतीन दा और नौकर रामा हैं। इन सारे रिश्तों में जो शशांक के दिल के सबसे ज्यादा करीब और सुकून पहुँचाने वाला रिश्ता है वह जतीन दा का है।

दादी और आरती मौसी की हिस्से कहानियों के अलावा शशांक की जिंदगी का दूसरा हिस्सा है 'सेंट जोसेफ स्कूल'। 'सेंट जोसेफ स्कूल कलकत्ता शहर के सबसे पुराने और सबसे नामी क्रिश्चियन स्कूलों में से एक है, जिसमें दाखिला पाना किसी के लिए भी ईश्वर के राज्य यानी स्वर्ग में दाखिला पाने से कम आनंददायक नहीं है।'[17] 'न्यू होराइजन प्राइमरी' स्कूल से 'सेंट जोसेफ सीनियर' स्कूल में पहुँचना शशांक और उसके परिवार के लिए काफी सुखद

था। बचपन से ही शारीरिक और मानसिक दुर्बलता के कारण वह न्यू होराइजन संस्था का छात्र बना रहा। शशांक की कक्षा में एक लड़का है आर्थर, जो कि खुद मोटा, गंदा रहता है वह शशांक की कमजोरी का सबसे ज्यादा मजाक बनाता है। 'आज आर्थर ने क्लास में फिर उसके चलने और बोलने की नकल उतार कर उसका मजाक बनाया है।'[18] आर्थर के बारे में सुनकर जतीन दा उसे एक कहानी सुनाते हैं अपने दोस्त जॉर्ज जैकसन की। जो अपने पिता के वंशजों की खोज में निकल पड़ता है और उसे अपने काम में सफलता मिलती है लेकिन उसकी खोज उसे इस भ्रम में डाल देती है कि उसके परिवार में पागलपन के कीटाणु मौजूद हैं, इस कल्पना से वह अपने को शक के दायरे में खड़ा कर लेता है और अपना नाम जैकसन से जय किशन रख लेता है।

उपन्यास के बीच में उपन्यास की कथा में एक नया मोड़ आता है, जब शशांक दोबारा बीमार होकर चलने फिरने में असमर्थ हो जाता है। शशांक की माँ उसके लिए शक्ति बनती है और वह व्हील चेयर पर अपनी जिंदगी की नई शुरूआत करता है। इस दौरान परिवार के सभी लोग शशांक का विशेष ध्यान रखते हैं। जतीन दा भी उससे मिलने हर शनिवार को उसके घर आते हैं और उपन्यास का अंत बद्री केदारनाथ को यात्रा से होता है, जब शशांक व्हील चेयर पर अपने माँ-बाप के साथ यात्रा पर जाता है। यात्रा के दौरान एक व्यक्ति के यह कहने पर कि व्हील चेयर वालों को विशेष सुविधाएँ दी गई हैं, तो उसकी माँ गुस्से में आ जाती है। 'इस यात्रा में सिर्फ एक ही शिकायत देखी गई कि व्हील चेयर वालों को बहुत महत्व दिया गया। इसलिए मैं सुझाव देती हूँ कि यह शिकायत पालने वाले आगे कभी यात्रा करें, तो व्हील-चेयर पर आएं।'[19] समय के साथ-साथ शशांक की बीमारी में सुधार होता है। उसका इतना ठीक होना और कॉलेज भी चले जाना शायद एक असंभव सी बात का संभव होना है।

एक ब्रेक के बाद – 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास आज के दौर में उद्योग जगत और मल्टीनेशनल कम्पनियों के सत्यों का प्रमाण है। इस उपन्यास में दो कथाएँ एक साथ चलती हैं। एक तरफ के.वी. अय्यर और गुरूचरण के संबंधों का ताना बाना है, तो दूसरी तरफ गुरूचरण की मस्तमौला जिंदगी और उसके मित्र भट्ट का अस्थायी जीवन है।

उपन्यास का प्रारंभ के.वी. अय्यर के साठ साल के पूरे होने की खुशी में उनके जन्मदिन के समारोह से होता है। 'उनके जन्मदिन की सुबह चार पंडितों के समावेत मंत्रोच्चार के साथ हवन करते हुए घर के पिछवाड़े में हुई जहाँ उगते सूरज का हल्का नारंगी अक्स के.वी. की शैम्पेन से अलसाई आँखों पर पड़ रहा था। अब यार-दोस्त ऐसे मौके पर भी जमा न हों, तो फिर उनका होना न होना क्या? रात बारह बजते ही पूरा घर दोस्तों की भीड़ से छोटा पड़ गया था।'[20] के.वी. के चेहरे पर एक चमक दिखाई देती है। साठ साल के पूरे हो जाने के बाद भी अय्यर में जीवन का उत्साह है। 'जिस उम्र में लोग रिटायर होकर जीने का कोई नया ठौर या नया तरीका खोजने में बुझते चले जाते हैं, उम्र के उसी मुकाम पर के.वी. शहर में सबसे ज्यादा पैसा पाने वाले या मार्केटिंग कंसल्टेंट हैं।'[21] के.वी. को चर्चा में रहना या लोगों की बातचीत का विषय बना रहना खासा पसंद है। उनके पास किस्सों की भरमार है। बात रस का आनंद जैसा उनके पास है वैसा और कहीं नहीं है। के.वी. की यह खासियत है कि वे अपनी प्रतिभा के फायदे और नुकसान दोनों जानते हैं।'[22] चोरड़िया के मित्रवत व्यवहार से चार फर्मों में सलाहकार का काम छोड़ने पर यदि कोई उनसे पूछता क्या वह उससे ज्यादा यहाँ कमा लेंगे तो के.वी. अय्यर अपनी पैनी आँखें झुका लेते हैं। 'बेशक के.वी. एक सफल मैनेजर हैं, पर किसी को इस बारे में शक क्यों हो कि वे एक सच्चे इंसान भी हैं। चोरड़िया ने उन्हें कभी अपना नौकर माना था? कभी नहीं वरना देश में चपरासी से लेकर मैनेजर तक हर आदमी बॉस का गुलाम होता है।'[23] के.वी. अय्यर अक्सर अपने मित्र रंगनाथ की बातें करते हैं। समय के साथ बदलती इस दुनिया के रिश्तों में रंगनाथ का साथ के.वी. को दिलासा देता है। रंगनाथ की तरह ही गुरूचरण का के.वी. की जिंदगी में खास स्थान है। गुरूचरण राय उर्फ गुरू के.वी. के मित्र और परिचितों में है। 'के.वी. को गुरूचरण के साथ बैठने में ऐसा सुकून मिलता है, जो शायद आदमी को शराब या अफीम से ही मिल सकता है। गुरूचरण उनकी बात को कभी नहीं काटता।'[24] गुरूचरण के.वी. की बातों को ध्यान से सुनता है और अपनी स्मरण शक्ति में उन्हें सुरक्षित रखता है। यदि कभी कहीं बोलने का अवसर हाता है, तो गुरूचरण के मुँह से के.वी. के ही शब्द निकलते हैं। अविवाहित जीवन व्यतीत करते गुरूचरण की दुनिया में कई महिला मित्रों ने अपना स्थान बना रखा था,परन्तु किसी ने भी गुरूचरण के दिल के तारों को इस तरह से झंकृत नहीं किया था कि वह शादी के बंधन में बंधने को तैयार हो जाता है।

हर सुबह की तरह ही उस सुबह भी के.वी. अय्यर ने देश दुनिया की खबरों को जानने के लिए अखबार उठाया था कि अचानक उनकी दृष्टि अखबार की एक खबर पट जाकर स्थिर हो जाती है। 'टॉप एक्सीक्यूटिव ऑफ एम.एन. सी. मिसिंग। अरे, किस मल्टीनेशनल कम्पनी का आदमी गायब हो गया? आगे गुरूचरण की कम्पनी का नाम पढ़ते-पढ़ते के.वी. को आभास हो गया थ कि वह टॉप एक्जीक्यूटिव गुरूचरण के अलावा कोई और नहीं होगा। गुरूचरण राय के नाम तक आते-आते उनके दिमाग में बिजली की गति से पचासों बातें दौड़ लगा गई थी। इसीलिए गुरूचरण ने उनसे चार महीनों से कोई सम्पर्क नहीं किया।'[25] गुरूचरण को गायब हुए छह महीने बीत गए। वह एक बासी खबर बनकर अखबारों और पत्रिकाओं तक से भी गायब हो गया न तो किसी ने उसकी फिरौती की रकम मांगी और न ही उसकी लाश कहीं पड़ी हुई मिली जिससे आत्महत्या या हत्या का शक हो।

उपन्यास की पहली कथा के साथ-साथ दूसरी का आरंभ पहाड़ों की निर्मल वादियों से होता है, जहाँ गुरूचरण भट्ट और निर्मला तीनों पहाड़ों पर सैर के लिए दिखाई देते हैं। 'उपन्यास के तीसरे पात्र भट्ट की नियति एक नौकरी से दूसरी नौकरी तक शहर-शहर भटकने की है। कॉरपोरेट दुनिया के थपेड़े खाते-खाते वह बीच में गुरूचरण उर्फ गुरू के साथ पहाड़-पहाड़ घूमता है। स्त्रियों के साथ संबंधों में गुरू क्या खोजता है या उसका क्या सपना है, यह जाने बगैर गुरू के साथ भट्ट यायावरी करता जीवन के सत्यों से टकराता है।'[26] कलकत्ता वापस आने के बाद उदास रहने लगता है और कुछ समय बाद पिता के प्रयासों से उसे भोपाल में नौकरी मिल जाती है, परन्तु कुछ समय बाद विवेक देवराय से मन मुटाव हो जाने से भट्ट वापस कलकत्ता आकर हमेशा के लिए बस जाता है। भट्ट कलकत्ता में बसने के बाद आर्ट गैलरी का काम शुरू करता है।

उपन्यास का अंत गुरूचरण की फूलों की घाटी में हुई मृत्यु से होता है, जब गुरूचरण राय उर्फ गुरू फूलों की घाटी देखने जाता है और वहीं दिल की धड़कन रूकने से उनकी मृत्यु हो जाती है। भट्ट कलकत्ता में आर्ट गैलरी के काम में मशरूफ रहता है कि एक दिन 'आपका ही नाम 'उपमन्यु' भट्ट है?' किसी तरह भट्ट को समझ में आया। अचानक लाइन एकदम साफ हो गई। 'आपको दु:ख के साथ सूचित किया जाता है कि आपके मित्र गुरूचरण अजबदास का शरीर कल दोपहर तीन बजे शांत हो गया है।'[27] फूलों की घाटी पहुँचने के बाद भट्ट की मुलाकात डॉ. उनियाल से होती है, जो कि गुरूचरण के अंतिम दिनों के साथी थे। डॉ. उनियाल भट्ट को गुरूचरण को डायरी और उसका अन्य सामान

सौंप देते हैं। 'डायरी में मेरे दोस्त ने लिखा है कि उसका सपना है कि वह अपने दोस्तों और चाहने वालों के साथ कहीं नदी समुद्र पहाड़ के पास रहकर एक छोटा सा स्वर्ग बनाए। कभी उसने ऐसा कुछ कहा नहीं था मुझे। हम बस यों ही साथ-साथ, पहाड़-पहाड़ घूमते थे। यहाँ भी वह मुझे साथ लाना चाहता था। पर मुझे मालूम नहीं था कि यह स्वर्ग बनाने वाली बात उसके दिमाग में थी.....।'[28] गुरूचरण की डायरी में संजोये गए उसके सपने के साथ भट्ट वापस कलकत्ता के लिए निकल पड़ता है। गाड़ी एक पहाड़ से दूसरे पहाड़ को छोड़ती हुई चलती जा रही थी और भट्ट का धीरे-धीरे कलकत्ता पहुँचने का सफर कम होता जा रहा था।

अलका सरावगी के उपन्यासों का विजन बहुत व्यापक है, यद्यपि वे कलकत्ता की पृष्ठभूमि पर ही लिखे गए हैं परन्तु वे देश के पिछले ढाई सौं वर्षों की कथा तथा सामाजिक सरोकारों को समेटे हुए हैं। उपन्यासों के बीच-बीच में आई टिप्पणियों से कथा लेखिका की उपस्थिति और हस्तक्षेप का पता चलता है। इस प्रकार इनमें इतिहास के साथ-साथ उत्तर आधुनिक युग में अपने समाज व संस्कृति के लिए चिंता का भाव भी है। इसके अतिरिक्त इनमें वर्तमान के अनेक समस्याएँ जैसे-मूल्यों के समय की पीड़ा, वैश्वीकरण की विविधमुखी समस्याएँ, उपभोक्तावादी दृष्टि पैसे के लिए अंधी दौड़, समाज में नारी की स्थिति तथा नारी समस्याएँ, नशाखोरों और नशीली दवाओं का धंधा, साम्प्रदायिक की समस्या, मिडिल क्लास और अपर क्लास मैंटेलिटी आदि चित्रित हुई हैं। अपने उपन्यासों के इस व्यापक फलक को प्रस्तुत करने के लिए उन्होंने मौलिक नवीन और प्रयोगात्मक शिल्प को अपनाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 अलका सरावगी, कलि-कथा-वाया बाइपास, आधार प्रकाशन पंचकूला, हरियाणा, 134113, एस.सी.एफ., 267, सेक्टर-16, प्रथम संस्करण, 2001

2 अलका सरावगी, शेष कादम्बरी, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002 प्रथम संस्करण, 2001

3 अलका सरावगी, कोई बात नहीं, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002 प्रथम संस्करण, 2004

4 अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002 प्रथम संस्करण, 2008

5. कलि – कथा – वाया बाइपास, अलका सरावगी, पृ.8
6. वहीं, पृ.31
7. वहीं, पृ.32
8. वहीं, पृ.32
9. कलि – कथा – वाया बाइपास, अलका सरावगी, पृ.53
10. वहीं, पृ.54
11. वहीं, पृ.57
12. वहीं, पृ.109
13. वहीं, पृ.215
14. वहीं, पृ.216
15. वहीं, पृ.11
16. शेष कादम्बरी, अलका सरावगी, पृ.29
17. वहीं, पृ.49
18. वहीं, पृ.50
19. कोई बात नहीं, अलका सरावगी, पृ.7
20. वहीं, पृ.19
21. वहीं, पृ.15
22. कोई बात नहीं, अलका सरावगी, पृ. 217
23. कोई बात नहीं, अलका सरावगी, पृ. 7
24. कोई बात नहीं, अलका सरावगी, पृ. 8
25. वहीं, पृ.9
26. वहीं, पृ.9
27. वहीं, पृ.20
28. एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, पृ.15
29. वहीं, पृ.फ्लेप से
30. वहीं , पृ. 199
31. एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, पृ.218

****

घरेलू हिंसा अधिनियम – एक विवेचना

डॉ. मधुमती नामदेव *

प्रस्तावना – आर्यावर्त के लिये महिला उत्पीड़न कोई नया शब्द नहीं है जितना पुराना भारत का इतिहास है, उतना ही पुरातन है, महिला उत्पीड़न का इतिहास। महिला उत्पीड़न का ही एक रूप घरेलू हिंसा है। महिला की स्थिति को प्रतिपादित करते हुए एक ओर यह कहा जाता है, कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता' तो दूसरी ओर यह भी कहा जाता है 'शूद्र, गंवार और पशु, नारी ये सब ताड़न के अधिकारी'। रामचरित मानस में तुलसीदास ही यह नहीं कहते हैं, बल्कि वेदव्यास जो वेदों के निर्माता माने जाते हैं, जिस पर (वेदों पर) सम्पूर्ण भारत की संस्कृति टिकी हुई है वे भी महिला उत्पीड़न को बढ़ाने में पीछे नहीं हैं। 'महाभारत' में राजा 'द्रुपद' द्वारा देवताओं के आग्रह पर 'द्रोपदी' को स्वीकार करना उसके लिये जमाने भर का दु:ख मांगना, स्वयंवर के पश्चात् पाण्डवों की माता के द्वारा द्रोपदी को दान की वस्तु समझकर पाँचों भाइयों में बांटना, अग्रज युधिष्ठिर का द्रोपदी को जुए में दाँव पर लगाना, कहीं न कहीं आधुनिक युग में नारी का क्रय-विक्रय ही है। मध्ययुग में महिलाओं का सती होना, जौहर धारण करना, पुरुष वर्ग की कुदृष्टि से बचने के लिये पर्दा प्रथा और बाल विवाह की परिणति अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं पर अत्याचार ही है, यह घरेलू हिंसा ही है।

आज घरेलू हिंसा का रूप बदल गया है। 'महिलायें, माँ के गर्भ से मृत्यु की गोद तक अवहेलना, शोषण, उत्पीड़न, तिरस्कार, हिंसा, कोख में हत्या, अन्याय, असमानता, कुपोषण आदि का शिकार होती हैं।' भारतीय संस्कृति की सुरक्षा/धर्म के नाम पर महिलाओं एवं युवतियों को विशेष प्रकार की पोषाक पहनने का फरमान जारी करना, युवतियों के मुंह पर कालिख पोतना, एसिड डालना, एक समान गलतियों पर मात्र महिला को दंडित करना आदि अनेक प्रकार के अत्याचार महिलाऐं सनातन काल से सहती आ रही हैं।

यह घरेलू हिंसा अकेले भारत में ही नहीं अन्य कई विकसित और अर्द्ध विकसित राष्ट्रों की भी समस्या है। सन् 2006 में न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसके खिलाफ मुहिम शुरू की तथा सोलह दिन तक चलने वाली इस मुहिम को **'अंतरराष्ट्रीय महिला अपराध उन्मूलन दिवस'** के रूप में स्थापित किया गया। अरेबियन राष्ट्रों में आज भी प्रतिवर्ष लगभग तेरह करोड़ महिलाओं को खतना के लिये मजबूर किया जाता है, लड़कियों को मोबाईल रखने में पाबंदी है वहाँ आज भी लड़कियों की खरीद-फरोख्त होती है, बंगाल में महिलाओं के एक समुदाय में आज भी देवदासी प्रथा है। **संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट** के अनुसार अकेले भारत में ही पन्द्रह से लेकर पचास वर्ष तक की महिलायें किसी न किसी रूप में घरेलू हिंसा का शिकार हैं, और चुपचाप बिना आवाज उठाये जी रही हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा जारी **यूनिसेफ 1999 की रिपोर्ट** के अनुसार 'किसी भी देश में महिलाओं की आबादी के लगभग आधे हिस्से को अपने परिजनों के अत्याचार या बचपन में घोर उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। सबसे हृदय विदारक तो घरेलू हिंसा है; क्योंकि वह पति, पुरुष, मित्र, पिता, चाचा, मामा और बेटे जैसे पारिवारिक लोगों द्वारा की जाती है, जिन पर महिलायें भरोसा करती हैं। पुत्र को प्राथमिकता दिये जाने के कारण कन्या भ्रूण हत्या जैसी घटनायें जारी हैं। अक्सर लड़कियों को खाने पीने या चिकित्सा में भी भेदभाव का सामना करना पड़ता है।'

घरेलू हिंसा का शाब्दिक अर्थ है – 'मर्यादा की आड़ में अत्याचार'।

'घर की इज्जत की दुहाई देकर घर या बाहर हर जगह, हर तरह से पीड़ित करना, घर या परिवार के सदस्यों की ओर से प्रताड़ित करना घरेलू हिंसा है।'

घरेलू हिंसा में कई तरह के हिंसात्मक व्यवहार आते हैं, जिन्हें सामान्य रूप से हम चार भागों में विभाजित कर सकते हैं –

(1) **शारीरिक शोषण –** मारपीट करना, थप्पड़ मारना, ठोकर मारना, दांत से काटना, लात मारना, मुक्का मारना, धक्का देना, धकेलना एवं अन्य किसी तरीके से शारीरिक पीड़ा एवं क्षति पहुँचाना।

(2) **लैंगिक हिंसा –** अश्लील साहित्य या कोई अन्य अश्लील तस्वीरों या सामग्री को देखने के लिये मजबूर करना, दुर्व्यवहार करने, अपमानित करने या नीचा दिखाने की लैंगिक प्रकृति का कोई अन्य कार्य एवं बालिकाओं के साथ लैंगिक दुर्व्यवहार।

(3) **मौखिक और भावनात्मक हिंसा –** अपमान करना, गालियां देना, चरित्र और आचरण पर दोषारोपण, पुरुष संतान न होने पर अपमान करना, दहेज इत्यादि न लाने पर अपमान करना, बालिका को विद्यालय/महाविद्यालय या किसी अन्य शैक्षणिक संस्था में जाने से रोकना, नौकरी न करने के लिये मजबूर करना, विवाह न करने की इच्छा पर जबरदस्ती विवाह करना, आत्महत्या करने की धमकी देना आदि।

(4) **आर्थिक हिंसा –** महिला या बच्चों के अनुरक्षण के लिये धन उपलब्ध न कराना, दैनिक जीवन की वस्तुयें उपलब्ध न कराना, रोजगार करने में विघ्न डालना, वेतन, पारिश्रमिक इत्यादि की आय जबरदस्ती लेना, घर की साधारण वस्तुओं के उपयोग से रोकना, घर के किसी भाग में जाने से रोकना आदि।

महिला हिंसा को समाप्त करने के लिये अनेक नियम बनाये गये यथा- दहेज निषेध अधिनियम 1961 एवं इसके संशोधन 1964ए दहेज एक संगीन अपराध 1985ए महिलाओं का निषेध अधिनियम 1986, समान वेतन अधिनियम 1976 है, धारा 66 के अनुसार सूर्योदय से पूर्व या सूर्यास्त के बाद काम करने की बाध्यता नहीं है। 2005/6 घरेलू हिंसा अधिनियम, 2006 विवाह पंजीयन अनिवार्य अधिनियम, महिला यौन उत्पीड़न रक्षा विधेयक 2010 आदि के बावजूद महिलायें आज भी सुरक्षित नहीं हैं शायद ही कोई दिन ऐसा होता है जिस दिन महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा और यौन उत्पीड़न के समाचार सुनने पढ़ने या देखने को नहीं मिलते हों। अभी हाल ही में यौन उत्पीड़न के ये मामले जिनमें तथाकथित संत आसाराम बापू का

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, कुण्डम, जबलपुर (म.प्र.) भारत

मामला तथा उच्चतम न्यायालय के एक सेवा निवृत्त न्यायाधीश के खिलाफ दो लॉ इंटर्न्स द्वारा तथा तहलका पत्रकार तरुण तेजपाल के खिलाफ उनकी अपनी सहकर्मी द्वारा की गई यौन उत्पीड़न की शिकायत ने एकाएक पूरे समाज को सिहरा दिया है। धर्म के नियामक निर्माता, साधु महात्मा और **प्रजातंत्र के दो महत्वपूर्ण स्तम्भ 'न्यायालय' (न्यायमूर्ति) और 'पत्रकार'** कटघरे में खड़े हैं और देश की जनता स्तब्ध है। 16 दिसम्बर 2012 को दिल्ली में घटित नृशंस और पाशविक सामूहिक बलात्कार ने स्त्रियों को ही नहीं युवा पीढ़ी के पुरुषों के भीतर के मनुष्य को भी झकझोर दिया और स्त्री के पक्ष में सनातन प्रश्न व विचार युवा जन समूह के हाथों की तख्तियों में आ गए। क्राइम इन इंडिया की एक रिपोर्ट के अनुसार देश में हर 10 मिनट में एक बलात्कार, हर 15 मिनट में एक छेड़छाड़, 23 मिनट में एक हत्या का प्रकरण होता है। यह आंकड़े महिला उत्पीड़न के ज्वलंत व मार्मिक उदाहरण हैं। सी.फोर. रिसर्च आर्गनाइजेशन के अनुसार भारत में 8 लड़कियों में से 1 लड़की उत्पीड़न की शिकार रही है। हालांकि भारतीय संविधान में इनके कल्याण हेतु अनेक नियम, उपनियम, सतत् बनाये जा रहे हैं, ताकि इन कानूनों का आश्रय लेकर नारी अपने आपको दृढ़ व मजबूत स्थिति में ला सकें। विवेकानंद का कथन है, कि– 'स्त्रियों की दशा में सुधार न होने तक विश्व के कल्याण का कोई मार्ग नहीं।'

राष्ट्रीय महिला आयोग से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार वर्ष 1998–2000 में कार्यस्थल पर उत्पीड़न के 104 मामले रहे, वहीं बढ़कर 2010–11 में लगभग 200 हो गये। भारत में अश्लीलता को भारतीय दंड संहिता की धारा 292, 293, 294 के अन्तर्गत संहिता बद्ध किया गया तथा महिला यौन उत्पीड़न रक्षा विधेयक 2010 पारित किया।

महिलाओं पर अनेक अत्याचारों को देखते हुए नारीवादी संगठनों की पहल के फलस्वरूप 2005 में घरेलू हिंसा से मुक्ति के लिये, **'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005'** और **नियम 2006** को लाया गया। इस अधिनियम में केवल पत्नी को ही नहीं बल्कि परिवार में रहने वाली हर उम्र की महिला व बच्ची को भी शामिल किया गया है।

घरेलू हिंसा अधिनियम 13 सितम्बर 2005 को बनाया गया और 26 अक्टूबर 2006 नियम को लागू किया गया। इस अधिनियम का पूरा नाम है – 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 जो बाद में नियम के रूप में परिवर्तित हुआ और कहलाया 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण नियम 2006'।

घरेलू हिंसा के कारण – भारतीय संस्कृति पितृ सत्तात्मक संस्कृति है। बेटे के उत्पन्न होने पर बाजे बजते हैं और बेटी की उत्पत्ति पर उसे गला घोटकर मार दिया जाता है, लड़के को साहसी और लड़की कमजोर समझा जाता है आज भी एक पूर्ण शिक्षित परिवार लड़के लड़की में भेद करते हुए कभी न कभी यह वाक्य बोल ही देता है, कि 'तुम लड़की हो यह न करो, वह न करो, ऐसे नहीं बैठो, ऐसे ही हंसो ये सभी वाक्य कहीं न कहीं हमारी लड़के लड़की में भेद की मानसिकता को स्पष्ट करता है, लड़की स्वातंत्रय व्यक्तित्व को जीवन के प्रारंभ अवस्था में ही कुचल दिया जाता है, इन मुख्य कारणों के अलावा अन्य कारण भी हैं, जो इस प्रकार हैं – (1) सामंतवादी शिक्षा व्यवस्था का अभाव, (2) महिला के चरित्र पर संदेह करना, पुरुष के चरित्र पर नहीं, (3) पुरुष वर्ग को शराब की लत, (4) इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के दुष्प्रभाव, (5) महिला को स्वावलंबी बनने से रोकना आदि ऐसे अनेक कारण हैं, जिनसे घरेलू हिंसा बढ़ती है, इसे रोकने के लिये अधिनियम, नियम हैं।

घरेलू हिंसा के दुष्प्रभाव – घरेलू हिंसा से महिलाओं को शारीरिक, मानसिक तथा भावनात्मक दुष्परिणाम होते हैं। महिलाओं के कार्य करने तथा निर्णय लेने की क्षमता में कमी आती है। दहेज मृत्यु, हत्या और आत्महत्या की मात्रा में वृद्धि होती है, महिला डरी–सहमी घर पर रहती है, कभी कभी तो महिला मानसिक रोग से पीड़ित हो जाती है।

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम का उद्देश्य – 'ऐसी महिलाओं के, जो कुटुंब के भीतर होने वाली किसी किस्म की हिंसा से पीड़ित हैं, संविधान के अधीन प्रत्याभूत अधिकारों के अधिक प्रभावी संरक्षण और उससे संबंधित या उसके अनुशंगिक विषयों का उपबंध करने के लिये यह अधिनियम'।

भारतीय संविधान और कानून के अनुसार महिलाओं को जो अधिकार दिये गये हैं, उन्हें महिलाओं तक पहुँचाना, तथा अपने अधिकारों के लिये जागरूक कर समाज में बढ़ रही, महिला हिंसा को खत्म करके उन्हें उनका एक मुकाम हासिल कराना तथा हिंसा मुक्त समाज की संरचना इसका मुख्य उद्देश्य है।

घरेलू हिंसा से निपटने के अधिकार –

(1) धारा 5 के अधीन सभी अधिकारों की जानकारी जिनके तहत संरक्षण प्राप्त कर सकते हैं। (2) धारा 9 एवं 10 के तहत शिकायत दर्ज करने में एवं आवेदन करने में संरक्षण अधिकारी की सहायता करना अनिवार्य है। (3) धारा 18 के अधीन घरेलू हिंसा के कृत्यों से स्वयं और स्वयं के बालकों के लिये संरक्षण प्राप्त करना। (4) धारा 18 के अधीन स्त्रीधन, आभूषण, कपड़ों और अन्य घरेलू चीजों को वापस कब्जे में लेना। (5) धारा 18 के अधीन आपके विरुद्ध घरेलू हिंसा करने वाले व्यक्ति को आपसे सम्पर्क करने या पत्र–व्यवहार करने से रोकना। (6) धारा 6,7,9 एवं 14 के अधीन चिकित्सीय सहायता, आश्रय परामर्श और विधिक सहायता प्राप्त करना। (7) धारा 22 के अधीन घरेलू हिंसा के कारण हुई किसी शारीरिक या मानसिक क्षति या किसी अन्य धनीय नुकसान के लिये प्रतिकार। (8) अधिनियम की धारा 12, 18, 19, 20, 21, 22 एवं 23 के अधीन शिकायत करने या किसी न्यायालय की सीधे ही अनुतोष (रिलीफ) के लिये आवेदन करना। (9) शिकायत, आवेदन एवं चिकित्सीय परीक्षण की प्रतियाँ प्राप्त करना। (10) किसी खतरे से बचाव के लिये पुलिस या संरक्षण अधिकारी की सहायता लेना।

संविधान द्वारा घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण नियम 2006 के आधार पर महिलाओं को हिंसा से निपटने के अनेक प्रावधान प्रस्तुत किये हैं, लेकिन फिर आये दिन महिलायें घरेलू हिंसा का शिकार हो रही हैं चाहे वे सीता, द्रोपदी, शकुन्तला, सावित्री हो या आधुनिक युग की आरुषि, शाहबानो, रूपम, दयाल, युक्ता मुखी, अरूणा शानबाग। ये सभी किसी न किसी रूप में अपमान व उत्पीड़न की शिकार हो रही हैं।

महिलाओं को अपनी लड़ाई स्वयं लड़ना होगी, अपना अधिकार व मान सम्मान स्वयं प्राप्त करना होगा नारियों में घरेलू हिंसा को समाप्त करने के लिये कुछ **सुझाव** इस प्रकार हैं –

(1) शिकायत कर्त्ता महिला की पहचान गुप्त रखना चाहिये। (2) मीडिया की भूमिका निष्पक्ष होना चाहिए। (3) लघु नाटक नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से ज्यादा से ज्यादा प्रसार होना। (4) मानव अधिकारों का शालेय पाठ्यक्रम में सम्मिलित करना। (5) लड़का/लड़की के संबंध में परिवार व समाज की सोच में परिवर्तन होना चाहिए। (6) समाज सेवी संस्थानों का विस्तार होना आवश्यक है। (7) हिंसा एवं अन्याय सहन न करते हुए हिंसा उत्पन्न करने वालों के विरुद्ध साहस से आवाज उठाना चाहिये। (8) ऐसे कृत्यों में लिप्त

व्यक्तियों का सामाजिक बहिष्कार किया जाये। (9) प्रकरणों की तत्काल सुनवाई करके पीड़िता को शीघ्रतिशीघ्र न्याय प्रदान करना चाहिए। (10) घरेलू हिंसा के प्रकरणों की एफ.आई.आर. दर्ज तुरंत होना चाहिए और उसकी एक प्रति पीड़ित महिला को भी देना चाहिए, कई बार ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को इनकी प्रति नहीं दी जाती है।

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 एवं नियम 2006 में अनेक धारायें निर्धारित है, जिसके तहत् महिलाये घरेलू हिंसा से मुक्त हो सकती है, लेकिन इसके लिये महिलाओं में जागरूकता होना अनिवार्य है यह जागरूकता शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों की महिलाओं में होना चाहिये तभी सम्पूर्ण समाज स्त्री पीड़िता, स्त्री विमर्श से मुक्त हो सकेगा यह एक ऐसी सामाजिक समस्या है, जिसका निदान कानून बनाकर नहीं वरन् पूरे समाज की मनेवृत्ति में परिवर्तन करके किया जा सकता है हमारा समाज नारी को लेकर पूर्वाग्रहों से ग्रसित है, उसमें अमूल परिवर्तन आवश्यक है। इसीलिये तो सीमोन ने अपनी पुस्तक 'नारी उपेक्षिता' में स्पष्ट कहा है, कि 'स्त्री को अमीर हो या गरीब, श्वेत हो या काली, अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी। यह दुनिया पुरुषों ने बनाई है पर स्त्री से पूछकर नहीं। इसीलिये केवल कानूनों के निर्माण से महिलाओं को घर में सुरक्षा एवं शांति प्राप्त नहीं होगी अपितु स्त्रियों के संबंध में पुरुषों की मानसिकता बदलना होगा और नारी को अपने पैर में संस्कृति, परम्परा, धर्म और समाज की श्रृंखलायें डाल उसे पीछे की ओर खींचने वाली स्त्रीजन्य ईर्ष्या से उबरना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एस. पी. दीक्षित एवं रामजीलाल, पालिटिकल थ्योरी, करनाल, नटराज पब्लिशिंग हाउस, पृ. 107।
2. अंजली – भारत में महिला अपराध, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
3. श्रीमती मंजू शर्मा – नारी के प्रति अत्याचार एवं मानवाधिकार, मार्क पब्लिकेशन्स, जयपुर।
4. डॉ. एस. एल. खरे – भारतीय इतिहास में नारी।
5. महक पत्रिका – 8 मार्च 2008 (अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस विशेषांक)
6. दैनिक भास्कर – 8 मार्च 2013 (अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस विशेषांक)
7. दैनिक भास्कर – 23 नवम्बर 2013, 22 दिसम्बर 2013, 24 दिसम्बर 2013।
8. टी. व्ही. न्यूज चैनल, आज तक – 5 दिसम्बर 2013
9. श्वेता राय, नारीवाद आधी आबादी काम।

****

समकालीन कवि रघुवीर सहाय के काव्य में सांस्कृतिक परिदृश्य

डॉ. अनसूया अग्रवाल *

शोध सारांश – समकालीन काव्य युगीन सांस्कृतिक परिदृश्य से उद्‌भूत वह जीवन-दृष्टि है, जिसके माध्यम से काव्य अपने समय का आकलन करता है। लोकोन्मुखता ही समकालीन काव्य की सार्थकता है। सामर्थ्यवान, जागरूक समकालीन कवि रघुवीर सहाय काव्य को क्रांति के हथियार के रूप में देखते हैं। वर्तमान विसंगतियों से चिंतित कवि निडरतापूर्वक मनुष्य के अधिकारों, मूल्यों एवं मानवता की रक्षा की बात कहते हैं। परिवर्तनशील सांस्कृतिक परिदृश्य में दानवीय उपभोक्ता संस्कृति के दुष्परिणामत: मानव-मूल्य, 'विनिमय-मूल्य' के रूप में परिवर्तनशील हैं; महानगरीय-बोध ने मानवीय संवेदनाओं को शुष्क बना दिया है। व्यावसायिक लाभ, गलाकाट प्रतिद्वंद्विता ही आज के मूल्य हैं। मानवीय संबंधों की आत्मीयता विलुप्तप्राय हो गई है। अराजकता, अनास्था, असुरक्षा, साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, निर्धनता आदि समस्याएँ समाज को खोखला कर रही हैं। एकाकीपन से जूझते मनुष्य की जिजीविषा संकटग्रस्त है। रघुवीर सहाय संघर्षो से जूझने की प्रेरणा देते हैं, दुख के स्थान पर समस्या के समाधान को महत्व देते हैं। इस उपभोक्तावादी अपसंस्कृति में स्त्री वस्तु-मात्र बनकर रह गई है, उसके सशक्तिकरण के आंदोलन भ्रामक सिद्ध हो रहे हैं। वर्तमान सांस्कृतिक परिदृश्य में कवि रघुवीर सहाय नि:स्वार्थ प्रेम, करूणा व निश्छल हास्य में ही ईश्वरीय सत्ता के दर्शन करते हैं। समाजवादी दर्शन के प्रशंसक होने के कारण वे राजनीतिक चेतना के प्रति विशेष सावधान हैं। मानवीय करूणा के कुशल चित्रकार, साधारण तथ्यों को अर्थवान बनाने वाले रघुवीर सहाय नि:संदेह अद्वितीय हैं।

प्रस्तावना – 'कविता संस्कृति की ऊपज है, भाषिक चिन्हों से निर्मित संस्कृति की ऊपज।'[1] समकालीन काव्य भी युगीन सांस्कृतिक परिदृश्य से उद्‌भूत है। समकालीनता वह जीवन-दृष्टि है, जिसके माध्यम से काव्य अपने समय का आकलन करता है और जीवन को नवीन विन्यास प्रदान करता है। संवेदना के धरातल पर कालचेतना की लोकोन्मुखता ही समकालीन काव्य की सार्थकता है। हिन्दी काव्य के समकालीन परिदृश्य के सामर्थ्यवान, जागरूक, संवेदनशील रचनाकार रघुवीर सहाय ने भी समकालीनता को परिभाषित किया है – 'समकालीन कविता की सबसे बड़ी पहचान यह है कि वह आक्रामक है। आज के लेखन ने कविता को क्रांति के लिए बेहतर हथियार के रूप में चुना है।'[2] सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक परिदृश्य के प्रति अत्यधिक सजग कवि रघुवीर सहाय वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समकालीन घटनाओं का परीक्षण-निरीक्षण करते हुए साधारण मानव की आशा-निराशा, पीड़ा-संत्रास, स्वप्न-आकांक्षा, प्रेम-घृणा आदि को अभिव्यक्त करते हैं। तमाम अंतर्विरोधों के बावजूद वे अपनी तरह के अद्वितीय प्रतिबद्ध एवं निडर कवि हैं। वर्तमान विसंगतियों के मध्य वे चिंतित हैं एवं साहसपूर्वक प्रश्न उठाते हैं, अपने अधिकारों की रक्षा की बात कहते हैं। 'हमने देखा है' कविता में उनकी विद्रोही पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

'हमको तो अपने हक सब मिलने चाहिए
हम तो 'सारा का सारा' लेंगे जीवन
'कम से कम' वाली बात हमसे न कहिए।'

परिवर्तनशील सांस्कृतिक परिदृश्य में दानवीय उपभोक्तावादी संस्कृति के दुष्परिणामत: मानव-मूल्य, 'विनिमय मूल्य' के रूप में परिवर्तित हो रहे हैं। महानगरीय बोध ने जीवन के वास्तविक सौंदर्य को नष्ट कर दिया है, मानवीय संवेदनाएँ विलोपित हो रही हैं। अराजकता, अनास्था, भ्रष्टाचार, भोगवाद, अलगाव, अमानवीयता, मूल्य भ्रंशता, असुरक्षा, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, बेरोजगारी, निर्धनता आदि समस्याओं से उत्पन्न तनाव, पीड़ा और संत्रास ने मानव-जीवन में घुटन को स्थाई बना दिया है। हमारे चतुर्दिक विशाल सागर के समान विद्यमान जीवन के मूल्यों का ह्रास हो रहा है, किंतु कवि रघुवीर सहाय निडरतापूर्वक कवि-कर्म में रत रहते हैं, वे इस बात पर चिंता व्यक्त करते हैं कि वर्तमान समाज में व्यावसायिक लाभ ही जीवन-मूल्य बन चुका है। लाभ मानवता से भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। कवि ने अपनी कविता 'फायदा' में इस तथ्य पर प्रकाश डाला है –

'उन्हें मतलब नहीं कि वक्त ने समाज के साथ क्या किया
वे जानना चाहते हैं कि वक्त ने जो हालत की है समाज की
उसमें वे सबसे ज्यादा क्या पा सकते हैं।'

शोषक शक्तियों के अन्यायों ने मानवीय आत्मीय संबंधों को खोखला कर दिया है, मनुष्य के सभी संबंध स्वार्थ की भावना से ओत-प्रोत हैं। मानवीय संबंधों की आत्मीयता, उष्णता, ऊर्जस्विता धीरे-धीरे समाप्त हो रही है। कवि इन संबंधों को पुनर्जीवित करने के आकांक्षी हैं। शोषित वर्ग हीन भावना से ग्रस्त है, स्वयं के प्रति भी अविश्वास की भावना गहराती जा रही है। रघुवीर सहाय शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति रखते हुए उन्हें आततायियों से अपने मूल्यों व संस्कृति की रक्षा के लिए प्रोत्साहित करते हैं। 'कैसियस क्ले की औरतें' कविता की पंक्तियाँ देखिए–

'फैला विराट है, विशाल है, अपार देश
पर अपार से भी जियादा
अथाह है
हम कितने गहरे में चले जाएँ और एक
ताकत ले आएँ,
वहीं कहीं बूड़ नहीं रहें।'

सांस्कृतिक अतिक्रमण के दौर में पाश्चात्य सभ्यता से आयातित महानगरीय बोध ने मनुष्यों के मध्य आत्मीयता की नदी को सुखाकर गहरी खाई का निर्माण कर दिया है। पारिवारिक संबंधों में बिखराव, पीढ़ी अंतराल, मूल्यहीनता, फैशनपरस्ती आदि समस्याएँ भी इसी अपसंस्कृति की देन हैं। पतनशीलता के इस दौर में कवि का ह्रदय भी घुटन, पीड़ा एवं तनाव से त्रस्त

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिंदी) शासकीय महाप्रभु वल्लभाचार्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महासमुन्द (छ.ग.) भारत

है। समाज के सरोकारों से कवि का अप्रभावित रहना असंभव है, रघुवीर सहाय लिखते हैं- 'हम दुनिया में जितना कष्ट देखते हैं, लोगों की व्यथा का जितना अनुभव करते हैं, जब हमारी चेतना में निमज्जित होता है अपनी अनुभव शक्ति को हम पुष्ट नहीं हुआ पाते हैं।'[3]

अर्थ केंद्रित मनुष्य अभिजात्य संस्कृति की ऊपज है। आज का मनुष्य दोहरा-तिहरा जीवन जी रहा है, फिर भी एकाकीपन से जूझ रहा है। कुंठित मनुष्य की जिजीविषा संकटग्रस्त है, किंतु कवि संघर्ष करते हुए विजय प्राप्ति हेतु प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि वे दुख या समस्या को नहीं वरन् समाधान को महत्व देते हैं। भोगवाद के विनाशात्मक परिदृश्य में स्त्री की स्थिति भी विचित्र बनी हुई है। एक ओर स्त्री-सशक्तिकरण की बात हो रही है तो दूसरी ओर उपभोक्तावाद के बाजार में स्त्री वस्तु के रूप में विज्ञापित हो रही है। अंतर्द्वन्द्व से ग्रस्त स्त्री जागरूकता के अभाव में अपनी पीड़ा के मूलभूत कारणों से अनभिज्ञ है। जीवन के आनंद से विरहित स्त्री के प्रति रघुवीर जी के हृदय में संवेदना के तार झंकृत होते हैं। 'चेहरा' कविता में कवि ने एक निर्धन लड़की के माध्यम से नारीत्व के अस्तित्व की अस्वीकृति को दर्शाते हुए प्रश्न उठाया है-

'वह स्वीकृत वर्ग में शामिल होना चाहती है
और उस वर्ग की लड़कियाँ जो लड़का बनती हैं
उनकी तरह बनने की इसकी कोशिश एक दुख भरी कोशिश है
क्योंकि वह चेहरा बदलकर
अपने वर्ग का ही लड़का बनेगी।'

'कल के लिए' शीर्षक कविता में रघुवीर जी भावी पीढ़ी तथा वर्तमान पीढ़ी के मध्य अलगाव व अंतराल को दर्शाते हैं। युवा होते लड़के और अमानवीयता से युक्त जीवन-मूल्यों में संबंधों का खोखलापन दर्शाया गया है-

'मैंने लड़के से कहा कि मेरा चश्मा लाओ
और वह सुनकर चला गया
उससे कुछ कहने पर उसमें अपनी दुनिया बनने लगती है
और वह वहाँ से बहुत देर में आता है
तो मैं ठहरा रहा उस चश्मे के लिए
वह आया लिए हुए-आपने मंगाया था
ओह मैंने मांगा था, अब जरूरत नहीं
इंतजार किया करते हैं कि कोई आए हमारे यहाँ।'

दानवीय सांस्कृतिक अतिक्रमण से उत्पन्न समस्याओं से जूझते-जूझते मानव-मन में अनास्था व निराशा घर करने लगी है और ईश्वरी सत्ता पर भी प्रश्न-चिन्ह उठने लगते हैं। ईश्वरीय शक्ति के प्रति रघुवीर सहाय की आस्था है, वे निःस्वार्थ प्रेम, करूणा व निश्छल हँसी में ही ईश्वरीय सत्ता की अभिव्यक्ति पाते हैं। निश्चित, तल्लीन बचपन कवि को आत्मविभोर कर देता है और वे बचपन की ओर लौटने को विकल हो उठते हैं। कारूणिक दृष्टि से पर-दुख का दर्शन, अनुभव तथा उससे तदाकार होना ही कवि का स्वभाव होता है। करूणा रघुवीर सहाय के लिए मानवीय शक्ति और सौंदर्य का पर्याय है। उनके काव्य-संसार में मानव-मन की टटोल है।

आज आमजन स्वतंत्र लोकतांत्रिक देश में भी मृत्यु के सन्निकट ही हैं। निर्धनता नैतिक-अनैतिक का भेद मिटाकर अपराधों की वृद्धि में सहयोगी बनती है। ग्रामीण-कस्बाई लोग रोजगार की खोज में महानगरों में आते हैं और अपना अस्तित्व खोकर गुमनाम जीवन की नियति को विवशतापूर्वक स्वीकार कर लेते हैं। ऐसे व्यक्ति सदैव अपने अतीत और वर्तमान केअंतर्द्वद्ध में उलझे रहते हैं और अंततः मृत्युबोध से ग्रस्त हो जाते हैं अथवा अपराधग्रस्त हो जाते हैं। कवि रघुवीर सहाय समाजवादी दर्शन के प्रशंसक रहे हैं अतः राजनीतिक चेतना के प्रति विशेष सावधान भी है। 'समय आ गया है' कविता में वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को प्रभावशाली ढ़ंग से अभिव्यक्त करते हुए वे कहते हैं-

'दस बरस बाद फिर पदारूढ़ होते ही
नेतराम पदमुक्त होते ही न्यायाधीश
कहता है समय आ गया है
मौका अच्छा देखकर प्रधानमंत्री
सुंदर नौजवानों से कहता है गाता बजाता
हारा हुआ दलपति।'

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रघुवीर सहाय निश्चित रूप से परिवर्तनशील सांस्कृतिक परिदृश्य में मानवीय करूणा के कुशल चित्रकार हैं। अनुभव और संवेदना ही रघुवीर सहाय के काव्य के अर्थवादी मूल्य हैं। वे इस दृष्टि से अद्वितीय हैं कि साधारण तथ्यों में अर्थवत्ता की खोजकर उसे सार्थकता प्रदान करते हैं। वे लिखते हैं- 'मुझे शक्ति यह जानकर नहीं मिलती है कि मैंने अपने को कहाँ जोड़ा है। मेरा सर्जनात्मक सुख यह जाननेमें है कि मैंने अपने को कहाँ तोड़कर एक नई बस्ती बसाई है और यदि यह भी कमोबेश देख सकूँ कि वह नई सृष्टि मेरी पुरानी बस्ती को उजाड़ कर बनी है तो क्या कहने।'[4] कवि अपने समकालीन रचनाकारों को ऐसी काव्य-रचना हेतु प्रोत्साहित करते हैं, जो जीवन तथा रचना-प्रक्रिया में संतुलन स्थापित कर सकें। 'अरे अब ऐसी कविता लिखो' शीर्षक काव्य-रचना में उनकी पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

'अरे अब ऐसी कविता लिखो
कि कोई मूड़ नहीं मटकाए
न कोई पुलक-पुलक रह जाए
न कोई बेमतलब अकुलाय
छन्द से जोड़ो अपना आप
कि कवि की व्यथा हृदय सह जाय
थाम कर हंसना रोना आज
उदासी होनी की कह जाय।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अरविंदाक्षर - समकालीन हिन्दी कविता, दिल्ली - राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रथम आवृत्ति 2001, पृ.12
2. नवल, नंदकिशोर - समकालीन काव्य यात्रा, नई दिल्ली - राजकमल प्रकाशन, 2004, भूमिका से उद्धृत।
3. अरविंदाक्षन- समकालीन हिन्दी कविता, दिल्ली - राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रथम आवृत्ति 2001, पृ.38
4. सहाय, रघुवीर - कुछ पते कुछ चिट्ठीयाँ-घुटन के बार, पृ. 38

****

बीसवीं शताब्दी के हिन्दी के चर्चित उपन्यासकारों के उपन्यासों में परिवार का बदलता स्वरुप

आराधना कौरव *

शोध सारांश – महानगर व ग्राम संस्कृति पर सामाजिक परिवर्तन का गहरा प्रभाव पड़ा है। सामाजिक परिवर्तन के कारण महानगरीय जीवन में विघटन की प्रक्रिया में तीव्रता आई है, जिसके परिणामस्वरूप सम्बन्धों का आधार अर्थ हो गया है। आर्थिक दबाव के कारण नगरों में स्त्रियाँ भी व्यवसाय तथा नौकरी करने लगी है। स्त्री-पुरूष सम्बन्ध अत्यन्त जटिल होते जा रहे है। सामाजिक परिवर्तन के कारण ग्रामीण संस्कृति में भी विकृति आने लगी है। जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में अपराधों की संख्या बढ़ी है और लोगों का जीवन असुरक्षित हो गया है। ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति दिन पर दिन बदतर होती जा रही है। आज हम लोग अत्यन्त भौतिकवादी होते जा रहे है। जीवन के अधिकांश मूल्यों, आदर्शो और संस्कृति को भूलकर युगवादी होने की दौड़ में है। आने वाली पीढ़ी तो मुझे पूरी तरह धन में लिप्त तथा महत्वाकांक्षी लगती है। उनके लिए संस्कृति का कोई अर्थ नहीं है, वे सिर्फ अपने सुख और भोग के लिए जीना चाहते है।

प्रस्तावना – प्राचीनकाल में सयुंक्त परिवार हुआ करते थे। जिसमें एक से अधिक भाईयों के परिवार तथा एक से अधिक पीढ़ियों के सदस्य सम्मिलित होकर उनके सदस्य एक-दूसरे से सम्पति, आय, पारस्परिक अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के द्वारा सम्बद्ध होते थे परन्तु वर्तमान में समय बदल गया है। संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार ने व्यक्ति को आत्मनिर्भरता दी है और स्वच्छंद जीवन यापन की आकांक्षा ने एकांकी परिवारों को प्रोत्साहित किया है। आज परिवार का अर्थ पति-पत्नी और बच्चे रह गया है। परिपक्व आयु का नवविवाहित युगल अब अपने बीच किसी परिवारजन का हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते। इसीलिए संयुक्त परिवार व्यवस्था, जिसका भारतीय सामाजिक संरचना में विशेष महत्व है, का परिवर्तित समाज में धीरे-धीरे महत्व कम होता जा रहा है।

आधुनिक युग में व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है इसके लिए व्यक्ति अपनी तमाम परम्पराओं को ताक पर रखने को तैयार हो गया है क्योंकि वह स्वतंत्र जीवन जीना चाहता है। जयशंकर प्रसाद के 'तितली' में इन्द्रदेव भी स्वतन्त्र्य जीवन का आकांक्षी है, वह संयुक्त परिवार की घुटन स्पष्ट करता हुआ कहता है- 'प्रत्येक प्राणी अपनी व्यक्तिगत चेतना का उदय होने पर एक कुटुम्ब में रहने के कारण, अपने को प्रतिकूल परिस्थिति में देखता है। इसलिए सम्मिलित कुटुम्ब का जीवन दु:खदायी हो रहा है।'[1]

संयुक्त परिवार की सुस्थिरता तथा शक्ति इस बात पर आधारित थी कि उसमें परिवार का मुखिया, जो कि परिवार का सबसे बड़ा सदस्य होता था, उसी का अनुशासन परिवार का प्रत्येक सदस्य मानता था। परन्तु आधुनिक युग में यह स्थिति बदल गई है। कमलेश त्रिपाठी का 'खोया हुआ आदमी' में परिवार के पिता और मुखिया श्यामलाल कहता है- 'वंश में कुछ नहीं रह गया......वह कुछ फैसला नहीं ले सकते।'[2] प्राय: यही स्थिति 'पत्थरों का शहर' में रिटायर्ड नवलबाबू की है। 'सप्ताह भर के भीतर ही नवलबाबू को लगने लगता है कि वे अपने घर में नहीं किसी सराय में वापस आये है, जहाँ किसी से उनका नजदीक का रिश्ता नहीं है। लड़के है तो उनका मिजाज ही नहीं मिलता। लड़कियाँ है तो इतनी सिर चढ़ गई है जैसे उन्हें कभी पराए घर में जाना ही नहीं है।'[3] सम्बन्धों की इस असहनीय स्थिति से दु:खी होकर नवलबाबू अपना शहर दिल्ली छोड़कर इलाहबाद लौट जाते हैं। गोविन्द मिश्र के 'पाँच आँगनों वाला घर' में राधेलाल ने पूरे परिवार का पालन-पोषण किया। जब वह बीमार हो गया तो उसका छोटा भाई बांके अलग होने को उत्सुक हो राधेलाल से कहता है- 'बहुत बड़ा घर हो तो संभल अच्छी नहीं होती। बाँट दिया जाये तो अच्छा रहता है। आजादी की लहर चल रही है तो सब ये सोचते है कि वे अपने-अपने मामलों में स्वतंत्र हो जायें।[5] जिस भाई ने अपने छोटे भाईयों को पिता की तरह पाला उस भाई को बीमारी के समय उसके भाई उसे अकेला छोड़ अलग हो जाना चाहते है।

परिवार का स्वरूप परिवर्तन सिर्फ शहरों तक सीमित नहीं रहा ग्रामीण जीवन में भी तेजी से आ रहा है। हिमांशु श्रीवास्तव के 'नदी फिर बह चली' में जमींदार और कृषक परिवार समान रूप से टूट रहे है। आर्थिक कारणों के साथ-साथ स्त्रियाँ परिवार के स्वरूप परिवर्तन में मुख्य भूमिका निभा रही है। जमींदार परिवार के कैलाशलाल बँटे हुए परिवार में भी शांति न पा सकें क्योंकि- 'घर की औरतों ने इस निबटारे को भी टिकने न दिया और बाबू कैलाशलाल ने घर से संबंध तोड़ सा लिया। वे अपनी बीवी बच्चों को लेकर बाहर-बाहर नौकरी पर रहने लगे।'[6] फणीश्वरनाथ रेणु के 'परती: परिकथा' में भी विभिन्न परिवारों की टूटन व्याप्त है। इस टूटन के पीछे मुख्यत: आर्थिक कारण ही है। बाकी अन्य सामाजिक कारण गौण है। गाँव की धरती के एक टुकड़े के माँ, बाप, भाई आदि कई दावेदार है। संयुक्त परिवार की ईर्ष्या व द्वेष के अखाड़े से बन गये है। बेटा बाप की शक्ति को चेलेंज करता है तो पिता उसे दुश्मन की नजर से देखता है। घुघंट में से ही महीन आवाज में बहू मर्म-वेधी वाणी बोलती है। ससुर भी आखिर कहाँ तक चुप रहेगें? वह भी उसी भाषा में प्रतिकार करता हुआ कहता है- 'साले की बेटी! मुहँ तोड़ दूँगा। लंगटा की बेटी लंगटी।'[7] यद्यपि ससुर को अधिकार है कि वह बहू को अप्रत्यक्ष भला-बुरा कह सकता है लेकिन आज कौन किसी की सुनता है? बेटा लाठी लेकर मुकाबले के लिए तैयार हो जाता है। घर के पूत आज पड़ोसी से भी गया गुजरा व्यवहार करते है।

सच्चिदानंद 'धूमकेतु' के 'माटी की महक' में भी ग्रामीण संयुक्त परिवार के बदलते स्वरूप का अंकन है। जमींदार के बेटे गोपी बाबू और मोहन में कतई नहीं बनती। दोनों की दो विरोधी विचारधाराएँ है। एक सामन्त है तो दूसरा नवविचार प्रधान। सामन्ती हवेली में मोहन का दम घुटता है। वह अपने गलें में

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, (म.प्र.) भारत

से इस सामंतवादिता की घंटी उतार फेकने का पक्षधर है। वह हवेली की मर्यादा और खान–पान आदि को कुछ नहीं समझता। उसका कथन शत्–प्रतिशत एक व्यवहारिक सच्चाई है कि– 'आँखों पर इज्जत का झूठा पर्दा जब तक पड़ा रहेगा, तब तक सच्चाई की और नजर नहीं उठेगी। छोटी–छोटी बात भी खानदान की इज्जत को ललकारने वाली सिद्ध होगी।'[8] अपनी नयी वैचारिक मानसिकता के कारण वह परिवार को छोड़ जाता है। परिवारों का स्वरूप कहीं आर्थिक आवर्तों, कहीं आधुनिकता प्रधान नई दृष्टि एवं कहीं अन्य सामाजिक विसंगतियों के कारण बुरी तरह बदल रहे है।

रामदरश मिश्र के 'जल टूटता हुआ' में परिवार के बदलते स्वरूप का चित्रण है। बनबारी और धनपाल दोनों भाईयों में प्रेम होते हुए भी घर में रोज होते क्लेश और देवरानी–जेठानी की नोंकझोंक ने घर को नरक बना दिया। आये दिन आस–पास के लोग फैसला करने के लिए आते रहते है। आखिर एक दिन तंग आकर धनपाल ने कह दिया– 'अलग हो जाओ और मरो।'[9] और दोनों अलग–अलग हो गये। परिवारों के बदलते स्वरूप के परिणामस्वरूप आज व्यक्ति अकेला पड़ता जा रहा है। उसके अन्दर असुरक्षा, संत्रास, कुठाएँ, निराषा, आदि प्रवृत्तियाँ पनप रही हैं। डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त ने लिखा है– 'संयुक्त परिवार विघटन की सच्चाई का समर्थन सन् 1959 की जनगणना से भी होता है। भारतीय ग्रामों में प्रत्येक तीन परिवारों में एक ऐसा परिवार मिला है, जिसके सदस्यों की संख्या तीन या इससे कम है। जगनणना रिपोर्ट के अनुसार छोटे घरों का इतने अधिक अनुपात में होना इस बात का द्योतक है कि अब परिवार परम्परागत व्यवस्था के अनुसार संयुक्त नहीं रहे।'[10]

मृदुला गर्ग के 'कठगुलाब' में नर्मदा की सगाई टुट जाती है। इस पर असीमा नर्मदा से कहती है– 'अच्छा हुआ तू बर्बाद होने से बच गई।'[11] उषा प्रियंवदा के 'पचपन खंभे लाल दीवारें' में सुषमा कहती है– 'जीवन में बहुत महत्वपूर्ण काम है। सिर्फ विवाह तो ही नहीं, शादी के बिना भी औरतें आन्नद से रह सकती है।'[12] इनके अलावा अनेक उपन्यासों के माध्यम से समकालीन समय में विवाह व्यवस्था के विरोध का चित्रण किया गया है। जड़ संस्कारों को छाती से लगा कर रखने के कारण यदि संयुक्त परिवार में जीवन यापन करने वाली बहुओं को कूप–मंडूक के भाँति रहना पड़ेगा तो वे इस स्थिति से विद्रोह करेंगी जो कि संयुक्त परिवार के टूटने का प्रमुख कारण है। चन्द्रकिरण सोनरेक्सा के 'चंदन–चाँदनी' की गरिमा घर से घूँघट प्रथा को समाप्त करने की बात को लेकर कहती है– 'जीने की साधारण सुविधाओं के लिए भी हमें यह क्यों सोचना पड़े कि बुढ़ऊ लुड़क जाएँ तो हम अपने मन की निकालेंगे। पति के साथ अन्य स्थान पर बदली हो जाए तो हम इस प्रकार मौज करेंगे। वह समय लद गया जब बहुओं के शोषण पर सारा परिवार पाँव पर पाँव रखकर फूली–फूली खाता था।'[13] शशिप्रभा शास्त्री के 'क्योंकि' में एकांकी परिवार का चित्रण है। मेहरून्निसा परवेज के 'कोरजा' में सयुंक्त परिवार की विसंगतियों का चित्रण है।

शिवानी के 'चौदह फेरे' में कर्नल संयुक्त परिवार के बीच रहकर परिवारजनों की सेवा करने वाली पत्नी नंदी को झिड़कता है– 'हद है लगता है तुम्हें घर के बूढ़े और बूढ़ियों से ही मुहब्बत है रात भी वहीं बिता आती।'[14] स्वच्छद जिन्दगी जीने का शौकीन कर्नल छुट्टियाँ पूरी होने से पहले ही गाँव से कलकत्ता भाग जाता है। आजकल हर कोई अपना राग अलापता है। इसी कारण आये दिन घर के बँटवारें हो रहे हैं। ये एक–दूसरे से जुड़ते भी है तो अपनी स्वार्थ सिद्धी के लिए, स्वार्थ हो तो भाई अपनी बहन को भी दुत्कार सकता है। जैसे 'अर्द्धनारीश्वर' में श्यामला ने गाँव लौटकर पाया कि पैतृक घर में अब उसके लिए कोई जगह नहीं है, माँ बेबस है। भाई–भाभी ने आँखे फेर ली है। श्यामला अपने ही जन्मस्थान में नितान्त अजनबी अकेली होकर रह गई। मध्यवर्गीय व्यक्ति अपनी सीमित आय से अपने परिवार में सुख–सुविधा जुटाने की कोशिश में अन्य रिश्तों को नजरअन्दाज करते है। 'मुझे चाँद चाहिए' में किशोर ने जब बताया कि भैया–भाभी अलग होने की सोच रहे है तो वर्षा सुनकर स्तब्ध रह गई। भाभी का कहना है कि– 'यहाँ की जिम्मेदारियाँ उन्हें नोचकर खाँ जाएँगी। आखिर अब मुझे अपने बच्चों का भी तो सोचना है। भैया इटावे में तबादले की कोशिश कर रहे है। नहीं हुआ तो यही अलग मकान लेंगे।'[15] आज व्यक्ति इतना व्यस्त हो गया है कि अपनी पत्नी और बच्चों के अलावा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ आत्मीयता स्थापित करने में असमर्थ है।

निष्कर्ष – नवीन भौतिक सभ्यता की ओर नित नये परिवर्तन हो रहे हैं। सामाजिक और पारिवारिक परम्परागत संस्थाएँ प्रभावित हो रही है। इससे पारिवारिक और सामाजिक संतुलन में तनाव और संघर्ष की स्थिति बड़ी है। इससे पारिवारिक स्वरूप में भी बदलाव आ रहे है। सम्यता और संस्कृति सामाजिक और पारिवारिक जीवन की मूर्तिमान अभिव्यक्ति है। जिसमें परम्पराओं, आदर्शो, मूल्यों, भावनाओं, रिश्ते–नातों, आपसी सोहार्द्र और मानवीय मूल्यों का स्थान है। सम्यता के विकास के साथ–साथ सांस्कृतिक मूल्यों में भी परिवर्तन होता जा रहा है। समकालीन संस्कृति परम्परागत आदर्शो मूल्यों से भिन्न–भिन्न नये रूप में विकसित होने लगी है जिसमें व्यक्तिगत अहम्, निष्ठा, स्वार्थ, भोग–विलास को अहम् स्थान दिया गया है। नयी संस्कृति में जहाँ एक और व्यक्ति स्वातंत्र्य है वही दूसरी और सामाजिक एवं पारिवारिक मूल्यों को नकारा है। जिससे व्यक्तिगत जीवन में क्षुद्रता और संकीर्ण मानसिकता उत्पन्न हो गई है। सामाजिक और पारिवारिक सम्बन्धों में एक नई स्थिति और नया रूप आया है। जो पारिवारिक विघटन की आधारशीला है। पारिवारिक विघटन में पति–पत्नी, पिता–पुत्र, माँ–बेटे, भाई–बहन और रिश्ते–नातों की टूटन है। आज का टकराव पति–पत्नी के मध्य ही नहीं है अपितु इससे माता–पिता, भाई–बहन, पिता–पुत्र इत्यादि में कई सामाजिक इकाईयाँ भी उत्पन्न हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जयशंकर प्रसाद– तितली– पृष्ठ 32
2. कमलेश त्रिपाठी– खोया हुआ आदमी– पृष्ठ 13
3. सुरेश सिन्हा–पत्थरों का शहर– पृष्ठ 10
4. नागार्जुन– रतिनाथ की चाची– पृष्ठ 136
5. गोविन्द मिश्र–पाँच आँगनों वाला घर– पृष्ठ 77
6. हिमांशु श्रीवास्तव– नदी फिर बह चली– पृष्ठ 112
7. फणीश्वरनाथ रेणु–परतीः परिकथा– पृष्ठ 457
8. सच्चिदानन्द धूमकेतु– माटी की महक– पृष्ठ 53
9. रामदरश मिश्र– जल टूटता हुआ– पृष्ठ 67
10. डॉ. ज्ञानचंद गुप्त– स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्रामचेतना– पृष्ठ 112
11. मृदुला गर्ग– कठगुलाब– पृष्ठ 140
12. उषा प्रियंवदा– पचपन खम्भे लाल दीवारें– पृष्ठ 10
13. चन्द्रकिरण सोनरेक्सा– चंदन–चाँदनी–17–18
14. शिवानी– चौदह फेरे– पृष्ठ 15
15. सुरेन्द्र वर्मा– मुझे चाँद चाहिए– पृष्ठ 183

संत काव्य में जीवन दर्शन

डॉ. बिन्दू परस्ते *

प्रस्तावना – भगवान के रूप और गुण की विविधता के आधार पर भक्ति काल की निर्गुण और सगुण दो धाराऐं प्रवाहित हुई। मुसलमानों के देश में बस जाने के कारण यहाँ के सन्त कवियों ने भगवान के निर्गुण स्वरूप को अपनाया और एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा की। इन सन्त कवियों के चिन्तन में सगुण भक्ति की अपेक्षा ज्ञान का प्राधान्य था। अत: ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि कहलाते है। उन्होंने अपने काव्य द्वारा धार्मिक रूढ़ियों और मिथ्या आडम्बर की कटु आलोचना की और धर्म का आडम्बर रहित सरल और सुगम मार्ग प्रस्तुत किया। एक ओर हिन्दुओं की कुप्रथाओं तिलक लगाना, माला फेरना, मूर्ति पूजा का विरोध किया और दूसरी ओर रोजा रखना, मस्जिद में नमाज पढ़ना आदि मुसलमानों की आडम्बर प्रधान क्रियाओं का विरोध कर मन की शुद्धता पर बल दिया। सन्त कवि वर्णाश्रम व्यवस्था के घोर विरोधी थे। अत: उन्होंने जॉति-पॉति के भेदभाव मिटाने का प्रयत्न किया। सन्त कवि साधक पहले थे कवि बाद में। कविता उनके लिए धार्मिक सिद्धान्तों के प्रचार का माध्यम मात्र थी। यह सत्य है कि, इस साहित्य में आध्यात्मिक विषयों की अभिव्यक्ति हुई है। पर वह जन जीवन में डूबी हुई अनुभूतियों से सम्पन्न हैं।

सन्तों के चिन्तन, जीवन दर्शन तथा काव्य धारा पर आधारित भारतीय उपनिषदों का व्यापक प्रभाव है। उपनिषदों में प्रतिपादित ब्रह्म, जीव, जगत और माया सम्बन्धी विचारों के साथ ब्रह्म के स्वरूप निर्देशन से सम्बन्ध उपमानों और अप्रस्तुत योजनाओं को संत काव्य में उसी रूप में ग्रहण किया गया है। उपनिषदों के पश्चात् सन्त काव्य पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है – शंकराचार्य के अद्धैत दर्शन का संतो को विवर्त भावना प्रतिबिम्बवाद प्रणव भावना साधना पक्ष और भक्ति पद्धति पर शंकराचार्य का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। आत्मा की सर्वक्षपता, सर्वात्म भावना और सर्वशक्तिमत्ता का भाव विचार भी शंकराचार्य से ही गृहीत है।

जैन कवियों में से योगिन्दु मुनि रामसिंह देवसेन आदि अपभ्रंष के कवियों के उपदेश परक मुक्तक साहित्य की अनेक विशेषताओं का प्रभाव हिन्दी के सन्त साहित्य पर पाया जाता है।

सन्त काव्य और संत दर्शन पर नाथ पंथ का भी प्रचूर प्रभाव है। नाथ पंथी कवियों और विचारकों के शून्यवाद उनके द्वारा गुरू की प्रतिष्ठा और सृष्टि क्रम आत्मा जीव आदि के विषय में उनकी मान्यताओं से संत कवि पूर्णत: प्रभावित रहे है, जिस प्रकार सिद्धों और योगियों ने धार्मिक साधना के क्षेत्र में अंत: शुद्धि, इन्द्रिय निग्रह और सदाचार को प्रमुख स्थान दिया है उसी प्रकार संतो ने भी इनकी महत्ता बताई है नाथों और सिद्धों का काव्य विषय भी मिलता जुलता है – यथा

गुरू उवरसें अमिय रसु, धावहिण पीअहु जेहि।
चहु सत्यत्थ मरूत्थलिहिं, तिसिए मरिअउ तेहि।।

– सरहपा (सिद्ध)

गुरू गोविंद दोउ खड़े , काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरू आपनो जिन गोबिन्द दियो बताय।।

– कबीरदास

संत काव्य के अविभवि से बहुत पहले ही रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, रामानन्द आदि आचार्यो ने वैष्णव भक्ति आंदोलन का व्यापक प्रचार-प्रसार कर दिया था। कबीर, रैदास, सेना-पीपा आदि रामानन्द के ही शिष्य थे। भक्ति में प्रेमतत्व का समावेश कर उन्होंने उसे सुसाध्य स्वरूप प्रदान कर दिया था। ईश्वर के पर्यायवाची नामों के राम, हरि, गोविन्द का प्रयोग संतो ने भी वैष्णवों के समान श्रद्धापूर्वक किया है। अल्लाह, खुदा आदि नामों का प्रयोग वे उपदेश देते समय या हिन्दू – मुस्लिम एकता का प्रतिपादन करने के लिए ही करते है। ईश्वर के प्रति अनुरक्ति वे राम और हरि आदि वैष्णवों के प्रिय नामों से ही प्रकट करते हैं। वैष्णवों के प्रति संतो का श्रद्धा भाव भी प्रकट किया गया है –

मेरे संगी दोउ जग्गॉ, एक वैष्णौं एक राम।
वो है दाता मुकति का जो सुमिराबै नाम।

12वीं, 13वीं शताब्दी में महानुभाव सम्प्रदाय, बारकरी सम्प्रदाय आदि सम्प्रदायों का उदय हुआ। बारकरी सम्प्रदाय की स्थापना संत ज्ञानेश्वर के द्वारा हुई। उन्हीं की परम्परा में निवृत्तिनाथ, मुक्ताबाई, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम आदि संत हुए। इन संतो ने हिन्दी में भी काव्य रचना की। भगवान के प्रति दृढ़ अनुराग, मिलना कॉंक्षा, प्रणय निवेदन, अद्धैत दर्शन का प्रतिपादन, गुरू का महत्व, मूर्तिपूजा व जाति-पाँती भेद का विरोध योग साधना का खण्डन, हिन्दु मुस्लिम एकता का प्रतिपादन महाराष्ट्रीयन और हिन्दी संत कवियों में समान रूप से मिलती है।

संतो की विचारधारा इस्लाम के एकेश्वरवाद से भी पर्याप्त प्रभावित हुई। इस्लाम में निषेधात्मक प्रवृत्ति अधिक है जो संत काव्य में खण्डन की प्रवृत्ति के रूप में विकसित हुई। मूर्तिपूजा और अवतारवाद का विरोध संत काव्य में इस्लाम की ही देन है। सूफी मत ने संतो की विचारधारा के साथ उनकी अभिव्यंजना शैली को भी प्रभावित किया हैं।

सूफी मत ने देश व्यापी धार्मिक कटुता को समाप्त करके प्रेम, सहिष्णुता उदारता और मधुरता की भावना का प्रसार किया।

संत काव्य के प्रवर्तन करने का श्रेय निश्चय ही कबीर को दिया जाता है। नामदेव का नाम इस दिशा में उल्ल्रेखनीय है जिन्होंने महाराष्ट्र में जन्म लेकर 80 वर्ष की दीघार्यु में उत्तर भारत की अनेक लम्बी यात्राएॅ की जिनके स्मारक आज भी राजस्थान, पंजाब तथा अन्य उत्तरी राज्यों के कई स्थानों पर प्राप्त होते हैं। कबीर अपनी प्रखर प्रतिभा, सुद्दढ़ व्यक्तित्व और प्रौढ़ चिन्तन एवं कवि सुलभ सहृदयता एवं मार्मिक व्यंजना शैली के बल पर सन्त मत और संत काव्य का प्रसार समस्त उत्तर भारत में किया।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कबीर पंथ के अलावा संत मत में रैदास, नानक पंथ, दादू पंथ, निरंजनी, बाबरी सम्प्रदाय, मलूकदासी पंथ, दरियादासी, चरणदासी, गरीब पंथ, रामस्नेही आदि सम्प्रदाय प्रमुख हैं।

चौदहवीं शताब्दी के अंत में रामानुजाचार्य की शिष्य परम्परा में इनका चौथा स्थान माना जाता है। ये कबीर और पीपा के गुरू थे। रामानन्द की प्रेरणा से ही कबीर ने साधना एवं भक्ति को सभी वर्णो एवं सभी वर्गो के लिए सुलभ कर दिया था। रामानन्द ने रमावत सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था जिसमें राम को आराध्य माना जाता है। रामानन्द के राम निर्गुण, निराकार, अगम, अगोचर होते हुए भी संतो, भक्तों और दु:खियों के लिए अवतार धारण कर लेते हैं।

कबीर एक ऐसे विचारक और क्रांतिकारी धर्म साधक के रूप में मिलते है, जिन्होंने दृष्टा बन कर शताब्दियों तक भारतीय धर्म साधना, उपासना, समाज सुधार की दिशा में नेतृत्व प्रदान किया। कहते है सिकन्दर लोदी ने काजी के कहने पर कबीर पर हाथी चलवाया, उन्हें जीवों से बांध कर गंगा में फेंक दिया तथा गर्म तेल की कढ़ाई में डलवा दिया किन्तु कबीर का बाल भी बांका न हुआ। कबीर का जन्म एक किवंदती के अनुसार एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था जिन्हें एक मुसलमान जुलाहे ने पाला था। कबीर की पत्नी का नाम लाई व पुत्र का नाम कमाल था। बाहरी कर्मकाण्डों का विरोध और आंतरिक साधना का समर्थन कबीर ने किया। हिन्दुओं और मुसलमानों की सामाजिक धार्मिक रूढ़ियों तथा बुराईयों की कबीर ने जमकर खबर ली। कबीर सही अर्थो में क्रांति के अग्रदूत कवि और संत थे।

नानक पंथ के प्रर्वतक गुरूनानक देव जिन्होंने सिक्ख पंथ का प्रवर्तन किया। वे बचपन से ही आत्मचिंतन और ईश्वर भक्ति में मग्न थे। नानक देव भ्रमणशील साधु थे जिन्होंने सही दिशाओं में यात्रा करके रूढ़िवाद, जातिवाद एवं अनाचारों का विरोध किया। वे निर्गुणी पंथ के थे।

कबीर के शिष्य धर्मदास भी संत काव्य परम्परा के रत्न है, जिन्होंने कबीर के वाणिज्यों का बीजक नाम से संग्रह किया। धर्मदास के स्वरचित पद धनी धरमदास की बानी नाम से प्रकाशित हुए है। कबीर की परम्परा में दादू दयाल, सुन्दरदास, रज्जवदास, यारी साहब, पलटू साहब, मलूकदास, प्राणनाथ आदि संतो ने भी काव्य रचना करके कबीर के संत मत का विकास किया।

संत काव्य की यह परम्परा अनवरत चलती रही है। रीतिकाल के कवि भी लोगों से उकसाने पर निवृत्तिमूलक संतो के से कविन्त करते थे। देव, पदमाकर आदि के कई छन्द इसके उदाहरण है, आधुनिक काल में भी अपने फक्कड़ाना स्वभाव का प्रदर्शन करने वाले भगवती चरण वर्मा की भैसा गाड़ी, बाल कृष्ण शर्मा नवीन की 'हम अनिकेतन' आदि कविताएँ प्रमुख है। गांधी विनोबा और तुकड़ोजी भी संतो की परम्परा में है। अंत में मेरे विचार से संतो का मूल लक्ष्य समाज के निर्माण के लिए सत्य का निरूपण, विवेचन और प्रचार-प्रसार करना ही था, उन्होंने जनहित के लिए अपने प्रतीकों, उपमाओं, रूपकों और योजना से सहज ही उद्बोधन दिऐ। संत कवि धुमक्कड़ थे, इसलिए उनकी भाषा में स्थिरता नहीं आ पायी क्योंकि उनकी भाषा जनभावनाओं को जाग्रत करने का अथक प्रयास करती रहीं। हमें ये कभी भी नहीं भूलना चाहिए कि, उनकी इसी विचारधारा ने समाज को परिपक्वता और अच्छे जीवन दर्शन के रूप में प्रतिष्ठा दी। भारतीय धर्म संस्कृति और साहित्य सभी पर संतो का चिंतन और दर्शन आधारित है। सरलता, सादगी और स्वाभाविकता उनके काव्य की विशेषता रही। कृत्रिम सौंदर्य को समाज हित के लिए वर्जित बताया और श्रम साध्य और सत्य एवं आध्यात्मिक विषयों पर अपनी अभिव्यक्ति प्रदान करते रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साहित्य निबंध – डॉ. लक्ष्मीनारायण, डॉ. राजकुमार पाण्डेय।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र।
3. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास – डॉ. गणपति चंद्र गुप्त।

****

प्रेमानुभूति और अज्ञेय

डॉ. मनीषा सिंह मरकाम *

प्रस्तावना – प्रेम सहज स्वाभाविक एवं सनातन मानव प्रवृत्ति है। प्रेम का संबंध जीवन और जगत के विभिन्न रूपों से होता है। व्यक्ति का अपने से इतर के साथ संबंध भी जुड़ता है। प्रेम में रागात्मकता विशेष रहती है। रागात्मक संबंध ही व्यापक तौर पर प्रेम अथवा प्रेमानुभूति का जनक है। व्यक्ति के रागात्मक संबंध का विस्तार संपूर्ण देश काल और समस्त रूपाकार तक व्याप्त है। इसलिए व्यापक अर्थ में प्रेमानुभूति का क्षेत्र भी विस्तृत है। व्यक्ति के रागात्मक संबंधों का विश्लेषण विभाजन करने से इसके अनेक रूप उपलब्ध होते हैं। अज्ञेय के काव्य में राग का क्षेत्र सिर्फ प्रिय–प्रिया तक सीमित नहीं है बल्कि उसका क्षेत्र समाज, राष्ट्र एवं पूरी मानवता तक व्याप्त है। अज्ञेय के काव्य में स्त्री और पुरूष के सहज आकर्षण से उत्पन्न प्रेम या प्यार की गहन और सूक्ष्म अभिव्यक्ति मिलती है। उनके समस्त काव्य संकलनों से पता चलता है कि आरंभिक काव्य संग्रह से लेकर आधुनिक काव्य संग्रह तक कवि की प्रेमानुभूति एक अद्‌भुत रूप से प्रवाहित रही।

तुम ही तन में तुम ही मन में,
व्याप्त हुए ज्यों दामिनी धन में,
क्या दूँ देव! तुम्हारी इस विपुला विभुता को मैं उपहार।

इस प्रकार अज्ञेय जी का यह संबंध बहुत गंभीर और अविभाज्य है, नारी की क्षुद्रता बोध संबंध की सहजता एवं स्वाभाविकता में बाधक है। अज्ञेय ने नारी की बुद्धिवादिता को भी प्रमुख स्थान दिया है। उन्होंने स्त्री–पुरूष के प्रेम व्यापार का वर्णन करने में उनकी स्वाभाविक चेष्टा को दबाने का प्रयास नहीं किया है। प्रेम में भावों की अभिव्यक्ति खास है। उनका मानना है कि प्रेम छिपाने की वस्तु नहीं है। प्रेम में प्रकटीकरण होना आवश्यक है।

आह, मेरा श्वास है उत्तप्त
धमनियों में उमड़ आई है, लहू की धार
प्यार है अभिसप्त –
तुम कहाँ हो नारि

कवि ने यौवन की चेतना के तीक्ष्ण चित्र स्पष्ट किये हैं, स्त्री–पुरूष के मैत्री संबंध यौवन भावना से जुड़े हुए हैं। मानस के प्रच्छन्न पर भोग की असीम तृष्णा जो व्यक्ति के चेतन मन से संचालित है। वह व्यक्ति पर सदैव हावी रहती है। परन्तु मनुष्य सामाजिक सरोकारों के कारण उसे खुले रूप में दबाने की चेष्टा करता है। परन्तु वह भाव समय–समय पर व्यक्ति के मन में हावी रहते हैं। भारतीय समाज में प्रेम को परम गोपनीय माना है। प्रेम को मुक्त भावना से प्रकट करने के लिए हमारे यहाँ प्रतिबंध है। इस प्रतिबंधित प्रेम के कारण ही भावना कुंठा का रूप ले लेती है। आधुनिक स्थितियाँ व्यक्ति को यौन परिकल्पनाओं से लाद देती हैं। इसलिए उससे निवृत्ति का कोई स्वस्थ उपाय विद्यमान रहना चाहिए। अज्ञेय ने इस स्थिति से त्राण पाने के लिए मुक्त साहचर्य की माँग की है, किन्तु समझ की गलती के कारण हम उन्हें मुक्त भोग का हितैषी मान लेते हैं। उनका मानना है कि नर–नारी एक दूसरे से मिलने में लज्जा का अनुभव ना करें और ना ही समाज के लोग उन्हें हेय दृष्टि से देखें बल्कि समाज में उनके मिलने के अधिक से अधिक अवसर प्राप्त हों। एक–दूसरे से अलग रहने की भावना का वे परित्याग करें। अज्ञेय प्रेम में प्रचारित कुंठित भावना को वे परित्याग और स्वस्थ भावना को प्रचलन में लाना चाहते थे। प्रेम उनके लिए सिर्फ वासना तृप्ति का प्रतिरूप नहीं है। वे कहते हैं जो लोग प्रेम में सिर्फ रोते रहते हैं, वे स्वस्थ नहीं है। वे या तो मन से रोगी है या तन से, जो प्रेम को सम्मोहनकारी वासना में देखते हैं। वे मृत व्यक्ति के समान हैं। प्रेम तो यज्ञ की वेदी के समान है, जिसमें खुद को हवन की आहुति के भाँति अर्पित करना पड़ता है। तभी उसका तत्व समझ में आता है। 'इत्यलम' में उन्होंने लिखा है–

'वे रोगी होंगे जिन्हें अनुभव रस का कटु प्याला है,
वे मुर्दे होंगे प्रेम जिन्हें सम्मोहनकारी हाला है –
मैंने विदग्ध हो जान लिया, अंतिम रहस्य पहचान लिया
मैंने आहुति बनकर देखा यह प्रेम यज्ञ की ज्वाला है।'

अज्ञेय का साहित्य पूर्णत: जीवन निर्माण का साहित्य है। उन्होंने जीवन निर्माण में प्रेम को अधिक महत्व प्रदान किया है। प्रेम मूलत: संवेदनाओं से जुड़ा है किन्तु सिर्फ प्रेम ही नहीं उनके काव्य में यत्र–तत्र सामाजिक कर्तव्य बोध सत्यान्वेषण, तत्वचिता, मैत्री संबंध, परम्परा मुक्त प्रेम और परम्परा मुक्त प्रेम का निरूपण है। अज्ञेय ने गंभीर साधनात्मक प्रेम की झाँकी प्रस्तुत की है। कवि ने यह बतलाने का प्रयत्न किया है कि जीवन निर्माण में प्रेम–भावना अनेक सम–विषम परिस्थितियों से जूझ रही है और अपना मार्ग निष्चित कर रही है।

क्या है प्रेम ? घनीभूत इच्छाओं की ज्वाला है।
क्या है विरह ? प्रेम की बुझती राख भरा ज्वाला है।

अज्ञेय की रचनाओं में प्रेमानुभूति, भावुकता, आदर्शवादी जीवन निर्माण के लिए है। वे यथार्थ के धरातल पर अपने को प्रतिष्ठित करती है। उनकी प्रेमानुभूति में यथार्थ को सूचित करने वाले कई तथ्य दृष्ठिगोचर होते हैं। अज्ञेय जी ने प्रेम की शहरी सभ्यता का भी बड़ी बारीकी से वर्णन किया है। शहर के दिन–प्रतिदिन व्यस्ततम् जीवन में प्रेम की तीव्र अनुभूति संभव नहीं है। जहाँ ज्यादातर तनाव है। ज्यादा चिंता के कारण असंयम होना स्वाभाविक है। यहाँ प्रेमानुभूति बिलकुल आधुनिक है। यह शहरी सभ्यता है। यह शहरी सभ्यता की देन है। शहरी जीवन नाना प्रकार की कुंठाओं, हीनताओं को जन्म देता है। व्यक्ति का संघर्ष जीवन के लिए इतना बड़ा हो गया है कि उनके सामने कोई आचार या नियम महत्वपूर्ण नहीं रह गया है। ऐसी भीषण परिस्थितियों में अपनी स्वभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए प्रेम की आवश्यकता होती है। वह भी सहज लम्य नहीं रह गया है। किन्तु यदि

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

उस प्रेम को प्राप्त करने के लिए वह नमने, खुलने, खिलने का सहज भाव से प्रयास करता है। इस प्राप्ति में यदि वह उन्मुक्त, बाधाहीन और खुलेपन से युक्त प्रेम की माँग करता है, तो इसमें संस्कार का त्याग सहजता के लिए है। उन्मुक्त, बाधाहीन और खुलेपन से युक्त प्रेम की माँग कवि ने प्रेम संबंधी तनावों को दूर करने के लिए की है –

तुम्हारी देह
मुझको कनक–चंपे की कली है
दूर से स्मरण में भी गंध देती है।

यौन चेतना से आक्रांत मन: स्थिति को कवि ने अभिव्यक्त किया है। वासना नारी के प्रति यौनाकर्षण एवं तज्जन्य का अंकन भी यत्र–तत्र हुआ है। देहवल्ली को निहारने की आकांक्षा में यौन चेतना ही जागृत है।

तुम्हारे ओठ–
पर उस दहकते दाड़िम पुहुप को
मूक तकता रह सकूँ मैं
ताप उष्मा का मुझे जो लील लेते हैं।

अज्ञेय का प्रेम चिन्तन तात्विक दृष्टि से सार्वभौम प्रेम चिंतन नहीं है। प्रेम क्या है, इस संबंध में भी वे किसी का अनुभव उधार नहीं लेते। प्यार एक ऐसा भाव है, जिसमें सारे दु:ख दर्द समाहित हो जाते हैं। प्यार जीवन के साथ इतना घुल–मिल गया है कि उसे साँसों से पृथक नहीं किया जा सकता।

मैं ही जो साँस लेता हूँ
जो हवा पीता हूँ
उसमें हर बार–हर बार
अविराम, अक्लांत अनाप्यायित
तुम्हें जीता हूँ।

आज के समाजिक जीवन में व्यक्ति अनेक प्रकार की हीनताएँ, असफलताएँ भोगने के लिए विवश है। आज व्यक्ति जगह–जगह अवरूद्ध और कुंठित हो गया है। उसको जीवन में अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए निरंतर संघर्ष करना पड़ता है। संघर्ष ने उसकी सौंदर्य भावना को ठेस पहुँचायी है। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति हमें भौतिक समृद्धि तो देती है, किन्तु वह प्रकृति की निर्व्याज सुंदरता को नष्ट भी करती है। हमारे समाज के लिए आवश्यक है कि हमारी उन्नति भी हो और हमारे देश की प्रकृति अपने रूप में सदा हमारे इर्द–गिर्द विद्यमान रहे। अज्ञेय के काव्य में रूप, रंग, ध्वनि तथा स्पर्श के बिम्ब अधिक पाये गये हैं। मनुष्य की ऐन्द्रिय संवेदनाओं में प्राय: रंग और स्पर्श का अधिक महत्व है। अज्ञेय के काव्य में जीवन निर्माण की संवेदनाएँ प्रमुख स्थान रखती हैं। विविध प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग किया गया है उनके काव्य में आये हुए प्रतीकों का संबंध प्रकृति, मनोविज्ञान, समाज, राजनीति, धर्म, दर्षन, पुराण आदि विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ जाता है। पारम्परिक प्रतीकों के साथ नवीन बहुप्रचलित प्रतीकों के साथ उपेक्षित गंभीर एवं सामान्य जनजीवन से जुड़े हुए अनेकानेक प्रकार के प्रतीकों की अवधारणा उनके काव्य में हुई है। प्रतीक निर्माण में अज्ञेय इतने कुशल हैं कि उन्हें फ्रांस के प्रतीकवादियों का भारतीय प्रतिनिधि कहा गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इन्द्रनाथ मदान – अज्ञेय का रंचना संसार।
2. विद्यानिवास मिश्र – आज के लोकप्रिय कवि 'अज्ञेय'।
3. गंगाप्रसाद विमल – अध्ययन और अन्वेषण।
4. गजानन माधव मुक्तिबोध – नई कविता का आत्म संघर्ष।
5. शंभुनाथ सिंह – प्रयोगवाद और नई कविता।
6. विद्यानिवास मिश्र – आज का भारतीय साहित्य।

****

रामचरितमानस के गौण नारी पात्र - सामान्य परिचय

डॉ. जयश्री भटनागर *

प्रस्तावना – तुलसीदास का नारी विषयक दृष्टिकोण अपनी पूर्व परम्परा एवं युग की चिन्तनधारा से प्रभावित रहा है । नारी पात्रों का चरित्र-चित्रण करते हुए उन्होंने अपनी नारी भावना को अनेक प्रकार से वर्गीकृत किया है। उनका दृष्टिकोण एक राम भक्त दृष्टिकोण रहा है, जो लोकमत के आर्दश और मर्यादा का पोषक है। उन्होंने जो पात्र तिरस्कृत, उपेक्षित एवं अनाहत थे, उन्हें भी ऊंचा उठाने का प्रयत्न किया है ।

गौण नारी पात्र –

मन्थरा – महाकाव्य के कथानक में कुछ पात्र ऐसे भी होते है, जो थोड़े समय के लिए आविर्भूत होते है और बाद में लुप्त हो जाते है। मंथरा ऐसी ही एक पात्र है तो कथा सन्धियों के रूप में 'मानस' में आई है। ऐसे पात्रों का संक्षिप्त चित्रण होता है किन्तु सम्पूर्ण कथा उसी के कार्य के कारण परिवर्तित हो जाती है। राम को वनवास भेजने के लिये कैकेयी ही नहीं, मंथरा भी अनिवार्य थी। मानस में मन्थरा ही एक ऐसी खलनायिका के रूप में अवतरित हुई, जिसका चित्रण संक्षिप्त होकर भी प्रभावशाली रहा। मानस की मन्थरा कुटिलता की प्रतिमूर्ति है। तुलसी ने उसके मूल में निहितकरण की ओर सूक्ष्मसंकेत किया है–

'काने खोरे कुबरे कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिसेषि पुनि चेरी कहि, भरत मातु मुसुकानि।'

(मानस अयोध्या पृ. 14)

मन्थरा चतुर - चालाक, सुझ-बूझ वाली, मिथ्यावादिनी, मायावी और कुचकी है। वह ज्योतिषियों के द्वारा भरत को राज्यभिषेक की कल्पित घोषणा द्वारा कैकेयी के मन में दुष्कर्म उत्पन्न कर देती है –

'पूंछउं गुनिनह रेख तिन्ह खांची। भरत भुआल होहिं यह सांची।
भामिनि करहु त कहौं उपाऊ। है तुम्हारी सेवा बस राऊ।।'

(मानस अयोध्या - 20/4)

उर्मिला –तुलसी ने 'मानस में उर्मिला को विवाह प्रंसग में ही चित्रित किया है तथा संक्षिप्त उल्लेख करते हुए लिखा है –

'जानकी लघु भागिनी सकल सुंदरि सिरोमनि जाति कै।
सो तनय दीन्हीं ब्याहि लखनहि सकल बिधि सनमानिकै।'

मानस एक धर्म ग्रन्थ है। उसमें राम की अवतारणा ईश्वर के रूप में हुई, अत: राम से जिनका संबंध रहा, उन्हीं चरित्रों को मानस में महत्व दिया गया। उर्मिला का चरित्र राम के चरित्र पर कोई प्रभाव नहीं डालता है, इसलिए उर्मिला का उल्लेख मानस में विस्तृत रूप से नहीं हुआ है ।

माण्डवी –मानस में माण्डवी का चरित्र ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं रहा। वह कुशध्वज की कन्या एवं भरत की पत्नी है, जो पतिव्रता ही नहीं कुलवधु है –

'कुसकेतू कन्या प्रथम जो गुणशील सुख सोभामई।
सब रीति प्रीति समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई।।'

(बालकाण्ड - 324/2)

माण्डवी सुन्दर, गुणवान, शीलवान एवं अपने पारिवारिक कर्तव्यों का मनोयोगपूर्वक निर्वाह करने वाली है ।

श्रुतिकीर्ति – उर्मिला, माण्डवी की तरह श्रुतिकीर्ति का चरित्र भी केवल विवाह के प्रंसग में ही संक्षिप्त रूप में चित्रित किया गया है। विवाह के समय उसे सुन्दर, शीलवान और गुणों की खान के रूप में प्रस्तुत किया है। वह कुशध्वज की कन्या एवं शुत्रध्न की पत्नी है –

'जोहि नामु श्रुतकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुण आगरी।
सो दई रिपुसुदननहि भूमति रूप सील उजागरी।।'

(बालकाण्ड -)

अनसूया – अनसूया अत्रि ऋषि की पत्नी थी, जो तपस्विनी, धर्मउपदेशिका एवं परम साध्वी थी। उसकी आराधना से प्रसन्न होकर परम ब्रह्म इनके पुत्र के रूप में जन्में । मानस में अनुसूया ने सीता को धर्म के देते हुए कहा –

'एकइ धर्म एक व्रत, कार्य वचन मन पति पद प्रेमा।'

(अरण्य काण्ड)

इतना ही नहीं उन्होंने सीता को दिव्य वस्त्र और आभूषण भी दिये। वे नारी धर्म एवं पति सेवा के संबंध में उपदेश देती हुई कहती है –

'धीरज, धर्म, मित्र अरू नारी, आपद काल परिखिअहिं चारी।'

(अरण्य काण्ड)

अहल्या – अहल्या गौतम ऋषि की पत्नी एवं पंच कन्याओं में ज्येष्टा है। वह ब्रह्मा की मानसपुत्री है, इसे ब्रह्मा ने श्रेष्ठ तत्वों से सर्जन किया था। अहल्या के सौंदर्य को देख इन्द्र मोहित हुए एवं चन्द्रमा की सहायता से गौतम का रूप धारण किया तथा उसके सथ संभोग किया। जब गौतम को इन्द्र के छल का ज्ञान हुआ, तो उन्होंने चन्द्र की क्षयी, इन्द्र को सहस्त्र भंग तथा अहल्या को पाषाणी बना दिया। जिसका उद्धार रामावतार में हुआ ।

शबरी – मानस में शबरी राम की अनन्य भक्त के रूप में चित्रित हुई है, वह राम के सम्मुख अपना दैन्य प्रदर्शन करती हुई प्रभु के दर्शन पाकर आत्मविभोर हो जाती है। प्रभु भी उसकी तन्मयताशक्ति से प्रभावित हो उसके निकटतम संबंध स्थापित कर बोलते है –

'मानउं एक भगति कर नाता ।।'

(अरण्य काण्ड)

इतना ही नहीं उसके दिये कन्दमूल फल खाकर प्रसन्न होते है। उसे परमाधिकारिणी समझकर नवधा भक्ति का उपदेश भी देते है। वह अधम जाति की नारी होकर भी परम रम रामभक्त थी।

शूर्पणखा –शूर्पणखा रावण की बहिन थी। उसके चरित्र में काम के समान अंहकार भी दिखाई देता है। उसका प्रणय प्रस्ताव उसकी कामुकता का व्यंजक है। संसार में अपने अनुरूप वर न मिलने के कारण वह निराश थी। वह राम को अपना समझती थी –

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजा बाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

'मम अनुरूप पुरूष जग माहीं। देखेउं खोजि लोक तिहुं नाही।
ताते अब लागे राहेऊ कुमारी। मन माना कछु तुम्हीहे निहारी।।'

राम लक्ष्मण द्वारा निराश किए जाने पर वह एकाएक विकराल रूप धारण कर लेती है। 'मानस' में शूर्पणखा उच्छंखल के साथ ही नीतिज्ञा भी है।

तारा – मानस में तुलसी ने तारा का वर्णन दो स्थान पर किया। पहला प्रंसग संवेदनमयी बालि की पत्नी के रूप में। जिसमें राम के द्वारा बालि का वध किये जाने का वर्णन। दूसरा प्रंसग वह जब सुग्रीव विलासिता में मग्न होकर राम कार्य करना भूल जाता है जब लक्ष्मण सुग्रीव किष्किन्धापुर गये। वह हनुमान से तारा को साथ ले जाने के लिये कहते है।

तारा सुपेण वानर की पुत्री एवं बालि की पत्नी तथा अंगद की माता है। वह पंचकन्याओं में से एक है। बालि की मृत्यु के बाद तारा ने सुग्रीव से विवाह किया था।

संदर्भ ग्रंथ सूच :–

1. रामचरितमानस –तुलसीदास।
2. रामचरितमानस – एक विश्लेषण – डॉ. प्रभुदयाल अग्निहोत्री।
3. रामचरितमानस में नारी समाज –ज्ञानवली अवस्थी।
4. तुलसीदास –डॉ. माताप्रसाद गुप्त।

****

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का प्रिंट मीडिया पर प्रभाव

डॉ. चन्द्रकला चौहान *

प्रस्तावना – इलेक्ट्रॉनिक मीडिया सूचनाप्रद है, जबकि प्रिंट मीडिया विचारप्रधान टिप्पणी, विश्लेषण, लेख स्तंभ प्रिंट मीडिया की विशेषताएँ हैं। ये सभी विषय विशेषज्ञों द्धारा लिखा जाता है। एक लक्ष्य को आधार बनाकर यह लिखा जाता है संपादक तथा संपादकीय टीम अपने शब्दों के द्धारा प्रकाशन गृह की सामान्य नीतियों को पाठकों तक ले जाती है। पाठक खबरों के साथ विचारों को जानने का इच्छुक होता है। पाठक खबरों को पढ़कर अपने विचार संपादक के सामने रखता है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में दर्शक और श्रोता अपने विचार नहीं रख पाते अपनी बातों को प्रिंट मीडिया पाठकों पर नहीं थोपता बल्कि पाठक को अपनी बात रखने का अवसर देते है।

समाज को सही दिशा में ले जाना ही मीडिया का लक्ष्य होना चाहिए। मीडिया चाहे किसी लक्ष्य के लिए हो या केवल व्यवसाय के लिए उसे समाज पर बराबर ध्यान देना चाहिए।

प्रकाशन, संपादन, लेखन अथवा प्रसारण के कार्य को प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से आगे बढ़ाने की कला को मीडिया कहते है। यदि हम गहराई से इस पर चर्चा करें तो इन माध्यमों से ही मीडिया का बंटवारा हुआ है। यानी प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया। पत्र-पत्रिकाएँ प्रिंट मीडिया के अन्तर्गत आती है। लेकिन जब संपादन, लेखन एवं प्रसारण का संबंध किन्हीं पत्र-पत्रिकाओं से न होकर इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से होता हो तो उसे इलेक्ट्रॉनिक मीडिया कहा जाता है।

शिक्षाविद डॉ. प्रेमचंद पाल के अनुसार- 'इलेक्ट्रॉनिक साधनों के माध्यम से जो जनसंचार होता है वह इलेक्ट्रॉनिक मीडिया है।'[1]

वरिष्ठ पत्रकार- मोहनदास नैमिशराय के अनुसार- हंस: राजेन्द्र यादव प्रिंट मीडिया से हमारा आशय ऐसे पत्र-पत्रिकाओं से है जो छपकर पाठकों के हाथों में पहुँचती है। प्रिंट मीडिया के अंतर्गत जो कुछ प्रकाशित होता है उसके खास उद्देश्य रहे है। भारत में देशी तथा विदेशी बुद्धिजीवियों ने कुछ संपादकों व पत्रकारों के हाथों में कलम देकर बहुत महत्वपूर्ण काम किया इससे न केवल राजनैतिक उथल-पुथल मची बल्कि समाज में भी आमूल चूल परिवर्तन होने की शुरूआत हुई।'[2]

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की खुबियों से सबसे पहले तो पत्रकार ही प्रभावित हुआ। एक तो लंबे-लंबे संपादकीय लेखनों से उसे छुटकारा मिल गया। छाया चित्रों का झंझट ही खत्म हो गया। इससे उसे कम समय में अधिक कार्य करने के अवसर मिले। इसके अतिरिक्त प्रिंट मीडिया के कई प्रकार के अंतर्विरोधों के कारण वह अपनी प्रतिभा को सही ढंग से उपयोग में नहीं ला पाता था। लेकिन अब संपादकों, मालिकों के बीच टकराव और बहस-मुबाहिसों की स्थितियाँ ही समाप्त हो गई। इस तरह इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में उसको अपने तमाम अनुभवों को साकार करने के अवसर मिलने लगे। अच्छी कमाई का माध्यम होने के कारण बहुत से पत्रकारों ने इसे 'स्टेट्स सिंबल' के रूप में भी अपनाया।

प्रिंट मीडिया का महत्व और उसका आदर्श स्वतंत्रता संग्राम के दिनों से ही स्थापित होने लगा था। उस समय की 'मार्तंड' और 'प्रजामित्र' जैसी पत्रिकाओं के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। आजादी के बाद विकास और नव जागरण के दौर में 'हिन्दोस्तान' जैसे अखबार पत्रकारिता के क्षेत्र में एक मानक के रूप में उभरे। महावीर प्रसाद द्धिवेदी गणेश शंकर विद्यार्थी आदि की शुरू की गई परंपराओं से पत्र शैली का विकास ही नहीं हुआ बल्कि हिंदी भाषा की उत्कृष्टता और सांस्कृतिक क्षमता भी उभरकर सामने आई। बालकृष्ण शर्मा नवीन और कृष्णदत्त पालीवल ये दो नाम ऐसे हैं, जिन्होंने अखबार की छपाई आदि से लेकर प्रचार-प्रसार तक की भूमिकाओं का निर्वाह किया।

जब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का दौर आरंभ हुआ और मुख्य रूप से एक के बाद एक न्यूज चैनलों की भरमार होने लगी तो बड़ी शंकाएँ पैदा हो गयी थी और यह कहा जाने लगा था कि प्रिन्ट मीडिया का दौर अब खत्म होने वाला है और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की बड़ी मछली प्रिन्ट मीडिया की छोटी मछली को निगल जाएगी। लेकिन यह शंका बेकार साबित हुई और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया प्रिन्ट मीडिया को कोई हानि नहीं पहुंचा सकी। बल्कि इसके विपरीत यदि गहराई से देखा जाए तो यह पता चलेगा कि दोनों एक दूसरे के सहयोगी साबित हो रहे है। न्यूज चैनलो के आगमन ने प्रिन्ट मीडिया में कई आयाम जोड़ दिए। केवल इतना ही नहीं बल्कि नेशनल रीडर शिप सर्वे के अनुसार 'न्यूज चैनलों की क्रान्ति आने के बाद प्रिन्ट मीडिया में दस प्रतिशत वृद्धि हुई।'[3]

अब से लगभग दस साल पहले जब प्रतिष्ठित चैनल 'आजतक' चौबीस घंटे का हुआ था, प्रिन्ट मीडिया को होने वाली शंका ने उससे जुड़े पत्रकारों की नींद उड़ा दी थी और प्रिन्ट मीडिया से इलेक्ट्रानिक मीडिया की ओर पत्रकारों के छलांग लगाने का एक सिलसिला शुरू हो गया था और असंख्य प्रिन्ट पत्रकार इलेक्ट्रॉनिक पत्रकार बन गए थे। इसके बाद और भी कई चैनल आए मगर अब यह भाग-दौड़ थम सी गयी है।

विज्ञापन समाचार का मेरूदंड है। सारे विज्ञापन यदि एक बार हटा लिये जाएँ तो सरकार भी अपने कार्यक्रमों के निष्पादन और आर्थिक विनिमय को लेकर मुश्किल में पड़ जाएगी। इस तथ्य से सरकार और पूँजीवादी वर्ग दोनों ही समान रूप से प्रभावित होते हैं। जन समाज में उपभोक्ता संस्कृति को संस्कृति बनाने में विज्ञापनों का बहुत बड़ा योगदान है। बड़े-बड़े उद्योगपतियों को भी अपने जिन उत्पादकों पर बड़ा नाज था उनकी खपत के लिए उन्हें विज्ञापनों की प्रतिद्धंद्धिता में कूदना पड़ा।

इससे पहले कोई अन्य विकल्प न होने के कारण विज्ञापनदाताओं को केवल प्रिंट मीडिया पर ही निर्भर रहना पड़ता था, किन्तु इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के आते ही प्रिंट मीडिया की सीमाएँ स्वयं उजागर होने लगी। छापे का विज्ञापन उपभोक्ता को रिझाने में एक सीमा तक ही कामयाब हो सकता है, क्योंकि पन्ने पर छायाचित्रों और शाब्दिक रेखांकन की सीमा है, जबकि उपभोक्ता

* शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

टेलीविजन पर कुछ ही सैकंडों में पूरी एक शूटिंग देख लेता है। वैसे भी दृश्य-श्रव्य की संप्रेषणीयता अधिक ग्राही एवं प्रभावी होती है। अत: जब विज्ञापनदाताओं को अपनी योजनाओं और अपने उत्पादकों को विज्ञापित करने का बड़ा नेटवर्क मिला तो प्रिंट मीडिया के प्रति स्वभावत: उसका रूझान कम हो गया। हालॉकि आधुनिकतम तकनीकी का इस्तेमाल करते हुए पत्र-पत्रिकाओं ने अपनी कलात्मकता को उभारने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। देश में शैक्षिक स्तर अभी भी तैंतीस प्रतिशत से अधिक न होने के कारण पठन की सीमाएँ स्वयं सिद्ध हो जाती है। लेकिन टेलीविजन के लिए शिक्षित होना कोई खास मायने नहीं रखता। वहाँ तो बस देखना-सुनना भर है। वैसे टेलीविजन आदि की अपेक्षा अखबार सस्ता है, फिर भी ऐसा भी नहीं कि प्रत्येक घर में वह खरीदा ही जाता हो। चाय दुकानो, होटलों या पुस्तकालयों में एक अखबार से सैकड़ों लोग काम चला लेते है। दूसरी तरफ आजकल गरीब से गरीब व्यक्ति के घर में टेलीविजन एक प्राथमिक आवश्यकता के रूप में आ गया है। स्क्रीन पर बीस पृष्ठों के अखबार की खबरों/जानकारियों को दिखा पाना भले ही संभव न हो; लेकिन वह विभिन्न चैनलों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से बीस पृष्ठों से अधिक की सामग्री को टेलीकास्ट करके मानविक जिज्ञासाओं को तृप्त करता जा रहा है।

भारत ही नहीं अन्य देशों में भी इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों का पत्र-पत्रिकाओं के हित पर कोई खास असर नहीं पड़ा है। इसलिए इसके प्रसार से प्रिन्ट मीडिया को घबराने की जरूरत नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की पहुंच ज्यादा होने के बावजुद प्रिंट मीडियागहरी छाप छोड़ता है।

आज की तेज रफ्तार जिंदगी में हर कोई कम-से-कम में आवश्यक सूचनाएँ जानने को इच्छुक रहता है। सूचनाओं/घटनाओं के तुरंत प्रसारित होने से इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, प्रिंट मीडिया से लगभग एक दिन आगे चल रहा है। इस तरह प्रिंट मीडिया केवल बासी खबरों का संवाहक बनकर रह गया है। पाठकों में प्रिंट से जो कोतुहल और कल्पनाशीलता पैदा होती थी, उसको सजीव चित्रण ने एक प्रकार से संतुष्ट कर दिया है। खबरों के बारे में किसी भी प्रकार की राय या महत्व को वह स्थापित ही नहीं होने देता। भंडाफोड़ जैसी पत्रकारिता के अवसर ही समाप्त हो गए। इसके अतिरिक्त विश्लेषणात्मक जानकारियाँ, साक्षात्कारों, परिचर्याओं, लेखों, कहानियों और उपन्यासों आदि की सामग्री को वह प्रिंट मीडिया के हाथों से छीनता जा रहा है।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की तमाम खूबियों के बावजूद प्रिंट मीडिया की लोकप्रियता को अभी कोई विशेष खतरा नहीं नजर आ रहा। जिस तरह प्रिंट मीडिया की सीमाएँ हैं, उसी तरह इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की भी कुछ कमजोरियाँ हैं। हम देखते हैं कि विकसित देशों में जहाँ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का ज्यादा जोर है वहाँ भी प्रिंट मीडिया का महत्व कम नहीं हुआ है। फिर भारत की आम जनता इतनी दृष्टि सम्पन्न नहीं हो पाई कि वह केवल इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर ही निर्भर रह सके। ग्रामीण बस्तियों में जहाँ बिजली नहीं पहुँच पाई हैं, वहाँ पत्र-पत्रिकाएँ ही एकमात्र सूचनाओं की माध्यम बनी हुई हैं। अखबार का सस्ता और हैंडी होना भी लोकप्रियता का एक कारण है। स्थानीय खबरों का अपना अलग महत्व होता है, जो इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के दायरे के अभी बाहर है। कैमरे का हर जगह पहुँचना तभी संभव हो पाएगा जब घटनाएँ भी योजनाबद्ध हो जाएँ यह कभी संभव नहीं हो सकता। इन सारी बातों के अलावा प्रिंट मीडिया की एक खुबी इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के लिए बहुत भारी पड़ती है, वह है प्रिंट की ऐतिहासिक प्रमाणिकता की सुलभता। अब तो लोग टी.वी. पर खबर देखते है और अखबार खरीदकर सुरक्षित कर लेते हैं। कुछ खबरें तो बार-बार पढ़ने लायक होती है। छपे हुए शब्द जो असर पैदा करते है वे टी.वी. पर कहे हुए शब्द नहीं कर पाते है। टी.वी. और अखबार में वही अंतर है जो एक लेख और भाषण में होता है। लेख से हम तमाम विवरणों एवं मामलो की तमाम बारीकियों तक पहुँच सकते हैं, जबकि भाषण में बहुत सी बातें ध्यान में रखते हुए भी छूट जाती है।

डॉ. विद्यानिवास मिश्र के अनुसार 'विश्व के बदलते परिवेष में समाचार पत्रों को आधुनिकतम तकनीक अपनानी चाहिए और तथ्य परक जानकारी देने पर विशेष ध्यान देना चाहिए इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की तीव्र सम्प्रेषण क्षमता समाचार पत्रों के लिए एक चुनौती है। इस स्थिति से निपटने के लिए आधुनिक संचार व्यवस्था को अपनाने के साथ-साथ अखबारों को आकर्षक बनाना होगा।'[4]

प्रिंट मीडिया इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के पहले का सोपान है। यह अन्य आधुनिक जन माध्यमों की अपेक्षा प्राचीन है। इसके अंतर्गत समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, जर्नल्स, पुस्तकें आदि शब्द माध्यम आते है। अन्य आधुनिक जनसंचार माध्यमों की अपेक्षा प्रिंट मीडिया अधिक विश्वसनीय है। प्रसिद्ध मीडिया समालोचक सुधीश पचौरी की मान्यता है कि 'वर्तमान बाजारवाद के दौर में प्रिंट मीडिया इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से बहुत बेहतर है। इसमें इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की तरह उतनी सनसनी बाजी नहीं होती। चूँकि प्रिंट मीडिया ठहराव का मीडिया है। पाठक उसे घर में पढ़ता हैं, इसलिए वहाँ एक जिम्मेदारी अब भी बनी है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में अतिवाद के लक्षण हैं। इसी वजह से यह अपनी विश्वसनीयता खोता जा रहा है। जाहिर है, यदि आप खबर को सच से अधिक बताये, सच से बड़ा कर दे तो विश्वसनीयता घटेगी। यह अपने आप में जालसाजी है। वे आगे कहते है कि इंटरनेट 15 करोड़ लोगों से ज्यादा के पास नहीं है, लिहाजा आज भी मध्यम और निम्नवर्ग के लिए अखबार की जरूरत है।'[5]

मीडिया का काम केवल धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक बुराईयों के खिलाफ आंदोलन छेड़ना ही नहीं बल्कि पाठकों, दर्शकों और श्रोताओं के बीच संवाद शुरू करना भी है और बिखरे हुए को एकत्र करना भी है। जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण होता है उसी प्रकार मीडिया भी समाज का दर्पण हो सकता है। दूसरे देश को जानने का प्रबल माध्यम मीडिया ही है।

प्रिंट मीडिया से हमारा आशय ऐसे पत्र-पत्रिकाओं से है जो छपकर पाठकों के हाथों में पहुँचती है। प्रिंट मीडिया के अंतर्गत जो कुछ प्रकाशित होता है उसके खास उद्देश्य रहे है। भारत में देशी तथा विदेशी बुद्धिजीवियों ने कुछ संपादकों व पत्रकारों के हाथों मे कलम देकर बहुत महत्वपूर्ण काम किया, इससे न केवल राजनैतिक उथल-पुथल मची बल्कि समाज मे भी आमूल-चूल परिवर्तन होने की शुरूआत हुई।

सदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के सिद्धांत, रूपचंद गौतम पृ. सं. 11
2. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के सिद्धांत, रूपचंद गौतम पृ. सं. 15
3. मीडिया रूप और बहु रूप, सुहैल अंजुम, पृ. सं. 183
4. समाचार पत्र प्रकाशन एवं संचालन, रोहिताश कुमार 'विक्की', पृ. सं. 124
5. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया : दशा और दिशा डॉ. हरिमोहन, पृ. सं. 30

****

वसुधैवकुटुम्बकम् के युग में भाषा एवं सत्ता की सहकारिता

डॉ. बालकृष्ण प्रजापति *

शोध सारांश – हिन्दी भाषा भारत के लिए वैश्वीकृत भाषा के रूप में मानते हैं। इसी भाषा में यह सामर्थ है कि अंग्रेजी का देश के अन्दर विकल्प बन सके अतएव इसी भाषा के अपनाने हेतु पूरे राज्यों ने कालान्तर में जो उत्साह प्रदर्शित किया है, इसके मूल में वैश्वीकरण का दौर ही निहित है। हिन्दी भाषा मूलरूप में संस्कृत से ही आविर्भावित हुई है। अतएव हिन्दी के मूल संस्कृत को अत्याधिक विकसित करने के लिए इस वैश्वीकरण के दौर में आवश्यकता है। संस्कृत जितना ही प्रचारित और प्रसारित होगी हिन्दी भाषा का विकास अत्यंत शुद्ध होगा। संस्कृत के लेखन और वाचन में विचलन न होने के कारण हिन्दी के लेखन और वाचन में विचलन ही समस्या अत्यधिक कम होगी, जिससे एक सशक्त जनसंचार माध्यम की प्रासंगिकता वर्तमान के दौर में फलीभूत होगी।

शब्दकुंजी – भाषा, शब्द, सत्ता, मनुष्य, वैश्वीकरण, अधिनियम, अनुसूची, राज्य आदि।

प्रस्तावना – भाषा सत्ता के महासागर में विविध विद्रूपों का तक्षण करती हैं।[1] भाषा सृष्टि का निर्माण करती है, इसलिए भर्तृहरि ने भाषा को शब्द-ब्रह्म का दर्जा दिया है।

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्वं यदक्षरम्।
विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः।।[2]

जिस प्रकार ब्रह्म सृष्टि का कारण है उसी प्रकार भाषा दर्शन में भाषा इस सृष्टि का निर्माण करती है,[3] भाषा के बिना जगत् व्यापार असंभव है, वाक्य व्यापार के बिना सम्पूर्ण मानवीय कार्य-व्यापार असंभव है, अतएव भाषा ही वह तत्त्व है जो सम्पूर्ण जगत् को उत्पन्न करके उसे गतिमान करती है। भाषा ज्ञान के बिना मनुष्य पशुवत् व्यवहार करता है।

अपि प्रयोक्तुरात्मानं शब्दमन्तरवस्थितम्।
प्राहुर्महान्तमृषभं येन सायुज्यमिष्यते।।[4]

मनुष्य यदि मनुष्य है तो प्रकृत परिभाषा के अनुसार मननात् इति मनुष्यः (जो मननशील है वह मनुष्य है) भाषा के कारण ही मनुष्य कहलाने योग्य है। क्योंकि मनन तो भाषा का ही होता है। मनन् भाषा के बिना असंभव है अतएव भाषा जहाँ एक तरफ विचारों कें आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम है तो वहीं दूसरी तरफ वह स्वयं में एक विचार है।[5] भाषा ज्ञानमीमासां की वस्तु है-

वाग्रूपता चेदुत्क्रामेदवबोधस्य शाश्वती।
न प्रकाशः प्रकाशेत स हि प्रत्यवमर्शिनी।।
सा सर्वविद्याशिल्पानां कलानां चोपबन्धनी।
तद्वशादभिनिष्पन्नं सर्व वस्तु विभज्यते।।
सैषां संसारिणा संज्ञा बहिरन्तश्च वर्तते।
तन्मात्राप्यतिक्रान्तं चैतन्य सर्वजातिषु।।[6]

प्रमाण मीमांसा की वस्तु बनाकर उसे गौण न किया जाये। भाषा से ही भाषा का ज्ञान भाषा में होता है। भाषा ज्ञान से ही ऐहलौकिक तथा पारलौकिक सुखों या अभीष्ट की प्राप्ति होती है।[7]

भाषा ही आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक सत्ता का विश्देन करके उसका ज्ञान कराती है। भाषा द्वारा तीनों सृजित किये गये सत्ता का ज्ञान भाषा में होकर परमसुख जिसे मोक्ष कहा जा सकता है की प्राप्ति होती है।

दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ।
दृष्टे साऽपार्थाचेन्नैकान्तात्यन्ततोऽभावात्।।[8]

भाषा द्वारा तीनों सत्ताओं का ज्ञान होने से तीनों सत्ता में निहित तीन विशिष्ट प्रकार के दुःखों का नाश हो जानें से मनुष्य कैवल्य को प्राप्त कर लेता है।

दृष्टवदानुश्रविकः स ह्यविषुद्धिक्षयातिषु्क्तः।
तद्विपरीतः श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात्।।[9]

अतएव भाषा से सत्ता उत्पन्न हुई जिसके ज्ञान हेतु बौद्धिक परम्पराओं का उद्भव हुआ। बौद्धिक परम्पराएं यद्यपि देश-काल के भेद से स्वरूपतः भिन्न भिन्न होते हुए भी भाषा में ही अभिव्यक्त होकर विकसित हो रही हैं। भाषा में सृजत बौद्धिक परम्पराएं अनन्तं धर्मात्मकं वस्तु 10 की तरह सत्ता के अनन्तं आयामों को प्रकट करते हुये, सामाजिक विकास में उपादान कारक की भूमिका का निर्वहन कर रही है।

भाषा से सत्ता उत्पन्न हुई इसे इस रूप में प्रमाणित किया जा सकता है जैसे समुद्र के किनारे बैठे हुए व्यक्ति के पास यदि लहर नामक शब्द नहीं होता तो वह लहर का ज्ञान नहीं कर पाता। लहरें होते हुई भी व्यक्ति के लिये समुद्र की ही प्रतीति होती है। यद्यपि परस्पर टकराती हुई समुद्री लहरें अनन्त प्रकार की लहरों को जन्म देती हैं। किन्तु हमारे पास केवल लहर नामक एक शब्द होने के कारण हम परस्पर स्वरूपतः भिन्न हुई लहरों को हम भेद न करके लहर नामक शब्द से वाक् व्यापार करते हैं। अतः भाषा ही सत्ता का लक्षण करती हैं। इसे दूसरे रूप में भी सिद्ध किया जा सकता है। जैसे-एक शब्द है सफेद, वस्त्र की सफेदी से भिन्न होती है, चूने की सफेदी से बर्फ की सफेदी भिन्न होती है, बर्फ की सफेदी से दूध की सफेदी भिन्न होती है, दूध की सफेदी से ट्यूबलाईट की सफेदी भिन्न होती है,[11] अथवा सबकी सफेदी परस्पर दूसरी वस्तुओ की सफेदी से भिन्न होते हुए भी हमें नवीन सत्ता का ज्ञान नहीं होता है, क्योंकि उस विभेदनकारी शब्द का ज्ञान हमारे शब्दकोष में नहीं है, यदि हर भिन्न प्रकार की सफेदी के लिए भिन्न भिन्न प्रकार के शब्द हमारे पास होते तो अनेक प्रकार की सत्ता का सृजन होता। अतएव भाषा ही सत्ता ही सम्पूर्ण सत्ता का सृजन भाषा में करती है, जो सत्ता दृष्टिगत है वह तो केवल प्रतीक मात्र होती है वस्तुतः भाषा दृष्टिगत सत्ता की अपेक्षा अदृष्टिगत सत्ता का अत्यधिक

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय एस.जी.एस महाविद्यालय, गंज बासौदा (म.प्र.) भारत

सृजन करती है इसलिये कहा जाता है कि भाषा दृश्यमान जगत् तथा अदृश्यमान जगत का निर्माण करती है, यह कोई जरूरी कि भाषा जिसका वर्णन करती है वह वस्तु सत्ता में प्राप्त ही हो, जैसे शस्यषृगं, आकाश कुसुम, हवाई किला इत्यादि शब्द वास्तविक रूप में सत्ता में नहीं मिलते परन्तु भाषा इनका वर्णन करती है। अत: भाषा सत्ता का निर्माण करती है। सत्ता का ज्ञान कराती है। सत्ता की रचना करती है। गैर सत्ता का निर्माण करके उसका ज्ञान कराके प्रतिनिधित्व भी करती है। अतएव भाषा ब्रह्म की तरह सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ तथा सर्वव्याप्त होती है। वर्तमान में भाषायी अश्व्यिक्त का आद्यसाहित्य ऋग्वेद है, जो विश्व के सम्पूर्ण बुद्धिजीवियों को सर्वमान्य है। यह ऋग्वेद मूलत: वैदिक संस्कृत में है, अतएव संस्कृत को ही विश्व की सारी भाषाओं की जननी कहा जाता है, यह एक रूपक हो सकता है क्योंकि एक भाषा तो दूसरी भाषा को प्रभावित तो कर सकती है, परन्तु पूर्णत: उत्पन्न नहीं कर सकती है। फिर भी इतना तो निश्चित है कि संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है,इसके अतिरिक्त यह भाषा प्रचीनतम भाषाओं में सर्वोत्कृष्ट रूप से व्यवस्थित होकर सबसे अधिक विकसित भाषा थी, जिससे आर्य परिवार की भाषाओं का विकास हुआ, इसी क्रम में खुसरो ने हिन्दी, उर्दू के साथ मिश्रित करके लेखन परम्परा में एक नवीन भाषा को अपनाया जिसकी व्यापक रूप से प्रतिष्ठापना शरतेन्दु बाबू हरिशचन्द्र ने खडी बोली हिन्दी के रूप में करके आर्य परिवार की प्रतिनिधि भाषा के रूप में विकसित किया। इस भाषा की लिपि नागरी तथा शब्द हिन्दुस्तानी (संस्कृत उर्दू मिश्रित) थे। आजादी के बाद हिन्दी भाषा के रूप में इसे भारतीय संविधान में जगह मिला। भारतीय संविधान के भाग 17 में अनुच्छेद 343 से 351 में राजभाषा का वर्णन है,[12] इसके अतिरिक्त संविधान की आठवीं अनुसूची एवं मूलाधिकारों के 29 वे तथा 30 वे अनुच्छेद में भाषा सम्बन्धी विमर्श है।[13]

भारतीय संविधान में हिन्दी भाषा को वरीयता उसके क्षेत्रीय, जनसांख्यिकीय विस्तार के कारण है। इस बात की पुष्टि भारतीय संसद ने 1963 के अधिनियम में किया। अर्थात संघ के सभी सरकारी कार्यो व संसद की कार्यवाही में अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी का भी प्रयोग होगा। संघ के राज्यों में राज्य सरकारें किसी एक भाषा या एक से अधिक भाषा अथवा हिन्दी का चुनाव करके अपनी कार्यवाही कर सकती है, परन्तु जब तक राज्य सरकारें भाषा सम्बन्धी अधिनियम पारित नहीं करती तब तक उस राज्य की अधिकारिक भाषा अंग्रेजी होगी। इसी क्रम में अधिकांश राज्यों ने अपनी मातृभाषा (क्षेत्रीय भाषा) को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिया गया, परन्तु कुछ राज्यों ने अपने राज्य में भाषा सम्बन्धी अधिनियम को पारित नहीं किया। अत: वहां की भाषा अंग्रेजी मान ली गयी ऐसे राज्यों में मेघालय, अरूणाचलप्रदेश और नागालैण्ड हैं। अधिनियम 1963 के अनुसार संघ गैर हिन्दी भाषी राज्यों के मध्य अंग्रेजी संपर्क भाषा होगी, इसके अतिरिक्त जहां हिन्दी व गैर हिन्दी राज्यों के बीच संपर्क भाषा हिन्दी है, वहां पर ऐसे संवाद अंग्रेजी में भी अनुवादित किए जायेंगे। संविधान हिन्दी को केंद्र की भाषा या राज भाषा का दर्जा तो दे दिया परन्तु वहां से भाषायी विविधता के कारण अंग्रेजी को केंद्र की राज भाषा से मुक्त नहीं कर पाया। इसलिए अंग्रेजी के साथ साथ हिन्दी में भी केंद्र की समस्त कार्यवाही हो। इसके लिए संविधान केंद्र के लिए कुछ कर्तव्य निर्धारित किए हैं, संविधान केंद्र को निर्देश देता है कि वह आठवीं अनुसूची में वर्णित हिन्दुस्तानी व अन्य भाषाओं के रूप में शैली व भावों को आत्मसात् करके इसके शब्दावली को मुख्यता संस्कृत व गौंडत: अन्य भाषाओं से लेकर हिन्दी को प्रचारित एंव प्रसारित करे।
संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित 22 क्षेत्रीय भाषाओं को मान्यता देने का लक्ष्य यह है कि इन क्षेत्रीय भाषाओं के सदस्यों को राज भाषा आयोग में प्रतिनिधित्व दिया जाए तथा भाषाओं के रूप, शैली व भावों का प्रयोग हिन्दी को समृद्ध बनाने के लिए किया जाए। इस प्रकार भारत में हिन्दी भाषा की अपरिहार्यता स्वत: सिद्ध होती है, किन्तु गैर हिन्दी भाषी राज्य अपने राजनीतिक स्वार्थो की पूर्ति हेतु हिन्दी भाषा का प्रखर विरोध करते हैं, जिससे उस राज्य विशेष की जनता अच्छे अवसरों से वंचित हो जाती है। यहां अच्छे अवसरों से तात्पर्य हिन्दी भाषी क्षेत्र में रोजगार के अच्छे आयाम से हैं।

सन् 1991 में भारत वैश्वीकरण का हिस्सा बन गया, जिसके परिणामस्वरूप भारत की सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक-सामरिक तथा सांस्कृतिक स्थिति में आमूल चूल परिवर्तन हुआ। 21 वीं सदी के प्रारम्भ तक भारत ने वैश्वीकरण को पूर्णत: आत्मसात कर लिया, जिससे देश के अनेक क्षेत्रों में समृद्धि बढ़ी। देश के लोगों के जीवन स्तर में तकनीकी एवं अंग्रेजी की वरीयता परलच्छित हुई, संस्कार प्रधान समाज, अर्थ प्रधान समाज के रूप में परिवर्तित हुआ। अंग्रेजी चूकिं विदेशी भाषा थी जिसका किसी राज्य के मातृभाषा से कोई सरोकार नहीं था, अतएव यह प्राय: देश के सभी लोगों के लिए कठिनाई ही पैदा कर रही है, परन्तु अंग्रेजी सर्वाधिक अवरोध के रूप में हिन्दी भाषी राज्यों में जानी गई क्योंकि हिन्दी, अंग्रेजी के विकल्प के रूप में हर क्षेत्र में व्याप्त रही है, दक्षिण के राज्यों से पूर्वोत्तर राज्य में ऐसी कोई मातृभाषा अंग्रेजी के विकल्प के रूप में नहीं उभर सकी, जिससे काम चलाया जा सके। यही कारण है कि दक्षिण एंव पूर्वोत्तर राज्यों ने विवश होकर अंग्रेजी को अपनाया, जिससे ये राज्य अंग्रेजी की दृष्टि से काफी प्रगति कर गए। लेकिन वैश्वीकरण के बाद जब उत्तर, दक्षिण, पूर्व-पश्चिम के राज्यों की दूरियां घट गई, लोगों को रोजगार के अवसर हर राज्यों में मिलने लगे तब एक वैश्वीकृत भारतीय भाषा की प्रासांगिकता लोगों को महसूस होने लगी। अंग्रेजी वैश्वीकृत भारतीय भाषा का रूप ले सकती है। उत्तर भारत में हिन्दी भाषा, अंग्रेजी का सशक्त विकल्प होने के साथ-साथ मातृभाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। इसलिए उत्तर भारत के आम जनों के मध्य प्राय: अंग्रेजी शून्य तो दक्षिण भारत के आम जनों के मध्य प्राय: हिन्दी शून्य।

स्पष्ट है कि हिन्दी संस्कृत से प्रभावित थी, जिसके अनेकों शब्द द्रविड परिवार की भाषा में मौजूद है। हिन्दी उर्दू से प्रभावित थी जिसके अनुयायी पूरे देश में थे अतएव हिन्दी की एक मात्र प्रतिनिधि भाषा के रूप में उभरकर आई जो संपूर्ण देश के लिए जनसहयोग के माध्यम बन सके। ये भाषा बोलने तथा समझने में अत्यंत सरल होने के साथ-साथ अन्य भाषा के शब्दों को बडी तेजी से आत्मसात् कर लेती है।

भारत वैश्वीकरण का हिस्सा होने साथ सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक-सामरिक तथा सांस्कृतिक स्थिति में आमूल चूल परिवर्तन हुआ। 21 वीं सदी के प्रारम्भ तक भारत ने वैश्वीकरण को पूर्णत: आत्मसात कर लिया, जिससे देश के अनेक क्षेत्रों में समृद्धि हुई। देश के लोगों के जीवन स्तर में तकनीकी एंव अंग्रेजी की वरीयता परलच्छित हुई, संस्कार प्रधान समाज, अर्थप्रधान समाज के रूप में परिवर्तित हुआ। हिन्दी भाषा में यह सामर्थ्य है कि अंग्रेजी का देश के अन्दर विकल्प बन सके। भारतीय संविधान में हिन्दी भाषा को वरीयता उसके क्षेत्रीय, जनसांख्यिकीय विस्तार के कारण है। भारतीय संविधान के कारण ही भाषा के अपनाने हेतु पूरे राज्यों ने कालान्तर में जो उत्साह प्रदर्शित किया है, इसके मूल में वैश्वीकरण का दौर ही निहित है। हिन्दी भाषा मूलरूप में संस्कृत से ही आविर्भावित हुई है। अतएव हिन्दी के मूल संस्कृत को अत्याधिक विकसित करने के लिए इस वैश्वीकरण के दौर में आवश्यकता है। संस्कृत के लेखन और वाचन में विचलन न होने के कारण

हिन्दी के लेखन और वाचन में समस्या कम होगी, जिससे एक सशक्त जनसंचार माध्यम की प्रासंगिकता वर्तमान के दौर में सार्थक होगी। भाषा सत्ता के महासागर में विविध विद्रूपों का तक्षण करती हैं एवं सृष्टि का निर्माण करती है, इसलिए भर्तृहरि ने भाषा को शब्द–ब्रह्म का दर्जा दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शब्दस्य परिणामोऽयमित्याम्नायविदो विदु:।
छन्दोभ्य एव प्रथममेतद्विश्वं व्यवर्तत।। तत्वसंग्रह–128
2. वाक्यपदीयम्–1.1
3. नाषोत्पाद्यसमालीढं ब्रह्म शब्दमयं परम।
यत्तस्य परिणामोऽयं भावग्राम: प्रतीयते।। तत्वसंग्रह–128
4. वाक्यपदीयम्1.13
5. न सोऽस्ति प्रत्यो लोके य: शब्दानुगमाद्दते।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्व शब्देन भाषते।। वाक्यपदीयम्1.12
6. वाक्यपदीयम्–124.26
7. एक: शब्द: सम्यग्ज्ञात: सुप्रयुक्त:शास्त्रान्वित:स्वर्गे लोकेकाम धुग्भवति। पष्पशाह्निकम्।
8. सांख्यकारिका, 1
9. सांख्यकारिका, 2
10. जैन दर्शन का सिद्धान्तपक्ष
11. काव्यप्रकाश द्वितीयउल्लास।
12. 1. अनुसूची 343 संघ की राजभाषा।
2. अनुसूची 344 राजभाषा के सम्बन्ध में आयोग और संसद की समिति।
3. अनुसूची 345 राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं।
4. अनुसूची 346 एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा।
5. अनुसूची 347 किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध।
6. अनुसूची 348 उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में अधिनियमों, विधेयकों, आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा।
7. अनुसूची 349 भाषा से सम्बधित कुछ विधियां अधिनियमों, विधेयकों, आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा।
8. अनुसूची 350 व्यवस्था के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग करने के लिए विशेष प्रक्रिया।
9. अनुसूची 350 (ए) प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं। अनुसूची 350 (बी) भाषाई अल्पसंख्यक वर्गों के लिए विशेष अधिकारी।
10. अनुसूची 351 हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देश।
13. (ए) आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएं क्षेत्रीय भाषाओं के रूप में मान्यताप्राप्त।
(बी) 29 अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण।
30 शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रकाशन करने की अल्पसंख्यक वर्गों के अधिकार।

****

साहित्य सुधा सिन्धु में काव्य-लक्षण विमर्श

आराधना *

प्रस्तावना – काव्य का स्वरूप व्यापक है। जितना व्यापक है, उतना सूक्ष्म भी, अत: इसे लक्षण की परिधि में बाँधना अत्यन्य कठिन कार्य है। आदिकाल से लेकर आज तक काव्य का स्वरूप स्पष्ट करने, उसके लक्षण-निर्माण तथा उसे परिभाषाओं में बाँधने के प्रयत्न होते रहे हैं, परन्तु उसका विकासशील रूप लक्षणों और परिभाषाओं की सीमाओं से बाहर ही दीख पड़ता है। कहीं उसका कोई अंग नहीं आ पाता, तो कहीं उसके प्रभाव की विशेषता समाप्त हो जाती है। काव्य की व्यापकता का स्थूल प्रमाण यही है कि संसार के सभी देशों और जातियों में प्रारम्भ से ही काव्य किसी-न-किसी रूप में पाया जाता है।

नाटक को काव्य का एक रूप मानने में, भरत मुनि का नाट्यशास्त्र सबसे प्रथम काव्यशास्त्र का ग्रंथ ठहरता है। नाट्यशास्त्र में काव्य का कोई लक्षण नहीं दिया गया, अपितु काव्य के अनेक अंगों का विवेचन उसमें है, जैसे-रस, गुण, अलंकार, भाव आदि पर मुख्य बल उसमें अभिनय पर ही है। **भरतमुनि** ने नाट्यशास्त्र में नाटक में काव्य की स्थिति का स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है-

मृदुललितपदादयं गूढशब्दार्थहीनम्
जनपदसुखबोध्यं युक्तिमन्नृव्ययोज्यम्।
बहुरसकृतमार्ग सन्धिसन्धानयुक्तम्
न भवति शुभकाव्यं नाटकप्रेक्षकाणाम्।।[1]

यह काव्य की सामान्य परिभाषा के रूप में नहीं है, इसमें नाटक के अन्तर्गत प्राप्त काव्य के तत्वों का निरूपण है। अत: काव्य की सबसे प्राचीन परिभाषा **अग्निपुराणकार**[2] की मानी जाती है। अग्निपुराण के अनुसार ऐसा वाक्य काव्य है जो इष्ट अर्थ को प्रकट करने वाली पदावली से युक्त, जिसमें अलंकार प्रकट हों और जो दोषरहित एवं गुण युक्त हो। अग्निपुराणकार ने काव्य को बाह्य सीमाओं में बाँधने का प्रयत्न तो किया पर इससे काव्य का प्रभावकारी स्वरूप स्पष्ट नहीं हो पाता है।

अग्निपुराण के बाद **भामह**[3] काव्य-लक्षण करते हुए कहते हैं कि शब्द और अर्थ के सहभाव को काव्य कहते हैं। भामह से आगे के आचार्यों ने इन बाह्य स्वरूप-निरूपक लक्षणों का खण्डन कर काव्य की अन्तर्भूत विशेषता या आत्मा की खोज करने का प्रयत्न किया। आगे **आचार्य दण्डी**[4] का कथन है कि मनोरम हृदयाह्लादक अर्थ से युक्त पदावली शब्द समूह को काव्य कहते हैं।

आचार्य दण्डी के बाद **वामन**[5] रीति को ही काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार करते हैं। वामन के बाद **रूद्रट**[6] भामह की तरह शब्दार्थ को काव्य की आत्मा मानते हैं। **आचार्य आनन्दवर्धन**[7] काव्यत्व के लिए शब्द और अर्थ का सहभाव आवश्यक मानते हैं, इसी विषय में कहते हैं कि वह शब्दार्थमय रचना जिसमें रसिकों के मन को आनन्दित करने की क्षमता हो, काव्य है। आगे **आचार्य जयदेव**[8] काव्य लक्षण करते हुए कहते हैं कि काव्यवाणी में निर्दोषता, लक्षणयुक्तता, रीति, गुण, अलंकार, रस और वृत्ति की अनिवार्यता होनी चाहिए। **आचार्य कुन्तक**[9] ने न तो रमणीय शब्द विशिष्ट पद को काव्य माना और न रमणीयता से विशिष्ट अर्थ को ये शब्द अर्थ दोनों के साहित्य को काव्य स्वीकार करते हैं।

आचार्य क्षेमेन्द्र[10] काव्य की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि औचित्य को ही काव्य की आत्मा मानना चाहिए। **आचार्य भोज** काव्य का लक्षण इस प्रकार करते हैं-

'निर्दोषं गुणवत्काव्यमलंकारैरलंकृतम्।
रसान्वितं कविः कुर्वन्कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति।।'[11]

आचार्य भोज मम्मट के अधिक निकट हैं किन्तु दोनों में भेद यह है कि मम्मट ने जहाँ अलंकारों को काव्य के लिए गौण स्थान निर्धारित कर दिया है वहाँ भोज अलंकारों से अलंकृत काव्य को भी स्वागत के योग्य समझते हैं। **आचार्य मम्मट**[12] काव्य-लक्षण करते हुए कहते हैं कि दोष रहित एवं गुणालंकार युक्त शब्दार्थ ही काव्य है जो कहीं-कहीं अलंकार रहित भी होता है। **आचार्य हेमचन्द्र**[13] पूर्णतय: मम्मट से प्रभावित हैं एवं काव्य-लक्षण इस प्रकार करते हैं-

'अदोषो सगुणो सालंकारो च शब्दार्थौ काव्यम्।'

आचार्य विश्वनाथ[14] रस को ही काव्य की आत्मा स्वीकारते हैं।

इस प्रकार भरत से लेकर विश्वनाथ तक की काव्य-लक्षण सम्बन्धी धारणाओं पर दृष्टिपात करते हुए यह स्वत: ही स्पष्ट हो जाता है कि काव्यशास्त्र में आरम्भ से ही काव्य-लक्षणों पर सांगोपांग विचार किया। इस सन्दर्भ में आचार्यों के जितने मत प्राप्त होते हैं उनमें से दण्डी, जयदेव, राजशेखर, आचार्य विश्वनाथ आदि आचार्य शब्द काव्यवादी हुऐं और भामह, रूद्रट, आनन्दवर्धन, कुन्तक, भोज, मम्मटादि आचार्य शब्दार्थ काव्यवादी हुए।

साहित्य सुधा सिन्धु में काव्य-लक्षण – साहित्यसुधासिन्धु के रचयिता आचार्य विश्वनाथदेव हैं। इनका समय 16 वीं शताब्दी है तथा जन्म स्थान दक्षिण भारत में गोदावरी नदी के किनारे पर स्थित धारासुर नगर है। इनके अनुसार काव्य-लक्षण इस प्रकार है-

'जायते परमानन्दो ब्रह्मानन्दसहोदर:।
यस्य श्रवणमात्रेण तद् वाक्यं काव्यमुच्यते।।'[15]

'जिस वाक्य के सुनने मात्र से ब्रह्मानन्द के समान महान् आनन्द उत्पन्न होता है वह वाक्य काव्य कहलाता है।'

विश्वनाथदेव ने लक्षण में **'श्रवणमात्रेण'** शब्द प्रयुक्त किया है जिससे यह प्रतीत होता है कि ये **'शब्द:काव्यम्'** इस मत को स्वीकार करते हैं। क्योंकि शब्द ही सुना जाता है अर्थ नहीं।

इनके काव्य-लक्षण की दूसरी विशेषता है **'ब्रह्मानन्दसहोदर परमानन्द'**। यहाँ वे आनंद प्राप्ति को काव्य का प्रमुख अंग स्वीकारते हैं। यहाँ पर वे दण्डी, कुन्तक, वामन, आनन्दवर्धन से प्रभावित होते दिखाई देते हैं। दण्डी ने अपने काव्य-लक्षण में **'इष्टार्थ'** शब्द का प्रयोग किया है, जिसका अभिप्राय लोकोत्तर आह्लाद से है। इसी प्रकार **कुन्तक** ने अपने काव्य-लक्षण में **'विदाह्लादकारिणि'** शब्द के द्वारा आनन्द को स्वीकार किया है। **वामन** ने भी काव्य को आनन्दकारक बताया है। **आनन्दवर्धन** ने भी

*शोधार्थी (संस्कृत) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

लोकोत्तरानन्द को काव्य का फल माना है।

काव्य का लक्षण देने के पश्चात् सिन्धुकार **'शब्द'** को काव्य मानने वाले आचार्यों के विषय में कहते हैं कि कुछ आचार्यों का मत है कि आस्वाद का अभिव्यंजन करना ही काव्य का उत्पादक हेतु है। यह आनन्द का अभिव्यंजन तो शब्द और अर्थ दोनों में ही समान रूप से रहता है। इस कारण शब्द की भांति अर्थ में भी काव्यत्व होता है।

यहाँ सिन्धुकार दण्डी, जयदेव और दर्पणकार विश्वनाथ आदि शब्द काव्यवादी आचार्यों के मत का खंडन करते हैं। किन्तु इसके तुरन्त बाद ही वे **'शब्द'** को काव्य मानने वालों के मत को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि 'कवि काव्य को शब्दों से ही बनाता है।' इस प्रकार वे संक्षेप में शब्द को काव्य मानने वाले आचार्यों को अपना समर्थन दे देते हैं। वे कहते हैं कि **'शब्दार्थो'** में शब्द के पूर्व प्रयोग से शब्दगत उत्कृष्टता को दिखलाते हुए सिन्धुकार ने **'शब्द'** की ही काव्यता होती है, यह बात व्यंजना से प्रकट की है तथा कवि के द्वारा बनाने योग्य जो पद रचना होती है वही काव्य कहलाती है और कवि के द्वारा शब्द का ही निर्माण होता है रमणी, चन्द्रमा, व चाँदनी आदि वस्तुओं (अर्थों) का निर्माण ब्रह्मा के द्वारा किया जाता है।

'शब्द ही काव्य है' यह बताने के पश्चात् विश्वनाथदेव **'केचित्तु'** कहकर मम्मट के अनुयायी विद्वानों के काव्य-लक्षण का खण्डन करते हैं। वे कहते हैं कि-

'अदोषौ तद्धि शब्दार्थौ सालंकारौ गुणाविन्तौ।
काव्यमेतदिति प्राहुलंकारविशारदा:।।'[16]

दोषरहित, अलंकारों से युक्त, गुणोपेत शब्दार्थ समुदाय ही वह काव्य होता है, इस प्रकार का यह काव्य-लक्षण अलंकार-शास्त्र के विद्वान आचार्यों ने बतलाया है।

इस काव्य-लक्षण के सम्बन्ध में कुछ आचार्य शंका करते हैं कि - काव्यत्व दण्डत्वादि की तरह प्रत्येक **'परिसमाप्यवृत्ति'** है या द्वित्व और पृथकत्व की तरह **'व्यासज्यवृत्ति'** है? अभिप्राय यह है कि विश्वनाथदेव **'शब्दार्थो काव्यम्'** इस मत के समर्थकों से यह प्रश्न पूछते हैं कि-

1. क्या काव्यत्व अकेले शब्द में अलग रूप से और अकेले अर्थ में अलग रूप से रहता है जिसको **परिसमाप्यवृत्ति** कहते हैं? या
2. क्या यह काव्यत्व शब्द और अर्थ इन दोनों वस्तुओं में समान रूप से उभयनिष्ठ होकर रहता है जिसको **व्यासज्यवृत्ति** कहते हैं?

विश्वनाथदेव स्वयं ही इसका उत्तर देते हैं कि इसमें पहला मत सही नहीं माना जा सकता क्योंकि एक ही पद्य के लिए यह नहीं कहा जा सकता है कि यह शब्द काव्य भी है और अर्थ काव्य भी है, क्योंकि ऐसा मानने लगेंगे तो एक ही जगह दो काव्य मानने होंगे जो कि सर्वथा अनुचित है।

इसी प्रकार दूसरा मत भी नहीं माना जा सकता क्योंकि जैसे **'देवदत्त: प्रभाव:'** इस वाक्य में उभयनिष्ठ देवदत्तप्रभवत्व धर्म संकर दोष से दूषित होने के कारण जाति धर्म नहीं बन सकता। उसी प्रकार शब्दार्थ की समष्टि को काव्य मानने पर यहाँ शब्दत्व, अर्थतत्व और काव्यत्व इन तीन जातियों का संकर हो जाता है, और इस संकर दोष के कारण यहाँ पर शुद्ध रूप में काव्यत्व यह अवच्छेदक धर्म नहीं रह पाता।

इस प्रकार विश्वनाथदेव **'शब्दार्थो काव्यम्'** इस मत के समर्थक आचार्यों का खंडन करते हैं। यहाँ पर जिस रीति से इस मत का खण्डन किया है वे दण्डी के समर्थक प्रतीत होते हैं क्योंकि दण्डी ने भी **'शब्दार्थो काव्यम्'** मत का खंडन करते हुए यही रीति अपनाई है।

'शब्दार्थो काव्यम्' इस मत का खंडन करने के पश्चात् सिन्धुकार ने मम्मट के अनुयायियों द्वारा स्वीकृत लक्षण का खण्डन किया है। यहाँ वे इनके अदोषौ और सगुणौ विशेषण का खण्डन करतेहैं-

1. **अदोषो -** सर्वप्रथम विश्वनाथदेव अदोषौ विशेषण को लेते हैं और कहते हैं कि मम्मट के अनुयायी को **'अदोषो'** का अर्थ **'दोषविशेषाभाव'** नहीं करना चाहिए। इसको समझाने के लिए विश्वनाथदेव ने जिस पद्य का प्रयोग किया है उसको मम्मट ने भी **'अदोषो'** पद की व्याख्या करते हुए प्रस्तुत किया है-

न्यक्कारो ह्ययमेव मे यदरयस्तत्राप्यसौ तापस:
सोऽप्यत्रैव निहन्ति राक्षसकुलं जीवत्यहो रावण:।
धिग्धिक्छक्रजितं प्रबोधितवता किं कुम्भकर्णे वा
स्वर्गग्रामटिकाविलुण्ठनवृथोच्छ्नै: किंयेभिर्भुजै:।।

इस पद्य में **'विधेयाविमर्श'** नामक दोष माना जाता है। विधेय का प्रधान रूप से निर्देश न करने पर विधेयाविमर्श दोष होता है।

सिन्धुकार के मतानुसार हमें **'अदोषो'** का अर्थ **'दोषसामान्यभाव'** ही लेना होगा। क्योंकि यदि **'दोषविशेषाभाव'** अर्थ करेंगे तो उपर्युक्त पद्य में जहाँ विधेयविमर्श नामक दोष है वहा अकाव्यत्व मानना होगा और अन्यत्र काव्यत्व स्वीकार करना पड़ेगा। इस स्थिति में किस पद्य को ना तो काव्य ही कहा जा सकेगा और न ही अकाव्य। इसीलिए **'अदोषो'** इस पद से यहाँ यह अर्थ हो सकता है कि यथाशक्ति दोष का कविता में परित्याग करना चाहिए। परन्तु इसको लक्षण में नहीं रखना चाहिए क्योंकि दोष-दूषित काव्य में भी रस की प्रतीति होती है।

2. **सगुणौ-'अदोषो'** पद को अनुचित बताने के साथ-साथ विश्वनाथदेव ने **'सगुणो'** पद की भी आलोचना की है। उनके अनुसार **'शब्दार्थो'** का **'सगुणो'** विशेषण रखना भी निरर्थक है। क्योंकि गुण तो केवल रस में होते हैं, शब्द और अर्थ में नहीं। क्योंकि रस काव्य की आत्मा है और शब्दार्थ काव्य का शरीर है। जैसे आत्मा के विद्या, बुद्धि आदि धर्म शरीर में नहीं रहते, उसी प्रकार रस के माधुर्यादि गुण काव्य के शरीरभूत शब्दार्थ में नहीं रहते।

'सगुणो' के खंडन करने के पश्चात् विश्वनाथदेव यह कहते हैं **'अदोषो तद्धि ...'** में आये हुए **'गुणान्वितौ'** इस पद का यह अर्थ है कि गुणव्यंजक शब्द और अर्थ काव्य होते हैं।

3. **अलंकार -** आचार्य विश्वनाथ अलंकारों के विषय में कहते हैं कि काव्य में किसी विशेष अलंकार न रहने पर भी सामान्यालंकार के होने पर काव्यत्व मानने पर भी कोई क्षति नहीं होती। इसको उदाहरण से स्पष्ट करते हैं-

'आपृच्छस्व सखी नमस्कुरू गुरून् वन्दस्व बन्धुस्त्रिय:
कावेरीतटसन्निविष्टनयने मुग्धे किमुत्ताम्यसि।
आस्ते पुत्रि समीप एव सदनादेलालतालिगिंत-
न्यग्चतीरतमालदन्तुरदरी तत्रापि गोदावरी।।'[17]

विश्वनाथदेव कहते हैं कि इस पद्य में कोई विशेषालंकार नहीं है किन्तु यहाँ पर वात्सलय रस के साथ काव्य की आत्मभूत **'वक्रोक्ति'** है अत: यहाँ काव्यत्व का निषेध नहीं हो सकता। तत्पश्चात् वक्रोक्ति की प्रधानता को प्रदर्शित करने के लिए वे भामह की उक्ति को देते हैं-

'सैषा सर्वत्र वक्रोक्तिरनयार्थो विभावयते
यत्नोऽस्यां कविना कार्य: कोऽलंकारोऽनया बिना।।'[18]

अर्थात् सारे स्थानों में प्रसिद्ध वक्रोक्ति रहा करती है। इससे अर्थ में विभावना अर्थात् चमत्कार आ जाता हैं कवि को इसमें प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि ऐसा कौन सा अलंकार है जो इसके बिना होता है? इसके बाद विश्वनाथदेव वक्रोक्ति का लक्षण देते हैं-

'वक्रोक्तिश्च चमत्कार कारिण्युक्तिः।'

इस विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि विश्वनाथदेव के अनुसार काव्य में अलंकारों का होना अनिवार्य माना गया है।

विश्वनाथदेव का काव्यशास्त्र में योगदान – विश्वनाथदेव के अनुसार काव्य का परिनिष्ठित लक्षण है– **'स्वर्गविशे जनकतावच्छेदकं काव्यत्वं।'** अर्थात् स्वर्गीय आनन्दोपम लोकोत्तर सुख विशेष को उत्पन्न करने वाला अखण्डार्थ बोधक अखण्ड वाक्य ही काव्य होता है।

यहाँ सिन्धुकार ने काव्य को अखण्डोपाधि के रूप में स्वीकार किया है जाति के रूप में नहीं। क्योंकि जाति मानने पर संकर दोष उत्पन्न होता है। अतः विश्वनाथदेव के अनुसार शब्द से अर्थ पृथक नहीं है और अर्थ से शब्द का भेद नहीं है इन दोनों का ऐक्य ही वाक्यार्थ होता है। इसीलिए सिन्धुकार ने स्वर्गोपम आनन्द के जनक अभिन्न शब्दार्थ को काव्य के रूप में स्वीकार किया है।

सिन्धुकार ने **'शब्दकाव्यवादी'** मत को स्वीकार किया है, किन्तु इस प्रसंग में उनके विचार बहुत अस्पष्ट से दिखाई देने लगते हैं जब वे अपना काव्य–लक्षण देने के तत्पश्चात् **'शब्दः काव्यम्'** मत का खण्डन अन्य आचार्यों द्वारा किया हुआ बताते हैं। किन्तु दूसरे ही क्षण वह **'शब्दः काव्यं'** मत को **'काव्यं करोति'** की व्याख्या करते हुए स्वीकार कर लेते हैं कि कवि शब्दों को ही बनाता है अर्थों को नहीं। दूसरे अपने काव्य–लक्षण में **'श्रवणमात्रेण'** शब्द प्रयुक्त करते हैं जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि **'शब्दः काव्यम्'** मत के अनुयायी हैं। वे **'शब्दार्थ'** के समूह को काव्य मानने से भी इन्कार नहीं करते हैं।

विश्वनाथदेव के काव्य–लक्षण में काव्य का एक विशेष गुण स्वीकार किया गया है **'परमानन्द'** जिसे उन्होंने **'ब्रह्मानन्दसहोदर परमानन्द'** तथा **'स्वर्गीयानन्दोपम आनन्द'** दो नाम अपने अलग–अलग काव्य–लक्षणों में दिये हैं। यहाँ यह देखते हैं कि विश्वनाथदेव के पूर्ववर्ती आचार्यों **दण्डी, कुन्तक, भोज, जयदेव** और **विश्वनाथ कविराज** ने आनन्द को स्वीकार किया है।

अतः यहाँ यह स्पष्ट है कि आनन्द को काव्य का फल बहुत पहले से ही माना जाता रहा है, किन्तु इसे इतने स्पष्ट रूप से विश्वनाथदेव ने ही स्वीकार किया है। उन्होंने उसे **'ब्रह्मानन्दसहोदर परमानन्द'** और **'स्वर्ग विशेष'** कहकर अति महत्वपूर्ण स्थान प्रदत्त किया है। यही इनके काव्य–लक्षण में इनकी मौलिकता दिखाई देती है।

विश्वनाथदेव ने **'शब्दकाव्यत्ववादी'** और **'शब्दार्थकाव्यत्वादी'** दोनों में से किसी एक ही मत को पूर्णतया स्पष्ट न मानते हुए शब्दार्थ के समूह को काव्य कहते हुए भी शब्द को ही प्राधान्य दिया है। यह उनकी एक विशेष उपलब्धि है जो दो मार्गों के बीच मध्यस्थ मार्ग दिखाती है।

इसके अतिरिक्त विश्वनाथदेव ने काव्यत्व को जाति न मानकर अखण्डोपाधि माना है जिससे कि संकर दोष उत्पन्न न हो यह भी उनके काव्य–लक्षण की एक अति महत्वपूर्ण विशेषता है।

काव्य में अलंकारों की स्थिति के सम्बन्ध में भी दो मत हैं एक वर्ग काव्य में अलंकारों को अनिवार्य मानता है और दूसरा वर्ग अलंकारों को मात्र काव्य की शोभा बढ़ाने वाला मानता है। **वामन, राजशेखर, जयदेव** और **वाग्भट्ट** काव्य में अलंकारों को अनिवार्य मानते हैं किन्तु **दण्डी, आनन्दवर्धन, मम्मट, हेमचन्द्र, विश्वनाथ कविराज** के अनुसार अलंकार काव्य के आवश्यक तत्व नहीं हैं वे मात्र काव्य के शोभावर्द्धक तत्व हैं।

विश्वनाथदेव के अनुसार अलंकार काव्य के लिए आवश्यक है, किन्तु वे कहते हैं कि काव्य के लिए आवश्यक नहीं है कि उसमें कोई विशेषालंकार ही हो, सामान्यालंकार जैसे वक्रोक्ति के रहने पर भी काव्य की स्थिति मानी जा सकती है। विश्वनाथदेव का यह विचार एकविशेष मौलिकता प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 नाट्यशास्त्र, 16/124 भरतमुनि, व्याख्याकार–बाबूलाल शुक्लशास्त्री,चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 1999

2 'संक्षेपाद्धाक्यमिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।काव्यं स्फुरदलंकार गुणवद्धोषवर्जितम्।।'अग्निपुराण, 337/607, व्याख्याकार–पं. बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी

3 'शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्यं पद्यं च तद् द्विधा।।'काव्यालंकार, 1/16, भामह, व्याख्याकार–देवेन्द्रनाथ शर्मा, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्, पटना, 1962

4 'शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।।'काव्यादर्श, कारिका सं. 10,दण्डी, व्याख्याकार–शिवनारायण शास्त्री, परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1998

5 'रीतिरात्माकाव्यस्य।।'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति, 2/16, वामन, कामधेनु टीकासहित, वाचस्पति प्रेस, कलकत्ता, 1922

6 'शब्दार्थौ काव्यम्'।काव्यालंकार, 3/1,रूद्रट, व्याख्याकार–श्री रामदेव शुक्ल, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी,1966

7 'शब्दार्थयोः साहित्येन काव्यत्वे ...।'ध्वन्यालोक 4/6 की वृत्ति, आनन्दवर्धन, व्याख्याकार–कृष्ण कुमार, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1973

8 'निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुण भूषणा। सालंकार रसानेक वृत्ति वक्विाव्यनाममाक्।।चन्द्रलोक, 1/7, जयदेव, व्याख्याकार–सुबोधचन्द्र पन्त, मोतीलाल बनारसीदास, 1975

9 'शब्दार्थौ सहितौ वक्रकविव्यापारशालिनि।बन्धेव्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाहलादकारिणि।।'वक्रकोक्तिजीवितम्, 1/7, कुन्तक, व्याख्याकार – आचार्य विश्वेश्वरा, आत्माराम एण्डसन्स, दिल्ली, 1955

10 'औचित्यस्य चमत्कार–कारिणश्चारूचर्वणे।रसजीवितभूतस्य विचारं कुरूतेऽधुना।।औचित्यविचारचर्चा, 1/2, क्षेमेन्द्र, चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, वाराणसी, 1973

11 सरस्वतीकण्ठाभरण, 1/2, आचार्य भोज, द सुपरीडेन्ट गवर्मेन्ट प्रेस, त्रिवेन्द्रपुर, 1948

12 'तद्दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि।।काव्यप्रकाश, 1/4,मम्मट, व्याख्याकार–आचार्य विश्वेश्वर, ज्ञानमण्डल प्रकाशन, वाराणसी, 2005

13 काव्यानुशासन, पृष्ठ संख्या 16, हेमचन्द्र, व्याख्याकार–पं. शिवदत्त शर्मा, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1901

14 'वाक्यंरसात्मकं काव्यम्'।साहित्यदर्पण, 1. पृष्ठ सं. 24, विश्वनाथ, व्याख्याकार–शेषराज रेग्मी, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2007

15 साहित्यसुधासिन्धु, 1/4, विश्वनाथदेव, व्याख्याकार–रामप्रताप वेदालंकार भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, वाराणसी, 1978

16 साहित्यसुधासिन्धु, पृष्ठ संख्या 8, वही

17 साहित्यसुधासिन्धु, पृष्ठ संख्या 20, वही

18 काव्यालंकार, 2/85, भामह, व्याख्याकार–देवेन्द्रनाथ शर्मा, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 1962

व्यवसायिक नहीं सौन्दर्यपरक है अवधेश मिश्र की दृष्टि

सपना नीरज * डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला **

प्रस्तावना – सौन्दर्य प्रकृति में सर्वत्र ही व्याप्त है, इसी कारण मनुष्य स्वभाव से ही सौन्दर्य के प्रति जिज्ञासु रहा है। इसी जिज्ञासा ने मानव को नवीन कला के सौन्दर्य के आहवान् में सहायता प्रदान की है। इसी प्रकार अवधेश जी ने अपनी जिज्ञासा एवं कल्पना को परम्परा एवं आधुनिकता के योग से कला की पारम्परिकता को नवजीवन प्रदान किया है, जो इनकी सौन्दर्यपरक दृष्टि एवं दिव्य प्रज्ञाचक्षु के अनुपम समन्वय का आदर्श प्रतिबिम्ब है। इस प्रकार कला भी वैज्ञानिक आविष्कार के समान ही नवीन सौन्दर्य का संकलन है अन्तर केवल इतना है, कला सौन्दर्यपरक है, विज्ञान तथ्यपरक है। मनुष्य का सौन्दर्य बोध परंपरा व संस्कृति के साथ भावना-सूत्रों से जुड़ा होता है जिसके विकास के लिए उसकी कल्पना को उसके सौन्दर्य बोध में रमाने के लिए शैक्षिक या अनुभवजन्य-समयबद्ध समय प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। इसी कारण ख्याति प्राप्त कलाकार अवधेश मिश्र(जन्म- 1970, फैजाबाद के मठगोविन्द ग्राम में) ने अपने कला सौन्दर्य की अनुभूति को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय से बी.एफ.ए., एम.एफ.ए. की शिक्षा ली ग्रहण की। तत्पश्चात् लखनऊ से आर्ट मास्टर ट्रेनिंग क्योंकि केवल अन्तर्मन से चित्रांकन करना ही प्र्याप्त नहीं रहता। अन्तर्मन के विकास एवं सौन्दर्य के नवीन प्रतिमानों की जानकारी के लिए एक दिशा की आवश्यकता अनिवार्य होती है। इसी आवश्यकता को कला व्यवसाय की विविध श्रृंखलाएं यथा कला दीर्घाएं, कला संस्थाएं एवं कला शिविर आदि आधार प्रदान कर रहे हैं। परन्तु कुछ नवीन कलाकार इन्हीं श्रृंखलाओं से दिग्भ्रमित भी हो रहे हैं क्योंकि वे अपना मौलिक कार्य करने के स्थान पर ख्याति प्राप्त कलाकारों का अनुकरण कर रहे हैं, जिसका कारण लघु अवकाश में बड़ी ख्याति प्राप्त करना एवं धनार्जन है, फलस्वरूप ये नवीन कलाकार कुछ समय के लिए प्रकाश में आ जाते हैं परन्तु स्थापित नहीं हो पाते। समय की इस विकट परिस्थिति में अवधेश मिश्र विचलित नहीं हुए बल्कि बड़े कलाकारों के गुणों को आत्मसात करते हुए एवं सांस्कृतिक परम्पराओं से जुड़ते हुए अपनी मौलिक कला शैली का आविष्कार किया क्योंकि मिश्र जी कला का सृजन व्यावसायिक दृष्टि से नहीं बल्कि आत्म साधना की सौन्दर्यपरक दृष्टि से करते हैं। यही कारण है कि आज उनका नाम विश्व के ख्याति प्राप्त कलाकारों में अग्रणी है।

'आज आधुनिकता के इस परिवेश में एक ऐसा कठिन समय पंख पसारे हुए है, जिसमें कलाओं के नैतिक मूल्यों में गिरावट आ रही है, फलस्वरूप 'परम्पराओं और पुरानी मान्यताओं की बलि देनी पड़ती है। इन दिनों विश्व उत्तर आधुनिकता (अर्थात आधुनिक समय के बाद की स्थिति) जो आज बहुत ही कठिन दौर से गुजर रहा है, जहां परम्परा और आधुनिकता का द्वन्द्व और भी गहन हो जाता है। जहां परम्पराएं और संस्कृति ही नहीं मनुष्य की तमाम कोमल भावनाएं और आपसी सम्बन्ध भी दांव पर लगे हुए हैं। संवेदनाओं पर आधारित भारतीय समाज को भौतिक उपभोग्तावाद से लुभाने की तैयारियां हैं। हमारी संस्कृति और परम्पराओं में पश्चिम की रूचि बढ़ती जा रही है।'[1]

तभी भारतीय कलाकारों की कृतियों को विदेशों में भी पूर्ण सम्मान प्राप्त हो रहा है। जिसमें कला संस्थाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। मिश्र जी ने भी इसी दिशा में अपूर्व ख्याति अर्जित की है क्योंकि इन्होंने परम्पराओं से रसात्मक गुणों को ग्रहण करके अपनी सृजनशीलता को चहुँदिशा में प्रकाशित किया है, साथ ही ऐसे नवीन विषयों पर अपनी तूलिका चलायी है, जिनपर पहले विचार नहीं किये गये थे। इनकी चित्र श्रृंखला बिजूका इसी परम्परा एवं आधुनिकता का दिव्य समन्वय है। (चित्र संख्या 1,2)

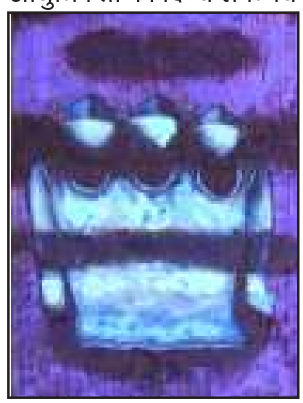

(चित्र संख्या 1,2)

जिसमें राजनेताओं के भ्रष्ट आचार-विचार, वकीलों की सफेदपोशी एवं अन्य आडम्बरयुक्त व्यवहारों का अंकन किया गया है, जो समाज से स्वअनुभूत विषयों का अंकन है, जिसके चित्रण में अवधेश जी को न कोई प्रलोभन था न स्वयं को स्थापित करने की ललक। वह तो केवल कला की साधना करते रहे हैं। यही कारण है, जो वह एक स्थापित एवं प्रतिष्ठा सम्पन्न कलाकार हैं। क्योंकि 'कलाकृतियों की बढ़ी-चढ़ी कीमत प्राप्त करके कलाकार महान नहीं बनता, वह महान बनता है, अपनी सर्जनात्मक श्रेष्ठता से।'[2]

अवधेश जी आरम्भ से ही प्रकृति के विविध रंग-रूप को नजदीक से देखते हैं क्योंकि उनका लालन-पालन ग्रामीण परिवेश रहा है। इसलिए उनके आरम्भिक चित्र प्रकृति एवं बाल्यकाल के बीते दिनों के रहे हैं। परन्तु वर्तमान में वे लखनऊ में सृजनरत हैं। यहां की कठोर दिनचर्या एवं शहरी समाज की जटिलता से उनका मन अत्यधिक प्रभावित हुआ तो कभी आहत हुआ। फिर भी कला की व्यवसायिकता की चमक उन्हें आकर्षित नहीं कर सकी। वे साधना से ही सृजन करते रहे हैं, जिसमें उनकी अन्तर्दृष्टि एवं कल्पनाशीलता सहचरी के रूप में साथ रहे हैं। उनके चित्रों से दर्शक को स्वत: ही प्रेरणा प्राप्त होती है जो कहती है कर्म करते रहो फल की चिन्ता मत करो। क्योंकि कहने को

* शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

तो उनके चित्र रेखा-रंगों से बने हैं परन्तु वास्तव में वे अपनी आत्मा को ही अपने सृजन में उतार देते हैं, तभी उनके चित्र हृदय संवाद करते हैं। बस उनकी यही आन्तरिक शक्ति उन्हें प्रोत्साहित किये हुए है, जो उन्हें यकीन दिलाए हुए तुम्हारे साथ कुछ ऐसा है जो तुम्हें नवीन एवं सुखद कल्पनाओं से भर देगा, बस तुम्हें अपने में अपार धैर्य एवं अनन्त सहनशीलता चाहिए, अगर तुम स्वयं में नहीं टूटोगे तो दुनिया की कोई ताकत तुम्हें नहीं तोड़ पाऐगी, इसलिए इस कष्ट को साहस के साथ सह जाओ।[3]यही गूढ कथन इनकी रेखाचित्र श्रृंखला 'विस्थापन' का संवाद है। (चित्र संख्या 3,4)


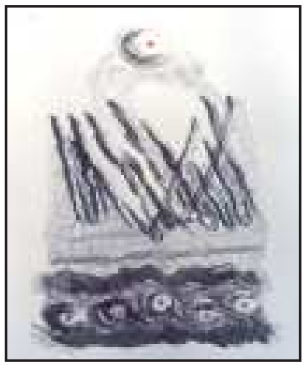

(चित्र संख्या 3,4)

इन्होंने 'कई कला प्रदर्शनियों में अपनी अभिव्यक्ति प्रस्तुत करने के साथ ही अपने विचार अकादमी में भी प्रस्तुत किये हैं। अभिव्यक्तियों की इस विचार श्रृंखला में उनकी कला अभिव्यक्ति बिल्कुल भिन्न व्यक्तित्व प्रकट करती है। इस व्यक्तित्व में विचार की लगभग विदाई है।'[4] ऐसा इसलिए है क्योंकि वे अपने चित्रों के समान ही सरल एवं आदर्श व्यक्तित्व से परिपूर्ण हैं अर्थात वे ऐसी शख्सियत हैं, जिनकी आज समाज को आवश्यकता है, जो छल-कपट से कोसों दूर हैं।

'कला के साथ संवाद और उसके प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए सार्वजनिक गैलरियों की ज्यादा से ज्यादा जरूरत है, जबकि व्यवसायिक गैलरियां दिन-प्रतिदिन खुल रही हैं। कला अकादमियां कला मेले तथा अन्य ऐसे आयोजन कर रही हैं, जिनसे कलाकारों को वैचारिक आदान-प्रदान के साथ दूसरे नाम भी मिल रहे हैं। व्यवसायिक प्रतिष्ठान तो इस बीच एक दूसरे से होड़ लगाकर कला के लिए सामने आ रहे हैं, जिनके साये में कला और कलाकार दोनों समृद्ध और सम्पन्न हो रहे हैं, परन्तु कला के इस लुभावने परिदृश्य का अर्थ यह नहीं है कि चित्रकार के समक्ष संघर्ष नहीं रहा। जिन्हें अब भी कुछ नया करना है, उनके लिए उत्तर काल या आधुनिकता का विशेष महत्व है।'[5]

क्योंकि कला व्यवसाय के कारण 'पुरस्कार प्राप्त करने की होड़ मची है कलाकृति की उत्कृष्टता का सवाल बिल्कुल गौण होता जा रहा है। कलाकृतियों के स्थान पर कलाकारों का मूल्यांकन किया जा रहा है। पुरस्कारों की विश्वसनीयता और निर्णायकों की नीयत पर संदेह बढ़ रहा है, इससे कला सर्जन का मूल्य एवं स्तर गिर रहा है। क्योंकि किसी भी कलाकृति पर पुरस्कार का निर्णय उसके गुणों के आधार पर हो यह आवश्यक है।'[6]

'व्यावसायिक कला वीथियां या तो नामी-गिरामी कलाकारों को प्रश्रय देती है उन कलाकारों को जिनका काम आसानी से बेचा जा सके ऐसे में अनेक युवा कलाकारों को मजबूरी में अपने सर्जन सम्बन्धी मूल्यों से समझौता करना पड़ता है।'[7]

यहां अवधेश जी के बिजूका का जिक्र करना उचित प्रतीत होता है कि बिजूका प्रत्येक व्यक्ति में मौजूद है, जो परिस्थितियों के कारण कभी चालाक, कभी निरीह, कभी रक्षक, कभी भक्षक बन जाता है। (चित्र संख्या 5,6)


(चित्र संख्या 5,6)

क्योंकि मूल गुणों में प्रत्येक व्यक्ति आदर्श गुणों से परिपूर्ण होता है बस परिस्थितियां ऐसी जटिलता उत्पन्न करती हैं कि वह अपनी आदर्शात्मकता को दफन करने को मजबूर होता है। कला प्रवाह का उत्कर्ष आत्मा एवं अनुभूति अवश्य है परन्तु दिशा तो कला वीथिकाएं ही प्रदान करती हैं। कला सामान्य अनुभूति नहीं है, वह तो सामान्य जीवन के निसृत सौन्दर्य का स्वरूप है। कला मानसिक आयामों का सृजनात्मक कलाकर्म है, जो गहन सत्य का उद्घाटन करता है। कलाकार की निरपेक्षता को यदि किसी आग्रह से बांधा जाता है, तो वह विकृति को ही प्राप्त होती है।

यही कारण है, अवधेश जी स्वतंत्र तथा स्वअनुभूत सौन्दर्य का सृजन करते हैं, व्यवसायिकता के लोभ में नहीं। वास्तव में इसी प्रकार के मनुष्य को वास्तविक कलाकार कहलाने का अधिकार है। क्योंकि लोभ इंसान को दिखावे के एक ऐसे गर्त में ले जाता है, जहां से केवल निराशा ही हाथ आती है, जबकि अपनी पूर्ण साधना एवं तन्मयता से किया गया कला कर्म या कोई भी कर्म उसे गगनचुमंबी बना देता है। यही है अवधेश जी की विचारशीलता की अद्भुत पराकाष्ठा जो उनके प्रत्येक चित्र को जीवन प्रदान करती है। इसी कारण वे अपने देश की परम्परा एवं संस्कृति से जुड़े हुए कलाकार हैं। ऐसे आदर्श कलाकार कला को एक दिन अवश्य ही कालजयी बना देते हैं। इस प्रकार सिद्ध है कि मिश्र जी की सृजनात्मकता में 'कला के भाव व्यक्तित्व से परे निर्वैव्यक्तिक होते हैं। इसी निर्वेयक्तिक भावों का ग्रहण कलाकार तभी कर सकता है, जब वह व्यक्तित्व की परिधि से बाहर निकलकर एक बेहतर अस्तित्व के प्रति अपने को समर्पित कर सके। कलाकार का जीवन वर्तमान क्षण में ही सीमित न रहकर अतीत की परम्परा के क्षण में भी स्पंदित होता है। उसकी अभिव्यक्ति केवल उसी क्षण की नहीं होती जिसे वह जी रहा है बल्कि उस क्षण की अभिव्यक्ति भी होती है, जो पहले से जीवित है। वस्तुतः कलाकार त्रिकाल जीवी है, उसका जीवन आज से बद्ध नहीं है।'[8]

इस तरह हमें सहज ही ज्ञात हो जाता है कि मिश्र जी की कला में व्यवसायिकता का लेश मात्र भी परिलक्षित नहीं होता क्योंकि जिस कला में सर्वत्र ही अन्तर्मन के रागात्मक क्षणों का आलम्बन हो वहाँ दिखावे के समूह बंघन नहीं अपितु संवेदनाओं का ज्वलंत अम्बार स्वंय ही प्रकट हो जाता है, जो संवेदनशील दर्शक का मन अवश्य ही मोह लेता है। परम्परा का जो आदर्श समन्वय अवधेश जी के सृजन संसार में उपस्थित है, वह वर्तमान से

अतीत की सम्बद्धता का द्योतक है। भावों का धनी कलाकार ही इस आदर्शात्मकता का कीर्ति पुंज होता है। कला मात्र अनुभूतियों से नहीं बनती वह तो रचनाशील मन के ज्ञानात्मक भावात्मक पक्ष का सम्मिश्रण है।'**अज्ञेय के शब्दों** में कला बनती है, उन अनुभूतियों से, उन अनुभूतियों एवं भावों के संगम से जिनसे कवि या कलाकार स्वयं अलग, तटस्थ है। जिन पर उसका मन काम कर रहा है। अज्ञेय के मत से कलाकार जितना बड़ा होगा, उतना ही जीवन और रचनाशील मन का यह अलगाव भी अत्यधिक होगा। उतना ही रचना करने वाला रचनाशील मानस अनुभव करने वाले मानव से दूर और पृथक होगा, उतना ही चमत्कारपूर्ण उन अनुभूतियों और भावों का संगम होगा। फिर चाहे ये अनुभूतियां और भाव कवि या कलाकार के निजी अनुभव, व्यक्तिगत जीवन के फल क्यों न हो। जितना महान कलाकार होगा उतनी ही उसकी माध्यमिकता परिष्कृत होगी।'[9]

यही समस्त प्रक्रिया कलाकार मानस पर भी कार्यान्वित होती है, अन्तर केवल इतना है कि कवि भावों के ताप को शब्दों के माध्यम से प्रकट करता है और कलाकार चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। कलाकार मानस इन्हीं भावों के रसायन से चमत्कारिक प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम हो जाता है। 'छोटे व्यक्तित्व से निरन्तर बड़े व्यक्तित्व की ओर बढ़ते जाना यही कलाकार की प्रगति और उन्नति है। ऐतिहासिक चेतना-परम्परा के स्पंदन की अनुभूति इस उन्नति का साधन और मार्ग है।'[10]

इसी परिश्रम की गरिमा से मिश्र जी आज समाज में प्रतिष्ठित समकालीन कलाकारों की श्रेणी में अग्रणी हैं। इनके चित्रों में अद्भुत आकर्षण है तभी इनके चित्रों की समीक्षा में 'पूर्व आई.ए.एस. एवं लेखक भवानीशंकर शुक्ल ने कहा कि अवधेश के चित्रों को देखना निश्चय ही एक सुखद अनुभव है। उनका रंग विन्यास, प्रकाश और छाया का प्रदर्शन विषयगत वैविध्य और कृतियों का संतुलित संयोजन दर्शकों को प्रभावित करता है। रंगों के मिश्रण में अवधेश की अनुभवी दृष्टि अलग प्रभाव डालती है।'[11] (चित्र संख्या 7)

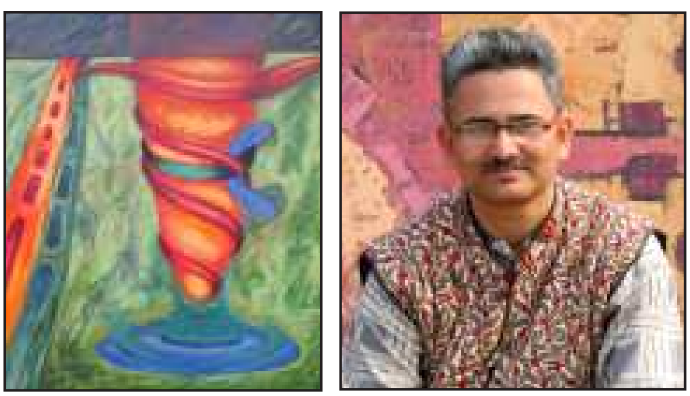

(चित्र संख्या 7)

इस प्रकार अवधेश जी के चित्रों में विचित्र किस्म का सौन्दर्य है, जिससे सहज ही यह भाव उत्पन्न हो जाता है कि इतनी सौन्दर्यात्मक चित्राभिव्यंजना संवेदनशीलता की गहनता का प्रमाण है, जिसमें व्यसायिकता की गंध का अभाव है। आज के युग में प्रत्येक व्यक्ति धन के प्रति लोलुप भाव अवश्य ही रखता है। तभी वह व्यवसायिकता का रूख अख्तियार करता है परन्तु मिश्रजी के व्यक्तित्व में इतनी अधिक सादगी एवं सहजता है कि धन की चकाचौंध से वह दूर ही हैं। इतना अवश्य है, कि वे स्वयं कहते हैं, कला भूखे पेट नहीं होती। वे तो कला की दुनिया द्वारा विश्व में स्वयं के पंख पसारकर उड़ना चाहते हैं यही वह आशा है, जो उन्हें बल प्रदान करती है। तभी कहा भी जाता है, आवश्यकता आविष्कार की जननी है। यही भाव इनके अन्तर्मन में गहनता से व्याप्त है क्योंकि व्यवसायिकता का लोभ व्यक्ति को अधिक आगे तक बढ़ने नहीं देता लालच व्यक्ति के पैरों में जंजीर के समान है। जो किसी भी व्यक्ति को एक सीमा तक ले जाकर मुक्त छोड़ देता है जब तक व्यक्ति को आभास होता है, समय का पहिया बहुत आगे बढ़ चुका होता है। व्यसायिकता के लोभ में चित्रों में वह सौन्दर्य कदाचित नहीं उत्पन्न हो सकता जो मिश्र के चित्रों में है।

'सच्चा कलाकार मूलत: स्वान्त: सुखाय अपनी कला साधना करता है, सराहना से कलाकार का हौसला बढ़ता है, इसलिए उसकी वह प्रदर्शनी लगाता है। मनोवैज्ञानिक आधार पर विचार करने पर यह निष्कर्ष मिलता है कि सराहना एवं सहयोग दोनों साथ-साथ चलते हैं। इस प्रकार ज्ञात होता है कि कलात्मक सृजन के लिए कलाकार, कलाकृति एवं दर्शक का होना आवश्यक है।'[12] क्योंकि प्रशंसा एवं सराहना के अभाव में कलाकार की उत्साह गति धीमी पड़ जाती है। मिश्र जी की बाल्यकाल की अभिरूचि को आस-पास के लोगों एवं गुरूओं की पूर्ण सराहना एवं सहयोग प्राप्त हुआ, जिससे उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती रही। अत: प्रमाणित है कि मिश्र जी की कला भावों का संप्रेषण है। व्यवसायिकता नहीं। प्रदर्शनी लगाना तो सराहना एवं सहयोग प्राप्ति का आदर्श मार्ग है। यही वह पथ है, जहाँ कलाकार को पूर्ण सराहना प्राप्त होती है, जिससे कलाकार का हौसला बुलन्द होता है और उसे सृजन करने की प्रेरणा प्राप्त होती है साथ ही समीक्षकों या आलोचकों द्वारा चित्रों की पूर्ण समीक्षा हो जाती है। फलस्वरूप कलाकार को अपने चित्रों के गुण-दोष भी ज्ञात हो जाते हैं, जिससे कलाकार गुणों को अपनाकर सभी दोषों का त्याग करके अपनी कृतियों को और अधिक वृहद आयाम प्रदान करने में प्रयासरत हो जाता है। इसलिए कहा भी गया है कि कला निरन्तर अभ्यास की आदर्श परिणति है,जिसको भावों की अग्नि बल प्रदान करती है।

निष्कर्ष – बाह्य पदार्थों से प्राप्त सौन्दर्यानुभूति ही मिश्र जी की सौन्दर्यात्मक दृष्टि का आधार है। क्योंकि सौन्दर्य वास्तव में व्यक्ति की दृष्टि द्वारा ही देखा जाता है, जो वस्तु में गहनता से व्याप्त होता है, तभी सूक्ष्म दृष्टि की पकड़ उस सौन्दर्य को अनुभूत करने में सक्षम हो पाती हैं। बचपन की स्मृतियाँ, विद्यालय के दिन ऐसे ही सौन्दर्य का प्रस्तुतिकरण है। कहीं विस्थापन श्रृंखला में संवेदना का गहन सागर गोते लगा रहा होता है, जो मिश्र जी के स्वयं के जिये पलों का स्पष्टीकरण है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मिश्र जी की कलात्मक अभिव्यक्ति उनके स्वयं के अनुभव किये हुए भावसागर का विस्तृत स्वरूप है, उनका स्वयं का भी कथन है कि कला व्यक्ति को जीना सिखाती है। अत: हम कह सकते हैं कि जिन्होंने कला में ही जीवन की प्रगाढ़ साधना अभिव्यक्त की है, वो दृष्टि सौन्दर्य की गरिमा से ही परिपूर्ण है, जो मिश्र जी की सृजनात्मकता का सार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सरल मनमोहन – समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और दिशा, समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और भविष्य, आर. बी. गौतम (सम्पादक), राजस्थन ललित कला, अकादमी, जयपुर, संस्करण – (26-27 मार्च) 1995, पृ0 सं0 – 5
2. गोस्वामी डॉ. प्रेमचन्द- आधुनिक कला की वर्तमान स्थिति और दिशा, समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और भविष्य, आर. बी. गौतम (सम्पादक), राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, संस्करण (26-27 मार्च) 1995 पृ. सं. – 15
3. पण्डेया प्रणव (सम्पादक) – अखण्ड ज्योति (ज्ञानक्रान्ति वर्ष),

अखण्ड ज्योति संस्थान घीयामंडी, मथुरा – 28100, अंक 4, वर्ष 77, अप्रैल – 2013, पृ. सं. – 24

4. जन मोर्चा, फैजाबाद, सोमवार 25 मई, 2009
5. सरल मनमोहन – समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और दिशा, समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और भविष्य, आर0 बी0 गौतम (सम्पादक), राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर संस्करण (26– 27 मार्च), 1995, पृ. सं. – 13,14
6. गोस्वामी डॉ. प्रेमचन्द – आधुनिक कला की वर्तमान स्थिति और दिशा, समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और भविष्य, आर. बी. गौतम (सम्पादक), राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर संस्करण (26– 27 मार्च), 1995, पृ. सं. – 15
7. चोयल डॉ. शैल – समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और दिशा, समसामयिक कला की वर्तमान स्थिति और भविष्य, आर0 बी0 गौतम (सम्पादक), राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर संस्करण (26– 27 मार्च), 1995, पृ. सं. – 26
8. शर्मा डॉ0 पुष्पा – अज्ञेय : गद्य रचना के विविध आयाम, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण – 2001, पृ. सं.– 58
9. वही, पृ. सं. – 56
10. वही, पृ. सं. – 56
11. जनमोर्चा, फैजाबाद (रविकिरण) रविवार, 13 अप्रैल 2008
12. वाजपेयी डॉ. राजेन्द्र – सौन्दर्य, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल (मध्यप्रदेश), पंचम संस्करण (आवृत्ति) – 2009, पृ. सं.– 12,13

****

बंदी प्रत्यक्षीकरण का इतिहास

सिद्धार्थ पचौरी *

प्रस्तावना – संविधान का अनु. 32(2) उच्चतम न्यायालय को संविधान के द्वारा व्यक्तियों को प्रदत्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए समुचित निर्देश या रिट जारी करने की शक्ति प्रदान करता है, उन रिटों में सर्वप्रथम 'बंदी प्रत्यक्षीकरण' आता है। यह एक प्रक्रियात्मक लेख है, जिसका उद्देश्य न्याय दिलाना है और निरूद्ध व्यक्ति को स्वतंत्र कराना है। 'सामान्यत: बंदी प्रत्यक्षीकरण एक कार्यवाही है, जो प्राय: एक ऐसे प्रतिवादी द्वारा सजा के बाद की जाती है, जो अपने अपराधिक मुकदमें में कुछ कथित त्रुटि के कारण राहत के लिए प्रयासरत हो'।

बंदी प्रत्यक्षीकरण के लिए वैश्विक स्तर पर नींव 1215 के मेग्नाकार्टा अर्थात् इंग्लैड के संविधान द्वारा रखी गई थी। ब्लैकस्टोन के अनुसार हेबियस कारपस एंड सब्जीसीएन्डम का प्रथम बार उपयोग 1305 में 'किंग एडवर्ड' के शासनकाल में किया गया माना जाता है। बंदी प्रत्यक्षीकरण के आदेश को जारी करने की प्रक्रिया को पहली बार बंदी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम 1679 द्वारा किया गया। इसके पश्चात् अन्य देशों जैसे स्कॉटलेंड 1701 में, कनाडा 1982, आस्ट्रेलिया, आयरलैण्ड भारत व इजराइल में पारित हुआ। यह एक रिट प्रक्रिया है, जिसके द्वारा कोई व्यक्ति जो बिना न्यायिक विरूद्ध के औचित्य है, निरोध से छुटकारा पा सकता है।

"Habeas Corpus" का तात्पर्य है 'बंदी को न्यायालय के समक्ष हाजिर किया जाये'। यह एक ऐसी रिट है, जो उस व्यक्ति को निर्देशित करती है जिसने उसको निरूद्ध कर रखा है, इससे यह माना जाता है कि

1. बंदी को सशरीर न्यायालय में हाजिर किया जाये।
2. उसे बंदी बनाने जाने का कारण बताया जाये।

इस रिट को जारी कर न्यायालय न केवल निरोध का करण पूंछता है, वरन् वह उस विधि की संवैधानिकता भी परीक्षित करता है, जिसके अंतर्गत किसी व्यक्ति को निरूद्ध किया गया है। बंदी प्रत्यक्षीकरण एक अपील जिसका अधिकार प्रतिवादी के पास है, उसे अदालत द्वारा संक्षिप्त नहीं किया जा सकता है, जो अपने क्षेत्राधिकार के अभिदान से अपील सुनने के लिए बाह्यकारी है। बंदी प्रत्यक्षीकरण प्रादेश प्रतिवादी के लिए गलत सजा के खिलाफ अनुतोष पाने का आखिरी मौका होता है। भारतीय न्यापालिका ने मुकदमों की एक श्रृंखला में बंदी प्रत्यक्षीकरण के प्रादेश का केवल उन व्यक्तियों को रिहा करने के लिए प्रभावी ढंग से सहारा लिया जो अवैध रूप से हिरासत में लिए गये थे। भारतीय न्यायपालिका ने 'लोकस स्टैंडी के सिद्धांत को त्याग दिया और यदि हिरासत में रह रहा व्यक्ति एक याचिका दायर कर पाने की स्थिति में नहीं है, तो याचिका को किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसकी ओर से दायर किया जा सकता है।'

ऑस्ट्रेलिया – प्रक्रियात्मक उपाय के रूप प्रादेश ऑस्ट्रेलिया द्वारा ग्रहण किये गए अंग्रेजी कानून का एक हिस्सा है। 2005 में ऑस्ट्रेलियाई संसद ने ऑस्टेलियाई आतंकवाद विरोधी अधिनियम 2005 पारित किया। कुछ कानूनी विशेषज्ञों ने, इसके द्वारा बंदी प्रत्यक्षीकरण को सीमित किए जाने के कारण इस अधिनियम की संवैधानिकता पर सवाल खडे किए।

कनाडा – बंदी प्रत्यक्षीकरण अधिकार कनाडा द्वारा विरासत में मिली ब्रिटिश कौमन लॉ परंपरा का हिस्सा है। चार्टर ऑफ राइड्स एंड फ्रीडम के खंड दस के माध्यम से संविधान अधिनियम 1982 में समाहित किये जाने से पूर्व वे मुकदमे कानून में अस्तिव में थे। प्रत्येक व्यक्ति के पास गिरफ्तारी या हिरासत संबंधी अधिकारी है, बंदी प्रत्यक्षीकरण के तहत निर्धारित हिरासत की वैधता जानने के लिए और हिरासत के अवैध होने पर मुक्त होने के लिए।

आयरलैंड – आयरलैंड में बंदी प्रत्यक्षीकरण के सिद्धांत की आयरिश संविधान की धारा 4 अनुच्छेद 40, द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता की गारंटी देता है और वास्तव में बिना लैटिन शब्द का उल्लेख किए, एक विस्तृत बंदी प्रत्यक्षीकरण प्रक्रिया की रूपरेखा तैयार करता है। हालांकि, इसमें यह भी उल्लेखित है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण सुरक्षा बलों के लिए युद्ध की स्थिति में या सशस्त्र विद्रोह के दौरान बाध्यकारी नहीं है।

इजरायल – 1967 के बाद से इजरायली सेना द्वारा प्रशासित वेसट बैंक के क्षेत्रों में, सैन्रू आदेश 378 फिलीस्तीनी कैदियों की न्यायिक समीक्षा अभिगम का आधार है। इसमें वारंट के बगैर गिरफ्तारी करने और बाद में अदालत की सुनवाई से पहले अधिक से अधिक 18 दिन तक हिरासत में रखने की अनुमति है। अप्रैल 1982 में, चीफ ऑफ स्टाफ, राफेल इटन के कार्यालय ने एक दस्तावेज जारी किया ।जिसकी नीति के अनुसार गिरफ्तार व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी के तुरंत बाद पुन: गिरफ्तार करते है।

मलेशिया – मलेशिया में, बंदी प्रत्यक्षीकरण के अधिकार, नाम का छोटा रूप, संघी संविधान में निहित है। अनुच्छेद 5 (2) उल्लेख करता है कि 'जहां उच्च न्यायालय या उसके किसी न्यायाधीश से शिकायत की जाती हैं कि एक व्यक्ति को अन्यायपूर्ण तरीके से हिरासत में रखा गया, न्यायालय उस शिकायत की जांच करेगा और, जब तक वह संतुष्ट नहीं हो जाएगा कि उसका हिरासत में लिया जाना न्यायसंगत है, उसे अदालत के समक्ष प्रस्तुत किए जाने और रिहा कर दिए जाने का आदेश देगा।

न्यूजीलैंड – जबकि आम तौर पर बंदी प्रत्यक्षीकरण सरकार पर प्रयोग किया जाता है, यह व्यक्तियों पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। 2006 में, अभिरक्षा विवाद के पश्चात एक बच्चे का उसके नाना ने कथित तौर पर अपहरण कर लिया। बच्चे के पिता ने, मां,नाना, नानी, पर नानी और एक अन्य व्यक्ति जिसने कथित तौर पर बच्चे के अपहरण में सहायता की थी, के खिलाफ बंदी प्रत्यक्षीकरण दायर कर दिया गया। मां ने बच्चे को अदालत के समक्ष उपस्थित नहीं किया और अदालत की अवमानना करने के लिए गिरफ्तार कर ली गई। उसे उस वक्त रिहा किया गया जब बच्चे के नाना ने उसे

* एडव्होकेट (एल.एल.बी आनर्स, एल.एल.एम) जिला न्यायालय, सागर (म.प्र.) भारत

जनवरी 2007 के उतरार्द्ध में अदालत में पेश किया।

फिलीपींस – फिलिपिनो संविधान के बिल ऑफ राइट्स में बंदी प्रत्यक्षीकरण को धारा 15, अनुच्छेद 3 में यू.एस. संविधान के तकरीबन–हूबहू सूचीबद्ध किया गया है। 'बंदी प्रत्यक्षीकरण के प्रादेश के विशेषाधिकार को आक्रमण या विद्रोह के मामलों में निलंबित नहीं किया जाएगा। जब सार्वजनिक सुरक्षा को इसकी आवश्यकता होती है।'

पोलैंड – बंदी प्रत्यक्षीकरण के समान एक अधिनियम पोलैंड में 1430 के दशक में अपनाया गया था। नेमिनेम केप्टिवेबिमस, जो का संक्षिप्त रूप है, लैटिन 'हम अदालत के फैसले के बिना किसी को भी गिरफ्तार नहीं करेंगे' पोलैंड और पोलिश लिथुआनियाई राष्ट्रमंडल का बुनियादी अधिकार था, जिसका यह कहना था कि राजा, अदालत के व्यवहार्य फैसले के बिना श्लाष्टा के किसी भी सदस्य को ना तो सजा दे सकता है और ना ही बंदी बना सकता है। इसका उद्देश्य ऐसे व्यक्ति को मुक्त कराना है, जिसे गैर–कानूनी रूप से गिरफ्तार किया गया है। नेमिनेम केप्टिवेबिमस का इससे कुछ लेना–देना नहीं है कि कैदी दोषी है कि नहीं है, बल्कि सिर्फ इससे है कि आवश्यक प्रक्रिया का पालन किया गया है।

स्पेन – 1526 में Senorio d Vizcaya का Fuero Nuevo अपने क्षेत्र में बंदी प्रत्यक्षीकरण को स्थापित करता है। वर्तमान स्पेन के संविधान का कहना है कि कानून द्वारा एक बंदी प्रत्यक्षीकरण प्रक्रिया प्रदान की जाएगी ताकि अवैध रूप से गिरफ्तार किसी भी व्यक्ति को न्यायिक अधिकारियों को तत्काल सौंपना सुनिश्चित हो सके, जो कानून इस प्रक्रिया को नियंत्रित करता है, वह 24 मई 1984 का बंदी प्रत्यक्षीकरण कानून है, जो यह सुविधा मुहैया कराता है कि कारावास में बंद एक कैदी खुद या फिर किसी तृतीय पक्ष द्वारा अपने बंदी प्रत्यक्षीकरण का दावा कर सकता है और एक जज के समक्ष प्रस्तुत होने के लिए अनुरोध कर सकता है। इस अनुरोध में उन आधारों को निर्दिष्ट करना जरूरी है, जिसके अनुसार हिरासत को गैरकानूनी माना गया है, उदाहरण के लिए, जैसे हो सकता है कि बंदी बनाने वाले के पास कानूनी अधिकार नहीं है, या फिर कैदी के संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन किया गया या उसके साथ दुर्व्यवहार किया गया, आदि, तो जज इसके बाद यदि जरूरत हो तो अतिरिक्त जानकारी का अनुरोध कर सकता है और एक बंदी प्रत्यक्षीकरण आदेश जारी कर सकता है, जिस बिन्दु पर हिरासत में रखने वाले प्राधिकारी के पास उस कैदी को न्यायाधीश के सामने लाने के लिए 24 घंटे होते है।

संयुक्त राज्य अमेरिका – अमेरिका संविधान ने निरस्तीकरण अनुच्छेद में आम कानून प्रक्रिया को विशेष रूप से शामिल किया, जो अनुच्छेद एक, खंड 9 में है। इसमें कहा गया है। हैबियस कॉरपस एड सबजीसीएन्डम का प्रादेश एक, एक पक्षीय दीवानी कार्यवाही है, फौजदारी नहीं, जिसमें एक अदालत एक कैदी की हिरासत की वैधता की जांच करती है। आमतौर पर, बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही यह निर्धारित करने के लिए होती है कि जिस अदालत ने प्रतिवादी पर सजा लगाई, उस अदालत के पास ऐसा करने के लिए न्याय–क्षेत्र और अधिकार था, या क्या प्रतिवादी की सजा समाप्त हो गई है। बंदी प्रत्यक्षीकरण को अन्य प्रकार की हिरासत को चुनौती देने के लिए एक कानूनी मार्ग के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, जैसे अभियोग–पूर्व हिरासत या यूनाईटेड स्टेट्स ब्यूरो ऑफ इमिग्रेशन एंड कस्टम्स इन्फोर्समेंट अनुवर्ती द्वारा कार्यवाही के लिए हिरासत।

भारत – यह एक परमाधिकार की रिट है, और इसके द्वारा कोई व्यक्ति जिसे किसी प्राधिकारी द्वारा निरूद्ध कर लिया गया हो, न्यायालय में आवेदन कर सकता है और न्यायालय उस व्यक्ति को स्वयं के समक्ष प्रस्तुत करने हेतु प्राधिकारी को आदेशित कर सकता है। इस प्रकार न्यायालय यह जान सकता है कि उस व्यक्ति को किन आधारों पर परिरूद्ध किया गया है, एवं इस तरह के निरोध के लिए कोई वैधानिक न्यायानुमोदन नहीं है, तो न्यायालय उसे स्वतंत्र करा सकता है। भारतीय संविधान 1950 के पूर्व में बंदी प्रत्यक्षीकरण को सर्वप्रथम प्रकरण आर. v/s बंधान का है, जो कि गनेश सुन्दरी के मामले से संबंधित है, यह वह प्रथम प्रकरण है जिसे न्यायालय द्वारा 1870 के पूर्व विचारित किया गया था।

दूसरा प्रकरण अमीर खान 1870 BengLR 392 का है इस प्रकार में जो प्रश्न थे,

वह प्रेसीडेंसी नगर के बाहर बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट जारी करने से संबंधित उच्च न्यायालय की अधिकारिता से थे,इसके बाद में यह अभिनिर्धारित किया गया बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट जारी करने की अधिकारिता प्रेसीडेंसी नगरों तक सीमित नही है, अपितु उसका विस्तार मुफस्सिल क्षेत्रों तक भी हैं। अत: कलकत्ता, मद्रास और मुम्बई (बंबई) प्रेसीडेंसी नगरों के तीनों उच्चतम न्यायालय, जिन्हें चार्टर अधिनियम, 1861 द्वारा स्थापित किया गया था तीनों उच्चतम न्यायालय के उत्तराधिकारियों के रूप में अपनी प्रारंभिक अधिकारिता की सीमाओं के भीतर परमाधिकार की रिटों को जारी करने के लिये सशक्त थे। सन् 1898 ई. में दण्ड प्रक्रिया संहिता द्वारा धारा 491 को अंत: स्थापित करके बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट के अधिकार का संहिताकरण किया गया, परंतु 1861की मूल संहिता में न्यायालयों तक सीमित रखा गया था। अत: धारा 491 उस स्थिति में, उपलब्ध नहीं हो सकती थी। जब निरूद्ध किया गया व्यक्ति प्रेसीडेंसी नगरों की सीमाओं के बाहर हो। दण्ड प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम 1923 द्वारा धारा 491 को सभी उच्च न्यायालयों को उनकी अपील संबंधित अधिकारिता के संबंध में विस्तृत कर दिया गया, ताकि भारत के सभी उच्च न्यायालय अपनी प्रादेशिक अधिकारिता के संबंध में धारा 491 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर सकें, परंतु उस स्थिति में नहीं जब कैदी को ऐसी अधिकारिता की सीमाओं से परे निरूद्ध किया गया हो। चूंकि मद्रास,कलकत्ता एवं बंबई तीनों से बंदी प्रत्यक्षीकरण पर अपने–2 मत प्रदान किये परंतु इन तीनों में मत भिन्नता सामने आई जिसके कारण अनेक मामले प्रिवी कौंसिल तक पहुँचे परंतु प्रिवी कौंसिल भी इस मुद्दे पर कोई ठोस निर्णय पर नहीं पहुँच सका। इस प्रकार, जब भारत का संविधान 1950 में प्रवर्तन आया, तब किसी भी उच्च न्यायालय को बंदी प्रत्यक्षीकरण की परमाधिकार रिट को जारी करने की शक्ति नहीं प्राप्त थी और अनुतोष जो कुछ भी प्राप्त किया जा सकता था, वह दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 491 की सीमाओं के भीतर ही प्राप्त किया जा सकता था।

भारतीय संविधान के अधीन बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट – बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट के फैलाब को भारतीय संविधान 1950 के अधीन बढ़ा दिया गया है। अनुच्छेद 32 और 226 क्रमश: उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को संविधान के भाग 3 के अधीन नागरिकों के मूल अधिकारों के प्रवर्तन हेतु बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट को जारी करने के लिए सशक्त करते है।

'उच्च न्यायालयों की शक्तियों के विभेद को जो उस समय विद्यमान थी संविधान निर्माण के समय हटा दिया गया और उच्च न्यायालयों को बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट जारी करने की अधिकारिता मंजूर कर दी गई।' संविधान के द्वारा सप्तम अनुसूची में निवारक निरोध आदि जैसी विधियों के अधिनियमन हेतु, विधानपालिकाओं को सशक्त करके बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट जारी

करने की सीमा को संकुचित भी बना दिया है। आपातकाल के दौरान द.प्र.सं. 1898 की धारा 491 के अधीन भी कोई रिट पिटीशन नहीं की जा सकती है। तथापि यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह उस समय किसी व्यक्ति को स्वतंत्र करने का आदेश पारित करें, जब वह इस निष्कर्ष पर आ जायें कि संविधान के उपबंधों का उल्लंघन हुआ है। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से संविधान के अधीन बंदी प्रत्यक्षीकरण की अधिकारिता का विस्तार हो जाता है। किसी भी व्यक्ति को अवैधानिक रूप से निरूद्ध किया गया है,तो न्यायालय को बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट को जारी करना ही पड़ेगा, क्योंकि भारत के संविधान के अधीन प्रत्याभूत किसी भी नागरिक का एक मूल अधिकार हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का संविधान, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. इंटरनेट से प्राप्त जानकारी।
3. Habeas Corpus in Australia, Canada, Ireland, Isreal, Malsia, New-Zeland, Philipins, Poland, Spain, United state of America, & India.
4. भारतीय संवैधानिक कानून, अमर लॉ प्रकाशन इंदौर।

****

Influence of age on pedagogical knowledge of student teachers

Dr. Rashmi Sharma*

Abstract - There are so many aspects that determine the efficiency of a teacher one of them is Pedagogical Knowledge. In absence of pedagogical knowledge a subject expert cannot deliver his lesson effectively. What influences pedagogical knowledge is the matter of study? There are demographic as well as other variables that affect pedagogical knowledge. Present paper is an attempt to analyze the influence of age on pedagogical knowledge of student teachers.

Introduction - Pedagogy, the art or science of being a teacher , generally refers to strategies of instruction, or a style of instruction. The word comes from the Ancient Greek (paidagôgeô; from (child) and (lead)): literally, "to lead the child". The Latin-derived word for pedagogy, education, is nowadays used in the English-speaking world to refer to the whole context of instruction, learning, and the actual operations involved with that, although both words have roughly the same original meaning. In the English-speaking world the term pedagogy refers to the science or theory of educating. Pedagogy is also sometimes referred to as the correct use of teaching strategies. In correlation with those teaching strategies the instructor's own philosophical beliefs of teaching are harbored and governed by the pupil's background knowledge and experiences, personal situations and environment as well as learning goals set by the student as well as the teacher. **Pedagogical knowledge** – refers to a teacher's repertoire of generic teaching techniques like co-operative learning, role playing or group work – techniques that are equally relevant to all academic content domains. In present study the knowledge of instructional objectives, instructional procedures, instructional strategies, skills and evaluation strategies are considered as the major components of pedagogical knowledge.

Objective - To find out the influence of age on pedagogical knowledge of student teachers.

Hypothesis - There is no significant influence of age on pedagogical knowledge of student teachers.

Sample - The present sample consists of 20 college of education covering two districts. On an average each college of education has strength of 100 student teachers. From each college of education 21 student teachers have been randomly selected and included in present sample. Thus there are 418 student teachers in the sample. In the sample 360 student teachers are from Bhopal and 58 from Hoshangabad district. Out of 418 student teachers 120 are male and 298 female .Out of 418 student teachers 60 belongs to government colleges and 358 belongs to private colleges of education.

Methodology - The researcher adopted ex-post-facto method for execution of research work.

Statistical techniques - t-test and ANOVA

Tools of the study - Self developed Pedagogical Knowledge Test.

Result and discussion - Hypothesis states that there is no significant influence of age on pedagogical knowledge of student teachers. This hypothesis is verified and shown in following table.

Table-1 - (See in the last page)

The value of 'F' is found significant hence hypothesis is rejected. There is significant difference between student teachers belonging to different age groups in respect of pedagogical knowledge. This means that there is significant influence of age on pedagogical knowledge of student teachers, but how it influences the components of pedagogical knowledge? To answer this question data has been analyzed and results are presented in following section.**(Fig. 1- Graph see in the last page)**

Graph plotted between age and pedagogical knowledge is a straight line this means that pedagogical knowledge of student teachers varies with age linearly. It is clear from the figure that pedagogical knowledge increases with age. In age group-1 (20-25 years) pedagogical knowledge fall below mean value and it increases gradually and reaches to its maximum value for higher age group-4 (35years & above). It indicates that aged person has more pedagogical knowledge than young ones. As pedagogical knowledge has significant influence of age but in order to know how age influence various components of pedagogical knowledge values of 't' have been computed among the components and results are presented in following table.

Table - 2 - (See in the last page)

The value of 'F' has been found significant for all the components of pedagogical knowledge except evaluation. This means that there is significant influence of age on knowledge of instructional objectives, instructional produces, instructional strategies and skills except evaluation strategies. This implies that knowledge of instructional

* **Principal, Rashtra Bharti Shiksha Mahavidyalaya, Ujjain (M.P.) INDIA**

objectives, instructional procedures, instructional strategies and skills vary with age of student teachers. It indicates that student teachers of different age groups possess different level of pedagogical knowledge. Variation of pedagogical knowledge between different age groups is presented under following tables.

Table - 3 - (See in the last page)

The value of t is found significant between age group 1 and 2 this shows that there is significant difference in pedagogical knowledge of student teachers between age groups 20-25 year and 25-30 year. Student teachers who belongs to age group 20-25 year (AM = 20.05) are inferior to their counterparts who belong to age group 25-30 years (AM=21.58) in respect of pedagogical knowledge (as shown in fig. 5.29). It is observed that the value of 't' is significant between age group 1 to 3, this means that there is significant difference between student teachers belonging to age group 1 (25-25 yrs) and 3 (30-35 yrs) in respect of pedagogical knowledge. It indicates that student teachers who belongs to age group (20-25 yrs) significantly differ from those of teachers who fall in age group (30-25 yrs) pedagogical knowledge in case. Student teachers who fall in age group (20-25 yrs) (AM=20.05) possess less pedagogical knowledge than their counterparts who falls in for age group (30-35 yrs) (AM=25.02)(fig.5.29). **(Fig.2 - Graph see in the last page)**

The value of 't' is found significant between age group 1 and 4. This means that there is significant difference in pedagogical knowledge of student teachers between age groups 20-25 yrs. and 35 yrs. & above. This implies that pedagogical knowledge of student teachers who are in age group 20-25 yrs is different from the those who are in age group 35 and above. (AM = 27.33). Student teachers who belong to age group 4 (35 & above)years (AM=27.53) are better than their counterparts who belong to age group 1 (20-25)years in respect of their pedagogical knowledge.

Above table shows that 't' value for pedagogical knowledge between age group 2 and 3 is significant this means that there is significant difference in pedagogical knowledge between age group 2(25-30yrs) and 3(30-35 yrs). This indicates that pedagogical knowledge of student teachers differ significantly between age groups 25-30 yrs and 30-35 yrs. In age group 25-30 yrs. Pedagogical knowledge of student teachers who fall in age group 2 (25-30) years (AM = 21.58) is less than the pedagogical knowledge of student teachers who are in age group (30-35) years (AM = 25.02).

Between age groups 2 and 4 the value of 't' has been found significant. This means that there is significant difference in pedagogical knowledge of student teachers between age groups 2(25-30 yrs.) and 4(35 yrs. and above). Student teachers of age group 25-30 yrs. possess (AM = 21.38) less pedagogical knowledge as compared to those who fall in the age group 35 yrs. And above (AM = 27.33)
The value of 't' is not found significant between age groups 3 and 4. This implies that there is no significant difference between the age groups 3(30-35 yrs) and 4 (35 yrs. & above) in pedagogical knowledge of student teachers. However mean pedagogical knowledge differs in both the groups but this difference is not significant.

Finally it is noticed that pedagogical knowledge of student teachers increases with age but after 35 yrs. of age mean difference between age groups do not remain significant. Least pedagogical knowledge have been found in age group 20-25 yrs. After that pedagogical knowledge increased gradually but this rise in pedagogical knowledge did not remain significant after 35 yrs. of age.

Suggestions for further research :

- Researches may be under taken to study the influence of age on pedagogical knowledge of in-service teachers.
- Researches may be under taken to study the difference between inservice and pre-service teacher trainees.
- Researches may be under taken to study the influence of other demographic variables like sex, type of institution, subject background of teacher trainees etc.

References:-

1. Cai, Yonghong & Lin Chongde. "Theory and practice on teacher performance evaluation." Frontiers of education in China, Higher Education Press & Springer Verlag GmbH, vol. 1, No. 1, Jan. 2006.
2. Frank, B. Murray (1996). "The teacher education handbook: Building a knowledge base for the preparation of teachers." Jossey – Bass publishers, San Francisco.
3. Kochara, S.K. (2003). " Methods and techniques of teaching." Sterling Publication Pvt,.Ltd. New Delhi.
4. Lehri, G.K. & Nagpal, S.(2004). "Pedagogical reforms through transactional strategy: Step towards a paradigm shift." *Journal of Indian Education*, Vol. XXXIX, No. 4, Feb. 04. NCERT, New Delhi.
5. Senapaty, H.K. & Nityananda, Pradhan. "Constructive pedagogy in classroom: a paradigm shift." *Journal of Indian Education*, Vol. XXXI, NO. 1, May 2005, NCERT, New Delhi.
6. William, R.V.(2004). "Pedagogical content knowledge taxonomies." University of North Cardina Chapel Hill, Chapel Hill, jmakinst@indiana.edu.

Table-1 - Significance of 'F' for age in respect of pedagogical knowledge.

Source of variation	Sum of Squares	df	MeanSquare	F	Sig.
Between Groups	1363.08	4	340.77	7.73	0.000
Within Groups	18191.85	413	44.04		
Total	19554.93	417			

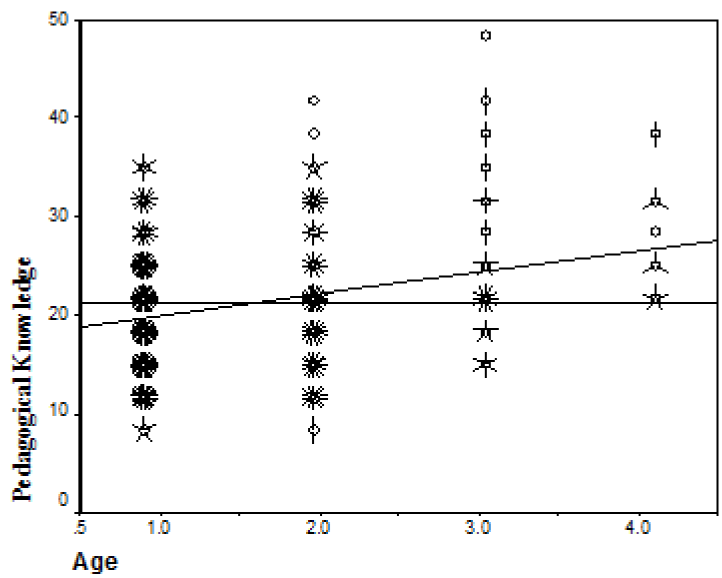

Fig. 1 Showing variation in pedagogical knowledge with age.

Table - 2 - Significance of 'F' for categories of age in respect of components of pedagogical knowledge.

Pedagogical Knowledge	Instructional Objectives	Instructional Procedures	Instructional Strategies	Skills	Evaluation
F	3.303	6.594	3.850	4.46	0.998
Sig.	0.011	0.000	0.004	0.002	0.408

Table - 3 - Significance of difference between age groups in respect of pedagogical knowledge.

Category	SD	AM	N	df	t	Sig.
1	5.95	20.05	253	361	2.07	0.039
2	7.38	21.58	110			
1	5.95	20.05	253	297	4.87	0.000
3	8.1	25.02	46			
1	5.95	20.05	253	260	3.59	0.000
4	6.1	27.33	9			
2	7.38	21.58	110	154	2.49	0.02
3	8.1	25.02	46			
3	8.1	25.02	46	53	0.98	0.48
4	6.1	27.33	9			

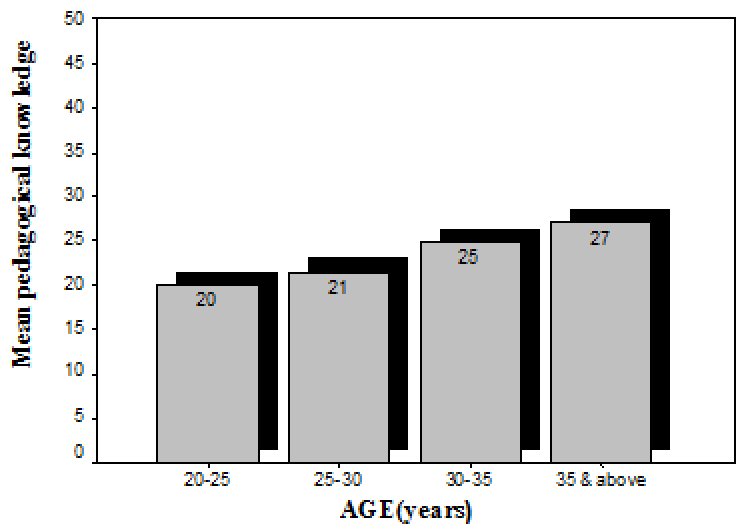

Fig. 2 Showing mean difference in pedagogical knowledge with age.

****

आध्यात्मिकता में व्यक्तित्व

नीलिमा पहारे *

प्रस्तावना – प्रकृति की रचना में पृथ्वी पर जीवों की उत्पत्ति के साथ मानव जगत की रचना बड़ी ही अद्भूत मानी जाती है, मानवीय जगत के अनुपम होने के कारण वैयक्तिकता तथा व्यक्तिगत भिन्नता के प्रभाव प्रमुख प्रतीत होते है, पश्चिमी मनौवैज्ञानिक व्यक्ति की प्रमुख विशेषता वैयक्तिकता को स्वीकार करते है। यह वैयक्तिकता परस्पर व्यक्तियों में पायी जाने वाली भिन्नता ही है। विद्धानों के विचारों, उनके प्रयोगों तथा अनुसंधान आधारित निष्कर्षो ने व्यक्तित्व के अध्याय को मनोविज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा के रूप में विकसित कर दिखाया है।

मनुष्य का जन्म और उसके बाद उसका विकास शून्य में न होकर विशिष्ट, भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक परिवेश में होता है। अगर देखा जाए तो मनुष्य अपनी वंश परम्परा से कुछ गुणों को लेकर आता है, जो उसके शारीरिक तथा मानसिक विकास में मुख्य भूमिका निभाते है, इसका अर्थ हैं कि मानव विकास में वंश परंपरा तथा पर्यावरण के रूप में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक व आध्यात्मिक परिवेश निर्धारक तत्वों के रूप में कार्य करते है।

व्यक्तित्व विकास का अर्थ मानव विकास तथा उसकी प्रक्रिया से भी संबंधित है। मानव विकास मनुष्य के जीवन की एक ऐसी प्रक्रिया से जुड़ा है। जिसमें मनुष्य के जन्म से पूर्व एवं मृत्युपर्यन्त तक की संपूर्ण विकास यात्रा का वैज्ञानिक रूप जिसमें विकास की समस्त एवं संपूर्ण प्रक्रिया निरंतर एवं क्रमिक रूप में कभी तीव्र तथा कभी मंद गति से चलती रहती है। यह प्रक्रिया मानव की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, सांवेगिक, चारित्रिक एवं आध्यात्मिक विकास से संबंधित रहती है।

व्यवहार शास्त्र अर्थात् मनोविज्ञान में व्यक्तित्व के अध्ययन को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। व्यक्तित्व के वैज्ञानिक रूवरूप की व्याख्या में जी.डब्ल्यू ऑलपोर्ट का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है।

हम जिस भूमंडल में निवास करते है, वह सौर मंडल का एक उपभाग है। सूर्य के चारों और पृथ्वी सहित जो ग्रह चारों और घूमते है, वही सौर मंडल है भूमंडल पर पर्यावरण के कारण कई प्रजातियों ने जन्म लिया, जिनमें जलचर, नभचर, वनस्पति, कीड़े–मकौड़े, पशु–पक्षी इन सभी प्रजातियां में मानवीय व्यक्तित्व आता है, जिसे वैदिक दर्शन में जीवजन्तु कहा जाता है।

भारत भूमंडल आर्यावर्त के नाम से जाना जाता है। उपनिषद, पूर्व वैदिक साहित्य में प्रमुख आध्यात्मिक विचारों के बीच पाये जाते है। भारतीय संस्कृति में वेदों को नित्य तथा अपौरूषेय तथा अक्षय ज्ञान का भंडार बताया है। वेद किसी एक ऋषि की रचना न होकर विचारों का संकलन है, वेद का अर्थ स्त्रोत ज्ञान है। जिसे ऋषियों ने तपस्या तथा आत्मानुभव से प्राप्त किया। वेद इस धरती पर मानव को प्राप्त सबसे प्राचीन उपलब्ध रचना है, वेद को दो भागों मंत्र तथा ब्राह्मण में व्यक्त किया गया है। अति पुरातन कालीन वेदों की रचना ने मानव सुख समृद्धि के लिए देवों से जो स्तुति की है उनका अपना मनोवैज्ञानिक महत्व है। इस प्रकार हम कह सकते है कि मानवीय व्यक्तित्व अपारशक्ति के रूप में वैदिक युग में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

वैदिक साहित्य में यदि उपनिषदों का अर्थ समझें तो यह स्पष्ट होता है कि उपनिषद शब्द से अभिप्राय उस विद्या से है, जिससे अविद्या या अज्ञान का नाश होता है। उपनिषद भारतीय दर्शन साहित्य में ऐसे उद्गम स्थान माने जा सकते है, जहाँ से सभी दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक मतों को जन्म मिला। मावन के आंतरिक जगत की खोज जिसे आत्मा या व्यक्तित्व का अभ्यन्तर कहा जा सकता है। भारतीय दार्शनिक संगमलाल पाण्डेय ने अपनी पुस्तक भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि जीवात्मा के मनोदैहिक रूप व्यक्तित्व के मानव शरीर को पंचकोशिय रूप को स्पष्ट कर बताया कि शरीर अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनंदमय होता है। यही शरीर है यही व्यक्तित्व है जिसकी व्याख्या दर्शन के साथ मनोविज्ञान में भी मिलती है। जैमिनीय ब्राह्मण में आत्मा का अर्थ सिर मानते है आत्मा 'जाग्रत' 'स्वप्न' 'सुषुप्ति' तथा 'तुरीय' इन चार अवस्थाओं में प्रदर्शित है, यही जीवात्मा है यही मनोविज्ञान के शब्दों में व्यक्तित्व है। अत: व्यक्तित्व ब्रह्म, आत्मा, जीवात्मा है। व्यक्तित्व में जिस प्रकार मनोवैज्ञानिकों के अनुसार शरीर तथा मनस्थित रहते है यही चैतन्य शक्ति मन, वाणी, प्राण में बुद्धि रूप में देखी जाती है। अत: जीवात्मा का दार्शनिक, आध्यात्मिक विश्लेषण तथा मनोविज्ञान का मानस–शरीर द्धैतवाद एक दूसरे के अतिनिकट है व्यक्तित्व की व्याख्या में इन शब्दों का महत्वपूर्ण योगदान है। सोलहवीं शताब्दी में फ्रांसीसी विद्धान देकार्ते भी मनोवैज्ञानिक योगदान में द्धैतवाद को शरीर और मनस में परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया वाद की स्पष्ट व्याख्या करते हुये विचारों की अभिव्यक्ति करते है। अत: जीवात्मा का दार्शनिक या आध्यात्मिक विश्लेषण और मनोविज्ञान का मनस शरीर द्धैतवाद एक दूसरे के अति निकट है।

आध्यात्मिक चिंतन के आगे मानवीय वैभव तथा सुख समृद्धि को महत्वपूर्ण न मानते हुए उपनिषदों में ब्रह्मज्ञान की उपलब्धि को चित्ता की शुद्धता के लिए तथा मोक्ष प्राप्ति का साधन बताया। इसी आधार पर श्रद्धा, विश्वास, तप, ब्रह्मचर्य, तथा दृढ़ निश्चयता व्यक्तित्व के प्रधान अंग बन कर उभरे। ये तथ्य आध्यात्मिक तो है ही, इनका मनोवैज्ञानिक महत्व किसी भी प्रकार से कम नहीं है। व्यक्तित्व के विकास तथा उसके मूल्यांकन में इन तत्वों को महत्व दिया जाना अति आवश्यक प्रतीत होता है।

श्रीमद् भगवत गीता में कर्म को प्रधानता दी गयी है अर्थात् कर्म योग यह दर्शाता है कि श्रेष्ठ व कुशल व्यक्तित्व मानव जीवन की क्रियाशीलता के उत्तम गुणों के प्रतीक है। व्यक्तित्व का प्रधान गुण भक्तिभाव होना तथा शांत अवस्थाओं में रहना आत्मज्ञान के लिये आवश्यक गुण बताया है, भक्ति भावना से सभी ज्ञान अर्जित किये जा सकते है।

* प्राचार्या, बाल निकेतन संघ, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रामायण में श्रीराम के सद्गुणों की जो व्याख्या अयोध्या कांड की चौपाईयों में यह स्पष्ट है कि एक ऐसा सदगुणी भगवान जिसे मर्यादा पुरूषोत्तम कहा जाता है और आगे की पीढ़ी के लिऐ एक ऐसा मार्ग दर्शन छोड़ जाता है, जो आने वाली पीढ़ी उन्हें जन्म जन्मान्तर याद रखती है और लोग उनके कदमों पर चलना अपना भाग्य समझते है। जैसे चरित्रवान, पराक्रमी, ज्ञानवान सत्पुरूषों का सत्संग, दयालु, बुद्धिमान, वृद्धों का सम्मान, सरल, कुशल वक्ता, व्यवहार कुशल, विनयशील आदि जैसे अनेक गुणों का व्यक्तित्व में होना। कुछ इसी प्रकार के गुणों का बख़ान गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में बताये है। व्यक्तित्व के गुण उस मनुष्य को ब्रह्ममय बनाते हैं।

भारतीय दर्शनों में आस्तिक एवं नास्तिक दर्शन आते है। जिनमें चार्वाक, जैन, बौद्ध, सांख्य, योग, न्याय, मीमांसा एवं वेदान्त आते है। व्यक्तित्व के संबंध में जिन मतों में व्यक्तित्व संबंधी विचार मिलते है, चार्वाक मतानुसार जैसे भी जियो, सुखपूर्वक जियो अर्थात् यह मत भौतिकवादी होने के कारण संपूर्ण विचारधारा व्यक्ति के सुखमय जीवन के अंतर्गत घूमती है 'सुख ही जीवन का सार है, मूल्यों के दो ही परम लक्ष्य है – यही पुरूषार्थ भी है मूल्यों को लोकोपकारक भी कहा गया है। इसी प्रकार जैन दर्शन में व्यक्तित्व को उत्तम स्थान पाने हेतु क्षमा, विनम्रता, सरलता, सत्य, संयम, त्याग आदि को बनाये रखे। बुद्ध दर्शन में गौतम बुद्ध ने अष्टांगिक मार्ग सुझााये है जो मानव जीवन की उपलब्धि या गुणों से जुड़े दृढ़ निश्चयी सत्यनिष्ठ, न्यायपूर्ण, सत्कर्म बुद्ध दर्शन के अनुसार यदि व्यक्ति में शील, समाधि, प्रज्ञा ये तीन रत्न व्यक्तित्व की विशेषताओं में मिल जायें तो मानव उच्चतम ऊँचाईयों को प्राप्त कर सकता है।

योग दर्शन जिज्ञासुओं के लिए एक उत्तम दार्शनिक योग क्रिया है जिसके चिंतन, मनन से आत्म शुद्धि या मोक्ष प्राप्ति के मार्ग आते है, योग में अष्टांग योग–यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि आते है। जब मानव इन आठो योग में समाहित हो जाता है तो उसे ज्ञान का सर्वोच्च शिखर मिल जाता है। यही आत्मा का परमात्मा के साथ साक्षात्कार है। न्याय दर्शन में तर्कशास्त्र एवं ज्ञान मीमांसा को प्राथमिकता दी गयी है। इसके अंतर्गत प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द आधारित ज्ञान को मनुष्य द्वारा ग्रहण करना यथार्थ ज्ञान की उपलब्धि कराता है व्यक्तित्व का ज्ञान इन्हीं साधनों पर टिका है और ये ही न्याय दर्शन में कहे जाते है।

हमारे प्राचीन भारत के वेद पुराण, उपनिषद तथा दार्शनिक ग्रंथ आते है। जिन्होंने व्यक्तित्व के आध्यात्मिक विकास को प्रमुख स्थान देकर उसके आत्मिक कल्याण हेतु अपने अनुभव से ऐसे साधनों की व्याख्या की है। जो मानवजीवन में उच्चतम उपलब्धियों के मार्ग सुझाते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एस.एन. शर्मा – व्यक्तित्व की मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक विभाऐं माधव प्रकाशन, न्यू आगरा; 2011
2. दिवाकर मिश्र – शिक्षा के दार्शनिक आधार, अपोलो प्रकाशन, जयपूर; 2008
3. शर्मा एस.एन., शिक्षा में मनोविज्ञान, भार्गव बुक हाउस, आगरा।
4. स्वामी रामदेव, योगदर्शन, दिव्य प्रकाशन, हरिद्वार, 2005
5. अस्थाना मधु – व्यक्तित्व मनोविज्ञान, संस्करण, मोतीलाल बनारसी दास, 2003

****

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 - आवश्यकता एवं विकास उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में

समता मेहता (कटारिया)*

प्रस्तावना - भारत में समता और समृद्धि का अमृत कुंभ लाने के लिये दुष्ट शक्तिरूप सर्पों को पदतल में कुचल कर, मन में भी उठी वेदना की उमंगों को पंखों में समाकर, देव का जयगान जगत में गुंजित रखने की महत्वाकांक्षा लेकर पक्षीराज गरूड़ की तरह देए की ग्राहक चेतना जागृत उठे और शोषण मुक्ति का हमारा संकल्प पूरा कर सके।

उदारीकरण और वैश्वीकरण की अंधी दौड़ में आज उपभोक्ता को जहाँ विभिन्न देशों की वस्तुएं दूसरी और विदेशी कंपनियां जो कि ज्यादा से ज्यादा कमाई के उद्देश्य से भारत के विशाल उपभोक्ता बाजार में अपनी पैठ बनाने का अथक प्रयास कर रही है, देश में मान्य कानूनों की अवहेलना करने से भी नहीं चुकती है। प्रस्तुत शोध पत्र उज्जैन जिले विशेष के संदर्भ में है। उज्जैन में जनसंख्या अशिक्षित होने के साथ गरीबी का प्रतिशत भी अधिक है। इसी कारण उपभोक्ता अपने हितों के प्रति जागरूक नहीं है। आम उपभोक्ता समय की कमी तथा जानकारी के अभाव में अपने अधिकारों का लाभ उठाने मे असफल है।

उपभोक्ता संरक्षण : आवश्यकता एवं विकास । सन् 1986 से उपभोक्ता संरक्षण के हित में तीव्र गति से कार्य हो रहा है। किन्तु आज भी उपभोक्ता जागरूक नहीं है, इसके प्रमुख कारण निम्न हैं :-

1. ग्राहक को स्वयं के अधिकारों का ज्ञान न होना।
2. स्वयं ठगे जाने पर स्वीकार करने में शर्म महसुस करना।
3. व्यापारी से व्यवहार बिगड़ने का डर।
4. उदारात्मक व्यावहारिक नीति।
5. हक के लिए कुछ करने की इच्छा लेते हुए भी कैसे आगे बढ़ें, उसकी जानकारी न होना।

उपर्युक्त दुविधाओं से मुक्त करने के लिए उपभोक्ता को उपभोक्ता संरक्षण की आवश्यकता है, जिसके उपयोग से वह स्वयं के शोषण भी रोक सके। उपभोक्ता वाद के कारण विक्रयकर्ता उपभोक्ता से मन चाहे दाम, घटिया वस्तु माप तौल में बेईमानी आदि योजनाओं के तहत शोषण करता है, जिससे बचाव के लिऐ 'उपभोक्ता संरक्षण' की आवश्यकता महत्वपूर्ण है। वह विधि जो उपभोक्ताओं का विक्रेता द्वारा किये जाने वाले शोषण से बचाव कर उपभोक्ता संरक्षण कहलाता है और आधुनिक विपणन की क्रियाओं के दौरान इसकी अत्यंत आवश्यकता है। उपभोक्ता के हितों की रक्षा के लिए उपभोक्ता संरक्षण कानून के विकास के साथ इसके ज्यादा से ज्यादा प्रचार-प्रसार की भी आवश्यकता है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 । उपभोक्ता को धोखा खाने से बचाने के उद्देश्य से 24 दिसम्बर 1986 को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम पारित किया गया, जिसका मुख्य उद्देश्य उपभोक्ता के शोषण को रोकना व उसे बेहतर संरक्षण प्रदान करना है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के क्षेत्र -

1. यह अधिनियम सभी वस्तु एवं सेवाओं पर लागू होता है। निःशुल्क प्राप्त वस्तु एवं सेवाओं पर कार्यरत नहीं है।
2. निजी, सार्वजनिक या सरकारी सभी क्षेत्र पर लागू होता है।
3. उपर्युक्त अधिनियम में प्रत्येक केंद्र तथा राज्यों में उपभोक्ता संरक्षण स्थापित करने की व्यवस्था है। इन्हें अपीलीय व पूर्ण विचार करने का भी अधिकार प्राप्त है।

उपभोक्ताओं की शिकायतों को दूर करने के लिऐ इस अधिनियम में तीन स्तरीय अर्द्ध न्यायिक तंत्र की स्थापना की गई है। ये तीनों स्तर मुआवजे की वित्तीय सीमाओं पर निर्भर करते हैं।

तालिका क्रमांक -1

क्र.	स्तर	न्यायिक तंत्र	वित्तीय सीमा
1	जिला स्तर	जिला मंच	20 लाख तक
2	राज्य स्तर	राज्य आयोग	20 लाख से 1 करोड़ तक
3	राष्ट्रीय स्तर	राष्ट्रीय आयोग	1 करोड़ से अधिक

शोध प्रविधि - शोध प्रविधि के अंतर्गत आँकड़े प्राथमिक विधि द्वारा एकत्रित किये गये हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में उज्जैन उपभोक्ता फोरम में तथा न्यायालय में अपील के रूप में आने वाले उपभोक्ता संरक्षण संबंधित मामलों को निर्देशन इकाई के रूप में उपयोग किया गया है। जिसे तथ्यपूर्ण परिणाम प्राप्त हो सके। तथ्य संकलन के लिए संबंधित जानकारी के प्रश्नावली एवं साक्षात्कार विधि के उपयोग से संकलित किया गया है। एकत्रित तथ्यों के निर्वचन की दृष्टि से उपयोगी बनाने के लिए औसत प्रतिशत, प्रमाप विचलन, आवृत्ति विश्लेषण आदि तकनीकों का उपयोग किया गया है।

शोध -

उज्जैन उपभोक्ता फोरम में दर्ज मुकदमों का प्रतिशत - उज्जैन उपभोक्ता फोरम में 2006 से अक्टूबर 2011 तक पिछले 06 सालों में उपभोक्ता की विभिन्न समस्याओं से संबंधित दर्ज मुकदमों की जानकारी प्राप्त करने पर संबंधित आंकड़ों को तालिका क्रमांक 2 में स्पष्ट किया गया है।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक -2

क्र.	वर्ष	प्राप्त मुकदमें	दर्ज मुकदमें	प्रतिशत	डेविस्म
1	2006	382	361	94.50%	+4.3
2	2007	553	506	91.50%	+1.3
3	2008	742	689	92.82%	+2.62
4	2009	332	242	72.89%	+17.93
5	2010	426	419	98.35%	+8.15
6	2011	282	234	82.97%	+8.15
	Total	2717	2451	90.26%	-7.23
	Mean	452.59	408.5	90.21%	

उज्जैन उपभोक्ता फोरम में प्राप्त पिछले 6 सालों के उपभोक्ता समस्याओं से संबंधित विभिन्न मुकदमों की स्थिति का अवलोकन तालिका क्र0 2 से करने पर ज्ञात होता है कि 2010 में प्राप्त मुकदमों का सर्वाधिक 98.35% +8.15 विचलन मान पर दर्ज किये गये। द्वितीय स्थान पर 2006 में कुल प्राप्त 382 मुकदमों का +4.3 विचलन मान पर 94.50% उपभोक्ता फोरम ने मुकदमों को दर्ज किया। मुकदमों को सही तरीके से दर्ज करने के लिए तथा सर्वाधिक मुकदमें दर्ज हो एवं उपभोक्ताओं को उसका पूर्ण लाभ मिल सके, इसके लिए सबसे प्रभावशाली कारण फोरम अध्यक्ष जी.पी. शर्मा ने अपने कार्यकाल के अनुभव के आधार पर बताया कि कार्यकारिणी सदस्यों की जानकारी एवं उपभोक्ता संरक्षण अधिनियमों के उपयोग के प्रति जागरूकता तथा उपभोक्ता शिक्षा इसके लिए सबसे प्रभावशाली कारक के रूप में कार्य करते हैं।

उज्जैन जिला उपभोक्ता फोरम में सत्र 2006 से अक्टूबर 2011 तक दर्ज आवेदन की स्थिति -

तालिका क्र0 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि उज्जैन उपभोक्ता फोरम में 2006 से 2011 के मध्य 2008 में 689 सर्वाधिक आवेदन प्राप्त हुए, फिर 2007 में 506 तथा 2006 में 361 आवेदनों के आधार पर मुकदमें दर्ज किये गये, जिनमें से 2008 में 516 सर्वाधिक मुकदमों का निराकरण किया गया। मुकदमों के दर्ज, निराकरण व निलम्बन की स्थिति को यदि एक साथ तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए, तो तीनों स्थिति समान्तर बढ़ती हुई नजर आती है। अर्थात् जिस गति में मुकदमों के दर्ज होने का अनुपात बढ़ा है वहीं निराकरण व निलम्बित मुकदमों में भी वृद्धि देखा जा सकती है।

निष्कर्ष एवं विश्लेषण - उपरोक्त शोध पत्र में निष्कर्ष के रूप में ये परिणाम प्राप्त हुए है कि उपभोक्ता में जागरूकता का प्रतिशत बढ़ रहा है और यदि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 का पर्याप्त प्रचार-प्रसार किया जाए तो इसका लाभ सभी उपभोक्ताओं को प्राप्त होगा। जिसके लिये निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए -

1. उपभोक्ता संरक्षण कानून की शिक्षा।
2. उपभोक्ता को अपने अधिकारों एवं उत्तरदायित्वों का समुचित ज्ञान होना।
3. बाजार में उपलब्ध वस्तुओं के ट्रेडमार्क ब्राण्ड एवं मूल्यों की जानकारी उपलब्ध करवाना।
4. वर्ष में कौन से महिने में किस वस्तु को खरीदना चाहिए, जिससे उपर्युक्त मूल्य पर उपलब्ध हो सके, की जानकारी उपलब्ध करवाना।
5. वस्तु के क्रय-विक्रय के समय उपयोग किये जाने वाले ज्ञान, बुद्धि, विवेक का उपयोग संबंधित शिक्षा देना, जिससे व्यर्थ की खरीददारी से बच सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपभोक्ता फोरम, उज्जैन
2. दैनिक भास्कर, रतलाम, रविवार, 24 दिस.।
3. www.consuforum.com
4. Hindustan Times
5. India Trade Dec.- Jan. 2005-06

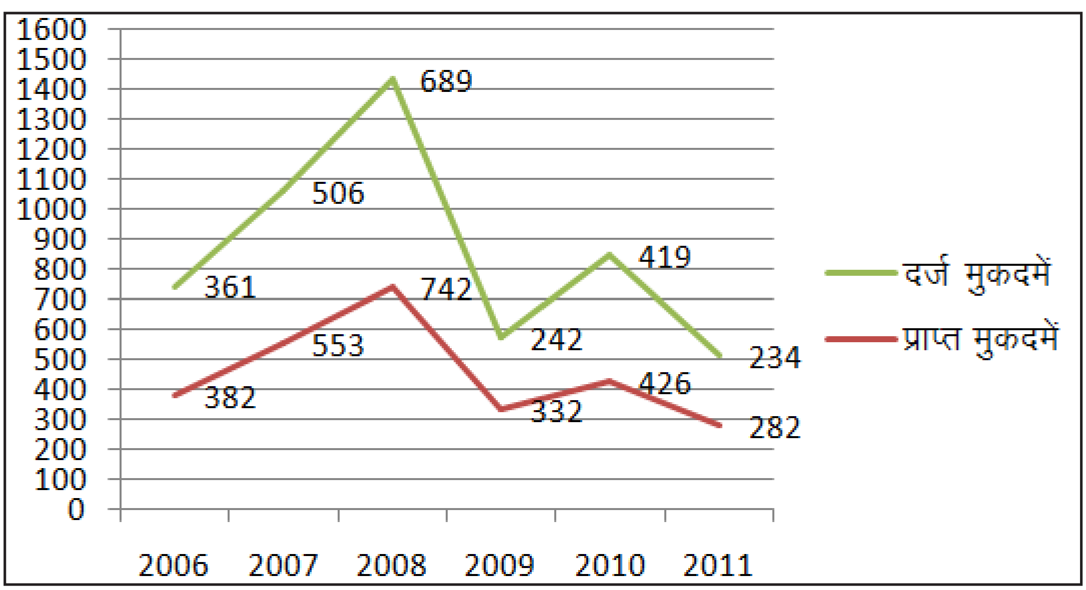

तालिका क्र0 3 मुकदमें 2006 से 2011 तक

क्र.	दर्ज आवेदन की स्थिति	2006	2007	2008	2009	2010	2011 (अक्टूबर)
1	कुल दर्ज मुकदमें	361	506	689	242	419	234
2	निराकरण	301	443	516	164	411	218
3	निलम्बित	60	63	173	78	8	16
4	उपभोक्ता के पक्ष में	128	192	293	96	333	184
5	उपभोक्ता के विरूद्ध	94	214	132	09	12	06
6	आवेदन निरस्त आवेदक के उपस्थित होने पर	62	77	56	18	27	22
7	तकनीकी आधार पर निराकरण	13	32	28	35	28	04
8	समय सीमा के आधार पर आवेदन का निराकरण	04	18	07	06	11	02

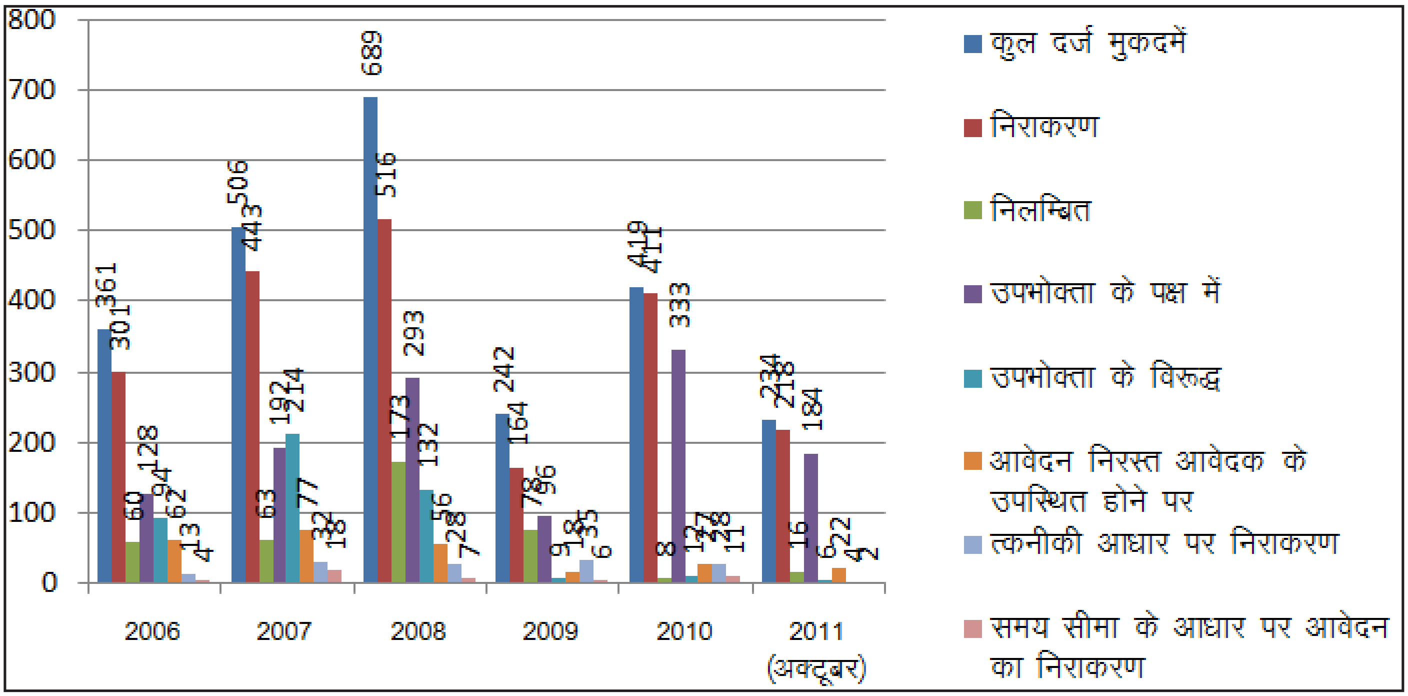

****

वैदिक से वर्तमान कालीन भारतीय नारी

डॉ. अंजू श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – महिलायें साधरणतया प्रत्येक समाज का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। जिनकी संख्या लगभग पुरुषों के समान ही होती हैं जहाँ तक भारतीय समाज के नारी का प्रश्न हैं वैदिक काल से ही स्त्रियों की स्थिति काफी उच्च रही है। विशेषतया हिन्दू समाज में पुरुष के अभाव में स्त्री को और स्त्री के अभाव में पुरुष को अपूर्ण माना गया है। इसी कारण हिन्दू समाज में स्त्री को पुरुष की अर्धगिनी कहा गया है। परन्तु धीरे-धीरे स्मृति काल, धर्मकाल तथा मधय काल में इनके अधिकार छिनते गये और पुरुषों की तुलना में इनकी स्थिति में निरंता गिरावट आयी। महिलाओं के प्रति हिंसा एवं अपराध कोई आज के युग की ही घटना नहीं है वरन् प्राचीन कालीन भारत में भी इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। महाभारत काल में युधिष्ठिर ने अपनी पत्नी द्रोपदी को जुए में दाव पर लगा दिया था और दुर्योधन ने भरी सभा में उसका चीर हरण करके अपमानित किया था। रामायण काल में रावण ने सीता का अपहरण किया था दहेज को लेकर नारी को जला देना या हत्या कर देना आज के युग की सबसे बड़ी त्रासदी है। सतीत्व के नाम पर महिलाओं को इसी देश में जिंदा जलाया जाता रहा है। अत: वैदिक काल से लेकर वर्तमान कालीन स्त्री विषयक समस्त अध्ययनों से ये पूर्णत: स्पष्ट करता है कि भारतीय समाज में स्त्री को प्राय: दोयम दर्जे का प्राणी समझकर ही चलता आया था। स्त्री या तो क्रीतदासी बनी या फिर देवदासी बनी परिवार में रही तो वह पुरुष के कठोर अनुशासन में रही और दरिंदों की काम पिपासा का सहज प्राप्य बनी। दुराचार, तेजाबी हमलें, सार्वजनिक सम्पत्ति, परदे के भीतर बैठी निरीह प्राणी, शराब एवं जुएँ के आदि पुरुषों से पिटने को अभिशप्त पत्नी माँ या पुत्री, कार्य स्थलों पर शोषण झेलने को विवश, दायभाग से बहिष्कृत मर्दवादी सामाजिक व्यवस्था में हाशिये पर रहने वाली भारतीय नारी का पुनरुत्थान विगत कुछ वर्षो की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि रही हैं बीसवीं शताबदी के ढलते हुए वर्षो में भारतीय नारी को अपनी अस्मिता की पहचान हो सकी है। अंग्रेजी शासन काल में देश में राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र में ही जागृति आने लगी थी। तमाम समाज सुधारकों व नेतागणों का धयान स्त्रियों की दिशा व दशा बदलने की ओर गया। फलस्वरूप कुछ वर्षो में स्त्रियों की स्थिति में काफी सुधार हुआ है।

वर्तमान में समाज शास्त्र में महिलाओं के बारे में अध्ययन में रुचि का विकास हुआ है। रैडिकल समाज शास्त्री जो समाज के दलित एवं उपेक्षित वर्ग के अध्ययन में रुचि रखते हैं, भी महिलाओं के अध्ययन प्रति काफी संवेदनशील है। समाज सुधारकों, राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में स्थापित महिला अध्ययन प्रकोष्ठों, मनोरोग-विशेषज्ञों, अपराधशास्त्रियों आदि ने भी महिला अध्ययनों में विशेष रुचि दर्शायी है। और महिलाओं से सम्बन्धित अनेक आयामों का अध्ययन किया जा रहा है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल में स्त्रियों को महत्त्वपूर्ण अधिकार प्राप्त था। हमारे देश में गार्गी मेत्रेयी तथा अत्री आदि ऐसी अनेकों नारियाँ हुयीं हैं जिनको सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। हिन्दू समाज में वैदिक काल में नारियों को अत्यन्त सम्मानित प्रस्थित प्राप्त थी उन्हें समाज तथा परिवार में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। उन्हें शिक्षा, विवाह, धर्म आदि क्षेत्रों में पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त थे पत्नी परिवार में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती थी। इसीलिए उसे अर्द्धांगिनी का दर्जा प्राप्त था। दोनों पति व पत्नी साथ-साथ यज्ञ करते थे। बिना नारी के धार्मिक कार्य अधूरा समझा जाता था।

'शत पथ ब्राह्मण' आदि ग्रंथों में भी नारी को अर्द्धांगिनी तथा पुरुष को अर्द्ध-शरीर माना गया है। पुरुष नारी के बिना पुरुषार्थ की प्राप्ति नहीं कर सकता था। अत: वैदिक युग में जिस स्त्री को परिवार संस्था को सुदृढ़ करने की पहली जिम्मेवारी सौंपी जाती थी, जिस वधु को आर्शीवाद दिया जाता था कि वह सास-ससुर नन्द-देवर पर शासन करने वाली रानी बने वा उच्च आसीन प्रतिस्थापित नारी धीरे-धीरे उस पद से प्रति स्थापित की जाने लगी। कालांतर में स्त्री की दशा के लिए कौन सी स्थितियाँ प्रस्थितियाँ प्रभावी रही ये अपने आप में अलग विषय है। किन्तु वैदिक काल में स्त्रियों को विद्या अधययन की स्वतंत्रता प्राप्त थी (कुछ महिलाओं द्वारा सैन्य शिक्षा के भी उदाहरण मिलते हैं) उस समय सर्वोच्च शिक्षा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने हेतु भी स्त्रियों पर कोई प्रतिबंध नहीं था। वेद और शास्त्रों में पारंगत होने के अतिरिक्त वे ऋचाओं की रचना भी करती थी, ऋग्वेद के अनेक सूक्त और मंत्र उस समय की लेखिकाओं ऋषिकाओं और ब्रह्मचारिणियों द्वारा रचे गये। इसका प्रमाण वेदों में अनेक स्थानों पर लोपामुद्रा, रोमशा, घोषा, सूर्या, आपाला, विलोमी, सावित्री, यमी, विश्वंभरा, श्रद्धा, कामायनी, देवयानी आदि नामों के उल्लेख द्वारा मिलता है। जिन्हें विद्वता के आधार पर ऋषिका और ब्राहाणी कहा गया है। इसके अतिरिक्त वैदिक कालीन महिलाओं द्वारा सैन्य शिक्षा, ग्रहण करने, दौत्य कर्म, उपनयन संस्कार सम्पन्न करवाने आदि के शास्त्र सम्मत प्रमाण मिलते हैं। वैदिक काल में ही धार्मिक कार्य शिक्षित महिलाओं द्वारा करवायें जाने के प्रमाण मिलते हैं। इसी काल में अनेकों विद्वषी महिलाओं ने शारतार्थ द्वारा पुरुषों को पराजित किया हैं परन्तु इसी कालखंड में स्त्रियों की दशा में गिरावट भी देखने को मिलती है।

वैदिक काल के पश्चात् के कालों में महिलाओं की स्थिति में निरंतर गिरावट देखने को मिलती है, महिलाओं की गिरती दशा का सर्वाधिक जिम्मेवार काल उत्तर वैदिक काल रहा है और इसके पश्चात् तो निरंतर गिरावट ही देखने को मिलती रही है।

इसी युग को स्मृति युग भी कहा जाता है। इस काल में नारियों की दशा में गिरावट स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगी। पत्नी का पति की सेवा करना ही

* ऐसोसिएट प्रोफेसर (समाजशास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

धर्म बताया गया। वे पति का चयन नहीं कर सकती थी। ऐसा माना गया कि नारियों का बाल्यपन पिता के संरक्षण में, युवावस्था पति के तथा वृद्धावस्था अपने पुत्रों के सरक्षंण में बितानी चाहिए। उनकी उच्च शिक्षा पर प्रतिबंधा सा लग गया। बाल-विवाह का जोर, विवाह में कन्या की रूचि का अन्त, पुरुष का नारी पर पूर्ण नियंत्रण, विधावा पुन: विवाह निषेध, सती प्रथा आदि से नारी की हासोन्मुख स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। नारियों को स्वभाव से कामुक, नासमझ व चरित्रहीन बताया गया, अत: उन्हें विश्वास के आयोग्य समझा जाने लगा। स्त्रियों की स्थिति में आती गिरावट एक बार शुरु हुयी तो लगातार गिरती ही रही। ऐसा लगता है जैसे उनकी स्थिति सुधारने के लिए किसी भी रूप में कोई प्रयास नहीं किये गये। ये स्थिति मधय काल तक आते-आते और भी बिगड़ गयी। यहाँ स्त्रियों को वर्णव्यवस्था के अनुसार निर्धारित शूद्र वर्ण के साथ जोड़ा गया। हिन्दू धर्मशास्त्र और सामाजिक व्यवस्था को निर्धारित करने वाले महत्त्वपूर्ण व विवादित ग्रंथ मनुस्मृति के अनुसार जप, तपस्या, तीर्थयात्रा, संन्यास ग्रहण मंत्र साधना और देवताओं की आराधना जैसे छह कर्मो को करने से स्त्री और शूद्र पतित हो जाते हैं। इसी कालखंड में शंख लिखित मतानुसार माना गया है कि पत्नी को चाहिए की वह अपने नपुसक, कोष वृद्धि ग्रस्त, पतित अंग के अधाुरे, रोगी पति को न छोड़े क्योंकि पति ही पत्नी का देवता है। कुछ इसी से मिलती जुलती बातें मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य, रामायण महाभारत अश्वमेघ पर्व शांति पर्व, मत्स्य पुराण आदि में देखने को मिलती है। स्त्रियों की दशा में गिरावट के साथ-साथ इस काल खंड में उनके साथ मारपीट किये जाने को अपराध न मानने के कई उदाहरण मिलते हैं।

कालखंड के अनुसार आगे की यात्रा में भी स्त्रियों को लगातार समस्याओं का सामना करना पड़ा बौद्धकालीन, मौर्य कालीन, महिलाओं की दशा को भी उन्नत नहीं कहा जा सकता तत्कालीन विदेशी भ्रमणकारी आगंतुकों ने लिखा है कि पुरुष कुछ स्त्रियों को संतानों के लिए रखता था और कुछ को केवल शारीरिक सुख के लिए। इसका सीधा सा अर्थ है कि महिलाओं को इस काल खंड तक आते-आते यौन-सुख की वस्तु माना जाने लगा था। अविवाहित स्त्रियाँ गणिकाओं का जीवन व्यतीत करने लगी किन्तु उनकी स्थिति में भी एक तरह की स्वतंत्रता देखने को मिलती थी। जबकि कई उदाहरण ऐसे देखने को मिले हैं जिनमें गृहणियों को अतिथि सत्कार के लिए सौपा जाने लगा था। संभवत: स्त्री की विकास यात्रा का ये सबसे दु:खद और निंदनीय पहलू कहा जा सकता है। ये इस काल खंड की स्थिति है जिसे स्वर्ण युग के नाम से जाना जाता है। ऐसी विषम स्थिति में कोढ़ में खाज का काम मुस्लिम आक्रांताओं के किया परदा प्रथा, बालविवाह स्त्री प्रथा जौहर प्रथा आदि कुरीतियों का प्रार्दुभाव इसी समय देखने को मिलता है। महिलायें बादशाहों के घर में भेजी जाने लगी बालिकाओं की शिक्षा पर प्रतिबंधा लगा दिया गया। इसके बाद भी इस कालखंड में ऐसी कई शिक्षित महिलायें सामने आयी जिन्होंने अपने प्रयासों से राजनीतिक घटनाओं में अग्रणी भूमिका निभायी और शासन कार्यों में दक्षता प्रदर्शित की। इनमें रानी विद्या, रानी दुर्गावती, रानी कर्णवती, ताराबाई देवलरानी, रूपमती, पद्मिनी रजिया सुल्तान आदि के नाम प्रमुखता से लिये जा सकते हैं। तत्कालिन स्थिति में हिन्दू महिलाओं की तुलना में मुस्लिम महिलाओं की स्थिति ज्यादा खराब थी। कहा गया है मुस्लिम स्त्रियाँ तभी घर से बाहर निकलती थी जब वे अत्यधिक निर्धान हो अथवा लज्जाहीन हो। लेकिन वो भी अपना सिर ढके रहती थी। अकबर के बारे में चाहे जितनी बातें बढ़ा चढ़ा कर इतिहास में लिखी गयीं हो पर किन्तु स्त्रियों की दशा सुधारनें में उसकी तरफ से कोई विशेष प्रयास नहीं किये गये। उनके द्वारा तो सुंदर स्त्रियों के चुनाव के लिए मीना बाजार लगवाना शुरू किया गया था। इसके बाद भी इस काल खंड की स्त्रियों में विस्मयकारी विशेषता इस रूप में देखनेको मिलती हैं कि भले ही मध्यकालीन महिलाओं का सामाजिक जीवन परदे के पीछे व्यतीत हुआ हो किन्तु समय आने पर वे प्राण देने से पीछ नहीं रहीं। उनके लिए अपने पति को रणभूमि में भेजना गर्व की बात हुआ करती थी। इसके साथ-साथ इस कालखंड की स्त्रियों का गौरवशाली तथ्य उनका शासन करना, सैन्य संचालन करना, राजनैतिक रणनीतियाँ बनाना आदि रहा है। ये और बात है कि इन महिलाओं के सर्वर्णिम इतिहास को स्वर्णिम स्थान प्राप्त नहीं हो सका।

समय बीतने के साथ-साथ परिस्थितियों में बदलाव आते रहे महिलाओं के प्रति सामाजिक सोच में भी धाीरे-धाीरे परिवर्तन देखने को मिला लोगों की धारणायें बदली स्वयं महिलाओं ने अपने बारे में बनी बनायी परिपाटियों को तोड़ने का काम करना शुरू किया। 19वीं शताब्दी के उतरार्ध को हम आधुनिकता का प्रवेश द्वार मान सकते हैं। यही वह समय है जब सम्पूर्ण विश्व में औद्योगीकरण की शुरूआत हुयी। जिससे अनेकानेक उद्योग-धंधों की शुरूआत हुयी। इसी समय से भारत का सम्पर्क विदेशों से अधिक सुगम हुआ तथा अनेक भारतीयों के अध्ययन हेतु विदेश जाने एवं वहाँ से वापस आकर देश की दशा को समझने से यहाँ भी जागरुकता आयी।

19वीं शताब्दी से ही महिलाओं की भूमिका और स्थिति को सीमित करने वाली सामाजिक अक्षमताओं के विरोध में कानून बनने आरम्भ हो गये। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् न्याय, स्वतंत्रता समानता को बढ़ावा देने की संवैधानिक प्रति बद्धता हुयी। स्वतंत्रता के पश्चात् कई प्रकार के ऐसे कानून लागू किये गये जो सामाजिक जीवन से सम्बन्धित महिलाओं की स्थिति व संवैधानिक संरक्षण के सिद्धांतों को लागू करने के प्रयास थे। विवाह एवं विरासत से सम्बंधित कानूनों में सुधार, श्रम कानूनों में मानवीय स्थितियों को सुधारने के कानून प्रभाव से सम्बंधित लाभ एवं श्रमिकों के कल्याण हेतु बनायी गयी योजनाओं ऐसे कार्य क्रम थे जिनका मुख्य उद्देश्य महिलाओं की निम्न स्थिति में योगदान देने वाली अक्षमताओं को समाप्त करता था। नियोजित सामाजिक आर्थिक विकास के कार्य क्रमों और नीतियों ने महिलाओं को विकास की सामाजिक आर्थिक प्रक्रिया में जिम्मेदारी पूर्वक सकारात्मक सहभागिता के लिए अधिक अवसर प्रदान किये। नियोजन के सिद्धान्त को स्वीकार करने से यह स्पष्ट हुआ कि अगर विकास को तीव्र गति देनी है तो अर्थ व्यवस्था, जनसंख्या के आधे भाग के सक्षम योगदान को नकार नहीं सकती इसलिए महिलाओं को विकास की प्रक्रिया में शामिल करने के प्रयास किये गये।

1970 के दशक से नियोजन की प्रक्रिया में महिलाओं की हिस्सेदारी पर विशेष धयान देने के लिए दो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। यू.एन.ओ. द्वारा 1975 को अन्तराष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित करने एवं 1975 से 85 तक के दशक को महिला दशक घोषित करना महिलाओं से सम्बोधित विषयों में एक महत्त्वपूर्ण कदम था। सारे विश्व का धयान महिलाओं की समस्याओं, आवश्यकताओं, क्षमताओं की तरफ आकर्षित किया गया था हर वाद-विवादों एवं शोधों द्वारा समाज में महिलाओं की भूमिका का पुन: निरीक्षण किया गया और यह मांग की गयी कि ऐसे कार्य क्रम बनाये जाय जिनके महिलायें अपनी क्षमता का उपयोग करके समाज में उचित योगदान दे सके। कई विषयों में नये कार्यक्रम बनायें गये परन्तु ये कार्यक्रम राष्ट्रीय अन्तराष्ट्रीय सरकार एवं गैर सरकारी अभिकरणों द्वारा स्वास्थ, शिक्षा एवं रोजगार आदि पर केन्द्रित थे। दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक विकास वादी सिद्धांत में महत्त्वपूर्ण

परिवर्तन थे। जिसने विकास में महिलाओं की सहभागिता को केन्द्र बिन्दू बनाया। यह पाये जाने पर कि विकास की नियोजित प्रक्रिया के लाभ स्वयं ही शक्ति हीन एवं गरीब वर्गों तक नहीं पहुँचते। इसलिए समाज के शोषित वर्गों को लाभ पहुँचाने के लिए विशेष प्रयास किये गये। वृद्धि की गति को बढ़ाने के प्रयासों के साथ-साथ विशेष रूप से लक्षित कार्य क्रमों को सोचा गया और क्रियान्वित किया गया महिलाओं को इस प्रकार का शोषित समूह माना जिस पर पूर्ण ध्यान देने की जरूरत थी। शिक्षा शैक्षिणिक व्यवसायिक प्रशिक्षण स्वास्थ्य सेवाओं, परिवार नियोजन, कल्याणकारी योजनाओं इत्यादि द्वारा महिलाओं की मानसिक क्षमताओं को बढ़ाये एवं उनके जीवन की परिस्थितियों को सुधारने के प्रयास किये गये।

लेकिन महिलाओं की विभिन्न श्रेणियों पर प्रत्येक क्षेत्र में किये गये विकासवादी प्रयासों का इच्छित एवं एक समान प्रभाव नहीं पड़ा है। हमें यह याद रखना चाहिए कि भारत में महिलायें एक समरूप श्रेणी नहीं बनाती हैं। महिलाओं के समूह एक दूसरे से न केवल शारीरिक एवं जनसंख्कीय विशेषताओं में अपितु धर्म, जाति, वर्ग क्षेत्र आदि कारकों द्वारा प्रभावित व्यवहारों में भिन्न-भिन्न है केवल कुछ उच्च वर्ग एवं मधय जाति तथा वर्गों के कुछ भागों की महिलायें इन कार्यक्रमों द्वारा लाभान्वित हुयी है। बहुत बड़ी संख्या में महिलायें अभी तक शोषण एवं भेदभाव की नीति की शिकार है एवं वंचित जीवन व्यतीत कर रही है।

विकासवादी कार्यक्रम की गलत सीमित सोच एवं क्रियान्वयन द्वारा उत्पन्न सीमिताएँ इच्छित दिशा की प्रगति में समस्यायें उत्पन्न करती है। इन सीमाओं के अलावा कई और समस्यायें भी उत्पन्न होती है, क्योंकि संविधान द्वारा उद्देश्य की सामाजिक स्वीकृति समय और समूह में अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। महिलायें घरेलु महिला, पत्नी एवं माँ मानी जाती है और यह महिलाओं की स्थिति को प्रभावित करती है। शिक्षित एवं कुशल महिलाओं में भी घर को संवारने एवं बाहर भविष्य बनाने के समय संघर्ष होता है। महिलाओं के दायरे बढ़ गये हैं, परन्तु जीवन में उनके लिए सम्भावनाओं और विकल्प अभी भी सीमित है। यदि समानता, न्याय और विकास के उद्देश्यों को प्राप्त करता है तो महिला व पुरुष दोनों को अपनी प्रवृत्तियों और मूल्य पुन: परिभाषित करने होंगे।

19वीं शताब्दी के उतरार्ध को हम आधुनिकता का प्रवेश द्वार मान सकते हैं। यही वह समय था जब सम्पूर्ण विश्व में औद्योगीकरण शुरुआत हुयी। तथा भारत में भी सन् 1857 की क्रांति के बाद ईस्ट इंण्डिया कम्पनी से शासन सूत्र विट्रिश सरकार के पास आने के उपरान्त रेलों का जाल बिछाया गया। डाक सेवायें शुरू हुयी तथा अनेकानेक उद्योग धांधों की शुरूआत हुयी। इसी समय से भारत का सम्पर्क विदेशों से अत्यधिक सुगम हुआ तथा अनेक भारतीयों के अध्ययन हेतु विदेश जाने एवं वहाँ से वापस आकर देश की दशा को समझने से यहाँ भी जागरूकता आयी। अत: नारी अध्ययन के क्षेत्र में कुछ ऐसी प्रस्थितियाँ देखने को मिली।

सन् 1854 में बुड्ड डिस्पैच में महिलाओं की शिक्षा की ओर विशेष धयान दिया गया जिसके परिणामस्वरूप अनेकों कन्या पाठशालाओं की स्थापना भी हुयी तथा अनेक विश्वविद्यालय अस्तित्व में आये। इसके पूर्व सन् 1889 में लार्ड डलहौजी ने एक कन्या पाठशाला में किए अनुदान दिया था। ईसाई धर्म में प्रचारकों ने भी ईसाई धर्म में दीक्षित हो चुके परिवारों की कन्याओं के लिए पाठशाला खोली सन् 1857 ई0 तक ऐसी 100 में अधिक कन्या पाठशालायें खुल चुकी थी।

कुछ वर्षो पहले तक भारत में स्त्रियाँ मध्यकालीन युग की परिस्थितियों में रहती थीं और इनका पर्याप्त शोषण हो रहा था। इसी शोषण के विरूद्ध स्त्रियों का महिला-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और उनके ऊपर लादी गई समस्त परम्परागत निर्योग्यताओं को चुनौती दी गई। इस चुनौती के सन्दर्भ में भारतीय स्त्रियों की प्रस्थिति में अनेक सुधार हुए और वर्तमान समाज में हिन्दू नारी की प्रस्थिति से कहीं अधिक अच्छी है। वह आज अन्य देशों की नारियों से किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं हैं। वह देश के सभी सेवा-क्षेत्रों में संलग्न है। राजनैतिक क्षेत्र में भी वह पुरूष से कम नहीं है। आर्थिक क्षेत्र में भी नारियाँ अपनी भागीदारी बढ़ा रही हैं। अब भारतीय नारियाँ अबला न रहकर सबला बन गई हैं। देश में शिक्षा के प्रसार से नारियों की प्रस्थिति में चहुंमुखी सुधार हुआ है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् स्त्रियों की प्रस्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है। उनमें सामाजिक चेतना की आज एक नई लहर देखने को मिलती है। जो स्त्रियाँ किसी समय घर के बाहर दूर, घर के दरवाजे या खिड़की में से बाहर झाँक भी नहीं सकती थीं, वही आज घर के बाहर जाकर नौकरी व अन्य व्यावसायिक कार्य करती हैं। समिति और संघों की सदस्यता प्राप्त करती हैं, पार्टियों का आयोजन करती हैं, क्लब जाती हैं, और इसी प्रकार अनेक सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेती हैं। वे रूढ़िवादी विचारों से दूर होती जा रही हैं और नए तार्किक आदर्शों और मूल्यों को भी अपनाती जा रही हैं। पर्दा-प्रथा प्राय:अब समाप्त हो गई है। समाज में भी उनको आदर की दृष्टि से देखा जाता है। संयुक्त परिवार में उनकी प्रस्थिति परम्परागत प्रस्थिति से कहीं अधिक अच्छी है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक क्षेत्र में वर्तमान भारत में स्त्रियों की प्रस्थिति पहले से कहीं अधिक अच्छी है।

अब बहुपत्नी-विवाह गैर कानूनी है। अन्तर्जातीय विवाह मान्य है और स्त्रियों को विवाह-विच्छेद का भी पूरा अधिकार है। इसी कारण विधावा-पुनर्विवाह भी आज कानूनी रूप से मान्य है। इस सभी कारणों से परिवारों के अन्तर्गत भी स्त्रियों की प्रस्थिति काफी सुधारी है। वह अब पति की दासी नहीं, वरन् मित्र हैं; सास-ससुर की सेविका नहीं, वरन् सम्मानीय वधू हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि विवाह और परिवार के क्षेत्र में स्त्रियों की प्रस्थिति अपेक्षातया उच्च है।

आर्थिक दृष्टिकोण से आज स्त्रियों की प्रस्थिति उच्च है। वे अब केवल पति पर ही आश्रित नहीं हैं, आज स्वयं भी जीविकोपार्जन कर रही हैं। वर्तमान भारत में स्त्रियाँ प्राय: सभी प्रकार के व्यवयसाय करती हुई देखी जा सकती हैं।

स्त्रियों की शिक्षा के सम्बन्ध में भी वर्तमान समय में पर्याप्त सुधार हुए हैं। पहले बहुत ही कम स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होती थीं, परन्तु आज स्त्रियाँ शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ रही हैं। सन् 1951 की जनगणना के अनुसार भारत में केवल 8.86% स्त्रियाँ शिक्षित थीं। परन्तु सन् 2001 की जनगणना से पता चलता है कि 54.16% स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी हैं। आज स्त्रियाँ वैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक, व्यावसायिक, सभी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

सरकार भी स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष धयान दे रही है। स्त्रियों को नि:शुल्क शिक्षा, प्राइवेट शिक्षा देने की सुविधा, छात्रवृत्तियाँ आदि देकर शिक्षा को प्रोत्साहित किया जा रहा है। प्रत्येक राज्य सरकारों ने तो दसवीं कक्षा तक लड़कियों की शिक्षा नि:शुल्क करके स्त्री-शिक्षा के विस्तार में सराहनीय योगदान किया है। स्त्रियों की शिक्षा में सुधार का इससे बड़ा प्रमाण

क्या हो सकता है? आज भारत में महिलाएँ न्यायिक सेवा में हैं और करीब 20 महिला जज हैं। सेना में भी महिलाओं का प्रवेश हो चुका है, महिला थाने खुल चुके हैं। देश की प्रथम भारतीय पुलिस सेवा अधिकारी श्रीमती किरण बेदी को 1994 में महानिरीक्षक (कारागार) दिल्ली के पद पर रहते हुए उनकी सराहनीय सेवाओं और जेल सुधार कार्यों के लिए प्रसिद्ध रोमन मैग्सेसेय पुरस्कार से नवाजा गया था।

राजनीतिक पिछड़ापन भारतीय महिलाओं के जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप था। पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को 50% आरक्षण प्रदान कर दिए जाने से महिलाएँ पंचायती चुनावों में बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं ग्राम पंचायत में सरपंच निर्वाचित होकर पंचायती राज व्यवस्था में अपनी भागीदारी भलीभाँति निभा रही हैं।

जीवन की प्रत्येक गतिविधि व क्रियाकलाप में महिलाएं आगे आई हैं। चिकित्सा या सुरक्षा हो, घर प्रबंधन या व्यवसाय हो, दफ्क्तर या परिवार हो, विज्ञापन या कारोबार हो, प्रतिस्पर्धा या मॉडलिंग हो, रूप हाट या प्रतियोगिता हो, नीति या राजनीति हो, फिल्म या साहित्य हो, कला या संस्कृति हो, धर्म या आस्था के दीप हों, हर जगह वजूद रखती हैं। आजादी हेतु स्वतंत्रता की क्रांति हो, दुग्धा व पशुपालन की श्वेत क्रांति हो, खेती व कृषि उन्नयन की हरित क्रांति हो, युद्ध का उद्घोष हो या शांति के सुनहरे दिनमान-आज की महिला का प्रत्येक क्षेत्र में अद्वितीय योगदान है।

जीवन के प्रत्येक घटनाक्रम में महिलाओं का वर्चस्व व्याप्त है। महिलाएं प्रत्येक राजनीतिक दल में प्रभावी नेत्रियाँ हैं सक्रिय राजनीति में ममता बैनर्जी, सोनिया गांधाी, सुषमा स्वराज, शीला दीक्षित, राबड़ी देवी, रामाबेन, जयललिता, जया जेटली, गिरिजा व्यास, मोहिनी गिरि, नजमा हेपतुल्ला इत्यादि अग्रणी हैं। आई.पी.एस. अधिकारी किरण बेदी की सदस्यता, गायन क्षेत्र की अद्वितीय प्रतिभा स्वर कोकिला लता मंगेश्कर, अभिनेत्री शबाना कल्पना चावला, पर्वतारोही बच्छेन्द्रीपाल, साधवी उमा भारती, संपादक पत्रकार मृणाल पांडे इत्यादि महिलाओं ने नई पहचान बनाई है। इनकी प्रतिभा, क्षमता योग्यता पर सभी नतमस्तक हैं। जिस प्रकार राजनीति में नेत्रियों की पकड़ है उसी प्रकार फिल्म जगत में अभिनेत्रियों की भरमार है।

आज की महिलाएं जागरूक हैं, सचेत हैं। गांवों में भी साक्षरता के प्रति होड़ मची है। राजनीति ने, फिल्म जगत ने उन्हें भी प्रभावित किया है। वास्तव में आज हर जगह महिलाओं का पूर्ण वर्चस्व है। दफ्क्तर में, घर-परिवार में, जीवन के प्रत्येक क्रियाकलाप में। यह प्रभुत्व सकारात्मक है। आज की नारी कल के भविष्य की अधिकारी है, आज की महतारी है, विकास की धाुरी है। अंग्रेजी राज्य की स्थापना के पश्चात् धाीरे-धाीरे स्त्रियों में शिक्षा का विस्तार होना प्रारम्भ हुआ। स्वतन्त्रता के पश्चात् केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों ने भी इस सम्बन्ध में अनेक प्रयत्न किये। शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ स्त्रियों में परम्परागत अन्धाविश्वास तथा संकीर्ण मनोभाव दूर होते गए और वे अपने अधिकारों के सम्बन्ध में जागरुक हुई।

पाश्चात्य संस्कृति से हमारा सम्बन्ध बढ़ने के साथ-साथ भारतीय स्त्रियों में नई जागृति की लहर आई है, इस बात को शायद कोई भी अस्वीकार नहीं करेगा। पाश्चात्य देशा में स्त्री व पुरुष समान अधिकारों का उपयोग करते/करती हैं। यह सब देखकर यहाँ की स्त्रियाँ भी अपने अधिकारों के सम्बन्ध में जागरूक हुई। इतना ही नहीं, पाश्चात्य संस्कृति के माधयम से भारतीय नारी का सम्पर्क अन्य प्रगतिशील देशों के नारी-आन्दोलनों आदि के साथ सहज ही स्थापित हो सका। इससे जो जागरुकता इस देश की स्त्रियों में उत्पन्न हुई, उसकी भी कीमत कुछ नहीं।

औद्योगीकरण के साथ-साथ भारत में अगणित उद्योग-धन्धो पनप गये जिसके कारण न केवल पुरुषों के लिये बल्कि स्त्रियों के लिए भी नौकरी के पर्याप्त अवसर बढ़ गए। फलस्वरूप स्त्रियाँ भी पुरुषों की भाँति घर के बाहर नौकरी करने लगीं, वहाँ उनको पुरुषों के साथ भी काम करना पड़ा। इससे उनकी पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता घटी, अन्तर्जातीय और प्रेम विवाहों को प्रोत्साहन मिला, पर्दा-प्रथा घटी, साथ ही पुरुषों का स्त्रियों के प्रति मनोभाव भी पर्याप्त रूप से बदला।

वर्तमान समय में प्रेस ने काफी उन्नति की है जिसके कारण कई प्रकार की प्रगतिशील पुस्तकों, पुस्तिकाओं, समाचार-पत्रों आदि का अखिल भारतीय आधार पर मुद्रण और वितरण सम्भव हुआ है। यह वितरण यातायात और संचार के उन्नत साधनों ने देश और दुनियाँ की स्त्रियों को एक-दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता प्रदान की है। इस सबके द्वारा अर्थात् प्रेस, यातायात व संचार के साधनों के द्वारा नारी-आन्दोलन को चलाने, नारी समस्या के प्रति स्वस्थ जनमत निर्माण करने, नारी नेताओं के विचार दूर-दूर तक पै लाने में जो सहायता मिली है वह भारतीय नारी की वर्तमान उन्नति प्रस्थिति का एक महत्वपूर्ण कारक है।

आधुनिक समय में सहशिक्षा और साथ ही स्त्री-पुरुष को एक साथ नौकरी करने की सुविधा आदि ऐसे कारण हैं जिनके फलस्वरूप प्रेम-विवाह का विस्तार भारत में उत्तरोत्तार होता रहा है। इन प्रेम-विवाहों में सामान्यत: जाति-पाँति का कोई बन्धन नहीं होता है। इस प्रकार इन अन्तर्जातीय विवाहों से स्त्रियों का एक ओर समाज से सम्पर्क बढ़ता है तो दूसरी ओर वर-मूल्य-प्रथा भी घट जाती है। इससे लड़कियों को परिवार का बोझ समझने की भावना का अन्त होता है और परिवार में स्त्रियों की प्रस्थिति सुधारती है। वैसे भी अन्तर्जातीय विवाह के फलस्वरूप पति-पत्नी में सहयोग और समानता की भावनायें पनपती हैं और पुरुष स्त्री को 'दासी' न समझकर 'साथी' समझने लगता है। यह भी स्त्रियों को उन्नत करने की अनुकूल परिस्थिति है। विभिन्न समयों पर हुये सुधार व राट्रीय आन्दोलनों ने भी स्त्रियों की प्रस्थिति को सुधारने में पर्याप्त योगदान दिया। भारत में स्त्रियों की प्रस्थिति को सुधारने में सरकारी प्रयासों का भी पर्याप्त योगदान रहा। सरकारी दावा तो यह हे कि भारतीय महिलाओं का विकास कार्यक्रम स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय से सरकार के विकास की योजनाओं का केन्द्र रहा है ताकि महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्तर को पुरुषों के समान ऊपर उठाकर उन्हें राट्रीय विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जाएं कामकाजी महिलाओं के लिए अब तक 900 हॉस्टल बनाये गए हैं जिससे 65,690 कामकाजी महिलाएँ लाभान्वित हुई हैं आधुनिक व्यवसायिक क्षेत्रों जैसे-इलैक्ट्रोनिक्स, इलैक्ट्रीकल्स, घड़ी-निर्माण, कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग, होटल प्रबन्ध, फैशन व ब्यूटी कल्चर, पर्यटन, कार्यालय प्रबन्धन आदि में प्रशिक्षण के लिए महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है।

2 अक्टूबर 1993 से महिला समृद्धि योजना ग्रामीण क्षेत्रों में डाकघरों के माध्यम से चलाया जा रहा है। अब तक लगभग 12 लाख प्रौढ़ महिलाओं व लड़कियों को शिक्षा और व्यवसायिक प्रशिक्षण दिया जा चुका है राष्ट्रीय महिला कोष और महिला विकास निगम की स्थापना क्रमश: 1992-93 व 1986-87 में की गई। इतना ही नहीं, एक राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन श्रीमती जयंती पटनायक की अधयक्षता में 31 जनवरी 1992 को किया गया था। इसका उद्देश्य महिलाओं की सुरक्षा व अधिकार से सम्बन्धित

कानूनों के ठीक से लागू करना और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रखे जाने की शिकायतों को सुनना और उन पर कार्यवाही करना है। साथ ही, सरकार ने महिलाओं के हितों की रक्षा के लिए कुछ विशेष कानून बनाये गये हैं। इनमें समान वेतन अधिनियम, सती प्रथा निवारण अधिनियम, फौजदारी कानून व भारतीय साक्ष्य अधिनियम, प्रसूति लाभ अधिनियम, वेश्यावृत्ति (निवारण) अधिनियम आदि शामिल है।

स्त्रियों की प्रस्थिति को उन्नत करने में कानूनन की तरफ से भी काफी बढ़ावा मिला है। हिन्दू विधवा-पुनर्विवाह अधिनियम, 1956, बाल-विवाह अवरोध, अधिनियम 1929, हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम, 1956, (संशोधन 2005), दहेज प्रतिबन्ध अधिनियम, 1961 आदि ने स्त्रियों की प्रस्थिति को ऊँचा करने में पर्याप्त सहयोग दिया है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने सन् 1971 में गर्भपात को कानूनी मान्यता प्रदान करके स्त्रियों की प्रस्थिति को ऊँचा उठाने की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. परिवर्तन एवं विकास का समाजशात्र, डॉ. जी. आर. मदन
2. भारतीय समाज में वितंता व परिवर्तन, डॉ. अमित शर्मा
3. भारतीय समाज व संस्कृति, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी
4. उत्कृष्ट समाजशास्त्रीय परम्परायें, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी
5. समाज शास्त्र, शर्मा एण्ड गुप्ता

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. II
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Wild Edible Plants of Beer Reserve Forest of Jhunjhunu, Rajasthan

Manju Chaudhary*

Abstract - Wild edible plants have played an important role in human life since time immemorial. The aim of the present study is to document wild edible plants of Beer reserve forest area of Jhunjhunu district of Rajasthan. Present work deals with 38 wild plant species used by tribal and rural people inhabiting near the forest area. These plant species are arranged alphabetically along with their botanical name, vernacular name, family and their usage. The various plant parts, viz., stems, leaves, flowers, fruits and seeds are used raw or in cooked form. Present work will be helpful for further studies such as phytochemical analysis of wild edible plants and their nutraceutical potentialities.
Keywords - Wild edible plants, Beer forest Jhunjhunu, Tribals, Ethnobotany, Phytochemicals.

Introduction - Plants are the basis of life on earth and are central to people's livelihood. The wild floras of many countries contain a great variety of useful plants which have been a valuable source of the basic needs. Millions of people in many developing countries do not have enough food to meet their daily requirements and many others are deficient in one or more micronutrients (FAO, 2004). "Wild edible plants" are wild plants with one or more parts that can be used for food if gathered at the appropriate stage of growth, and properly prepared (Kallas, 2010).

India is a vast country where nature has bestowed rich botanical wealth and a large number of diverse types of plants growing wild in different parts. Most rural inhabitants depend on the wild edible plants to meet their additional food requirements in India. About 800 wild plants are consumed as food chiefly by tribal communities (Singh and Arora, 1978). Many works have emphasized on the diversity and traditional uses of wild plants from different parts of country (Jain, 1964; Pal and Banerjee, 1971; Negi, 1988; Basu and Mukherjee, 1996; Reddy et al., 2007; Binu, 2010).

Rajasthan is known for rich biodiversity, especially for wild edible plants, which play an important role in meeting food demands. The rural inhabitants who mainly comprise of herders, shepherds, or other marginalized population use wild plants frequently for their livelihood. The earliest record on the documentation of the traditional botanical knowledge of the plants from Rajasthan is from King (1869), who record on the wild plants used as famine food. Many ethnobotanists have listed edible plants along with medicinal plants (Bhandari, 1974; Saxena, 1979; Sebastian and Bhandari, 1990; Joshi and Awasthi, 1991; Singh and Pandey, 1998; Katewa, 2003; Swarnkar and Katewa, 2008; Sharma and Sain, 2009; Jain et al., 2010). Although much has been documented on ethnomedicinal and floristic aspects of plants of Rajasthan, little has been reported about the wild edible plant resources of Shekhawati region. Keeping this in view, the present study was conducted as an attempt from the region to explore and identify the wild edible plant resources, and indigenous traditional knowledge about their utilization.

Materials and Method - Jhunjhunu district, a part of Shekhawati region is covering 5,928 sq. km total geographical area. The district is irregular hexagon in shape in the northeastern part of the state (Fig.1). Beer protected forest of Jhunjhunu district is located between 2809´ to 28°10´ North latitude and 75°25´to 75°27´ East longitude. It is situated about 3 km from Jhunjhunu city. It is almost plain area but towards boundaries some sand-dunes with little slopes are present.

Winters are quite cool and summers are very hot in this area. January is the coldest month when the minimum temperature drops up to 4^0C and the May and June are the hottest months, when maximum temperature reaches up to 47^0C. The soils are coarse textured light brown sandy to loamy fine sand, very deep, non-calcareous and well drained.

Fig.1: Key Map showing Location of Jhunjhunu District in Rajasthan and India

*Department of Botany, Govt. College, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

The present ethnobotanical study was conducted in Beer Jhunjhunu forest area during 2015-2016. Information regarding the utilization of wild edible fruits and vegetables were obtained through interview and group discussion. The survey information was also gathered through secondary sources. Edible plant species were collected and identified taxonomically with the help of published regional flora (Bhandari, 1990; Shetty and Singh 1987; 1991; 1993; Sharma, 2002). The wild edible plant species are arranged alphabetically along with their botanical name, vernacular name, family and their usage (Table 1).

Results and Discussion - Living close to nature, the traditional people have acquired immense information about the use of wild food plants, which is not known to the outer world. Plant resources may play an important role to sort out various problems related to food, medicines etc. They play a major role in supplying food for poor communities, since it is freely available within the natural habitats and they have knowledge on how to gather and prepare food on the earth. Majority of tribal communities depend upon such food plants in the absence of conventional food. Wild edible plants provide vegetables, fruits, staple food, and spices for indigenous people and are the main source of food.

A number of plants from present study area are eaten by the rural and tribal people (Plate 1). Most of these food materials possess high nutritional values. The various plant parts, viz., stems, leaves, flowers, fruits and seeds are used in raw or cooked form. Leafy greens with tender shoots are boiled in water, squeezed and cooked with salt and condiments and taken along with the bread (chapati). These are eaten in a variety of forms. Some are eaten either ripened or unriped, while other are consumed after cooking. Some of the fruits are pickled and some are made into other products.The unripe fruits of *Prosopis cineraria* are harvested, dried and used as vegetable. The fruits of *Capparis* deciduas are used for making pickles. The floral buds of *Calligonum polygonoides* are utilized as vegetable (Saxena, 1979). Several leaves are good substitute for the green vegetables. Some leaves make a good soup. Seeds of a large number of species are also edible.

The present study deals with 38 wild edible plant species used by rural and folk people of the district Jhunjhunu. The local communities use this rich plant diversity in their day to day life for sustenance. Among the economically important species, wild edible plants form substitute food for desert communities at the time of scarcity. Edible plant parts are collected by local people abundantly and sold in nearby market. These plants have much nutritional value like *Zizyphus nummularia*, *Capparis decidua*, *Leptadenia pyrotechnica* , *Coccinia grandis*, *Cucumis callosus*, *Momordica dioica*, *Cordia dichotoma*, *Calligonum polygonoides* and *Salvadora oleoides*. A number of indigenous potential plant species which support life in more extreme environmental situations as in the hot Indian desert have been well documented. Edible fruits of *Salvadora oleoides* locally known as *Pilu* were most commonly used for cooling effect in the study area. Wild edible plant species are less susceptible to disease. They are popularized after phytochemical analysis. The nutritional potential of these plants has not hitherto been investigated to the extent it deserves. The findings suggest further investigation into nutritional profits, processing methods, cultivation techniques, conservational studies and pharmacological properties of the reported plant species of the area. Many of the wild food may not be freely available in future due to overexploitation, habitat destruction, regular forests fires and invasion of exotic plant species. Therefore efforts can be made to bring some of them under cultivation in order to maintain a continuous supply and help in their conservation.

Table 1 (see in next page)

References :-

1. Basu, R. and Mukherjee, P.K. (1996). Food plants of the Tribe Pararias of Purulia, West Bengal. *Adv. Plant Sci*. 9(2):209-210.
2. Bhandari, M.M. (1974). Famine foods in the Rajasthan Desert. Economic Botany, 281 (1): 73-81.
3. Bhandari,M.M.(1990). Flora of the Indian Desert, Scientific Publishers, Jodhpur,1-435.
4. Binu, S.(2010). Wild edible plants used by the tribals in the Pathanmitta district, Kerala. Indian j Trad Knowledge, 9(2): 309-312.
5. FAO (2004). Vitamin and mineral requirements in human nutrition. Rome, Food and Agricultural Organization of the United Nations. Genewa, World Health Organization.
6. Jain, S.K. (1964). Wild plant foods of the tribals of Bastar, Madhya Pradesh. Pro. Nat. Inst. India, 30 B (2): 56-80.
7. Jain, U.; Chauhan, M. and Tiwari, A.(2010). Wild edible plants used by the tribals of Pali district, Rajasthan. J. Phytol. Res. 23(2):361-365.
8. Joshi, P. and Awasthi, A. (1991 " Life support plant species used in famine by the tribals of Aravalli." Journal of Phytological Research, 42 (2): 193-196.
9. Kallas, J. (2010). Edible wild plants. Wild foods from dirt to plate. Gibbs Smith, Layton, Utah.
10. Katewa S. S. (2003).Contribution of some wild food plants from forestry to the diet of tribals of Southern Rajasthan. *Ind*. *For*. 129:1117-1131.
11. King, G. (1869). Famine foods of Marwar, Proc. Asiatic Soc. Bengal, Calcutta, 38: 116-122.
12. Negi, K.S. (1988). Some little known wild edible plants of U.P. hills, J. Econ. Tax. Bot., 12: 345-360.
13. Pal, D.C. and Banerjee, D.K. (1971). Some less known plant foods among the tribals of Andhra Pradesh and Orissa states. Bull. Bot. Surv. India, 13: 221-223.
14. Reddy, K.N.; Pattanaik, C.; Reddy, C.S. and Raju, V.S.(2007). Traditional knowledge on wild food plants in Andhra Pradesh. *Indian J. Trad. Knowledge*, 6(1):223-229.
15. Saxena S. K. (1979), Plant foods of westem Rajasthan. *Man and Environment* 3: 35-43.
16. Sebastian, M.K. and Bhandari, M.M. (1990). Edible wild

plants of the forest areas of Rajasthan. Jour. Econ. Tax. Bot. 14 (3): 689-694.

17. Sharma, N. (2002). The Flora of Rajasthan. Avishkar Publishers, Jaipur.
18. Sharma V. and Sain M. (2009). Wild edible plants - Source of food and fodder for Meena tribe of south east Rajasthan. *J. Phytol*. *Res*. 22(2) 347-350.
19. Shetty, B.V. and Singh, V. (1987, 1991, 1993). Flora of Rajasthan, Vol. 1-3, BSI, Howrah.
20. Singh, H.B. and Arora, R.K.(1978). Wild edible plants of India, ICAR, New Delhi, India, pp.88.21. Singh V. and Pandey R. P. (1998). *Ethnobotany of Rajasthan*, *India.* Scientific Publishers, Jodhpur, 367.22. Swarnkar, S. and Katewa, S.S. (2008). Ethnobotanical observation on tuberous plant fromtribal area of Rajasthan (India). *Ethnobotanical Leaflets*,12: 647-666.

Plate 1: Wild Edible Plants Of Beer Forest Jhunjhunu

Ziziphus nummularia(Burm.f)Wt.&Arn

Prosopis cineraria L.

Capparis decidua (Forsk.) Edgew.

Momordica balsamina L.

Cucumis callosus (Rottl.) Cogn.

Citrullus lanatus(Thunb.)Mats.&Nakai

Table 1: Wild Edible Plants of Beer Forest of Jhunjhunu District, Rajasthan

S.	Botanical name	Common Name	Family	Fruits and Vegetables
1.	*Acacia senegal* (L.) Willd.	Kumta	Fabaceae	Fruits are used as vegetable.
2.	*Aegle marmelos* (L.) Corr.	Beel	Rutaceae	Ripe fruit pulp is eaten.
3.	*Amaranthus graecizans* L.	Chaulai	Amaranthaceae	Leaves are cooked and eaten as vegetable.
4.	*A. spinosus* L.	Chaulai	Amaranthaceae	Leaves are cooked and eaten as vegetable.
5.	*A. viridis* L.	Chaulai	Amaranthaceae	Leaves are cooked and eaten as vegetable.
6.	*Azadirachta indica* A. Juss.	Neem	Meliaceae	Fruits (*nimbolis*) are eaten.
7.	*Banhinia racemosa* Lamk.	Jhinjha	Fabaceae	Fruits are eaten.
8.	*Boerhavia diffusa* L.	Santo	Nyctaginaceae	Leaves are cooked as vegetable.
9.	*Calligonum polygonoides* L.	Phog	Polygonaceae	Flower buds are mixed in curd and eaten.
10.	*Capparis decidua* (Forsk.) Edgew.	Kair	Capparaceae	Fruits are eaten as pickles.
11.	*Ceropegia bulbosa* Roxb.	Khadula	Asclepiadaceae	Leaves and tubers are eaten.
12.	*Chenopodium album* L.	Bathua	Chenopodiaceae	Leaves are cooked and eaten as vegetable.
13.	*Citrullus lanatus* (Thunb.) Mats.	Matira	Cucubitaceae	Fruits are edible.
14.	*Coccinia grandis* (L.) Voigt	Tindori	Cucurbitaceae	Fruits are cooked as vegetable.
15.	*Commelina benghalensis* L.	Moriyabati	Commelinaceae	Leaves are eaten as vegetable.
16.	*Cordia dichotoma* Forst. f.	Lasoda	Ehretiaceae	Fresh fruits are edible.
17.	*Cucumis callosus* (Rottl.) Cogn.	Kachra	Cucurbitaceae	Fruits are eaten as vegetable. Also used in pickles.
18.	*Digera muricata* (L.) Mart.	Ghundro	Amaranthaceae	Leaves are cooked as vegetables.
19.	*Ephedra foliata* Boiss ex C.A. Mey	Unt-phog	Gnetaceae	So called fruits are edible.
20.	*Ficus benghalensis* L.	Bad	Moraceae	Fruits are eaten.
21.	*Gisekia pharnaceoides* L.	Sureli	Molluginaceae	Leaves are cooked as vegetables.
22.	*Holoptelea integrifolia* (Roxb.) Planch.	Churel	Ulmaceae	Fruits are eaten.
23.	*Leptadenia pyrotechnica* (Forsk.) Decne.	Khimp	Asclepiadaceae	Fruits (khimpoli) are cooked and eaten as vegetable.
24.	*Momordica balsamina* L.	Bar kareliya	Cucurbitaceae	Fruits are eaten as vegetables.
25.	*Momordica dioica* Roxb.	Kakoda	Cucurbitaceae	Fruits are eaten as vegetable.
26.	*Moringa oleifera* Lamk.	Sehjana	Moringaceae	Pods are used as vegetable.
27.	*Morus alba* L.	Shehtoot	Moraceae	Fruits are eaten.
28.	*Ocimum americanum* L.	Bapchi	Lamiaceae	Seeds are used for making cool and refreshing drinks.
29.	*Oxalis corniculata* L.	Khatti buti	Oxalidaceae	Leaves are eaten.
30.	*Pithecellobium dulce* (Roxb.)Benth.	Jangal Jalebi	Fabaceae	Fruits are eaten.
31.	*Physalis minima* L.	Pichoo	Solanaceae	Fruits are edible.
32.	*Portulaca oleracea* L.	Lunkia	Portulacaceae	Leaves are cooked as vegetable.
33.	*Prosopis cineraria* (L.) Druce	Janti	Fabaceae	Fruits (*Sangri*) are cooked as vegetable. Dried fruits (*khokha*) are eaten.
34.	*Salvadora olioides* Decne.	Mitha Jal	Salvadoraceae	Fruits (*Pilu*) are eaten.
35.	*Salvadora persica* L.	Khara Jal	Salvadoraceae	Fruits (*Pilu*) are eaten.
36.	*Trianthema portulacastrum* L.	Safed santo	Aizoaceae	Leaves are cooked.
37.	*Zizyphus nummularia* (Burm.f.) Wt.	Bordi	Rhamnaceae	Fruits are edible.
38.	*Zizyphus mauritiana* Lamk.	Ber	Rhamnaceae	Fruits are edible.

****

लोक-साहित्यकार विजयदान देथा : कृतित्व परिचय

डॉ. राजकुमार चौधरी *

प्रस्तावना -श्री विजयदान देथा लोक-साहित्य के संकलन-कर्ता, आलोचक एवं अन्वेषक के रूप में विख्यात हैं। आपकी रचनाएँ मुख्य रूप से राजस्थानी भाषा की ही रही हैं। सन् 1979 में 'दुविधा और अन्य कहानियाँ' तथा सन् 1982 में 'उलझन' नाम हिन्दी-कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए। इनके प्रकाशन के उपरान्त राजस्थान के हिन्दी कथाकारों में प्रमुख स्थान बना लिया है। परिमाण की दृष्टि से हिन्दी रचनाएँ भले ही अधिक न हों, परन्तु इन रचनाओं का गुणात्मक महत्त्व अधिक रहा है। इनका संपादित ग्रन्थ 'रुँख' जो कि सन् 1987 में प्रकाशित हुआ था, जिसमें कला, संस्कृति, दर्शन एवं विज्ञान से सम्बन्धित लेखों एवं अनूदित कहानियों तथा समीक्षाओं का प्रकाशन किया है।

श्री देथा अपने सृजन में पाठकों की भूमिका को महत्त्व अधिक देते हैं। पाठकों के सामने सत्य बात प्रकट करना ही अपना धर्म समझते हैं। इसी बात को 'हाजिर हूँ' (मुखड़ा) में देखा जा सकता है। यथा -

'.................... मेरे अध्ययन व सृजन में ये अजाने हिन्दी पाठक भी आंशिक रूप से भागीदार है जिनकी आत्म स्वीकृति के लिए अब मेरे मन में किसी तरह की दुविधा व उलझन नहीं है। पर एक बात स्पष्ट कर दूं कि मेरी मूल राजस्थानी रचनाओं के राजस्थानी पाठकों व अधिकांश लेखकों की तरह हिन्दी के पाठक भी यदि उसी तरह मेरी कसैली उपेक्षा करते, मुझे कोसते, फुसफुसाते, निन्दा करते, तो उन्हें अपनी अध्ययन व सृजन का साझेदार हरगिज नहीं मानता। .... 'राजकमल' द्वारा प्रकाशित 'दुविधा' और 'उलझन' के मर्मज्ञ पाठकों व सामान्य समीक्षकों की अप्रत्याशित सराहना ने मुझे लगभग छह वर्ष से दिशा भ्रमित-सा कर रखा है और वही मेरे सृजन व अध्ययन की भावी उपलब्धि होगी। जीवन-पर्यन्त उनका चिर-उपकृत रहूँगा कि उन्होंने मुझे नये सिरे सोचने-समझने के लिए बाध्य किया। मेरे सृजन की जानी-पहचानी राह मोड़ दी या मेरा रूख मोड़ दिया - दोनों एक ही बात है।'[1]

'दुविधा और अन्य कहानियाँ' तथा 'उलझन' कथा-संग्रहों में देथा ने राजस्थान की कदीमी कथाओं का सम्पादन किया है। इनमें प्रकाशित उन्नतालीस (39) कहानियों का हिन्दी में अनुवाद श्री कैलाश कबीर ने किया। इनका तीसरा संग्रह 'असमंजस' शीघ्र प्रकाश्य है, जिसमें कहानियों एवं लेखों को प्रकाशित किया जाएगा।'[2]

आलोचक के रूप में देथा की 'साहित्य और समाज' तथा 'प्रेमचन्द के पात्र' रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इसके अतिरिक्त 'बापू के तीन हत्यारेय कविता-संग्रह तथा 'आदमजाद' आपका हिन्दी उपन्यास जो कि 'उलझन' कहानी-संग्रह में प्रकाशित है। आपकी हिन्दी रचनाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है -

1. कहानी संग्रह
   (1) दुविधा और अन्य कहानियाँ - सन् 1979
   (2) 'उलझन' - सन् 1982
2. सम्पादित ग्रन्थ
   (1) 'रूँख' - सन् 1987
3. आलोचना साहित्य
   (1) 'साहित्य और समाज'
   (2) 'प्रेमचन्द के पात्र'
4. उपन्यास
   (1) 'आदमजाद' (लघु उपन्यास)
5. कविता-संग्रह
   (1) बापू के तीन हत्यारे

श्री देथा ने उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त राजस्थानी में भी विपुल मात्रा में साहित्य-सृजन का कार्य किया है। राजस्थानी भाषा के गौरव-ग्रन्थ - 'वाताँ री फुलवाड़ी', 'अलेखूं हिटलर', 'राजस्थानी हिन्दी कहावत कोश' आदि प्रकाशित हुए हैं। आपने 'प्रेरणा', 'रूपम', 'वाणी', 'लोक-संस्कृति' नामक मासिक व त्रैमासिक पत्रिकाओं का सम्पादन कार्य भी किया है। आप द्वारा 'कलम रो उस्ताद' जिसे केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित कराया गया, का सम्पादन भी किया था।

'दुविधा और अन्य कहानियाँ' तथा 'उलझन' के अतिरिक्त अंग्रेजी एवं बांग्ला भाषा से प्रमुख कहानियों का अनुवाद भी उन्होंने हिन्दी में किया है, जो 'रूँख' में संकलित है। इस बात को 'अनुवाद के आयाम' में अनुवाद के महत्तव को बताते हुए लिखा है -

'..................... कहाँ तो बांग्ला की दूर-दराज शस्य-श्यामला धरती और कहां मेरा सूखा रेतीला मन! जैसे जन्म-जन्मात्तार की आत्मीयता हो। यदि दुर्भाग्य से शरत् बाबू की बंगला कृतियों का हिन्दी अनुवाद उपलब्ध नहीं होता तो मरुस्थल की सांय-सांय में मेरे अन्तस का 'रूँख' सूख कर ईंधन बन गया होता! अनुवाद का मायना तो कई बरसों के बाद खुला था।...... वाल्तेयर, बालजक, रोमांरोलां, चेखोव, तोलस्तोय, तुर्गनेव, गोगोल, पुश्किन, गोर्की, मार्क्स, एंजिल्स, स्टीफेन, ज्वाइग, ब्रेख्त, नीत्शे, कजान-जाकिस, गेटे, शिलर इत्यादि लेखकों के अनुवाद यदि अंग्रेजी के माध्यम से पढ़ने को मयस्सर नहीं होते तो मेरा क्या हश्र होता? सोचते ही रूह कांपने लगती है। मेरे अध्ययन व सृजन का बंटाढार हो जाता है। जिन्दा रहते भी मैं मुर्दे से गया-गुजरा होता। केवल हिन्दी के बूते पर मेरे सृजन के

* एसोसिएट प्राफेसर, राजकीय महाविद्यालय, राजसमंद (राज.) भारत

पांव दस-पन्द्रह कदम से आगे नहीं बढ़ पाते। यह है अनुवाद का महात्म्य - समझने वाले के लिए विश्व के समस्त हीरे-मोतियों से बढ़कर और न समझने वाले के लिए जुठन से भी घटिया।'[3]

देथा की अनुदित कहानियाँ, जो कि 'रूँख' में संकलित हैं, वे हैं - 'स्त्रीर पत्र' तथा 'तोता कहानी' - रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा बांग्ला में रची गयी; 'महेश' शरतचन्द्र चट्टोपध्याय द्वारा बांग्ला में रची गयी; 'आपद्' - अन्तोन चेखोव द्वारा अंग्रेजी में रची गयी; 'अल्योशा' - लेव तोलस्तोय द्वारा अंग्रेजी में रची गयी तथा 'आत्मा की मुक्ति के लिए' - राबर्टो द्वारा अंग्रेजी में रची गयी आदि कहानियों का हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत किया है। इससे इस तथ्य का भी उद्घाटन होता है कि देथा इनके विचारों से प्रभावित हुए हैं। इसके अतिरिक्त 'प्रिय मृणाल' और 'अदीठ' लम्बी कहानियों का संकलन भी 'रूँख' में किया गया है।

संक्षिप्त रूप में इनकी रचनाओं का परिचय इस प्रकार है -

'दुविधा और अन्य कहानियाँ' तथा 'उलझन' कहानी संग्रहों में उनतालीस (39) कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। इसके अतिरिक्त 'उलझन' कहानी संग्रह में 'आदमजाद' नामक लघु - उपन्यास भी प्रकाशित हैं। देथा की ये कहानियाँ गम्भीर और सामान्य पाठकों को कहीं गहरे तक प्रभावित कर जहां सस्ते फुटपाथी साहित्य से जंग कर सकने का साहस रखती है, वहां हिन्दी के नये-पुराने कथाकारों को यह बताने में भी सफल होती है कि कहानी में गंभीरता और पठनीयता का गुण एक साथ कैसे लाया जा सकता है? विचारों के नहले पर दहले से पगी हुई ये कहानियाँ पढ़ने के बाद पाठक कई दिनों तक उनके प्रभाव में यों बहता है कि कुछ और पढ़ने की इच्छा तक नहीं होती। कहानियों का एक-एक शब्द, कहावत और मुहावरा अपनी सार्थकता प्रमाणित करता है। पाठक इन कहानियों को पढ़कर एकबारगी यह सोचने को बाध्य होता है कि ऐसे कथाकार की कहानियों को पहले क्यों नहीं पढ़ लिया होता।

इन कहानियों में घुमन्तु बनजारों के आत्मतुष्ट स्वाभिमान और सत्य के लिए समर्पित जीवन की प्रारम्भिक सामाजिक स्थिति से लेकर रजवाड़ों, भाटों, कारिन्दों, सैनिकों, व्यापारियों, धनवानों, बारहठों और दरबारी मुसाहिबों के वैविध्यपूर्ण मध्ययुगीन सामन्ती जीवन की संस्कृतियों और विकृतियों को समग्र रूप में प्रस्तुत किया गया है। ये कहानियाँ वर्तमान व्यवस्था और तंत्र में मौजूद परिवर्तित तत्तवों के सामने भी वह प्रश्न खड़े करती हैं जिन्हें पहले सामूहिक सार्वजनिक रूप में श्रोताओं के बीच उठाती थीं। ये कहानियाँ मध्ययुगीन सामन्ती मान-मूल्यों, धर्म, न्याय, ईश्वर, सत्य, स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों में उत्पन्न विकृतियों, आडम्बरों या पूरे तीखेपन के साथ चोट करती है। रनिवासों में चलने वाले वासना के व्यापारों, जी-हुजूरी के माहौल, सत्ता के व्यक्ति की चेतना पर पड़ने वाले दबावों के प्रभाव के परिणामों का इतना खुलासा करने वाली ये कहानियाँ केवल मनोरंजन का माध्यम होती थीं, ऐसा मानना इनमें निहित प्रगतिशील सामाजिक-राजनीतिक तत्त्वों, अभिप्राणों की जान बूझकर उपेक्षा करना है। धर्म, नैतिकता, स्वार्थ, ईर्ष्या, अहंकार, धन और सत्ता के अवांछित हस्तक्षेप करने के कारण व्यक्ति के अस्तित्व पर कई तरह के संकट आये, जिनकी वजह से अक्सर ताकतवर की मनमानी को बल मिला। इन कहानियों में विकास की यह प्रक्रिया अपनी पूरी जटिलताओं के साथ अभिव्यक्त हुई हैं।

'दुविधा और अन्य कहानियाँ' और 'उलझन' में छपी कहानियाँ 'वातां री फुलवाड़ी' के चौदह भागों में अनुवादित है। केवल 'अनेकों हिटलर', 'फाटक', 'राजीनामा', मौलिक कहानियाँ हैं, जिनका अनुवाद 'वाताँ री फुलवाड़ी' से नहीं किया गया है। इस बात की पुष्टि श्री वेदप्रकाश अमिताभ के इस कथन से होती है। उनका यह कथन दृष्टव्य है :- .... इस संग्रह की अठारह कहानियाँ राजस्थानी भाषा के गौरव-ग्रन्थ - 'वाता' री फुलवाड़ी' (चौदह भाग) की सात सौ कहानियों से चुनी गयी हैं। शेष तीन - 'अनेकों हिटलर', 'राजीनामा', 'फाटक', 'वाताँ री फुलवाड़ी' से नहीं है।'[4] 'वाताँ री फुलवाड़ी' भाग चार में से 'निन्यानवे का फेर' (जिसका राजस्थानी में 'निन्नाणूं री मार' शीर्षक था), 'मूजी सूरमा' (मूंजी सूरमौ) ली गई, कथाएँ हैं, जिनका अनुवाद 'उलझन' कहानी संग्रह में छपा है। 'वाताँ री फुलवाड़ी' भाग पांच में से 'अनमोल खजाना' (अमोलक खजानौ) तथा 'समय अनमोल' (औ वगत अमोलक) कथाएं ली गई हैं, जिनका अनुवाद भी 'उलझन' कहानी-संग्रह में छपा है। इसी तरह 'वाताँ री फुलवाड़ी' भाग दस में से 'फितरती चोर' (खांतीलौ चोर) तथा 'दुविधा' (दुविध्या) कथाएं ली गई हैं जिनका अनुवाद 'दुविधा और अन्य कहानियाँ' नामक कथा-संग्रह में छपा है। ये कहानियाँ बिना किसी परिवर्तन के ली गई है। इसके अतिरिक्त कहानियाँ अन्य भागों से (वाताँ री फुलवाड़ी में से) ली गई हैं, जिनका अनुवाद श्री कैलाश कबीर ने किया है।

'रूँख' का प्रकाशन सन् 1987 में हुआ, तब से इनकी ख्याति और बढ़ गई। अब देथा की चर्चा विश्व के कथाकारों में होने लगी है। इस 760 (सात सौ साठ) पृष्ठों के सुरुचिपूर्ण ग्रन्थ में देथा ने अपनी प्रमुख रचनाओं और उनके लेखन पर विभिन्न लेखकों और कलाकारों द्वारा लिखित समीक्षाओं और पात्रों के साथ-साथ रवीन्द्र नाथ ठाकुर, तोल्सतोय, चेखोव, गोर्की, शरत चन्द्र चट्टोपध्याय आदि की अनुदित रचनायें भी सम्मिलित हैं। देथा इन लेखकों से प्रभावित रहे हैं। इसके अतिरिक्त जैन-बोध कथायें, संस्कृत सूक्तियाँ आदि भी 'रूँख' में सम्मिलित हैं। 'रूँख' की रचना के संदर्भ में देथा का वह कथन दृष्टव्य है, जिसमें इसकी रचना एवं भावी योजना की बात कही गई है। यथा -

'सर्वप्रथम 'रूँख' का बीज ही बोना चाहूँगा। और कामना करना चाहूँगा कि वह इस शुभ-मुहूर्त में अंकुरित हो कि उसका सुविस्तृत फैलाव सब दिशाओं व आकाश की तरफ बढ़े, फैले। शुरूआत में मेरी योजना थी कि साहित्य की अन्य पाँच-छह पत्रिकाओं के साथ 'रूँख' का भी प्रकाशन हो जो सिर्फ वनस्पति, वृक्ष, जड़ी-बूटियाँ, पर्यावरण तथा इकोलोजी आदि पर ही पूर्णतया केन्द्रित थे। कथा, कविता, आलोचना, नाटक व पत्र इत्यादि साहित्यिक विधाओं की अपनी-अपनी पत्रिकाएँ हों। भारतीय प्रतिभाओं की विदेशों में सही पहचान हो, उसके लिए अंग्रेजी के एक पत्र की योजना भी मस्तिष्क में उबल रही थी। .... साहित्य की परिमार्जित शैली में मनुष्य से संबंधित सारी विधाएँ 'रूँख' के अन्तर्गत होंगी, जिनमें मर्मज्ञ की मार्मिक रुचि हो, कलात्मक सौन्दर्य का वांछित व्यंजन हो। प्रांत, राष्ट्र व विदेशों का जो भी सर्वश्रेष्ठ साहित्य, कला, विज्ञान व दर्शन है, वह 'रूँख' में प्रस्फुटित होगा। .... 'रूँख' की शुरूआत हिन्दी से होगी। फिर राजस्थानी व अंग्रेजी में नाम 'रूँख' ही रहेगा। त्रैमासिक अन्तराल के उपरान्त ज्यों-ज्यों परिस्थितियाँ सुधरती जाएगी वह द्वैमासिक, मासिक, तत्पश्चात् पाक्षिक रूप से नियमित प्रकाशित होगा। ऐसे अंक निकलेंगे कि जो देखें वही रश्क को।'[5]

देथा द्वारा रचित 'साहित्य और समाज' तथा 'प्रेमचन्द्र के पात्र' आलोचनात्मक ग्रन्थ हैं। इनमें निबन्धों एवं प्रेमचन्द के उपन्यासों और कहानियों के बहुचर्चित पात्रों की विशेषताओं का आकलन किया गया है। 'बापू के तीन हत्यारे' में गांधी के निधन के बाद लिखित तीन प्रमुख

कवियों की कविताओं का 'पोस्टमार्टम' है।

इसके अतिरिक्त आपकी कहानियों का फिल्म-निर्माता निर्देशकों ने फिल्मांकन भी किया है। 'दुविधा' नामक कहानी पर श्री मणि कौल के निर्देशन में फिल्म बनाई, जिसको राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुए थे। 'चरणदास चोर' कहानी पर श्री श्याम बेनेगल द्वारा निर्देशित फिल्मांकन, 'वाताँ री फुलवाड़ी' की विभिन्न कहानियों पर श्री रैना के निर्देशन में लगभग आठ लघु फिल्मों का भी निर्माण किया गया है। श्री प्रकाश झा द्वारा 'परिणति' कहानी पर आगामी फिल्म बनायी जा रही है। इनके अतिरिक्त 'उलझन', 'दूजौ कबीर' आदि कहानियों पर भी फिल्मांकन का कार्य जारी है। इस कारण की इनका कृतित्तव उभरा है।

श्री देथा की कहानियों का फिल्मांकन जिस प्रगति से हुआ, उसी के अनुरूप कुछ कहानियों का नाट्य रूपान्तर भी हुआ है। 'फितरती चोर' एवं 'पृथ्वीपालसिंह' नामक हिन्दी कहानियों का श्री हबीब तनवीर द्वारा छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य शैली में रूपान्तर किया गया है। राजस्थानी कहानी - 'बीजां-तीजां' को दिल्ली में श्री दीपक केजरीवाल और इरपिन्दर के. पुरी द्वारा निर्देशित एवं मंचित किया गया है। दिल्ली में श्री देवेन्द्र अंकुर द्वारा 'अलेखूं हिटलर', 'राजीनामा', 'खोजी' और 'रोजनामचा' आदि कहानियों का नाट्य रूपान्तर करके मंचन किया गया है। अजहर वजाहत एवं मृणाल पाण्डे द्वारा क्रमश: 'वीरगति' एवं 'रामरचि राखा' कहानियों का नाट्य रूपान्तर एवं मंचन किया गया।[6] इनके कारण देथा की ख्याति देश, विदेश में अनायास बढ़ गयी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'हाजिर हूँ' (मुखड़ा) : 'रूँख' : पृ. 17-18
2. 'अधूरी चिट्ठी' : 'रूँख' : पृ. 524
3. 'अनुवाद के आयाम' : 'रूँख' : पृ. 386
4. 'दुविधा और अन्य कहानियाँ' - श्री वेदप्रकाश अमिताभ : 'समीक्षा' - अक्टूबर-दिसम्बर, 1980
5. 'अधूरी चिट्ठी' : 'रूँख' : पृ. 523-524
6. परिशिष्ट - 5 : 'रूँख' : पृ. 631-633

****

Digital Consumer Behavior and Online Purchase Intention in India

Dr. O.P Roonwal*

Abstract: The digital marketplace in India witnessed exponential growth during the mid-2010s, driven by affordable smartphones, internet accessibility, and expanding e-commerce platforms. Understanding digital consumer behaviour became a crucial concern for marketers and researchers seeking to predict online purchase intentions. This study examines key determinants influencing Indian consumers' online buying behaviour, focusing on perceived usefulness, trust, ease of use, and social influence. Based on a 2016 survey of 250 internet users in urban India, results indicate that trust and convenience are the most significant predictors of purchase intention. The findings contribute to understanding how psychological, technological, and cultural factors jointly shape digital buying patterns in developing economies.

Keywords: Digital Consumer Behavior, Online Shopping, Purchase Intention, E-commerce, Trust, Technology Acceptance, Internet Marketing, India.

1. Introduction: India's digital revolution accelerated dramatically between 2014 and 2016. With the launch of initiatives like **Digital India** and increasing smartphone penetration, the internet user base grew from 243 million in 2014 to nearly 400 million in 2016 (IAMAI 2016). This shift transformed how consumers gathered information, compared products, and made purchase decisions.

Traditional shopping patterns evolved toward **e-commerce ecosystems** like Flipkart, Amazon India, Snapdeal, and Paytm. Yet, the dynamics of **online purchase intention**—why consumers decide to buy online—remained complex.

While technology provides convenience, factors like **trust, perceived risk, ease of use, and peer influence** heavily shape consumer attitudes toward e-commerce (Davis 1989; Pavlou 2003). Cultural values, payment insecurity, and digital literacy add further complexity to the Indian context.

This research investigates the behavioral, social, and technological variables influencing online purchase intention among Indian consumers in 2016.

2. Review of Literature

2.1 Evolution of Digital Consumer Behavior: Digital consumer behavior refers to the study of how individuals use online platforms to search, evaluate, and purchase goods. **Kotler (2003)** identified consumer decision-making as a five-step process: need recognition, information search, evaluation, purchase, and post-purchase behavior. In digital contexts, this process is faster, data-driven, and socially influenced.

Kumar and Dange (2014) emphasized that Indian consumers increasingly rely on digital reviews and peer recommendations rather than traditional advertising. The rise of **user-generated content** and **social media marketing** made online word-of-mouth (eWOM) a decisive influence.

2.2 Technology Acceptance and Online Shopping: The **Technology Acceptance Model (TAM)** proposed by **Davis (1989)** explains how perceived usefulness (PU) and perceived ease of use (PEOU) influence technology adoption. In e-commerce, these constructs translate to how convenient and beneficial consumers perceive online platforms.

Gefen, Karahanna, and Straub (2003) extended TAM by integrating trust as a key factor, arguing that trust reduces uncertainty and builds purchase confidence in virtual environments.

2.3 Trust and Perceived Risk: Trust plays a vital role in online shopping. Consumers must believe that e-retailers will deliver as promised, safeguard data, and handle payments securely. **Pavlou (2003)** found trust to be the strongest predictor of online purchase intention. In developing markets like India, where **cash-on-delivery (COD)** dominated in 2015–2016, trust substituted for credit-based confidence.

Belanger, Hiller, and Smith (2002) noted that privacy and security perceptions significantly affect willingness to share personal information online.

2.4 Social Influence and Cultural Factors: India's collectivist culture amplifies the role of social norms and

*Lecturer, Dept. of BADM, Govt College, Kherwara (Raj.) INDIA

peer influence in digital decisions. **Ajzen's (1991) Theory of Planned Behavior (TPB)** explains that subjective norms—what others think one should do—affect behavioral intentions. In online contexts, peer reviews, ratings, and influencer endorsements act as social proof (Cheung and Thadani 2012).

2.5 Online Purchase Intention: Online purchase intention refers to the likelihood that a consumer will buy a product via digital channels. **Bhattacherjee (2000)** and **Kim et al. (2008)** argue that this intention is shaped by prior satisfaction, ease of use, trust, and perceived enjoyment. In India, perceived convenience, price discounts, and delivery assurance have also emerged as critical motivators (Nagra and Gopal 2013).

3. Research Methodology

3.1 Objectives

- To identify major factors influencing online purchase intention among Indian consumers.
- To examine the relationship between trust, perceived usefulness, and ease of use with purchase intention.
- To analyze demographic variations in digital shopping behavior.

3.2 Research Design: A **quantitative, descriptive research design** was used, integrating literature-based constructs with primary survey data.

Sample Size: 250 respondents (urban India – Delhi, Mumbai, Jaipur, Bengaluru).

Sampling Technique: Stratified random sampling.

Instrument: Structured questionnaire using a 5-point Likert scale (1 = Strongly Disagree, 5 = Strongly Agree).

3.3 Variables Studied: The study examined five major constructs that influence online consumer behavior, each represented through specific key indicators. **Perceived Usefulness** was assessed in terms of how online shopping contributes to **time saving, convenience, and access to better prices**, highlighting the practical advantages that motivate consumers to shop online. **Ease of Use** focused on the **simplicity of website design and the clarity of information provided**, reflecting how user-friendly interfaces enhance consumer confidence and comfort during the buying process. The construct of **Trust** encompassed factors such as **payment security and delivery reliability**, emphasizing the importance of safety and dependability in shaping consumer trust toward e-commerce platforms. **Social Influence** was measured through **peer reviews and social media recommendations**, illustrating how opinions from friends, family, and online communities impact purchase decisions. Finally, **Purchase Intention** captured the **likelihood of consumers engaging in online buying and their tendency to make repeat purchases**, serving as a key indicator of sustained consumer interest and loyalty in the digital marketplace.

3.4 Data Analysis Tools: Descriptive statistics, correlation analysis, and regression testing were applied using SPSS (2016). Qualitative insights were also gathered from open-ended responses.

4. Results and Discussion

4.1 Descriptive Statistics: The descriptive analysis of the study reveals that respondents hold a generally positive perception toward the factors influencing online purchase behavior. **Perceived Usefulness** records a high mean score of **4.4**, indicating that users find online platforms highly beneficial and convenient for making purchases. **Ease of Use** follows with a mean of **4.2**, suggesting that most respondents consider online shopping interfaces user-friendly and accessible. **Trust** emerges as the most influential factor, with a **very high mean score of 4.5**, reflecting strong consumer confidence in the reliability and security of online transactions. **Social Influence**, with a mean of **4.1**, also shows a high impact, implying that peer opinions, reviews, and social media recommendations significantly affect buying decisions. Lastly, **Purchase Intention** records a mean score of **4.3**, demonstrating that consumers exhibit a strong willingness to engage in online shopping when these factors are favorable. Overall, the findings highlight that trust, usefulness, and ease of use are the most decisive determinants of consumers' online purchase intentions.

Interpretation: Trust and perceived usefulness ranked as the top motivators of online purchase intention among Indian consumers. Respondents valued convenience and reliability more than discounts or promotions.

4.2 Correlation Analysis: The correlation analysis reveals strong and statistically significant positive relationships among the key variables influencing online purchase intention. The relationship between **Trust and Purchase Intention** shows the highest correlation with a **Pearson's r value of 0.82**, indicating a *strong positive* and *significant* association, suggesting that greater consumer trust leads to a higher likelihood of purchasing online. Similarly, **Perceived Usefulness and Purchase Intention** exhibit a **strong positive correlation (r = 0.79)**, implying that when consumers perceive online platforms as beneficial and efficient, their intention to buy increases considerably. The link between **Ease of Use and Purchase Intention** is also *strong and significant* with an **r value of 0.77**, showing that user-friendly platforms enhance consumers' willingness to shop online. Lastly, **Social Influence and Purchase Intention** demonstrate a *moderate but significant* positive correlation with an **r value of 0.64**, indicating that while social factors like peer recommendations and online reviews affect buying decisions, their impact is relatively less compared to individual perceptions of trust and usefulness. Overall, the analysis confirms that trust, usefulness, and ease of use are the most powerful predictors of consumers' online purchase intentions.

Interpretation: Trust demonstrated the strongest correlation with purchase intention ($r = 0.82$). This aligns with prior research (Pavlou 2003) confirming that belief in platform integrity is vital for digital purchase decisions.

4.3 Regression Analysis (Simplified Summary)

Dependent Variable: Purchase Intention
Independent Variables: Trust, Ease of Use, Perceived Usefulness, Social Influence
R^2 = 0.71, indicating that 71% of variation in purchase intention is explained by these variables.
Trust (β = 0.36) emerged as the most significant predictor, followed by **Perceived Usefulness (β = 0.29)** and **Ease of Use (β = 0.22)**.

4.4 Demographic Insights

- **Age:** Younger consumers (18–30) were more driven by convenience and peer recommendations.
- **Gender:** Female consumers rated trust and return policy higher than males.
- **Income:** Middle-income users were more price-sensitive, but convenience remained a consistent motivator.

4.5 Qualitative Findings

Respondents expressed:

- "I trust only websites that offer COD and transparent return policies."
- "Convenience matters more than price when shopping online."
- "Friends' recommendations and reviews make me confident in new sites."

These comments validate the quantitative finding that **trust, social validation, and convenience** are key behavioral triggers.

5. Discussion: The 2016 Indian consumer reflects a blend of digital curiosity and cautious optimism. While the internet facilitates unprecedented convenience, trust remains the cornerstone of e-commerce success.

The results reinforce **TAM and TPB frameworks**, proving that behavioral intention arises from both cognitive (usefulness, ease) and affective (trust, social norms) factors. **Perceived Usefulness** and **Ease of Use** echo Davis's (1989) findings that technology adoption depends on user confidence. However, **trust** assumes greater significance in developing nations due to lower institutional assurance (Gefen et al. 2003).

The data also suggest that **social influence**—though relevant—plays a supporting role. Indian consumers in 2016 were becoming more self-reliant decision-makers, guided by personal experiences rather than solely peer norms.

6. Managerial Implications

- **Build Digital Trust:** E-retailers must highlight security, refund, and delivery reliability to reduce perceived risk.
- **Simplify User Experience:** Optimize websites and apps for ease of navigation, quick checkout, and minimal steps.
- **Localized Communication:** Culturally relevant messaging in regional languages enhances credibility.
- **Enhance Customer Support:** Live chat, responsive helplines, and transparent returns strengthen trust.
- **Social Engagement:** Encourage verified customer reviews and user-generated content for social proof.

7. Conclusion: This study concludes that **trust and perceived usefulness** are the two most powerful determinants of online purchase intention in India. While technological ease supports adoption, emotional and social assurance sustain engagement.

Indian consumers' digital behavior represents a transition from **price-driven trial** to **experience-driven loyalty**. The insights imply that e-commerce success in emerging markets depends not merely on discounts or digital infrastructure but on nurturing **trust, transparency, and consistent user experience**.

As India's digital economy expands, understanding evolving consumer psychology remains central to sustaining competitive advantage.

Appendix: Survey Data Summary: The survey data summary provides comprehensive insights into the factors influencing online buying behavior and the demographic composition of respondents in 2016. The analysis of key factors, as presented in the paragraph, indicates that **Trust** emerged as the most influential determinant of online purchase decisions, recording the highest mean score of **4.5** and ranking first overall. **Perceived Usefulness** followed closely with a mean of **4.4**, while **Ease of Use** (4.2) and **Social Influence** (4.1) were also found to play significant roles. These findings collectively highlight that consumer confidence and the perceived benefits of online platforms were the dominant motivational factors in shaping purchase intentions during the period.

The **demographic profile** of respondents shows a fairly balanced gender distribution, with **55% males** and **45% females** participating in the survey. In terms of age, the majority of respondents fell within the **18–25 age group (40%)** and **26–35 group (42%)**, while **18%** belonged to the **36–50 age bracket**, indicating that online shopping was primarily driven by young and middle-aged consumers. Geographically, respondents were spread across India, with **35% from North India**, **30% from the South**, **25% from the West**, and **10% from the East**, reflecting a broad regional representation. Regarding payment preferences, **Cash on Delivery (COD)** remained the most popular method, used by **60% of respondents**, followed by **Debit Cards (25%)**, **Net Banking (10%)**, and **Digital Wallets (5%)**, suggesting that traditional payment options still dominated online transactions at the time.

The **analysis of influencing factors**, illustrated through a bar graph, further shows that **Trust (28%)** and **Convenience (24%)** together accounted for more than half of the total influence on online buying behavior in 2016. Other notable factors included **Price Advantage (20%)**, **Social Influence (15%)**, and **Brand Reputation (13%)**. These insights confirm that while competitive pricing and brand image played roles, consumer trust and convenience were the primary drivers behind purchase decisions in India's emerging e-commerce landscape.

References:-

1. Ajzen, Icek. "The Theory of Planned Behavior." *Organizational Behavior and Human Decision Processes*, vol. 50, no. 2, 1991, pp. 179–211.

2. Belanger, France, James S. Hiller, and Wanda J. Smith. "Trustworthiness in Electronic Commerce: The Role of Privacy, Security, and Site Attributes." *Journal of Strategic Information Systems*, vol. 11, no. 3–4, 2002, pp. 245–270.
3. Bhattacherjee, Anol. "Acceptance of E-commerce Services: The Case of Electronic Brokerages." *IEEE Transactions on Systems, Man, and Cybernetics*, vol. 30, no. 4, 2000, pp. 411–420.
4. Cheung, Christy, and Dimple Thadani. "The Impact of Electronic Word-of-Mouth Communication: A Literature Analysis and Integrative Model." *Decision Support Systems*, vol. 54, no. 1, 2012, pp. 461–470.
5. Davis, Fred D. "Perceived Usefulness, Perceived Ease of Use, and User Acceptance of Information Technology." *MIS Quarterly*, vol. 13, no. 3, 1989, pp. 319–340.
6. Gefen, David, Elena Karahanna, and Detmar W. Straub. "Trust and TAM in Online Shopping: An Integrated Model." *MIS Quarterly*, vol. 27, no. 1, 2003, pp. 51–90.
7. IAMAI. *Internet in India 2016 Report.* Internet and Mobile Association of India, 2016.
8. Kim, Dan J., Donald L. Ferrin, and H. Raghav Rao. "A Trust-Based Consumer Decision-Making Model in Electronic Commerce." *Decision Support Systems*, vol. 44, no. 2, 2008, pp. 544–564.
9. Kotler, Philip. *Marketing Management.* 11th ed., Prentice Hall, 2003.
10. Kumar, Rohit, and Umesh Dange. "A Study on Consumer Perception towards Online Shopping in India." *International Journal of Management and Commerce Innovations*, vol. 2,no.1, 2014, pp. 24–33.
11. Nagra, Geetika, and Ruchi Gopal. "An Study of Factors Affecting on Online Shopping Behavior of Consumers." *International Journal of Scientific and Research Publications*, vol. 3, no. 6, 2013, pp. 1–4.
12. Pavlou, Paul A. "Consumer Acceptance of Electronic Commerce: Integrating Trust and Risk with the Technology Acceptance Model." *International Journal of Electronic Commerce*, vol. 7, no. 3, 2003, pp. 69–103.

****

मकड़ाई रियासत का संक्षिप्त इतिहास

डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख*

प्रस्तावना – ब्रिटिश शासन ने 1861 ई. में सेन्ट्रल प्राविन्स का गठन कर कई रियासतों एवं जीते हुए भू-भाग को मिला कर प्राविन्स की राजधानी नागपुर स्थापित किया। 26 जनवरी 1950 ई. को संविधान लागू कर इस प्रांत का नाम मध्यप्रदेश किया गया। प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र के सतपुड़ा अंचल मे बसी एक छोटी सी रियासत मकड़ाई रही है इसके अस्तित्व का उल्लेख 16वी सदी से मिलता है। मध्य प्रदेश के गढ़ा, मंडला, राज्य के शासक संग्रामशाह के 52 गढ़ों में मकड़ाई एक गढ़ था।[1]

यादव राय गढ़ा राज्य के गोंड राज्यवंश के संस्थापक माने गये हैं। जिसका शासनकाल संग्रामशाह के शासनकाल को प्रमाणिक मानते हुए सन् 14वी ई. से प्रारंभ होना माना गया है। गढ़ा राज्य के गोंड राज्यवंश का शासनकाल चंदेल राज्यवंश के पतन के बाद ही प्रारंभ होना संभव हुआ होगा। संग्रामशाह गढ़ा राज्य का सबसे प्रतापी राजा था.................गढ़ा राज्य के गोंड राज्यवंश ने सन् 1782 ई. तक राज्य किया।[2]

गोंड रियासत का मकड़ाई रियासत साढ़े चार सौ साल यानि वर्ष 1948 ई. तक भारत संघ के विलय तक विधमान रही। इतिहास में मकड़ाई रियासत का उल्लेख सर सी इलियट ने पहली बार अपनी सेटलमेंट रिपोर्ट में किया है इसमे इन्होने लिखा है कि मकड़ाई के राजा को विश्वास है कि उनके पूर्वजों ने कभी दक्षिण में ताप्ती से उत्तर मे नर्मदा और पश्चिम में छोटा तवा से पूर्व गंजाल तक के पूरे भू-क्षेत्र (पुरानी हरदा तहसील) पर शासन किया था।

मकड़ाई रियासत का झण्डा

गोंड रियासत मकड़ाई का झंडा सन् 1908 ई. में इस प्रकार का उद्धृत है जो कि होशंगाबाद डिस्टिक्ट गजैटियर वर्ष 1908 ई. का है। सतपुड़ा पर्वत के अंचल में फैली यह मकड़ाई रियासत उत्तर में घोड़ा गांव से लेकर दक्षिण में गोलखेड़ा तक और पूर्व में माचक नदी से लेकर पश्चिम में छीपावड़ व चारूवा तक फैली थी।[3]

वर्तमान में मकड़ाई हरदा जिले का छोटा सा गांव है जहां आज भी चहुं ओर फैले अवशेषों के अस्तित्वो को देखा जा सकता है जो आज भी अतीत की गवाही देते हैं।

मकड़ाई किले के मुख्य द्वार के भग्नावशेष

मकड़ाई किले के परकोटे का द्वार

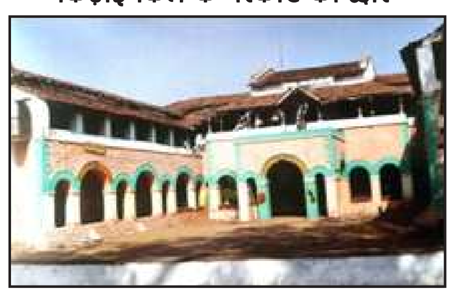

मकड़ाई स्टेट का न्यायालय भवन- वर्तमान में स्कूल

तत्कालीन अस्पताल के भग्नावशेष – सामने है दो छतरियाँ

* व्याख्याता (इतिहास) हाडारानी राजकीय महाविद्यालय, सलूम्बर, जिला उदयपुर (राज.) भारत

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

मकड़ाई किले के बुर्ज पर रखी तोप

मकड़ाई किले के भीतर स्थित मस्जिद

मकड़ाई किले के अंदर स्थित राम मंदिर

मकड़ाई हरदा और भिरंगी स्टेशन से पक्की सड़कों से जुड़ा हुआ है। गोंड रियासत मकड़ाई इलाके में चार छोटी नदियां बहती है जिनके नाम माचक,सयानी,घोघई और साम्हरी हैं इसी सयानी नदी के किनारे छोटा सा गांव मकड़ाई मौजूद है। .... पहले इसका सदर मुकाम कालीभीत था जो अब पूर्वी निमाड़ यानि खंडवा जिले में है। [4]

परंपरा कहती है कि मकड़ाई रियासत के राजवंश का संस्थापक राजा करकट राय या महाराज सिंह था जो गोंड राज्य चंद्रपुर (अब महाराष्ट्र में)का निवासी था। उसे गोंड राज्य गढ़ा के राजा ने पुरस्कार के रूप में गढ़ प्रदान किया था क्योकि करकट राय ने एक आक्रमण के विरूद्ध गढ़ा राज्य के शासक की सहायता की थी। [5]

इस रियासत के इतिहास से संबंधित कोई भी समकालीन दस्तावेज मकड़ाई राज परिवार के पास मौजूद नही है किन्तु सन् 1928 ई. मे छपी एक पुस्तिका मकड़ाई महात्म मिली जिसके लेखक सैयद कासिम अली साईखेड़ा, नरसिंहपुर है। लेखकानुसार 41 पृष्ठों की इस पुस्तिका में मकड़ाई रियासत के इतिहास की जानकारी रियासत के तत्कालीन दीवान श्री के.एम. खान के द्वारा लेखक को मुहैया कराई गई।

इसमे शंका नही है कि मकड़ाई का उल्लेख गढ़ा के गोंड राज्य के इतिहास में मिलता है जिसमें कहा गया है कि गढ़ा राज्य के प्रतापी शासक संग्राम शाह के समय के 52 गढ़ों में से एक गढ़ मकड़ाई भी था। कर्नल स्लीमेन[4] ने अपने विस्तृत लेख में इन 52 गढ़ों की सूची दी है चूंकि मकड़ाई का उल्लेख संग्राम शाह के 52 गढ़ों में किया गया है और मकड़ाई महात्म करकट राय को मकड़ाई रियासत के गोंड राजवंश का संस्थापक मानती है इसलिए यह संभावना है कि करकट राय संग्राम शाह के समय अर्थात 1510 से 1543 ई. के बीच कभी विद्यमान रहा होगा। [6]

मकड़ाई के गोड राजवंश का वंश वृक्ष [7] सन् 1536 से 1971 ई. तक इस प्रकार है :

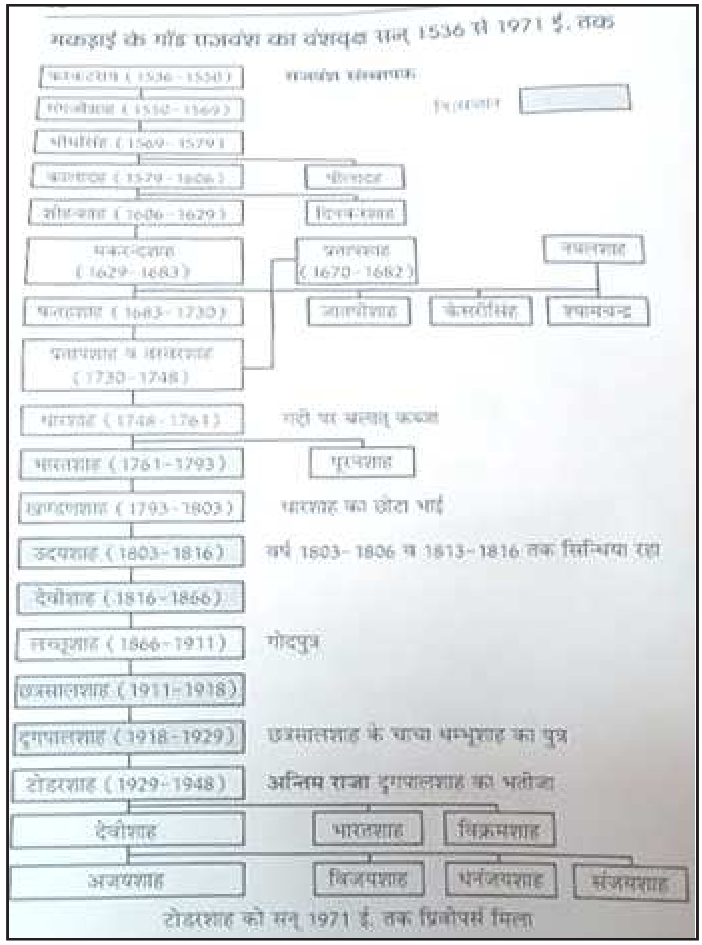

मकड़ाई रियासत होशंगाबाद के डिप्टी कमिश्नर के अंतर्गत थी जो नर्मदा संभाग के कमिश्नर के अंतर्गत था।[8]

जनवरी 1784 ई. के एक मराठी दस्तावेज में उल्लेख है कि अहिल्या बाई होल्कर ने 5000 पिण्डारियों की सेना भोपाल की बेगम की सहायता के लिए भेजी है इसके लिए यह सेना मकड़ाई से जा रही है। मकड़ाई परगना के जो गांव सिंधिया के हैं उन्हे पिडारियों ने लूटा है। पिंडारी भोपाल जा रहे हैं और वे अब तक चले गए होंगे। सिवनी मालवा और होशंगाबाद का इलाका भोपाल के पास है। भोपाल की गड़बड़ी को देखकर सेना धुरंधर ने होशंगाबाद की गढ़ी पर अधिकार कर लिया है। [9]

मकड़ाई रियासत के सिक्के जिनकी छवियां इनटर्नेट पर प्रदर्शित हैं वे निम्न हैं :-

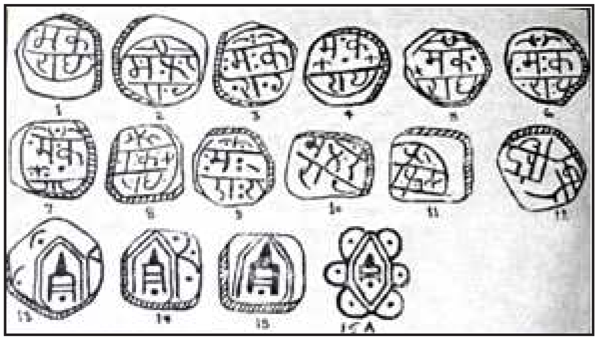

मकड़ाई रियासत के सिक्कों की छवियां

ये सिक्के किस शासक के समय के हैं इसे प्रमाणित आधार पर नही बताया जा सकता क्योंकि इन हाथ से बने मकड़ाई रियासत के सिक्कों में तिथि अंकित नहीं हैं किन्तु सिक्कों के रेखांकन से मकड़ाई रियासत के सिक्के का स्वरूप ज्ञात होता है।

सतपुड़ा पर्वत के अंचल में फैली मकड़ाई रियासत वर्तमान में मध्यप्रदेश के हरदा जिले में है। सीमित साधनों वाली इस रियासत के वैभव का पता वर्तमान अवशेषों से अवश्य पता लगाया जा सकता है चूंकि 24 फरवरी 1981 को एक भयानक अग्नि कांड में मकड़ाई का राजमहल जल कर खाक हो गया जिससे महत्वपूर्ण दस्तावेजों के साथ साथ ऐतिहासिक धरोहर का अनूठा नमूना भी ध्वस्त हो गया लेकिन मकड़ाई के चहुंओर फैले पुराने अवशेष आज भी अतीत की गवाही दे रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. होशंगाबाद डिस्ट्रिक्ट गैजेटियर ,1908 ई. रिप्रिन्ट 1997 ई. पृ 29
2. मिश्र सुरेश : गोंड रियासत मकड़ाई, प्रकाशक चंद्र गोपाल,जनक दुलारी, हरदा, 2012, पृ. 8
3. वहीं, पृ. 11
4. मकड़ाई महात्म, 1928 ई., पृ. 23
5. मिश्र सुरेश : गढ़ा के गोंड राज्य का इतिहास, दिल्ली, 2008, पृ. 21-22
6. स्लीमेन कर्नल : जर्नल आफ एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल, 1837 ई., पृ. 645-646
7. मिश्र सुरेश : पूर्वोल्लिखित कृति, पृ. 10
8. होशंगाबाद डिस्टिक्ट गैजेटिया, 1908 ई., रिप्रिंट 1997, पृ. 327-328
9. नागपुर अफेयर्स, जिल्द 1, पृ. 198

****